जनपद-जालौन (उ.प्र.) की उरई तहसील का लघु-स्तरीय नियोजन

MICRO-LEVEL PLANNING OF ORAI TAHSIL DISTRICT-JALAUN (U.P.)

भूगोल विषय में
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की
पी. एच. डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत
:शोध-प्रबन्ध:
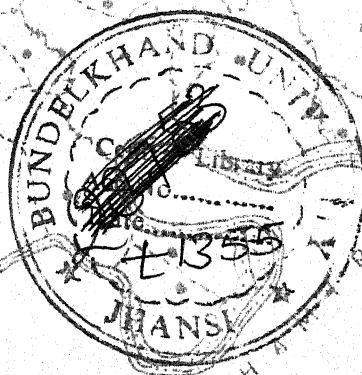
1997

निर्देशक:-
डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र
रीडर, भूगोल-विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा (बांदा)

शोधकर्ता:-
रमेश चन्द्र नामदेव
शोध छात्र, भूगोल विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज
अतर्रा (बांदा)

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र
रीडर, भूगोल-विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा (बांदा), उ.प्र.

निवास-
148, ब्रह्मनगर
अतर्रा -210201
☎ 7573
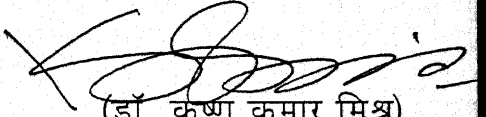
प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि रमेश चन्द्र नामदेव द्वारा मेरे निर्देशन में **"जालौन - जनपद (उ. प्र.) की उरई तहसील का लघु-स्तरीय नियोजन"** शीर्षक पर भूगोल विषय में पी. एच. डी. उपाधि हेतु अध्यादेश-7 के अन्तर्गत उल्लिखित समय में कार्य पूरा किया गया है।

यह **शोध-प्रबन्ध** एक मौलिक लघु-स्तरीय विकासात्मक अध्ययन है तथा मेरे निर्देशन व परिवेक्षण में पूर्ण लगन व निष्ठा के साथ सम्पन्न किया गया है।

(डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र)

घोषणा

मैं घोषित करता हूं कि ''**जालौन-जनपद (उ.प्र.) की उरई तहसील का लघु-स्तरीय नियोजन**'' विषयक शोध-प्रबंध मेरा मौलिक कार्य है। इसमें प्रयुक्त आंकडों का संकलन मैंने स्वतः किया है। इन आंकड़ों पर आधारित मानचित्रों व आरेखों की रचना का कार्य भी मैने स्वयं किया है।

शोधकर्ता

(रमेश चन्द्र नामदेव)

शोध छात्र, भूगोल विभाग

अतर्रा कालेज अतर्रा,

बांदा (उ.प्र.)

आभार-प्रदर्शन

प्रस्तुत शोध-प्रबंध परमश्रद्धेय डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र, रीडर, भूगोल विभाग, अतर्रा पोस्टग्रेजुएट कालेज, अतर्रा (बांदा) के सुयोग्य निर्देशन में सम्पन्न हुआ। जिन्होंने अत्यधिक व्यस्तता के बावजूद भी अपने बहुमूल्य सुझावों द्वारा मेरा शोध मार्ग प्रशस्त किया। उनके द्वारा प्रदत्त प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं सत्परामर्शों तथा मूल्यांकन निर्देशों का ऋणी होने के साथ ही ऐसे महान व्यक्तित्व के प्रति मैं श्रद्धावनत् हूं।

मैं प्राचार्य, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा वांदा तथा उन समस्त विद्वानों एवं गुरुजनों का आभारी हूं जिन्होंने मेरे इस शोध को पूरा करने में अपेक्षित सहयोग एवं अमूल्य सुझाव दिये हैं। इसके अतिरिक्त मैं अपने सहृदयी मित्रों श्री दिलशाद अली सिद्दीकी, श्री एस. सी. पाठक, श्री एस. के. त्रिपाठी, श्री एवं श्रीमती राजेन्द्र सिंह तथा श्री बेदप्रकाश सिंह का विशेष रूप से आभारी हूं, जिन्होंने समय-समय पर आवश्यक शोध सामग्री एवं साहित्य उपलब्ध कराने में सहायता की। क्षेत्र सर्वेक्षण, आंकड़ों का एकत्रीकरण, उनका विश्लेषण एवं मानचित्र निर्माण में सहयोग हेतु श्री एम. सी. शुक्ल, प्रवक्ता भूगोल विभाग एवं श्री गंगाराम नामदेव तथा उनके परिवार के सभी सदस्यों के प्रति आभार प्रदर्शन करना भी मेरा नैतिक दायित्व बनता है।
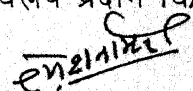
मैं, श्रीमती कुसुम मिश्र एवं उनके प्रिय बच्चों पीयूष, प्रत्यूष एवं प्रियंवदा के प्रति भी अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं जिन्होंने न केवल अपनी नम्रता एवं सद्व्यवहार से मेरे इस कार्य की पूर्ति में एक प्रेरणा शक्ति का कार्य किया अपितु शोध कार्य के दौरान रहन-सहन एवं खान-पान का भी विशेष ध्यान रखा।

मैं, अपनी पूजनीया माता श्रीमती राधारानी नामदेव एवं श्रद्धेय पिता श्री गौरीशंकर नामदेव, बड़े बहनोई श्री मुन्नालाल सिंह नामदेव एवं उनके बच्चों का भी आभारी हूं जिन्होंने मेरे इस कार्य की दीपशिखा प्रज्जवलित कर उसे अनुप्राणित रखने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया। मैं अपने भाई-बहनों, सास-श्वसुर श्री एवं श्रीमती राजाराम नामदेव तथा उनके समस्त परिवार तथा परम् निकटस्थ श्री एवं श्रीमती एस. एल. नामदेव के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूं जिन्होंने इस कार्य हेतु समय-समय पर प्रेरणा प्रदान की।

मैं अपनी कुशल धर्मपत्नी श्रीमती रत्नेश नामदेव और दोनों प्रिय पुत्रियों आकांक्षा एवं स्मिता तथा नवागत पुत्ररत्न शुभम् का भी कृतज्ञ हूं। जिनकी सहृदयी सहभागिता एवं सतत् प्रेरणा के परिणाम स्वरूप ही यह शोध परियोजना पूर्ण हो सकी।

मैं श्रीमती सुमन सिंह, **एकता कम्प्यूटर्स, सतना** के प्रति भी आभार व्यक्त करना अपना कर्तव्य समझता हूं जिन्होंने कम्प्यूटर की सहायता से इस शोधग्रन्थ को एक अच्छा स्वरूप प्रदान किया।

फरवरी, 1997

(रमेश चन्द्र नामदेव)

प्रस्तावना

PREFACE

देश में नियोजन युग के प्रारम्भ होने के समय से ही, एक आदर्श सामाजिक-आर्थिक ढांचे के अन्तर्गत देश के संसाधनों के क्षमतापूर्ण विदोहन द्वारा ग्रामीण निर्धनों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना, उत्पादन में वृद्धि करना और सभी को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना सरकार का प्रमुख उद्देश्य था। परन्तु समीक्षात्मक विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि प्रथम चार पंचवर्षीय योजनाओं में विभिन्न अवखण्डों के अन्तर्गत प्रभावशाली वृद्धि होने के बावजूद नियोजन सामान्य लोगों के जीवन स्तर को उठाने में कोई खास योगदान नहीं दे सका। दूसरी ओर, नियोजन प्रक्रियाओं ने देश में गम्भीर क्षेत्रीय असमानताओं को जन्म दिया। प्रधानतः विशिष्ट केन्द्रीकृत अवखण्डीय योजनाएं, लघु क्षेत्रीय स्तर पर निम्न तबके वाले गरीब लोगों के जीवन स्तर को उठाने, निर्धनता तथा बेरोजगारी की समस्या को हल करने, लोगों को सामाजिक न्याय सुलभ कराने और उन तक नियोजन के लाभ पहुंचाने में प्रायः असफल रही हैं।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों के समाकलित एवं संतुलित विकास के लिए अवस्थिति विषयक विशेषताओं के नियोजन की आवश्यकता पर विशेषतः पांचवीं पंचवर्षीय योजना में बल दिया गया और ऐसा महसूस किया गया कि इस विशाल आकार वाले देश में जहां भौतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक विषमताएं वृहद स्तर पर मौजूद हैं, योजनाएं वस्तुतः स्थानीय संसाधनों की सम्भाव्यता एवं स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार की जानी चाहिए।

इस प्रकार ग्रामीण गरीबों के सामाजिक-आर्थिक जीवन को सुधारने हेतु निःसंदेह, लघु स्तर पर आर्थिक समानता एवं सामाजिक न्याय के परम लक्ष्य की पूर्ति हेतु क्षेत्र विशेष के लिए समाकलित विकास योजनाओं को तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया जाय। ये लघु-स्तरीय विकास योजनाएं न केवल स्थानीय संसाधनों को गतिशील बनाने बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों को आत्मनिर्भर बनाने में सहायक व स्थानीय लोगों को स्वतः विकास की दिशा में प्रेरित करने में सहायक हैं।

इस प्रकार बहुत बाद में योजनाकारों एवं नीति निर्धारकों ने लघु प्रादेशिक विकास नियोजन पर ध्यान दिया व उसे ग्रामीण गरीबों के सामाजार्थिक जीवन को सुधारने हेतु एक व्यूहरचना के रूप में प्रस्तुत किया।

उरई तहसील का प्रस्तावित अध्ययन इस दिशा में एक आधुनिक प्रयास है। अध्ययन क्षेत्र जालौन-जनपद (उ.प्र.) के दक्षिण में अवस्थित है तथा एक अविकसित क्षेत्र है। स्थानीय संसाधनों की सम्भाव्यताओं के बावजूद प्रति व्यक्ति निम्न आय, रहन-सहन का निम्न स्तर, कृषि पर अत्यधिक आधारित, कृषि एवं उद्योग के मध्य कमजोर सम्बन्ध, परिवहन एवं संचार के अपर्याप्त साधन आदि इस क्षेत्र की मुख्य विशेषताएं हैं।

वर्तमान शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य न केवल इस क्षेत्र के लिए सारगर्भित अनुमोदन प्रस्तुत करना है बल्कि एक उपयुक्त विधितंत्र का विकास करना भी है जो कि समान दशाओं वाले अन्य क्षेत्रों में भी प्रयुक्त की जा सकें। यह शोध प्रबन्ध प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के संग्रहण, गणना, विश्लेषण एवं व्याख्यात्मक प्रस्तुतीकरण पर आधारित है। यह मूलतः क्षेत्रीय अध्ययनों पर आधारित है जिसमें कृषि उद्योग यातायात और संचार तथा सामाजिक सुविधाओं जैसे:-शिक्षा एवं स्वास्थ्य, सुविधाओं के नियोजन का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

अध्ययन कार्य आठ अध्यायों में संगठित है **प्रथम अध्याय** में नियोजन की संकल्पना, नियोजन प्रदेश, सैद्धान्तिक आधार और क्षेत्रीय नियोजन के स्तरों को प्रस्तुत किया गया है। साथ

ही प्रादेशिक नियोजन की व्यूहरचना और उद्देश्यों एवं विषय-वस्तु, भारत में लघु-स्तरीय नियोजन की उपयुक्तता, नियोजन प्रक्रियाओं, पंचवर्षीय योजनाओं में लघु-स्तरीय नियोजन एवं भारत में लघु-स्तरीय नियोजन के अध्ययनों पर बल दिया गया है।

द्वितीय अध्याय में अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक दशाओं यथा-भूमि, लोग, आवास, उद्योग एवं खनिज, यातायात और सामाजिक सुविधाओं का वर्णन किया गया है।

अध्याय तीन में आधारभूत नियोजन इकाइयों की पहचान, केन्द्रीय स्थान सिद्धान्त, वृद्धि ध्रुव सिद्धान्त, स्थानिक विसरण सिद्धान्त और वृद्धि जनक केन्द्रों की संकल्पना के मौलिक तथ्यों के अध्ययनों को समाहित किया गया है। इसमें सेवा केन्द्र संकल्पना एवं उनकी पहचान, केन्द्रीयता, पदानुक्रमीय वर्ग प्रणाली, विभिन्न चरों के मध्य सम्बन्ध, सेवा केन्द्रों का स्थानिक वितरण, पूरक प्रदेशों आदि पर विचार किया गया है। कार्यात्मक रिक्तता एवं अति व्याप्तता, सेवा केन्द्रों का पुनर्गठन और उनके सेवा क्षेत्रों का प्रस्ताव भी इस अध्याय में सम्मिलित है।

चतुर्थ अध्याय कृषि विकास नियोजन से सम्बन्धित है। जिसमें विषय प्रवेश, उपागम एवं विधितंत्र,फसल संयोजन विश्लेषण, वर्तमान सामान्य भूमि उपयोग, शस्य प्रतिरूप का परीक्षण किया गया है। इसमें आगे अध्ययन क्षेत्र की कृषिगत क्षमता एवं जनसंख्या दबाव, उपभोग एवं निर्यात का मूल्यांकन करते हुए कृषि अवस्थापनाओं के नियोजनार्थ उचित व्यूह रचना का सुझाव प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

पंचम अध्याय में वर्तमान औद्योगिक संरचना और भविष्य के विकास हेतु क्षमताओं के परीक्षणोपरान्त शोध क्षेत्र के औद्योगिक विकास के लिए विशेष अनुमोदन प्रस्तुत किये गये हैं।

षष्टम अध्याय आधारभूत अवस्थापनात्मक संरचनाओं यथा-यातायात, संचार व्यवस्था तथा ग्रामीण विद्युतीकरण के विकास हेतु समर्पित है। इसमें उनकी वर्तमान प्रणाली एवं समस्याओं का परीक्षण करके विकास हेतु अनुमोदन प्रेषित किये गये हैं।

सप्तम अध्याय सामाजिक सुविधाओं यथा-शिक्षा एवं स्वास्थ्य नियोजन से सम्बन्धित है जिसमें वर्तमान शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का मूल्यांकन करके इनके भावी विकास हेतु सारगर्भित सुझावों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

अन्तिम एवं **आठवें अध्याय** में सम्पूर्ण अध्यायों का सारांश प्रस्तुत करने के साथ-साथ सभी वर्गों के उत्थान एवं स्थानीय निर्णयों को ध्यान में रखकर समाकलित विकास योजना प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु भी उपयुक्त सुझाव दिए गए हैं।

-शोधार्थी

जालौन जनपद (उ.प्र.)की उरई तहसील का लघुस्तरीय नियोजन

विवरणिका

तालिकाएं

तालिका संख्या एवं नाम		पृष्ठ संख्या

LIST OF ILLUSTRATIONS

ABBREVIATIONS.

1. Bomb. geog. Mag.	Bombay Geographical Magazine.
2. Cana. Geog.	Canadian Geographers.
3. Decc. Geog.	Deccan Geographers
4. Eco.Geog.	Ecomonic Geography.
5. Geog.Rev.Ind.	Geographical Review of India.
6. Ind.Geog.	Indian Geographers.
7. I.J.R.S.	Indian Journal of Regional Science.
8. Nat. Geog.	National Geographers.
9. N.G.J.I.	National Geographical Journal of India.
10. N.G.S.I.	National Geographical Society of India
11. Reg.Sci.Asso.	Regional Science Association

1

लघुस्तरीय नियोजन- अर्थ, संकल्पना, आवश्यकता एवं उपयुक्तता, प्रक्रिया और तकनीक

MICRO-LEVEL PLANNING: MEANING, CONCEPT, NEED, RATIONALE, PROCESS & TECHNIQUES

अध्याय -1

CHAPTER - ONE

लघु-स्तरीय नियोजन
अर्थ, संकल्पना, आवश्यकता, उत्पत्ति, प्रक्रिया एवं तकनीक

MICRO LEVEL PLANNING-
MEANING, CONCEPT, NEED RATIONALE, PROCESS & TECHNIQUES.

प्रस्तावना (Introduction) -

नियोजन एक नवीन, किन्तु भूगोल विषय की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण शाखा है। वस्तुतः नियोजन, आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय एवं पर्यावरणीय गुणात्मकता को प्राप्त करने का एक उपयुक्त साधन है। यद्यपि नियोजन का अस्तित्व एक नवीनतम विषय के रूप में है तथापि उसका विषय क्षेत्र अत्यन्त व्यापक एवं महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि यह एक अग्रणी विषय के रूप में उभरकर सामने आया है। जिसमें मुख्यतः मानव कल्याण को प्राथमिकता दी जाती है। इसके अन्तर्गत मानवीय पर्यावरण के विकास एवं सामाजिक संसाधनों के उपयुक्त प्रयोग पर नवीन विधियों एवं तकनीकों के क्रियाकलापों को महत्व प्रदान करने के साथ- साथ सामाजिक- आर्थिक असमानताओं, असंतुलन एवं सामाजिक अन्याय के विश्लेषण पर भी प्रकाश डाला जाता है और सामाजिक कल्याण हेतु इन असमानताओं को दूर करने के प्रयास किए जाते हैं। सर्वमान्य मत यह है कि नियोजन को सामाजिक उत्थान से विलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह समाज में रहने वाले लोगों के जीवन स्तर के उन्नयन का एक प्रमुख प्रेरणास्रोत भी है। इसके निर्णायात्मक सूचकांकों एवं प्रामाणिक भूमिका के कारण वस्तुतः विश्व के प्रायः सभी राष्ट्रों ने सामाजिक- आर्थिक उत्थान हेतु नियोजन को एक तकनीक के रूप में अपनाया है (मिश्रा, 1974)। वर्तमान समय में नियोजन वास्तव में एक सार्वभौमिक प्रगति का उद्‌घोष है। आज के प्रगतिशील युग में, अवाधगति से बढ़ती हुई सामाजिक समस्याओं के निदान का प्रमुख साधन नियोजन है। यही कारण है कि इसे विभिन्न क्षेत्रीय स्तरों पर सहर्ष स्वीकार किया जाता है ताकि सूक्ष्म स्तर पर समाज की छोटी इकाइयों की आकांक्षाओं को सरलतापूर्वक पूर्ण किया जा सके और आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा अक्षुण्य रहे। इसके लिए नियोजक का प्रथम कर्तव्य यह होना चाहिए कि वह जिस क्षेत्र के लिए योजना का निर्माण करे, उसके क्रियान्वयन से पूर्व उस क्षेत्र के भौतिक स्वरूप व अन्य सामाजिक परिस्थितियों का भलीभांति सर्वेक्षण कर ले जो कि वहां के मानवीय पर्यावरणीय अन्तर्सम्बन्धों का परिणाम है (फ्रीमैन, 1958)। चूंकि भूगोल का सम्बन्ध पार्थिव वस्तुओं के संयोजन के साथ- साथ उनके साहचर्य से भी है। जो किन्हीं निश्चित स्थानों को विशिष्टता प्रदान करते हैं (जेम्स तथा जेम्स, 1954)। नियोजन प्रक्रिया के विकास में भूगोलविदों का महत्वपूर्ण योगदान है। केवल भूगोलवेत्ता ही हैं, जिनका स्थानिक संगठनों तथा स्थानिक विश्लेषण की विशिष्ट तकनीकों पर स्वामित्व है।साथ ही यह मानव, समाज एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्क्रियाओं में समाहित विभिन्न समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से एक बेहतर स्थिति में है क्योंकि ये स्थानीय विश्लेषणों की विशिष्ट शिक्षण कला से परिचित होते हैं। इनका योगदान वास्तव में न केवल सम्पूर्ण स्थानीय असमानताओं एवं अन्यायों की व्याख्या तथा विवरण में ही सुधारात्मक है बल्कि मानवीय प्रसंगौचित्तता हेतु बदलाव में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

नियोजन की संकल्पना (Concept of Planning) -

नायडू (1984) के अनुसार- नियोजन, मानव जीवन के समाजार्थिक उत्थान की एक रणनीति है जो इच्छित उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में सतत् गतिमान है। ड्रार (1963) के अनुसार- नियोजन वह प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत श्रेष्ठ साधनों द्वारा भविष्य में वांछित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किए जाने वाले क्रियाकलापों के निर्णयों की श्रृंखला तैयार की जाती है। जबकि फलूदी (1973) के अनुसार- नियोजन तार्किक विधियों का एक प्रयोग है जिसके द्वारा उद्देश्यों की पूर्ति एवं जननीति में परिवर्तन तथा भविष्य की ठोस कार्ययोजना प्रस्तुत की जा सकती है। फ्रीडमैन (1964) का विचार है कि प्रथमतः, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के विषय में चिन्तन की दृष्टि से नियोजन मुख्यतः विकासोन्मुख दिशा में कार्यरत है और सामूहिक निर्णयों के उद्देश्यों से गहराई से सम्बन्धित है तथा नीति एवं कार्यक्रम के निर्धारण एवं क्रियान्वयन में सतर्कतापूर्वक प्रयासरत है। जहां कहीं विभिन्न विचारधाराओं का प्रयोग किया जाता है अनुमानतः ऐसी स्थिति में नियोजन की पूर्ति सम्भावित हो जाती है।

पार्क एवं पार्क (1987) के अनुसार- नियोजन के उद्देश्य निम्नांकित हैं-

(i) सीमित संसाधनों से अधिकाधिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना;

(ii) अनावश्यक खर्च को सीमित करना; तथा

(iii) परिभाषित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु श्रेष्ठ क्रियाकलापों एवं उपायों को विकसित करना।

इस प्रकार नियोजन को निम्न रूप में परिभाषित किया जा सकता है कि यह एक संगठित, तार्किक एवं सतत् प्रयास है, जिसके द्वारा विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उपलब्ध सर्वश्रेष्ठ विकल्पों का चयन किया जाता है (शाह, 1972)। वस्तुतः निर्णय निर्माण की यह एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य इच्छित उद्देश्यों की पूर्ति करना है। यह भविष्य की दिशा में सततोन्मुख एवं मानव कल्याण के प्रति अबाध गति से प्रयत्नशील है।

प्रादेशिक नियोजन की संकल्पना (Concept of Regional Planning) -

प्रादेशिक नियोजन का अर्थ बहुत से लोगों के लिए विविध वस्तुएं प्रदान करने से है। कुछ अर्थों में यह निश्चित क्षेत्रों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु एक आर्थिक प्रोत्साहन एवं प्राथमिकता के तौर पर प्रदेशों के मध्य संसाधनों की केन्द्रीयता से सम्बन्धित है जबकि अन्य के लिए यह प्रदेश, उपप्रदेश तथा अधिक से अधिक क्षेत्र के भौतिक, आर्थिक और सामाजिक विकास नियोजन से सम्बन्धित है (गेराल्ड, 1978)। प्रादेशिक नियोजन को परिभाषित करते हुए इनका कहना है कि यह, महत्वपूर्ण प्रादेशिक समस्याओं के प्रति अति आवश्यक उत्तर है।

दूसरे शब्दों में- यह किसी प्रदेश के विकास हेतु अपने विभिन्न रूपों में एक प्रकार की दिशा निर्देशिका है। जो कि प्राकृतवास, आर्थिकी एवं सामाजिकता के समाकलित विकास का पर्यवेक्षण है। फ्रीडमैन (1972) के शब्दों में यह एक क्षेत्र विशेष के सामाजिक लक्ष्यों को सूत्र रूप में वर्णित करने की एक प्रक्रिया है। जबकि हिल हर्स्ट (1971) का कहना है कि यह एक निर्णायात्मक प्रक्रिया है जिससे एक क्षेत्र विशेष में उपलब्ध संसाधनों की सहायता से अधिक से अधिक लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके। सुन्दरम एवं प्रकाशाराव (1971) के अनुसार- प्रादेशिक नियोजन एक विधि, दर्शन एवं संयोजना है जो किसी क्षेत्र, क्षेत्र स्तर एवं आर्थिक विषमताओं के निवारण तथा समाकलित विकास का एक ढांचा प्रस्तुत करती है। एल.आर. सिंह (1986) का विचार है कि क्षेत्रीय नियोजन आवश्यक रूप से एक स्थानिक संश्लेषण है जो कि प्रस्तावित राष्ट्रीय नीति ढांचे के तहत आंतरिक

एवं बाह्य उपलब्धियों की प्राप्ति हेतु, धरातलीय विभिन्नताओं के आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय तत्वों के मध्य न्यायिक एकता बढ़ाने का प्रयास करता है जबकि आर.पी. सिंह (1982) का मत है कि प्रादेशिक विकास नियोजन- प्राकृतिक, मानवीय तथा अन्य संसाधनों का पूर्ण रूपेण उपयोग करने का प्रयास करता है और इस तरह से यह क्षेत्रों तथा क्षेत्रीय समूहों के विकास के परिणाम को वितरित करता है। जिससे सामाजिक- आर्थिक विषमताओं के अन्तर को कम करके जनसमूह के जीवन स्तर में वृद्धि की जा सकती है।

प्रो. मिश्रा (1978) का विचार है कि प्रादेशिक नियोजन राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु आवश्यक साधनों के रूप में पर्यवेक्षित होना चाहिए। यह उपराष्ट्रीय क्षेत्रों की संभाव्यताओं के मूल्यांकन की एक तकनीक है तथा सम्पूर्ण राष्ट्र के सर्वोत्तम लाभ के लिए उनका विकास करना है। यह आधारभूत संसाधनों के आधार पर आर्थिक सुअवसर, विभिन्नता, शक्ति, आर्थिक संतुलन, पर्यावरण सुधार और जनकल्याण के निर्माण के रूप में सभी आधारभूत लक्ष्यों को समाहित करता है। आगे चलकर उन्होंने इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि प्रादेशिक नियोजन का मुख्य कार्य अवखण्डीय तथा स्थानिक विकास प्रक्रिया के तार्किक समाकलन का एक प्रयास है ताकि विभिन्न क्रियाकलापों के मध्य परिपूरकों के लाभों और व्यय योग्य संसाधनों का अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए क्षेत्रों का फलदायनी उपयोग किया जा सके। अभियांत्रिकी की दृष्टि से प्रादेशिक नियोजन आवश्यक रूप से एक विश्लेषणात्मक विज्ञान है जिसका मुख्य उद्देश्य कार्य योजना का प्रतिपादन एवं उसका विश्लेषण करना है। यह एक बहुआयामी संकल्पना है जो कि विभिन्न विज्ञानों जैसे- भूगोल, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र के सिद्धांतों तथा समस्त मानवीय अनुभवों से अपने सैद्धांतिक आधार प्राप्त करता है। यह बहुविमीय भी है जो विभिन्न तत्वों जैसे- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तत्वों के सर्वांगपूर्ण संगठनों के मध्य एकता स्थापित करता है (साहा, 1981)।

प्रादेशिक नियोजन को एक विशेष प्रकार के वैज्ञानिक अनुबंध के रूप में लेना चाहिए। सर्वप्रथम यह भविष्योन्मुख सामाजिक लक्ष्यों तथा क्षेत्रीय प्रबंधों के बीच सम्बन्धों को परिलक्षित करता है। इस प्रकार शैक्षिक अनुशासन के रूप में प्रादेशिक नियोजन, राष्ट्रीय महत्व की विकासोन्मुख परियोजनाओं की संतुलित एकता के संदर्भ में अत्यधिक उपयुक्त ढांचों के निर्माण से सम्बन्धित है। इस प्रकार की विस्तृत प्रादेशिक योजनाएं- ग्रामीण निर्माण योजनाओं के पुनर्निर्माण, उद्योगों की अवस्थिति, ऐसे क्षेत्रों के लिए जिनमें विकास योग्य प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध हैं और महानगरीय क्षेत्रों के विकास के लिए भी प्रयोग किया जाना आवश्यक है (फ्रीडमैन, 1972)। वस्तुतः प्रादेशिक नियोजन की संकल्पना स्थैतिक नहीं है बल्कि क्षेत्र एवं योजना दोनों ही रूपों में गत्यात्मक है। यह मानवीय एवं प्राकृतिक सम्बन्धों के बदलते रिश्तों तथा क्षेत्रीय आधारों पर परिवर्तनीय है। प्रादेशिक नियोजन की विधियां तथा उद्देश्य चालीस- पचास वर्षों के बाद ठीक उसी प्रकार आज जैसे नहीं रहेंगे। जैसे विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में आज भी समान नहीं है।

विकसित देशों में, जहां औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया विगत दो या तीन सौ वर्षों से जारी है और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था बहुत समय पहले आत्म विकास की स्थिति तक पहुंच चुकी है तथा प्रति व्यक्ति आय स्तर भी उच्च है, उन विकसित देशों में प्रादेशिक नियोजन का उद्देश्य लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना एवं प्रदूषण रहित पर्यावरण का विकास करना है। इन देशों में अत्यधिक शहरीकरण एवं बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण के कारण उत्पन्न समस्याओं एवं कुप्रभावों को दूर करने के लिए नियोजन का प्रयोग एक साधन के रूप में किया जाता है। इसके विपरीत विकासशील देशों में, जहां औद्योगीकरण की अभी शुरुआत ही हुई है और नगरीकरण, बचत की दर तथा नियोजन अत्यल्प है तथा अधिकतर लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन- यापन कर रहे हैं एवं उपलब्धियों की दृष्टि से काफी पिछड़े हैं, प्रादेशिक नियोजन का उद्देश्य ऐसे प्रदेशों का मात्र

भौतिक विकास करना ही नहीं है बल्कि तीव्र गति से सम्पूर्ण राष्ट्र का हर सम्भव आर्थिक विकास करना भी है। सम्पन्न क्षेत्रों के मध्य विषमताओं को कम करना तथा अवनमित क्षेत्रों एवं सभी प्रदेशों की सम्भाव्यताओं एवं संसाधनों का हर सम्भव सर्वोत्तम प्रयोग करना है ताकि वे सम्पूर्ण राष्ट्रीय उत्पादों के उन्नयन में योगदान कर सकें (मुखर्जी, 1976)।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि-

(1) प्रादेशिक नियोजन एक विशिष्ट क्षेत्र के क्रियाकलापों में अधिकतम योगदान हेतु विवेकपूर्ण निर्णयों की एक सतत् प्रक्रिया है। यह एक प्रादेशिक क्षेत्र के विभिन्न उप भागों की अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक स्तर की गम्भीरतम् समस्याओं व समाकलित विकास के प्रति उत्तरदायी है।

(2) प्रादेशिक नियोजन के उद्देश्य- (अ) प्रदेश में निवास कर रहे लोगों की सामाजिक- आर्थिक दशाओं के उत्थान के लिए क्षेत्र के विस्तृत विकास से है;

(ब) प्रादेशिक संसाधनों एवं सम्भाव्यताओं का पूर्णरूपेण विकास करना;

(स) अन्तराप्रादेशिक एवं अंतर प्रादेशिक असमानताओं को कम करना;

(द) प्रादेशिक समस्याओं का प्राथमिकता के आधार पर निराकरण करना;

(य) सामाजिक न्याय को ध्यान में रखकर आर्थिक लाभों का वितरण; तथा

(र) जीवन स्तर में सुधार करना।

(3) प्रादेशिक नियोजन बहुअनुशासी एवं बहुआयामी है। यह एक संक्रियात्मक विज्ञान है और इसकी संकल्पना गतिशील है।

प्रादेशिक नियोजन निर्धारित समय में कार्यात्मक एवं स्थानिक समाकलन को उपलक्षित करता है। कार्यात्मक समाकलन से तात्पर्य एक क्षेत्र के लोगों के जीवन स्तर की दशाओं को उठाने हेतु आर्थिक एवं सामाजिक सेवाओं से है जबकि स्थानिक समाकलन के अन्तर्गत भौतिक क्षेत्र के संतुलित विकास हेतु उप क्षेत्र में सामाजिक- आर्थिक सेवाओं की वास्तविक स्थिति को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार क्षेत्र के कार्यात्मक अन्तर्सम्बन्ध उसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

प्रादेशिक नियोजन के सैद्धांतिक आधार (Theoretical Basis of Regional Planning) -

जैसा कि पूर्व में वर्णित किया जा चुका है कि प्रादेशिक नियोजन एक बहुविषयी संकल्पना है। इसलिए स्थानिक संगठनों के मानवीय क्रियाकलापों के विषय में सामाजिक विज्ञानों द्वारा उद्घाटित सिद्धांतों एवं परिकल्पनाओं के वर्तमान भंडार से इसका सैद्धांतिक आधार प्राप्त किया गया है। ये सिद्धांत एक विचार हैं जो कि मानवीय क्रियाकलापों के स्थानिक संगठनों, आर्थिक- सामाजिक परिवर्तनों एवं समान आर्थिक वितरण तथा आवास हेतु बेहतर भौतिक एवं मानवीय वातावरण को तीव्रगति से आगे ले जाने में सहायक है (मिश्रा, 1974)। इन प्रासंगिक सिद्धांतों को विस्तृत रूप से अध्याय तीन में पृथक- पृथक रूप से वर्णित किया गया है तथा इनकी सहायता से प्रादेशिक नियोजन हेतु एक विशिष्ट कार्ययोजना विकसित करने का प्रयत्न किया गया है। यहां पर संदर्भ रूप में संक्षिप्त चर्चा की जा रही है।

अवस्थितिक सिद्धांतों के प्रतिपादकों में सर्वप्रथम वानथ्यूनेन (1826) ने क्षेत्रीय संगठनों की व्याख्या करने का प्रयास किया। इन्होंने कुछ निश्चित कल्पनाओं के आधार पर प्रत्येक कस्बे के चारों ओर भू- उपयोग के प्रदर्शन के लिए समान केन्द्र वाले चक्रों के नमूने तैयार किए जिनमें प्रत्येक

चक्र सर्वोत्तम योग्य कृषि फसलों के उत्पादन के विशिष्टीकरण को प्रदर्शित करता था। वान थ्यूनेन द्वारा प्रतिपादित प्रतिरूप में परिवहन खर्च तथा विलग राज्य के अस्तित्व की वास्तविक अभिकल्पना प्रमुख उत्प्रेरणात्मक कारक थी। तत्पश्चात (क्रिस्टालर 1933) ने मानवीय बस्तियों की संख्या, आकार एवं वितरण के सामान्य सिद्धांतों को प्राप्त करने हेतु अपने शास्त्रीय केन्द्रीय स्थान सिद्धांत की व्याख्या प्रस्तुत की। सिद्धांत का निष्कर्ष यह है कि किसी क्षेत्र के विभिन्न सामाजिक- आर्थिक क्रियाकलाप कुछ निश्चित महत्वपूर्ण बिन्दुओं के चारों ओर केन्द्रित होते हैं जिन्हें केन्द्रीय स्थान का नाम दिया जाता है। ये केन्द्रीय स्थान, छोटे- छोटे गांवों से राष्ट्रीय महत्व के कस्बों तक पदानुक्रम के रूप में रहते हैं। लेकिन चूंकि, यह सिद्धांत केवल प्रादेशिक संरचना के सेवा कार्यों से सम्बन्धित है, इसलिए आर्थिक विकास से उसका सम्बन्ध अत्यन्त न्यून है। यही कारण है कि इसमें व्यापक एवं समाकलित विचारधारा का अभाव है। आगे चलकर यह विचारधारा लॉश एवं वेरी (1940) द्वारा नवीन लाभकारी विनियोग हेतु प्रादेशिक विकास के लिए संशोधित, विस्तृत एवं सूत्र रूप में वर्णित की गई है। प्रादेशिक विकास हेतु नव प्रवर्तनीय विचारधारा के आधार पर पेरॉक्स (1964) ने सुप्रसिद्ध विकास ध्रुव सिद्धांत प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत में इन्होंने विकास के असंतुलन की धारणा पर प्रकाश डालते हुए बताया कि विकास सभी जगह एक समान नहीं होता है। यह विकास ध्रुवों पर विभिन्न रूपों में तीव्रता से होता है। जो कि विभिन्न प्रयोजनों एवं स्रोतों से दृष्टिगोचर होता है। इसके उपरांत अनेक विद्वानों ने प्रादेशिक विकास हेतु विश्लेषणात्मक संयोजना के रूप में इस सिद्धांत में संशोधन प्रस्तुत कर अपना बहुमूल्य योगदान दिया है।

आर्थिक- सामाजिक विकास की संकल्पना नवाचरों के अंगीकृत और स्थानिक वितरण से अत्यधिक निकट का सम्बन्ध रखती है। हेगरस्टैण्ड (1952) ने नवाचरों के स्थानिक विस्तार की अभियांत्रिकी को समझने के लिए सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत किए हैं।

सारांशतः, ये अवस्थितिक सिद्धांत प्रादेशिक विकास के आर्थिक सिद्धांतों के क्रम में प्रादेशिक विकास नियोजन हेतु सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत करते हैं। यद्यपि इन सिद्धांतों का प्रत्यक्ष प्रयोग नहीं है तथापि इन विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विचार प्रादेशिक विकास में अति महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं।

क्षेत्रीय नियोजन के स्तर (Levels of Regional Planning) -

भारत जैसे विशाल देश में जहां विभिन्न संसाधनों की सम्पन्नता एवं आर्थिक विकास में प्रादेशिक विषमताएं विद्यमान है, एक नियोजन इकाई द्वारा प्रभाव पूर्ण कार्य सम्भव नहीं है। यहां पर एक राष्ट्रीय स्तर के नियोजन की अपेक्षा विभिन्न क्षेत्रों के लिए बहुस्तरीय नियोजन की आवश्यकता है ताकि सबसे छोटी इकाइयों तक की अभिलाषाओं की पूर्ति हो सके (चित्र संख्या 1.1) और विभिन्न स्तरों पर संसाधनों की सम्भावनाओं का व्यापक स्तर पर अनुरेखण किया जा सके (सिंह, 1986)।

प्रादेशिक विकास की अवधारणा विभिन्न स्तरों पर योजनाओं के क्रियान्वयन से सम्बन्धित है। विस्तृत रूप में यह कहा जा सकता है कि प्रादेशिक स्तरों पर जहां नियोजन पूर्ण हो चुका है, नियोजन की प्रक्रियाएं अलग- अलग हो सकती हैं। भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर, जहां अनेक विकास कार्यक्रम प्रभावशाली ढंग से संगठित एवं क्रियान्वित हैं, प्रादेशिक नियोजन सामान्यतः तीन स्तरों वृहद, मध्यम तथा लघु - स्तर पर किया जाता है। यह एक सापेक्षिक शब्द है, जो अधिक विवेकपूर्ण नियोजन तथा आवश्यक प्रदेश हेतु प्रयुक्त होते हैं।

वृहद स्तरीय नियोजन (Macro- level Planning) -

वृहद स्तरीय नियोजम अंतरप्रादेशिक समस्याओं के समाधान हेतु एक महत्वपूर्ण पूर्वाकांछित

A MULTI-LEVEL PLANNING ORGANISATION

NATIONAL DEVELOPMENT COUNCIL
- APPROVAL OF PLAN OBJECTIVES AND STRATEGY
- DECISIONS ON IMPORATANT POLICIES AND PROCEDURES

PLANNING COMMISSION
- PERSPECTIVE PLAN/ GROWTH RATES, TARGETS, CONSISTENCY
- SPATIAL PLAN
- RESOURCES AND FOREIGN AID
- INDICATIVE PLAN
- CENTRAL PLAN (STRATEGIC COMMODITIES/ SERVICES)
- COORDINATION AND DIRECTION OF STATE PLANS
- EVALUATION AND REVIEW

CENTRAL MINISTRIES/ DEPTTS
- CENTRAL SECTOR PLAN
  - PROPOSALS
  - IMPLEMENTATION
  - MONITORING/ EVALUATION
- SCRUTINY/ ADVICE ON STATE PLAN SCHEMES
- DIRECTION & CONTROL OF PRIVATE SECTOR

FINANCIAL & OTHER PUBLIC INSTITUTIONS
- CREDIT
- SPECIAL SCHEMES
- INCENTIVES
- ORGANISATIONAL SUPPORT
- TECHNICAL ADVICE

INTER-STATE AUTHORITIES/ CORP.
- REGIONAL PLANS
- RESOURCE DEVELOPMENT
- COOP. IN SURVEY RESEARCH ETC.

STATE PLANNING DEVELOPMENT DEPTTS
- PLAN FORMULATION
- INDICATIVE PLAN INTEGRATION WITH NATIONAL REGIONAL AND DISTRICT PLANS
- IMPLEMENTATION
- EVALUATION
- FEED BACK

- AGRICULTURE
- IRRIGATION
- POWER
- INDUSTRY
- TRANSPORT
- SOCIAL
- SERVICES
- SPECIAL PROGRAMMES (METROPOLITAN AREA DEVELOPMENT)

RESEARCH INSTITUTIONS/ UNIVERSITIES
- RESEARCH AND SURVEYS
- INNOVATIONS
- EXPERT ADVICE
- TRAINING
- PARTICIPATION IN STATE/ DIST RICT PLAN FOR MULATION

VOLUNTARY ORGANISATIONS
- PARTICIPATION IN PLAN IMPLEMENT ATION
- MOBILISATION OF PUBLIC OPINION/ KNOWLEDGE
- ORGANISATIONAL SUPPORT

DISTRICT INTRA- STATE REGIONAL AUTHORITIES
- IDENTIFICATION OF POTENTIAI
- LOCAL PRIORITIES
- PLAN FORMULATION AND INTEGRATION WITH STATE/ LOCAL PLANS
- IMPLEMENTATION
- EVALUATION AND FEED BACK
- MOBILISATION OF RESOURCES

- INFRASTRUCTURE
- PRODUCTION
- PLAN
- RURAL WORK
- LAND REFORMS
- TOWN PLANNING
- SOCIAL SERVISES
- SURVEYS

AUTHORITY TO TACKLE SPECIAL PROBLEM AREAS BELOW DISTRICT OR AREA CUTTING ACROSS DISTRICTS

VILLAGE URBAN AUTHORITIES

LOCAL PLANNING

FIG. 1.1

- AFTER K.V. SUNDARAM

योजना है। एक वृहद स्तरीय प्रदेश के संतुलित सामाजिक- आर्थिक विकास हेतु, पूर्णरूपेण विकास के विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए योजनाओं के तैयार करने का एक औपचारिक अथवा कार्यात्मक उपराष्ट्रीय प्रदेश है। इसके पास पूरक संसाधनों जैसे- भूमि, जल, खनिज, जनसंख्या इत्यादि की पर्याप्तता है जो विस्तृत एवं मध्यम स्तरीय विकास परियोजनाओं/ कार्यक्रमों के लिए सहज अनुगामी है। इस प्रकार एक वृहद स्तरीय प्रादेशिक योजना निम्न प्रादेशिक स्तर पर अधिक विस्तृत योजना के लिए राष्ट्रीय स्थानीय ढांचा प्रस्तुत करती है (मिश्रा, 1969)। यदि समस्याएं इस स्तर तक बढ़ी हों कि वे राज्य का अतिक्रमण कर रही हों तो इस स्तर पर नियोजन इकाइयों के अन्तर्गत एक से अधिक राज्य में या एक ही राज्य के कई हिस्सों को समाहित किया जा सकता है।

मध्यम-स्तरीय प्रादेशिक नियोजन (Meso- Level Regional Planning) -

मध्यमस्तरीय प्रादेशिक नियोजन, वृहद एवं सूक्ष्म-स्तरीय प्रादेशिक नियोजन/ योजनाओं की एक कड़ी है। इस प्रकार यह नियोजन मध्यम स्तरीय क्षेत्रों पर किया जाता है जो कि वृहद प्रदेशों के एक प्रकार से उपविभाग हैं. और नियोजन हेतु प्राथमिक आर्थिक इकाइयों का निर्माण करते हैं। कभी- कभी मध्यम स्तरीय नियोजन का विचार अंतर्राज्यीय प्रादेशिक सीमाओं वाले विशिष्ट समस्याग्रस्त क्षेत्रों के विकास से सम्वन्धित होता है।

सूक्ष्म-स्तरीय नियोजन (Micro- Level Planning) -

सूक्ष्म-स्तरीय नियोजन, छोटे क्षेत्रों के लिए विकास योजनाएं तैयार करता है। इसका मुख्य कार्य ग्रास रूट लेबिल के विकास से सम्वन्धित है तथा इसके अन्तर्गत ऐसे लोगों को नियोजन प्रक्रिया में शामिल किया जाता है, जो लाभ की अपेक्षा रखते हैं। लघु-स्तरीय नियोजन, स्थानीय संसाधनों के क्षमतापूर्ण उपयोग, उच्च स्तरीय आर्थिक विकास के प्राप्ति की सम्भावनाओं, आर्थिक लाभों के वितरण में सामाजिक न्याय, जीवन स्तर में सुधार और निर्णय लेने की प्रक्रिया में अधिकाधिक मात्रा में जनसमूह की सहभागिता से सम्वन्धित है। यह हल न किए जा सकने वाले क्रिया-कलापों तथा ग्रामीण क्षेत्र की विस्तृत सम्भावनाओं और कृषि एवं अन्य सम्वन्धित क्रियाओं को आश्रय प्रदान करता है।

वस्तुतः लघु-स्तरीय नियोजन हेतु विशिष्ट प्रादेशिक इकाइयों- जनपद, तहसील, विकासखण्ड अथवा गांवों का समूह इत्यादि आदर्श नियोजन इकाइयां हैं। इस उद्देश्य के लिए एक गांव को नियोजन इकाई के रूप नहीं लिया जाना चाहिए क्योंकि अपर्याप्त जनशक्ति एवं अत्यल्प संसाधनों की उपलब्धता की दृष्टि से यह एक अत्यन्त छोटी इकाई है। लघु-स्तरीय नियोजन की संकल्पना बहुस्तरीय, बहुखंडीय एवं बहुवर्गीय है। यह बहुस्तरीय इस अर्थ में है कि विभिन्न क्षेत्रीय स्तरों के लिए अलग- अलग विकास योजनाएं समाकलित करता है। गांवों के समूह, विकासखण्डों, तहसील एवं जनपद स्तर के सभी खंडों- उपखंडों की अर्थव्यवस्था पर ध्यान देने के कारण इसे बहुखण्डीय कहते हैं और समाज के विभिन्न वर्गों के लिए योजनाएं प्रस्तुत करने के कारण इसे बहुवर्गीय श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है।

लघु-स्तरीय नियोजन कार्योन्मुख नीचे से ऊपर (Bottom-up) विकास का एक बहुमूल्य उपागम है। इसका मुख्य कार्य ग्रास रूट लेबिल पर विकास करना है। इस उद्देश्य के लिए नियोजन में लोगों की सहभागिता तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया आवश्यक है।

लघु स्तर पर एक ओर नियोजन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सूचनाओं के एकत्रीकरण एवं योजना

निर्माण में लोगों की सहभागिता उपयोगी है तथा दूसरी ओर कार्यक्रमों अथवा परियोजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन में होने वाली त्रुटियों को कम किया जा सकता है। इतना ही नहीं इससे योजनाओं के क्रियान्वयन में हो रही अनियमितताओं को संकेतित करने और निराकरण में भी सहायता मिल सकती है।

वास्तव में, राष्ट्रीय लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को सफलतापूर्वक हासिल करने के उद्देश्य से यह अन्य स्तरों से सूचनाओं का आदान- प्रदान करता है, उचित सलाह ग्रहण करने के साथ- साथ फीड बैंक प्रदान करता है। वस्तुतः ग्रामीण लक्षणों से परिपूर्ण भारत जैसे विकासशील देश में लघु स्तरीय विकास नियोजन का विचार एकीकृत ग्रामीण विकास से अत्यधिक सम्बन्धित है। 'ग्रामीण' शब्द एक नाभिकेन्द्र मात्र है क्योंकि समग्र क्षेत्र या प्रदेश का विकास हुए बिना ग्रामीण क्षेत्र का विकास सम्भव नहीं हो सकता। सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्र विस्तृत रूप में कृषि पर आधारित होते हैं। जहां आधारभूत सुविधाओं की कमी तथा विकास की अवस्थापनाओं का प्रायः अभाव पाया जाता है। यह सुविधाएं कृषिगत अवस्थापनाएं और कृषि विकास की सुविधाएं स्वभावतः लघु-स्तरीय विकास नियोजन में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

वास्तव में लघु-स्तरीय नियोजन निश्चित आधारभूत स्वयं सिद्ध प्रमाणों पर आधारित होना चाहिए।मिश्रा एवं सुन्दरम (1980) के अनुसार-

(i) यह क्षेत्र में सामाजिक- आर्थिक परिवर्तनों के अनुसार होना चाहिए। इसलिए प्रारम्भ से ही गहनता एवं समावेश्यता प्राप्त करने के क्रम में सामाजिक एवं आर्थिक दोनों किस्म के विकासीय मापक आवश्यक हैं।

(ii) किसी भी परियोजना के संचालन में वैयक्तिक एवं सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों का आधारभूत समन्वित प्रयास एवं सहयोग आवश्यक है।

(iii) लघु-स्तरीय नियोजन हेतु आंतरिक अभिप्रेरणा, वाह्य प्रोत्साहन एवं उत्प्रेरणात्मक मध्यस्थता होनी चाहिए।

(iv) नियोजन/ परियोजना के सफल संचालन हेतु प्रारम्भ से ही स्थानीय निवासियों की विस्तृत सहभागिता आवश्यक है।

(v) विभिन्न स्तरों के मध्य सम्बद्ध अंतर्क्रियाओं एवं अंतराक्रियाओं के बीच पदानुक्रम के आधार पर इसे अन्य स्तरों से सम्बन्धित होना चाहिए।

(vi) इसे कार्योन्मुख प्रयास होना चाहिए जो कि प्रारम्भ से ही मध्यस्थता और अति आवश्यक समस्याओं पर बिना कोई समय लिए हुए नियोजन प्रयासों हेतु तुरन्त कार्यवाही की जा सके।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लघु-स्तरीय नियोजन स्थानीय जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु क्षेत्र के संतुलित सामाजिक- आर्थिक विकास तथा राष्ट्रीय लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति से सम्बन्धित है। इस स्तर के नियोजन में स्थानीय संसाधनों के उपभोग एवं सम्भाव्यताओं तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में स्थानीय जनता को शामिल किया जाना चाहिए जो कि विकास के लिए आशान्वित है।

लघु-स्तरीय नियोजन के उद्देश्य एवं विषय वस्तु (Aims and Objectives of Micro-Level Planning) -

लघु-स्तरीय नियोजन के उद्देश्यों एवं विषयवस्तु के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों ने समय- समय पर विचार प्रस्तुत किए हैं- आर.एन. त्रिपाठी एवं उनके सहयोगियों (1980) ने नियोजन के

निम्नांकित मुख्य उद्देश्य बतलाए हैं।

(1) क्षेत्र में संसाधनों के वर्तमान उपयोग के स्तर एवं क्षेत्रीय विकास स्तर का विश्लेषण करना।

(2) सामान्यतः विभिन्न वर्गों एवं विशेषतः निर्धन वर्ग के मध्य रोजगार एवं आय के संदर्भ में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विश्लेषण एवं मूल्यांकन करना।

(3) विकास केन्द्रों की पहचान करना, जो कि विकास क्रियाकलापों की प्रकिया को नियमित एवं विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं।

(4) अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में विकास की सम्भाव्यताओं का मूल्यांकन करना तथा विकास एवं रोजगार के सुअवसर प्रदान करने के लिए उपयुक्त कार्यक्रमों का अनुरेखण करना।

(5) कमजोर वर्गों के बीच आय के अंतर को कम करने तथा गरीबी रेखा से ऊंचे उठने में उनकी सहायता करने वाले उपयोगी जीवन आश्रय देने वाले उत्पादक कार्यक्रमों की पहचान करना।

(6) सम्पूर्ण जनपद योजना के ढांचे पर विकासखण्डीय योजना का समाकलन करना।

(7) विभिन्न क्षेत्रीय कार्यक्रमों के साथ खण्ड स्तरीय प्रदत्त सुविधा संरचनाओं तथा विभिन्न कार्यक्रमों के लाभोन्मुखी क्रियाकलापों को समाकलित करना।

भारत सरकार के योजना आयोग 1978 में विकासखण्ड स्तर पर कार्य करने वाले समूहों के प्रतिवेदन के अनुसार- लघु-स्तरीय नियोजन का अभिप्राय निम्नांकित लक्ष्यों (मिश्रा एवं सुन्दरम, 1980) को प्राप्त करने का एक साधन है-

(1) क्षेत्रीय आय एवं रोजगार को बढ़ाने हेतु अधिकतम विकास सम्भावनाओं का उपयोग करना।

(2) जनसंख्या के कमजोर वर्गों जैसे-लघु एवं सीमान्त कृषक, सहभागी कृषक, कृषि मजदूरों, ग्रामीण शिल्पकारों इत्यादि के विकास के आनुपातिक लाभों की अपेक्षा वृहद स्तरीय हितों की वृद्धि को सुनिश्चित करना।

(3) जनतांत्रिक वितरण प्रणाली के माध्यम से स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाएं, पेयजल, आवास, शिक्षा एवं न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को पूर्ण करना।

(4) उपरोक्त लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सामाजिक- आर्थिक अवस्थापनाओं का विकास करना।

(5) गरीब वर्गों की पसंदगी के संरक्षण के क्रम में वर्तमान में संस्थाओं/ संगठनों को पुनरोन्मुखी बनाना।

(6) विशेषतः निर्धनों को बरबादी से संरक्षण प्रदान करने के लिए स्वैच्छिक संगठनों का विकास करना।

(7) मूल्य चुकाने हेतु सम्पत्तियों के स्वामित्वों के सम्वन्ध में सुधारवादी एवं अत्यधिक समानतावादी संरचना का उन्नयन करना।

(8) रोजगार, विपणन एवं प्रसार वित्त नियोजन संस्थानों को स्थापित करने और कार्यकुशलता को बढ़ाकर तथा तकनीक को उच्चीकृत कर वर्तमान समय में गरीव वर्गों के व्यवसाय को बढ़ाना एवं रोजगार के सुअवसर प्रदान करना।

(9) सार्वजनिक कार्यों में रोजगार के सुअवसर प्रदान कर बेरोजगारी को समाप्त करना।

एवार्ड (1980) ने सामाजिक- आर्थिक संदर्शों में लघु-स्तरीय नियोजन के उद्देश्यों का ढांचा प्रस्तुत किया है।

सामाजिक उद्देश्य (Social Objectives) -

(1) अन्याय एवं शोषण का निराकरण करना;

(2) विषमताओं को समाप्त करना;

(3) नियोजन प्रक्रियाओं में रोजगार की सम्बद्धता को प्रोत्साहित करना और आत्मविश्वास की भावना में प्रोन्नति करना; तथा

(4) पारस्परिक सहायता हेतु लोगों को संगठित करना।

आर्थिक उद्देश्य (Economic Objectives) -

(1) पूर्ण रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना;

(2) स्थानीय संसाधनों एवं उत्पादन के साधनों को स्थानीय लोगों के नियंत्रण में वास्तविक समानता लाने के क्रम में उन्नतिशील बनाना;

(3) स्थानीय भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का प्रयोग करना एवं जहां कहीं आवश्यक हो,वाह्य निवेश द्वारा उनकी सम्पूर्ति करना;

(4) स्थानीय निवासियों की आधारभूत न्यूनतम् आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय संसाधनों के माध्मय से करना; तथा

(5) अवस्थापनात्मक सुविधाएं जैसे- परिवहन मार्गों, बाजार, शक्ति संसाधनों, कृषि निवेशों, वित्तरण केन्द्रों एवं सहकारी संस्थाओं इत्यादि का नियोजन करना।

आर.पी. मिश्रा एवं के.वी.,सुन्दरम (1980) ने लघु स्तरीय नियोजन के लक्ष्य निर्धारित किए हैं।

(1) वस्तुतः क्षेत्र में अधिक से अधिक अवसर प्रदान कर मौसमी तथा पूर्ण वेरोज़गारी को कम करना और स्थानीय निवासियों की आय को बढ़ाकर उनका आत्मविकास करना। इसका तात्पर्य यह हुआ कि सम्पूर्ण विकास कार्यक्रम एक पूर्ण आर्थिक रोजगार के उद्देश्यों से युक्त होना चाहिए।

(2) ग्रामीण निर्धनों के शोषण को रोकने के लिए निश्चित मापदण्ड तैयार करना तथा उनकी कुशलता की वृद्धि में सहायता करना और अपने पैरों पर खड़े होने के लिए सामर्थ्य प्रदान करना। तात्पर्य यह है कि इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत निर्धन वर्ग के लोगों को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान कर उनको आगे बढ़ने के सुअवसर जुटाना।

(3) स्थानीय क्षेत्रों में उत्पादन एवं उत्पादकता को बढ़ाना। इसका यह अर्थ हुआ कि विकास कार्यक्रमों को स्थानीय संसाधनों एवं सम्भावनाओं पर आधारित होना चाहिए और उनके दोहन के लिए गहन श्रम से परिपूर्ण स्वदेशोत्पन्न तकनीक को स्वीकार करना।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि लघु-स्तरीय नियोजन किसी क्षेत्र के विकास की संतुलित एवं सम्बद्ध रूपरेखा प्रस्तुत करता है। समाज के विभिन्न खण्डों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तैयार की गई कार्य योजना का उद्देश्य स्थानीय प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का उपयोग करना है जिससे ग्रामीण- निर्धनों को रोजगार एवं अन्य सुविधाएं प्रदान की जा सकें। इस विधि में योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन में लोगों की सहभागिता सुनिश्चित की जाती है।

प्रादेशिक एवं स्थानिक स्तर के नियोजन हेतु उपागम एवं संयोजनाएं (Strategies and Approaches for Planning at Regional & Local Levels) -

प्रादेशिक एवं स्थानिक स्तर पर नियोजन हेतु संयोजनाओं एवं उपागमों की समय- समय पर संस्तुति की जाती रही है लेकिन अभी तक निश्चित रूप से ऐसी कोई एक सर्वमान्य विधि का अन्वेषण नहीं किया जा सका है जो नियत रूप से सदैव एवं सर्वत्र इस पूर्ण विश्वास के साथ प्रयोग की जा सके कि उससे इच्छित परिणाम प्राप्त हो सकें (हेगिन्स, 1981)। यह उपयोगी होगा कि यदि ऐसे नियोजन उपागमों का मूल्यांकन किया जाए तो प्रादेशिक एवं स्थानीय स्तर पर विकास कार्यों को प्रभावित करने में समर्थ हों। ऐसी कुछ योजनाएं निम्न हैं-

विकास ध्रुव एवं विकास केन्द्र संकल्पना- (Growth Pole and Growth Centre Approach) -

विकास ध्रुव केन्द्र से बाहर की ओर जाने वाली तथा केन्द्र की ओर आने वाली शक्तियों के साथ एक आदर्श आर्थिक स्थान का सूचक है। इस संकल्पना के अनुसार एक ही समय में सर्वत्र एक समान विकास नहीं होता है। यह वृद्धि, तीव्रता एवं विस्तार लिए विभिन्न दिशा मार्गों में विविध प्रयासों के परिणाम स्वरूप विकास केन्द्र पर होती है। इसका उपयोग या तो विकेन्द्रित नीति के तहत किया गया था जिससे ध्रुवीकरण के प्रभाव में वृद्धि हो सके या उसे औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना हेतु सार्वजनिक व्यय की नीति के रूप में अपनाया गया था। यह संयोजना वास्तव में वृहद स्थानिक संगठनात्मक पक्षों अथवा प्रादेशिक विकास से बहुत अधिक सम्बन्धित नहीं है। अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट है कि विकास ध्रुव उपागम के माध्यम से सामाजिक न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करना अथवा क्षेत्रीय असमानताओं में कमी लाना सम्भव नहीं है।

वृद्धि केन्द्र उपागम, जिसे एक वैकल्पिक संयोजना समझा गया था क्षेत्रीय विकास के लिए अधिक प्रासंगिक है क्योंकि यह विकेन्द्रीकृत प्रतिरूप से सम्बन्धित है और केन्द्रीय स्थान सिद्धांतों को प्रमुख आधार के रूप में स्वीकार करता है। इस विधि का विशद् वर्णन तृतीय अध्याय में किया गया है।

एग्रोपोलिटन उपागम (Agro-Polition Approach) -

कृषि पर आधारित शहरीकरण को विकसित करने की नई विचार प्रणाली में जैसा कि निम्न क्रम के केन्द्रों के योगदान के अन्तर्गत उत्पादन संसाधित करना एवं विपणन को प्रदान करने की कृषि पर आधारित विधि को एग्रोपोलिटन उपागम कहा जाता है (शर्मा, 1984)। जॉन फ्रीडमैन द्वारा प्रतिपादित यह एक स्थानीय संगठनों का वैकल्पिक प्रतिरूप है। जो कि नगरीय औद्योगिक विधियों की समालोचना के परिणाम स्वरूप निर्मित हुआ है। इस सिद्धांत के अनुसार विकास पारिस्थितिकीय सीमाओं पर आधारित होना चाहिए, ग्रामीण विकास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और ग्रामीण विकास की योजना विकेन्द्रीकृत होनी चाहिए तथा ग्रामीण विकास सम्बन्धी योजनाएं सहभागितायुक्त तथा स्थानीय परिस्थितियों से गहराई से सम्बद्ध होनी चाहिए (मिश्रा, 1973)। इस नई संयोजना को लागू करने के लिए कृषि पर आधारित स्थानिक नीति को अपनाया जाना चाहिए। इस विधि का उद्देश्य विशिष्ट ग्रामीण पर्यावरण के अनुसार शहरीकरण के तत्वों के द्वारा ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन लाना है। इसका अर्थ यह है कि ग्रामीण लोगों को उनके खेत खलिहानों में शहरीय वातावरण का प्रादर्श प्रस्तुत कर, वे जहां हैं, वहीं रहने के लिए प्रोत्साहित करना है बजाय कि ग्रामीणों को शहरों की ओर आने हेतु प्रोत्साहित करें। इसके द्वारा यह सुझाव प्रस्तुत किया जाता है कि सामाजिक अन्तर्क्रियाओं का यह सिद्धांत एक गांव से लेकर अनेक गांवों तक होगा ताकि विस्तृत रूप में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक एग्रोपोलिटन भूभाग का निर्माण किया जा सके।

इस योजना से ग्रामीण एवं शहरी आय के स्रोत सार्वकालिक हो जाते हैं और रचनात्मक कार्यों को विविधता प्रदान कर उनकी असमानताओं को दूर किया जाता है। यह उपागम सामुदायिक विकास योजना के अत्यधिक निकट है। इस योजना में कृषि विकास पर अधिक बल दिया गया था, लेकिन गरीबों के जीवन स्तर को सुधारने में यह योजना असफल रही है। इसका कारण यह है कि अन्य ग्रामीण विकास संयोजनाओं को सही ढंग से लागू नहीं किया गया जिन्हें इसका समग्र अंग होना चाहिए था।

ग्रामीण औद्योगीकरण उपागम (Rural Industrialisation Approach) -

यह विधि कुटीर एवं लघु उद्योगों के विकास को प्रोत्साहित करती है तथा लघु औद्योगिक क्षेत्रों एवं उनके औद्योगिक विकास पर भी बल देती है। कुछ देशों में इस विधि को महानगरीय शहरों की वृद्धि को कम करने के लिए अपनाया गया है। लेकिन यह योजना बहुत सफल नहीं रही। यह वृहद एवं लघु खण्डों को जैविक सम्बद्धता प्रदान करने में एक प्रकार से विफल रही है तथा स्थानीय जनसंख्या को रोजगार के अतिरिक्त सुअवसर प्रदान कर पाने में भी सफल सिद्ध नहीं हो सकी है।

समन्वित ग्रामीण विकास एवं समन्वित क्षेत्र विकास उपागम (Integrated Rural Development & Integrated Area Development Approach) -

किसी भी क्षेत्र के सर्वांगीण विकास हेतु यह सबसे उपयुक्त विधि है। इसमें विशेषतया ग्रामीणजनों में आत्मनिर्भरता लाने, उत्पादकता बढ़ाने तथा लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने पर जोर दिया जाता है। श्रम आधारित कृषि, सार्वजनिक रोजगार सम्बन्धी कार्य, कृषि फार्मों से जुड़े हुए छोटे उद्योगों की स्थापना, स्वायत्तशासी, निर्णय की सहभागिता, शहरी जीवन पर आधारित ग्रामीण विकास एवं आत्म-निर्भरता प्रदान करने वाला संस्थागत ढांचा तथा विभिन्न क्षेत्रों की योजनाओं के समन्वय के लिए छः बुनियादी तत्व शामिल किए गए हैं (वाटरसन, १९७७)। 'रिहोवोट' संस्था का प्रमुख उद्देश्य कृषि क्षेत्र में सुधार एवं बदलाव लाना है। वस्तुतः यह सम्पूर्ण विधि निर्धनों के उत्थान हेतु क्रियान्वित है। समाकलित ग्रामीण विकास योजना वास्तव में एक तकनीकी नौकरशाही का स्वरूप बनकर रह गई है। यही कारण है कि वह अपने इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल नहीं हो सकी है। चूंकि समन्वित ग्रामीण विकास का उद्देश्य, ग्रामीण क्षेत्रों का समग्र विकास करना है, इसलिए यह समन्वित क्षेत्रीय विकास से बहुत अधिक भिन्न नहीं है। समन्वित क्षेत्रीय विकास उपागम का कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण क्षेत्र होता है, चाहे वह ग्रामीण क्षेत्र हो या नगरीय। जबकि पूर्ववर्ती विधि में वस्तुतः ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर जोर दिया जाता है। समन्वित क्षेत्र विकास योजना का अर्थ एक विशेष भौगोलिक भूभाग के समन्वित विकास से है जिसमें विकास के प्रमुख पक्षों जैसे- कृषि, उद्योग, यातायात, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन एवं अन्य ऐसी सेवाओं के विकास से है जिनसे ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में सुधार एवं सम्पूर्ण क्षेत्र का सर्वांगीण विकास किया जा सके। समन्वित क्षेत्र विकास की अवधारणा का अर्थ दो प्रकार- (1) कार्यात्मक एवं (2) स्थानिक समाकलन से है, जो कि एक-दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं। पूर्ववर्ती योजना का उद्देश्य उन सभी आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाकलापों के समाकलन से है, जो लोगों के जीवन स्तर को प्रभावित करते हैं जबकि पार्श्ववर्ती योजना का उद्देश्य क्षेत्र एवं एक विशेष स्थान में कार्यात्मक सम्बन्धों की पहचान से है।

आधारभूत आवश्यकता उपागम (Basic Needs Approach) -

इस विधि का उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों में रहने वाले गरीब लोगों को कुछ निश्चित लाभ पहुंचाने हेतु एक आवश्यक ढांचे का निर्माण करना है। इस उपागम के क्रियान्वयन से ग्रामीणों के जीवन

स्तर में निश्चित ही कुछ गुणात्मक सुधार आया है लेकिन यह गरीवी के कारणों का पता लगाने में सफल न सिद्ध हो सकने के कारण असफल रही है।

आधारभूत सेवा उपागम (Basic Service approach)

इस विधि का प्रमुख उद्देश्य जिसका कि समर्थन अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं, यथा- यूनिसेफ तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा किया गया है, सभी क्षेत्रों एवं सभी समुदायों विशेषतः समाज के कमजोर वर्ग एवं असहाय लोगों के लिए बुनियादी सेवाएं उपलब्ध कराना है।

सहगामी नियोजन एवं आत्मनिर्भरता विकास उपागम- (Participatory Planning and Self-Reliant Development Approach)

यह विधि बुनियादी सेवा उपागम से निकटस्थ सम्बन्ध रखती है। इस विधि में आत्मनिर्भरता लाने हेतु वृहद पैमाने पर विचार किया गया है। इससे स्वसम्पोषण विकास प्रक्रिया का जन्म होता है। इससे ग्रामीण समुदायों को अपने संसाधनों को गत्यात्मक स्वरूप प्रदान करते हुए अपने क्रियाकलापों को संगठित एवं व्यवस्थित करने की प्रेरणा मिलती है और शासन अत्यन्त जटिल रिक्तताओं को पूरा करने में ही मदद देता है।

लक्ष्य वर्ग एवं लक्ष्य समूह उपागम (Target Sector and Target Group Approach) -

लक्ष्य वर्ग उपागम एक सीमित उद्देश्य के लिए है, जबकि लक्ष्य समूह उपागम एक विशिष्ट सामुदायिक उपागम है।

विकास हेतु एकीकृत उपागम (Unified Approach to Development) -

इस विधि में राष्ट्रीय विकास योजनाओं एवं क्रियाकलापों को स्थानिक आवश्यकताओं के अनुसार विभाजित किया जाता है और विकास योजना विधि समूह से लघु-स्तरीय निर्णयों पर आधारित होती है ताकि राष्ट्रीय योजना नीति का सफलता पूर्वक क्रियान्वयन किया जा सके। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि अभी तक इनमें से किसी भी विधि ने विकास योजना के लिए समुचित मार्गदर्शन प्रदान नहीं किया है। वास्तव में ये गरीबी के कुछ पहलुओं को ही स्पर्श कर सकी हैं। किन्तु उसी समय सभी पहलुओं को स्पर्श करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सकी हैं जबकि सर्वांगीण विकास हेतु आवश्यक है कि सभी समस्याओं का एक साथ निराकरण किया जाए। अब यह अनुभव किया जाने लगा है कि नियोजन नीतियों का निर्धारण लोगों की बुनियादी, आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में किया जाए। जिसमें मानव कल्याण प्रमुखतः गरीब वर्गों के जीवन स्तर के उत्थान पर बल दिया जाए। साथ ही लाभ से वंचित एवं पिछड़े हुए लोगों की निर्धनता को दूर करने एवं उनके जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार लाने तथा आधारभूत बुनियादी सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिए योजनाओं का निर्माण किया जाए। साथ ही आर्थिक प्रगति पर विशेष जोर दिया जाए जिसका माध्यम नगरीय औद्योगीकरण से लेकर समन्वित ग्रामीण विकास विधि हो तथा उपलब्ध सभी मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का अधिकाधिक मात्रा में उपयोग करने के लिए योजना के सभी स्तरों पर लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए। इसके अलावा विशेषतः प्रादेशिक एवं क्षेत्रीय स्तरों पर नियोजित विकास की संयोजना में सहभागी योजना, मार्गदर्शन एवं मूल्यांकन का एक आत्मनिर्भर समाज बनाने में महत्वपूर्ण स्थान है (शर्मा एवं शास्त्री, 1984)।

वर्तमान अध्ययन में इन सभी कारकों पर विचार किया गया है और ऐसी विषयवस्तु के साथ विकास केन्द्र विधि स्वीकार की गई है ताकि समाकलित ग्रामीण/ क्षेत्रीय विकास सम्भव हो।

भारत में लघु स्तरीय नियोजन की आवश्यकता एवं उपयोगिता (Need and Rationale for Micro Level Planning in India) -

योजना अवधि की शुरुआत से ही देश में योजना का प्रारूप वस्तुतः अवखण्डीय एवं वृहद स्तरीय रहा है। यह अत्यधिक केन्द्रीकृत भी रही है। इसमें कार्यान्वयन की तुलना में योजना निर्धारण पर विशेष जोर दिया गया है। परिणामतः राष्ट्रीय स्तर पर प्राप्त उपलब्धियां ग्रामीण एवं गरीब लोगों तक नहीं पहुंच सकी हैं। जिसका परिणाम यह हुआ कि आबादी का एक प्रमुख भाग, विशेषतः गरीब वर्ग आर्थिक विकास की मुख्य धारा से बाहर ही रह गया है। समाज का सम्पन्न वर्ग तथा आर्थिक दृष्टि से देश के विकसित क्षेत्र ही गरीबों, अशिक्षित समुदाय तथा पिछड़े हुए लोगों की कीमत पर इस योजना से लाभान्वित होते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि गरीबी एवं अमीरी के मध्य अन्तर में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इस प्रकार, सभी वर्गों एवं सभी क्षेत्रों के लिए एक समान नीति न होने के कारण वर्तमान नियोजन तंत्र सभी क्षेत्रों एवं सभी समूहों को समान रूप से न्याय प्रदान करने में असफल रहा है।

यह योजना सूक्ष्म स्तर पर गरीब लोगों के जीवन स्तर को सुधारने और बड़ी संख्या में गरीवी एवं बेरोजगारी को दूर करने में असफल रही है। वस्तुतः ग्रामीण गरीवी को दूर करना, वेरोजगारी की स्थिति में कमी लाना, क्षेत्रीय सामाजिक एवं वर्गीय असमानता को दूर करना सामाजिक न्याय और समानता तथा कल्याण के सामाजिक- आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करना तभी सम्भव है जव योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन सूक्ष्म स्तर पर किया जाए। यहां पर न केवल इस बात की आवश्यकता है कि देश की उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो तथा राष्ट्रीय आय में विकास हो वल्कि आवश्यकता इस बात की है कि विकास के लाभों का वितरण इस प्रकार किया जाए कि समाज का कमजोर वर्ग विकास के लाभों को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त कर सके। इसके अलावा अन्य तथ्य यह है कि भारत जैसे विशाल देश में, जहां प्रादेशिक एवं स्थानीय स्तर पर वृहद मात्रा में विकास सम्बन्धी विषमताएं तथा सामाजिक संरचना में असमानताएं विद्यमान हैं साथ ही क्षेत्र विशेष एवं विशिष्ट समूहों में भी समस्याएं एवं सम्भावनाएं मौजूद हैं वहां विकास एवं उपर्युक्त समस्याओं के समाधान हेतु विकेन्द्रित योजना की महती आवश्यकता है। केन्द्रीकृत योजना विभिन्न क्षेत्रीय एवं वर्गीय सभी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकती है। इसलिए नियोजन को उस स्तर पर लाना आवश्यक है, जहां पर विकास योजना का निर्माण एवं क्रियान्वयन वेहतर ढंग से सम्भव हो (मिश्रा एवं सुन्दरम, 1980)। इसी प्रकार, नियोजन प्रक्रिया में ऐसे लोगों की सहभागिता एवं उपस्थिति अति आवश्यक है जिसके लिए यह योजना बनाई जा रही है। इस उद्देश्य को तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब लघु प्रादेशिक स्तर पर योजना लागू की जाए। लघु स्तरीय नियोजन इस वात को सुनिश्चित करता है कि स्थानीय आवश्यकताओं की अधिकाधिक पूर्ति हो सके। स्थानीय लोगों में योजना के प्रति उत्सुकता पैदा हो, स्थानीय लोगों की भागीदारी एवं सामाजिक न्याय की प्राप्ति हो सके, स्थानीय संसाधनों का उपयोग किया जा सके, गांव के गरीब लोगों के शोषण को रोका जा सके, ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों एवं स्थानीय संसाधनों के बहिर्गमन एवं दुरुपयोग को रोका जा सके। ग्रामीण पूंजी को वड़े शहरों में लाने से रोका जा सके। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थापना की जा सके। ग्रामीण क्षेत्रों के उत्पादन में वृद्धि करके लोगों का जीवन स्तर सुधारा जा सके और उच्च स्तरीय योजनाओं को बड़े पैमाने पर लागू कर सामाजिक- आर्थिक विकास के उद्देश्यों को पूरा किया जा सके। वस्तुतः लघु स्तरीय नियोजन एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन है जिसके माध्यम से ग्रामीण इलाकों में आत्म निर्भरता लाई जा सकती है तथा स्थानीय लोगों को अपने खुद के विकास से सम्वद्ध

किया जा सकता है। इस प्रकार भारत जैसे विकासशील देश में, जहां पर न केवल अधिक सामाजिक-आर्थिक दबाव है बल्कि तनाव भी है, लघु स्तरीय नियोजन की आवश्यकता पर जोर देने की प्रबल आवश्यकता है।

नियोजन प्रक्रिया (Planning Process) -

नियोजन एक अग्रगामी एवं अविरल प्रक्रिया है। इसकी प्रकृति विस्तृत तथा समाकलित एवं उपागम में अन्तरानुशासित होनी चाहिए। इसके अलावा नियोजन प्रक्रिया नवप्रवर्तनीय हो एवं योजनाकाल के मध्य में मूल्यांकन प्रक्रिया पर आधारित होनी चाहिए। नियोजन प्रक्रिया, क्षेत्र विशेष की समस्याओं की जानकारी तथा उनके निदान हेतु अपनाई गई नीतियों से प्रारम्भ होती है। इस प्रक्रिया की निम्नांकित पांच उपप्रक्रियाएं हैं- -

(i) वर्तमान स्थितियों का विश्लेषण;

(ii) लक्ष्य निर्धारण;

(iii) योजना निर्धारण;

(iv) योजना मूल्यांकन एवं नीति निर्धारण; तथा

(v) योजना का निष्पादन।

उपरोक्त पांचों उपतंत्र निरंतर चलने वाली प्रक्रिया का अंग हैं जो कि निम्नांकित विकास दर के माध्यम से होकर लागू होती हैं-

(i) नीति आयोजन;

(ii) नीति निरूपण;

(iii) नीति निष्पादन।

चित्र 1.2 से स्पष्ट है कि वर्तमान दशाओं का विश्लेषण, जो कि प्रदेशों की वर्तमान विशेषताओं की पहचान से सम्बन्धित है, सभी उपतंत्रों का आधारभूत उपतंत्र है। इसमें निम्नांकित वातें शामिल हैं-

(1) पर्यावरणीय विश्लेषण, जिसमें सामाजिक- आर्थिक- राजनैतिक परिवर्तनों, संस्थाओं, वर्गीय आवश्यकताओं एवंतकनीकी विकास सम्मिलित हैं,

(2) संसाधनों का विश्लेषण, जिसमें प्रवंधकीय आर्थिक- तकनीकी और क्षेत्र विशेष की वित्तीय स्थिति की जानकारी प्राप्त हो, और

(3) मूल्य विश्लेषण, जिसमें सामाजिक- सांस्कृतिक पक्षों, प्रश्नों और स्थानीय लोगों की इच्छाओं के विवरण का परीक्षण।

इस प्रयास में,इस प्रकार सर्वेक्षण का कार्य आंकड़ों का संग्रह एवं विश्लेषण तथा सामाजिक-आर्थिक परिवर्ती राशियों का प्रक्षेपण किया जाता है।

इस विधि में अगली उपविधि लक्ष्यों का निर्धारण है। पर्यावरणीय संसाधनों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि लक्ष्य निर्धारण मूल्य विश्लेषण पर आधारित है। आवश्यक रूप से यह योजना अवधि में जिस चीज को प्राप्त करना है, उसका विभाजन मात्र है। लक्ष्यों का निर्धारण अल्प एवं दीर्घ अवधि के लिए किया जाता है ताकि ज्वलंत क्षेत्रीय समस्याओं को प्रकाश में लाया जा सके और समन्वित विकास की स्पष्ट रूपरेखा तैयार की जा सके।लक्ष्य निर्धारण स्थानीय लोगों की आकांक्षाओं एवं

PLANNING PROCESS- A SCHEMATIC DIAGRAM
COMMUNICATION CHANNELS & PHASES
PRELIMINARY RECOGNITION OF PROBLEM AND DECISION TO ADOPT PLANNING
A
ANALYSIS OF EXISTING CONDITIONS
ENVIRONMENTAL ANALYSIS
RESOURCE ANALYSIS
VALUE ANALYSIS
GOAL FORMULATION
B
SHORT TERM
LONG TERM
PLAN FORMULATION
C
STRATEGY AND POLICY FORMULTION
IDENTIFICATION OF PROGRAMME & PROJECT
FIXTATION OF PRIORITPES
OPERATIONAL MEASURES FOR PLAN IMPLEMENTATION
BUDGET ALLOCATION
D
PLAN EVALUATION & DECISION MAKING
NATIONAL AND STATE POLICIES & PRIORITIES
LOCAL RELEVANCE
ECONOMIC EFFICIENCY
E
PLAN EXECUTION
ORGANIZATION FOR EXECUTION
PEOPLES PARTICIPATION
MONITORING AND EVALUATION
REVIEW
NEW PROBLEMS
1
2
3
4
5
6
7
8
9
10
11
12
13
14
15
16
17
18
19
20
21

FIG. 1.2

उपलब्ध संसाधनों की सम्भाव्यताओं पर आधारित होना चाहिए क्योंकि एक बार लक्ष्य एवं विषय वस्तु का निर्धारण हो जाने पर आने वाले समय में निर्णय एवं उपनिर्णय लिए जा सकेंगे। इस कारण लक्ष्य निर्धारण की प्रक्रिया में स्थानीय लोगों की सहभागिता आवश्यक है।

इस प्रक्रिया की अगली उपविधि योजना निर्धारण की है जो कि समन्वयन एवं समाकलन के महत्वपूर्ण साधन का कार्य करती है। यह सम्भावित कार्यविधि का भी निर्धारण करती है ताकि लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को भलीभांति प्राप्त किया जा सके। योजना निर्धारण में निम्नांकित बातें शामिल हैं-

(i) संयोजना एवं नीति निर्धारण;

(ii) कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं की पहचान;

(iii) वरीयताओं का निर्धारण;

(iv) योजना क्रियान्वयन हेतु संक्रियात्मक मापदण्ड; तथा

(v) वित्त व्यवस्था।

अगली उपविधि योजना मूल्यांकन एवं निर्णय लेने की है।चूंकि वैकल्पिक सुझावों की संख्या अधिक हो सकती है, इसलिए कार्यक्रम सर्वोत्तम गतिविधि के निर्धारण हेतु मूल्यांकन आवश्यक है। मूल्यांकन एवं निर्णय लेने का कार्य यद्यपि अत्यन्त कष्टप्रद होता है लेकिन योजनाओं के सफल क्रियान्वयन हेतु अत्यन्त उपयोगी है। इसमें समाज के विभिन्न क्षेत्रों एवं विभिन्न वर्गों के लोगों की आवश्यकताओं एवं अभिलाषाओं का भी लेखा- जोखा रखना पड़ता है तथा ऐसी स्थितियों पर भी नजर रखनी पड़ती है, जो भविष्य में उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिए इस कार्य में लगे हुए लोगों के लिए यह आवश्यक है कि वे कार्य करने में दक्ष एवं ईमानदार हों। मूल्यांकन एवं निर्णय लेने के कार्य में निम्नांकित बातें सम्मिलित हैं- -

(i) राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय वरीयताएं;

(ii) स्थानीय प्रासंगिकता; तथा,

(iii) आर्थिक दक्षता।

इस विधि में अंतिम उपविधि योजना निष्पादन की विधि है। यह एक ऐसा कार्य है जो निर्धारित नीतियों को प्रभावशाली ढंग से लागू करता है। यह इस योजना की स्थाई विशेषता है। इसके लिए सूक्ष्म एवं अविरल सर्वेक्षण की आवश्यकता है। योजना क्रियान्वयन की सफलता निम्नांकित बातों पर निर्भर करती है-

(i) निष्दापन हेतु संगठन;

(ii) जनसहभागिता; तथा

(iii) संचालन एवं मूल्यांकन।

उपरोक्त पांचों उपविधियां आपस में एक- दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा मार्गदर्शन एवं निर्देशों की विभिन्न प्रक्रियाओं से भी सम्बद्ध हैं। साथ ही दूसरी ओर सूचनाओं एवं शंकाओं से भी सम्बद्ध हैं। मॉडल चित्र संख्या.2सम्पूर्ण योजना की सफलता संचार श्रृंखलाओं की क्षमता एवं प्रभाविता पर आधारित है।

नियोजन प्रक्रिया का अंत उसके क्रियान्वयन एवं पुनर्निरीक्षण से ही नहीं होता है। जब योजना

का एक चक्र पूरा हो जाए तो इस बात का विश्लेषण करके, कि इच्छित लक्ष्य की पूर्ति हुई है या नहीं, योजना का दूसरा चक्र प्रारम्भ किया जाना चाहिए। अगर ऐसा पाया जाता है कि योजना से वांछित परिणाम प्राप्त हो गए हैं, तो नियोजन दूसरी समस्याओं के समाधान की दिशा में गतिमान होगा और यदि परिवर्तन एवं परिणाम असंतोषजनक है तो सम्पूर्ण प्रक्रिया का वही चक्र फिर से संचालित होगा।

इस प्रकार नियोजन प्रक्रिया- कार्यक्रमों की एक ऐसी श्रृंखला है जिसमें क्षेत्रीय सर्वेक्षण एवं विश्लेषण के सम्मिलित होने के साथ- साथ आवश्यकताओं का परीक्षण भी किया जाता है। इतना ही नहीं, इसके अन्तर्गत विकास की सम्भावनाओं का पता लगाया जाता है, उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है और वैकल्पिक व्यूह रचना का प्रयोग एवं परीक्षण किया जाता है। लेकिन यह इस प्रक्रिया का अंत नहीं है जैसा कि समकालीन अध्ययन से परिलक्षित है कि योजना, निर्माण के सम्बन्ध में अनन्त है। यह अविरल चलने वाली प्रक्रिया का एक अंग है जिसका कि समय- समय पर क्षेत्रीय स्थितियों अथवा समस्याओं के अनुसार पुनर्निरीक्षण होता रहे एवं तदनुसार उसमें सुधार भी होता रहे। नियोजन प्रक्रिया बहुचक्रीय है। प्रथम के बाद दूसरा चक्र स्थान ग्रहण कर लेता है और दूसरे के बाद तीसरा। इस प्रकार यह प्रक्रिया निरंतर जारी रहती है। पूर्ववर्ती चक्रों के परिणामों एवं अनुभवों से एक नई दिशा प्राप्त होती है तथा उसके अनुसार अगले चक्र में सुधार कर लिया जाता है। इस सम्बन्ध में पोपर का विचार है कि प्रत्येक सामाजिक कार्य समस्या के निदान हेतु एक अविरल प्रक्रिया है। इसका प्रारम्भ एवं अंत समस्या से ही होता है। इस प्रकार नियोजन प्रक्रिया बहुचक्रीय है फिर भी समस्या का स्वरूप विभिन्न स्थितियों एवं चक्रों के अनुसार अलग- अलग होता है।

पंचवर्षीय योजनाओं में लघु स्तरीय नियोजन (Micro-level Planning in Five Year Plans) -

यद्यपि लघु स्तरीय नियोजन की विचारधारा का प्रतिपादन प्रथम पंचवर्षीय योजना के निर्माण के समय पर ही किया गया था और जिला स्तरीय नियोजन का कार्य द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल से प्रारम्भ हुआ और तब से आज तक जारी है, किन्तु हाल ही में इस लघुस्तरीय नियोजन की अवधारणाओं, प्रारूप एवं गुणात्मकता के क्षेत्र में कुछ रुकावटें पैदा हो गई हैं (मिश्रा एवं सुन्दरम, 1980)। प्रथम दो पंचवर्षीय योजनाओं में लघुस्तरीय नियोजन के सम्बन्ध में गम्भीरता से ध्यान नहीं दिया गया, मात्र समय- समय पर योजना की चर्चा भर कर ली गई और अत्यन्त लघु स्तर पर सहभागिता सुनिश्चित की गई (योजना आयोग 1957)। हालांकि सामुदायिक विकास योजना द्वितीय पंचवर्षीय योजना से लागू की गई। सामुदायिक विकास योजना का महत्वपूर्ण योगदान यह रहा कि इसने एक संस्था को जन्म दिया जैसे विकासखण्ड कार्यालयों की स्थापना। इनका उद्देश्य अत्यन्त लघु स्तर पर विभिन्न योजनाओं को लागू करना था। दूसरी पंचवर्षीय योजना में जिला स्तरीय नियोजन का उद्देश्य स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना तथा योजना के प्रति लोगों में उत्साह पैदा करना था। इतना ही नहीं, इसका उद्देश्य स्थानीय लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करना एवं स्थानीय संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग एवं इन्हें गतिमान बनाना भी था किन्तु इसके लिए कोई विधितंत्रीय ढांचा विकसित नहीं किया गया (योजना आयोग, 1956)।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय विकास को अत्यधिक महत्व दिया गया। इस काल में विशेष रूप से नगरीय एवं प्रादेशिक विकास के लिए वृहद योजना तैयार करके क्षेत्रीय विकास एवं उसकी समस्याओं पर गहन चिन्तन किया गया (सिंह, 1982)। इस स्थानीय योजनां को विकसित करने एवं प्रकाश में लाने का श्रेय प्रो. गाडगिल (1966) को जाता है।

भारतीय नियोजन अवधि में पहली बार चतुर्थ पंचवर्षीय योजना काल में (योजना आयोग 1969-74) निचली सतह से क्षेत्रीय योजना एवं विकास की शुरुआत की गई। यह महसूस किया गया कि केन्द्रीकृत राष्ट्रीय स्तर की योजना स्थानीय संसाधनों एवं आवश्यकताओं को पहचानने में असफल रही है। इसलिए लघु-स्तरीय नियोजन की विचारधारा, जिसमें जनपद को नियोजन की इकाई का आधार माना गया, प्रारम्भ की गई। चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाकाल में, योजना आयोग द्वारा जिला योजना को विकसित करने का अथक प्रयास किया गया तथा जिला स्तरीय नियोजन हेतु मार्गदर्शन प्रदान किए। इसमें पहली बार कुछ स्पष्ट क्षेत्रीय नीतियां निर्धारित की गई एवं संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए ठोस कदम उठाए गए। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के दौरान अतिविशिष्ट क्षेत्रीय, वर्गीय एवं प्रादेशिक योजनाएं प्रारम्भ की गईं, जो निम्नांकित हैं:-

(1) लघु कृषक विकास अधिष्ठान;

(2) सीमांत कृषक एवं कृषि मजदूर विकास अधिष्ठान;

(3) न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम;

(4) पहाड़ी क्षेत्रों के विकास की योजना;

(5) जनजातीय क्षेत्रों के विकास की योजना;

(6) सूखा प्रभावित क्षेत्र के लिए योजना; तथा

(7) शुष्क कृषि भूमि के समन्वित विकास के लिए प्रमुख योजनाएं।

पंचम पंचवर्षीय योजना काल में (योजना आयोग, 1974-79) ग्रामीण इलाकों के समन्वित एवं संतुलित विकास के लिए विकासखण्ड स्तर पर लघु-स्तरीय नियोजन पर बल दिया गया। इसमें जिले को विकासखण्ड एवं राज्य के बीच की कड़ी स्वीकारा गया। श्रीमान धर, जो कि तत्कालीन योजना मंत्री थे, निचले स्तर पर योजना की आवश्यकता एवं महत्व के विषय में तर्क दिया। इन्होंने चेतावनी देते हुए इस तथ्य पर बल दिया कि जब तक नियोजन निचले स्तर पर लागू नहीं किया जाएगा तब तक पांचवीं पंचवर्षीय योजना का मध्यावधि मूल्यांकन भी विकास योजना की दुर्बलता को प्रकट करेगा। इन्होंने इस तथ्य पर पुनः प्रकाश डाला कि नियोजन प्रक्रिया सबसे पहले जनपद स्तर पर शुरू हो तथा फिर उससे छोटे स्तर यथा- गांव समूहों, विकासखण्ड तथा तहसील तक पहुंचे। पूर्ववर्ती योजनाओं का मुख्य दोष यह था कि निचले स्तर के लोगों की सहभागिता एवं उनके विकास पर ध्यान नहीं दिया गया था (धर, 1972)। विशिष्ट क्षेत्रीय योजनाएं, जो कि चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाकाल में प्रारम्भ की गईं, पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भी लागू रहीं। नियंत्रण क्षेत्र विकास योजना, मरुभूमि विकास योजना एवं सम्पूर्ण ग्राम विकास योजना को भी पांचवीं पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भ किया गया। समन्वित क्षेत्रीय विकास की अवधारणा, जो कि चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाकाल में अस्तित्व में आयी, पांचवीं पंचवर्षीय योजना में इसका महत्व और भी अधिक बढ़ गया। यही कारण है कि समन्वित क्षेत्र विकास के लिए अनेक संयोजनाएं- जैसे कि लक्ष्य वर्ग उपागम, लक्ष्य समूह उपागम, विकास केन्द्र उपागम, अविकसित क्षेत्र विकास उपागम, पूर्ण रोजगार युक्त क्षेत्रीय योजनाएं, सर्वांगीण विकास हेतु प्रकाश में आई।

छठी पंचवर्षीय योजना (योजना आयोग, 1978-83) में अविस्थिति विशिष्ट नियोजन की स्थापना पर विशेष बल दिया गया, जिसका उद्देश्य उत्पादन में वृद्धि करना, सामाजिक न्याय एवं ग्रामीण लोगों को रोजगार के सुअवसर प्रदान करना था। इसके अतिरिक्त विकासखण्ड स्तर पर समन्वित ग्रामीण विकास योजना पर जोर देते हुए इसमें लघु स्तरीय नियोजन पर विशेष बल दिया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में (योजना आयोग, 1985-90) लघु-स्तरीय योजना पर विशेष बल प्रदान किया गया। हालांकि यहां इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि गरीबी उन्मूलन योजनाएं, राष्ट्रीय ग्रामीण योजना, समन्वित ग्रामीण विकास योजना एवं ग्रामीण भूमिहीन रोजगार योजना आदि विविध योजनाएं अपने आप में गरीबी एवं बेरोजगारी को दूर करने में अपेक्षानुसार सक्षम सिद्ध नहीं हो सकीं। आगे यह एक महत्वपूर्ण कार्य है कि सभी लाभदायक योजनाओं को समन्वित रूप प्रदान किया जाए, विशेषतः विभिन्न वर्गीय तथा क्षेत्रीय विकास योजनाओं को, ताकि जिला/विकासखण्ड स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का उपयुक्त मात्रा में दोहन करके और उनकी सम्भाव्यताओं का अन्वेषण कर लोगों की आधारभूत आवश्यकताएं पूरी की जा सकें। इस योजना में यह महसूस किया गया कि बिना संरचनात्मक परिवर्तनों से सम्बद्ध सामाजिक परिवर्तन (शैक्षिक विकास, सूझबूझ या समझदारी में वृद्धि, दृष्टिकोण में परिवर्तन, उद्देश्य एवं संस्कारों में परिवर्तन आदि) के गरीबों की आर्थिक दशा में सुधार नहीं लाया जा सकता।यही कारण है कि इस योजना काल में निचले स्तर पर चयनित संस्थाओं द्वारा गरीब लोगों की सहभागिता तथा विकास प्रक्रिया में उनके अपने निजी संगठनों के माध्यम से कार्य सम्पन्न कराने पर विशेष जोर दिया गया है। हालांकि समीक्षात्मक अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि योजना आयोग एवं सरकार ने लघु-स्तरीय प्रादेशिक नियोजन के विकास पर कितना भी प्रयास क्यों न किया हो, लेकिन व्यावहारिक दृष्टिकोण से लघु-स्तरीय नियोजन को अभी भी अपना पैर जमाने में समय लगेगा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना काल में (योजना आयोग, 1990-95) में समाज के सभी वर्गों के उत्थान का ध्यान रखते हुए उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप छोटी- बड़ी योजनाएं तैयार करने, राज्यों/ प्रदेशों के अन्तर्गत क्षेत्रीय असंतुलन को समाप्त करने तथा नियोजन को अधिक कारगर बनाने हेतु इस प्रक्रिया में जनता को शामिल करके उनके सुझाव आमंत्रित कर उन पर विचार करने पर बल दिया गया है।इस योजना की विकास दर 6 प्रतिशत के लक्ष्य पर टिकी है। वस्तुतः नियोजन हेतु प्रादेशिक सक्रियता को विकसित करना आवश्यक है। इस दिशा में अधिकारियों, राजनीतिज्ञों, नियोजकों एवं अन्य आर्थिक प्रतिनिधियों द्वारा क्षमतापूर्ण प्रदेशों की पहचान कर जनता के श्रम एवं कार्यक्षमता पर आधारित उद्योगों एवं आर्थिक क्रियाकलापों को स्थापित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। नियोजन हेतु एक प्रादेशिक प्रशासन की भी आवश्यकता है जो कि सूक्ष्म स्तर के सर्वांगीण विकास में प्रमुख भूमिका निभाने में समर्थ हो।

भारत में लघु-स्तरीय नियोजन (Micro-Level Planning in India) -

प्रशासनिक एवं शैक्षणिक दोनों ही दृष्टियों से भारत में लघु-स्तरीय नियोजन का विचार पूर्णतः नवीन है। देश की समस्याओं के समाधान हेतु प्रादेशिक नियोजन के सामाजिक संदर्भों के अलावा यह एक प्रकार से 1960 के दशक के पूर्व अस्तित्त्वहीन था। यद्यपि चटर्जी (1940) एवं राव (1949) ने कुछ प्रादेशिक अध्ययनों एवं प्रादेशिक सर्वेक्षणों को भी प्रादेशिक नियोजन के परिप्रेक्ष्य में आयोजित किया गया लेकिन यह कार्य मात्र मध्यम एवं वृहद स्तरों पर ही हो सका। वैसे प्रादेशिक नियोजन की अवधारणा एवं उसके विविध पक्षों के अध्ययन की दिशा के सम्बन्ध में अनेक शोधार्थियों का ध्यान आकर्षित हुआ और उन्होंने इस विषय पर महत्वपूर्ण अध्ययन भी किए लेकिन लघु-स्तरीय नियोजन को 1960 के दशक के दौरान कोई उचित स्थान नहीं मिल पाया। प्रादेशिक नियोजन के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालते हुए प्रकाशाराव (1949) ने प्रादेशिक नियोजन पर साहित्य उपलब्ध कराकर इस दिशा में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। प्रादेशिक नियोजन के लिए एक सैद्धांतिक ढांचा के सम्बन्ध में अपनी संक्षिप्त समालोचना आख्या में इन्होंने नियोजन सिद्धांतों के लिए विभिन्न अवधारणाओं की प्रासंगिकता का परीक्षण किया। राव (1949) ने

मुजफ्फरनगर जनपद के एक विशिष्ट अध्ययन में जिला स्तर पर लघु-स्तरीय नियोजन के महत्व को प्रतिपादित करने का बहुमूल्य प्रयास किया है। पंडित (1968) ने लघु प्रदेशीय नियोजन एवं वर्धा जनपद के लिए अवस्थापनाओं की योजना के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन्होंने लघु-स्तरीय प्रदेशों के लिए विकास नियोजन की वैकल्पिक विधियों की संगठनात्मक तकनीकों के कलमबद्ध महत्व का भी परीक्षण किया। मिश्रा (1967-1969) ने भी विभिन्न स्तरों पर प्रादेशिक नियोजन के सम्बन्ध में सराहनीय कार्य का आधार प्रस्तुत किया है। इन्होंने नवाचरों के स्थानिक वितरण विशेषतः समाज के आर्थिक- सामाजिक परिवर्तनों के संदर्भ में भी विचार- विमर्श किया (मिश्रा, 1966-1972)।

भट्ट (1964, 65, 67, 68, 69) ने एक अध्ययन में वृहद-स्तरीय प्रादेशिक नियोजन के सम्बन्ध में अपना ध्यान केन्द्रित किया और भारत के संदर्भ में प्रादेशिक नियोजन की आवश्यकता पर गम्भीरता से वकालत की। पाल (1962, 63, 69) ने मुख्यतः राष्ट्रीय विकास के लिए प्रादेशिक विश्लेषणों पर ध्यान केन्द्रित किया। हालांकि दोनों ही शोधकर्ताओं ने लघु स्तर पर नियोजन की दिशा में कोई खास ध्यान नहीं दिया। इनके अलावा वनमाली (1967), फिशर (1968) एवं लहरी (1968) ने स्थानिक नियोजन के सम्बन्ध में आवश्यक कार्य कर प्रादेशिक नियोजन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया जैसे वनमाली ने केन्द्र एवं उसके परिधीय क्षेत्र की समस्याओं के द्वैतवाद की ओर ध्यान केन्द्रित किया और इन दोनों के समाकलन का सुझाव दिया।

फिशर ने स्थानिक नियोजन की आवश्यकता पर जोर दिया और लहरी ने हल्दिया प्रदेश के लिए एक विकास योजना प्रतिपादित की।

इस प्रकार 1960 के दशक में राष्ट्रीय विकास हेतु प्रादेशिक नियोजन की आवश्यकता पर मुख्य रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया। लेकिन वे वृहद स्तर तथा निचले स्तरों के प्रादेशिक नियोजन हेतु कोई सार्थक अवधारणिक या विधितांत्रिक आधार प्रस्तुत करने में असफल रहे।

1970 के दशक में अध्ययन (Studies During Seventies) -

सातवीं दशाब्दी के दौरान स्थानिक विकास एवं नियोजन के क्षेत्र में वैज्ञानिक विधियों पर आधारित अनेकों प्रशंसनीय अध्ययन आयोजित किए गए जो कि न केवल विषय सम्बन्धी ज्ञान की दृष्टि से धनी हैं बल्कि सार्थक अवधारणिक एवं विधितांत्रिक आधार भी प्रदान करते हैं। ये अध्ययन लघु-स्तरीय नियोजन की बहुत अच्छी तरह से व्याख्या करते हैं। यह शिक्षाविदों, नियोजकों एवं इस दिशा में कार्यरत लोगों के मध्य विचार- विमर्श का एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है और महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। यह महसूस किया गया कि केन्द्रीकृत नियोजन विभिन्न क्षेत्रीय स्तरों पर उपलब्ध सभी संसाधनों, आवश्यकताओं एवं अभिलाषाओं की ओर पर्याप्त ध्यान दे सकता है। इसलिए निचले स्तर पर प्रादेशिक नियोजन विशेषतः लघु-स्तरीय नियोजन की दिशा में कार्य करने के लिए जोरदार वकालत की गई। 1970 के दशक में लघु-स्तरीय नियोजन सम्बन्धी विभिन्न प्रतीक अध्ययनों के सम्बन्ध में एन.आई.सी.डी., एन.आर.डी. हैदराबाद, गुजरात, क्षेत्रीय संस्थान अहमदाबाद, भारतीय सांख्यिकीय संस्थान, नई दिल्ली, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से कार्य करने वाली परिषदों,(AVARD) विकास अध्ययन संस्थान, मैसूर विश्वविद्यालय, विकास केन्द्रों पर नियामक शोध का केन्द्रीय अनुसंधान सेल तथा अनेक शोध कर्ताओं द्वारा कार्य किए गए। इस दिशा में किए गए कुछ नियामक कार्य निम्नांकित हैं।

सेन (1972) ने लघु-स्तरीय नियोजन एवं ग्रामीण विकास केन्द्रों में लघु-स्तरीय नियोजन एवं ग्रामीण विकास केन्द्रों के विभिन्न पक्षों पर शोध पत्रों का संग्रह किया, जो कि लघु-स्तरीय नियोजन के संदर्भ में सार्थक अवधारणा एवं विधि-तांत्रिक आधार प्रदान करते हैं। मिश्रा (1972) ने जनपद

स्तरीय नियोजन के विभिन्न पक्षों पर तर्कपूर्ण परीक्षण प्रस्तुत किया जबकि धर ने निचले आधारभूत स्तर पर नियोजन की आवश्यकता पर बल दिया। पाठक (1973), बनर्जी एवं फिशर (1976), नरायन एवं राव (1974), रेड्डी एवं खाटू (1975) ने अपने अवधारणिक अध्ययनों में लघु-स्तरीय नियोजन के विभिन्न आयामों पर तर्कपूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। इनके अतिरिक्त कुछ और भी उत्कृष्ट अवधारणिक अध्ययन हुए हैं जिनमें शाह (1972), मित्रा (1977), मेहता (1978), भौमिक (1978), अरोरा (1979), रेड्डी (1979) द्वारा लघु-स्तरीय नियोजन के विभिन्न पक्षों पर प्रस्तुत कार्य उल्लेखनीय हैं। एल.के. सेन (1975) द्वारा जनपदीय नियोजन के लिए प्रस्तुत प्रतिरूप एवं विधितांत्रिक प्रस्ताव एक महत्वपूर्ण एवं प्रथम प्रयास है। शाह (1974) ने तलाला ब्लाक (गुजरात) के लिए एक बहुवर्गीय उपागम पर आधारित समाकलित विकास की योजना प्रस्तुत की और भट्ट (1976) ने करनाल क्षेत्र (हरियाणा) के अपने अध्ययन में लघु-स्तरीय नियोजन हेतु मानवीय बस्तियों एवं भूमि उपयोग के स्थानिक समाकलन पर जोर दिया है। कायस्थ एवं प्रसाद (1978) ने भी लघु-स्तरीय नियोजन पर उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

मिश्रा, सुन्दरम एवं राव (1974) ने विभिन्न स्तरों पर प्रादेशिक विकास नियोजन हेतु केन्द्रीय स्थान सिद्धांत, विकास ध्रुव सिद्धांत और स्थानिक वितरण सिद्धांत के समाकलन पर आधारित एक नवीनतम उपागम की वकालत की है। विभिन्न आर्थिक संदर्भों में संयोजना की प्रयोज्यता का परीक्षण भी अनुभवात्मक अध्ययनों द्वारा किया गया है। सिंह (1972) ने गोरखपुर प्रदेश के अपने अध्ययन में समाकलित प्रादेशिक विकास के लिए स्थानिक संगठनों का एक प्रतिरूप प्रस्तुत किया है। राय एवं पाटिल (1977) ने समाकलित ग्रामीण विकास हेतु विशेषतः विकासखण्ड स्तर पर आर्थिक विकास की अवस्थापनाओं के साथ सामाजिक सेवाओं के लिए अवस्थिति निर्णयों के निर्माण के सम्बन्ध में मार्गदर्शन प्रस्तुत किया है। त्रिपाठी (1980) एवं उनके सहयोगियों ने आंध्रप्रदेश राज्य के अनन्तपुर जनपद के विकासखण्ड के लिए एक विकास प्रतिरूप प्रस्तुत किया है जिसमें लघु स्तर पर विकासखण्ड की विकासात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखा गया है तथा उनको जनपद के सम्पूर्ण सम्भावित विकास से जोड़ने का प्रयास किया है। इन अध्ययनों के क्रम में कुछ और विशिष्ट अध्ययन भी सरकार (1973), मुखर्जी (1974), ब्रह्मा (1975) और अग्रवाल (1976) द्वारा किए गए हैं।

मिश्रा एवं सुन्दरम (1980) ने क्रमबद्धतापूर्वक बहुस्तरीय नियोजन की विभिन्न संकल्पनाओं, विधितंत्रों एवं संक्रियात्मक विधियों की व्याख्या विशेषतः जनपद एवं विकासखण्ड स्तर पर लघु-स्तरीय नियोजन के संदर्भ में की है।

1980 एवं इसके बाद का अध्ययन (Studies During 1980 & After Eighties) -

1980 के दशक के बाद से अब तक लघु-स्तरीय नियोजन की संकल्पनाओं, विधितंत्रों एवं विश्लेषणात्मक प्रक्रियाओं पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट होता है कि अस्सी एवं इसके बाद के दशक में लघु प्रादेशिक नियोजन सम्बन्धी अध्ययन काफी सघनता से हुए हैं। विषय सम्बन्धी विभिन्न अवधारणिक एवं अनुभवात्मक अध्ययन प्रकाश में आए हैं। इनमें से कुछ अध्ययन विशेष उल्लेखनीय हैं।

नौजुनदप्पा (1981) ने भारत में लघु-स्तरीय नियोजन की संकल्पनाओं, उद्देश्यों एवं आवश्यकताओं का बड़ी कुशलता से विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। सिंह (1981, 1986) ने प्रादेशिक विकास नियोजन एवं ग्रामीण विकास सम्बन्धी विभिन्न अवधारणाओं की क्रमबद्ध रूप में व्याख्या की है। AVARD ने भी विकासखण्ड स्तरीय नियोजन हेतु रूपरेखा तैयार की है। अजीज (1983) ने विकासखण्ड स्तरीय नियोजन की अवधारणा को कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। समाकलित

विकास हेतु लघु-स्तरीय नियोजन के लिए अवधारणीय पक्षों से सम्बन्धित कुछ अन्य गुणवत्ता पूर्ण अध्ययन विवेकानंद (1981), स्वामीनाथन (1982), मिश्रा (1983), राव (1984), नायडू (1984), राव (1984) और नरसिम्हा (1985) द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं।

इन अवधारणिक अध्ययनों के अतिरिक्त भी लघु-स्तरीय नियोजन के विभिन्न आयामों एवं समस्याओं से सम्बन्धित अनेकों प्रतीकात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किए गए हैं। जिनमें शुक्ला (1981), सिंह (1981), मिश्रा (1981), चतुर्वेदी (1981), सिंह (1983), मिश्रा (1983), शर्मा (1985), पाठक (1986), त्रिपाठी (1987), सिंह (1987), शुक्ल (1988) के कार्य महत्वपूर्ण हैं। यह कार्य मौलिकतः बहुवर्गीय एवं बहुखंडीय हैं। वर्मा (1982) ने संसाधन नियोजन एवं सिंह (1982) ने सेवा केन्द्र नियोजन पर कार्य किया है। जो कि लघु-स्तरीय नियोजन की दृष्टि से अधिक व्यवहारिक हैं। मिश्रा (1982) ने अपने शोध पत्र में हमीरपुर जनपद के सेवा केन्द्रों के विभिन्न आयामों का अध्ययन प्रस्तुत किया है जो सूक्ष्म स्तरीय नियोजन की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। नागमिने (1994) ने अपने शोध पत्र में विभिन्न मॉडलों के आधार पर विस्तृत रूप में प्रादेशिक नियोजन की विधियों को समझाने का प्रयत्न किया है। इनके द्वारा प्रस्तुत इस दिशा में कार्य महत्वपूर्ण स्थान रखता है। नैनसी वर्डसल (1994) के अनुसार आर्थिक विकास का मूल लक्ष्य आर्थिक वृद्धि नहीं है अपितु मानव कल्याण की प्रगति करना है। जिसे हम बहुधा सामाजिक विकास का नाम देते हैं। मिश्रा (1987) ने अपने एक अध्ययन में समाकलित ग्रामीण विकास की संकल्पना उद्देश्य तथा उपागमों के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किया है जो सूक्ष्म स्तरीय नियोजन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार पूर्ववर्ती पंक्तियों में वर्णित लघु-स्तरीय नियोजन अध्ययनों के मूल्यांकन से यह स्पष्ट है कि लघु-स्तरीय नियोजन न केवल विधि-तंत्रीय परिज्ञान प्रदान करता है बल्कि विभिन्न लघु-स्तरीय प्रदेशों में व्याप्त समस्याओं एवं सम्भावनाओं को भी प्रस्तुत करता है। साथ ही यह भी रहस्योद्घाटित होता है कि विगत 32 वर्षों में इस संदर्भ में अच्छा कार्य हुआ है तथापि अभी तक इन योजनाओं द्वारा प्रभावित क्षेत्र अत्यधिक सीमित हैं। इसके अलावा सम्पूर्ण विकास के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित विस्तृत विकास योजनाओं के संदर्भ में अभी बहुत कम अध्ययन हुए हैं।

REFERENCES

1. Agrawal, P.C., 1976 : Georgraphy and Planning for Regional Development of Bastar District, M.P., in Misra, V.C. et al., Essays in Applied Geography, University of Saugar.
2. Arora, R.C. 1979 : Integrated Rural Development, S. Chand & Company, New Delhi.
3. AVARD, 1980 : Block level Planning, Vikas Publishing House, New Delhi.
4. Aziz, A., 1983 : Studies in Block Planning, Concept Publishing Company, New Delhi, P- 79
5. Banerjee, S. and Fisher, H.B., 1974 : Spatial Analysis for Integrated Planning in India, Urban and Rural Planning thaught, XVII (i) PP- 1- 45.
6. Bhatt, L.S., 1964 : Aspects of Regional Planning in India, in steel, R.W., et al., Geographers and Tropics, Liverpool Essays, London.
7. 1965 : Regional Planning in India, Problems and Prospects, Bombay, Geog. Mag, 13 (i)
8. 1965 : Some Aspects of Regional Planning in India, Indian Statistical Institute, Ph. D. Thesis.
9. 1967 : Regional Concept and Planning Regions with Special Reference to Planning in India, Paper presented at the All India Seminar on Regional Development and Planning, Mysore University.
10. 1968 : Regional Development and National Planning in India, Paper prosented at the Pre- Congress Symposium on Regional Planning, New Delhi, 21 International Geographical Congress, India.
11. Batt, L.S., 1969 : Central Place Model as a Spatial Framework for Regional and National Planning in India, Paper presented at the Conference on city as A Centre of change is Asia, Hong-kong.
12. 1976 : Micro- Level Planning- A Case Study of Karnal Area, Haryana, India, I.S.I. Delhi Compus, New Delhi.
13. Bhaumik, A.K., 1978 : Micro-Level Planning- A Theory, Practice and Lessions, Ind. Ji. of Regional Science, X (2).
14. Brahma, S. Kumudpore & Pore, S.H., 1975 : Regional Planning A Case Study of Marathwada Region, Arthavijnan XVII (1 & 2)
15. Chatterjee, S.P., 1940 : Place of Geogrophy in National Planning, Presidential Address, Geograpky and Geology Section, Indian Science Congress.
16. Chaturvedi, R.B., 1981 : Micro- Level Planning- A Case study of chibramau Tahsil, Farrukhabad District (U.P.), Unpublished D. Phil, Thesis, University of Allahabad.
17. Christaller, W., 1933 : Die Zentralen Orte in Suddentschland, Jena, G. Fisher, Translated by C.W. Baspin, Englewood cliffs, N.J., 1966.
18. Dhar, D.P., 1972 : Planning at Grass- roots, Hindustan Times, 22 August.
19. Dror, Y. 1963 : The Planning Process- A Facet Design, International Review of Administrative Science, 21 (i), P- 51
20. Faludi, A., 1973 : Planning Theories Paragman Press Oxford.
21. Freeman, T.W., 1958 : Geogrophy and Planning, Hutchinson University library- London, P- 13.
22. Friedmann, J., 1972 : Regional Planning as a field of study in friedmann. J. and Alonso,

W. (ed) Regional Development and Planning- A Reader, M.I.T. Press.

23. Fisher, J.C., 1968 : Notes on the need for Regional Planning at State levels in India, Paper presented at the Pre- Congress Symposium on Regiond Planning, New Delhi, 21- International Geographical Congress, India.
24. Gadgil, D.R., 1966 : District Planning, Kale Memorial Lecture Gokhle Institute Pune.
25. Gerald, W., 1978 : Grass root Approach to Regional Development Planning : A Global Review of Recend tnends of concepts, in Misra, R.P. et al., Regional Planning and National Development, Vikas Pbulishing House, New Delhi.
26. Glásson, J., 1978 : An Introduction to Regional Planning, Hut chinson of London.
27. Hagerstrand, T., 1952 : The propagation of Innovation wave, Land studies in Geogrophy, B. Human Geography, 13, PP- 27- 158.
28. Heggins, B., 1981 : The Task A head : The Search fora New Local and Regional Development Strategy in the 1980, S, UNCRD, Nagoya, P- 1.
29. Hilhorst, J.C.M., 1971 : Regional Planning- A System Approach, Rotterdom, University Press.
30. James, F. and Johns, C.F., (ed), 1954 : American Geography Inventry and Prospects, Syracuse, University Press, P- 4.
31. Kayastha, S.L. and Prassad, J., 1978 : Approach to Area Planning and Development Strategy- A Case Study of phoolpur Block, Allahabad District, N.G.J.I., XXII (1 & 2).
32. Khatu, K.K., 1975 : Rural Planning Systems, N.G.J.I., XXI (3 & 4) PP- 213- 14.
33. Lahiri, T.B., 1968 : Plan for Haldia Region of West Bengal, Paper Presented at the Pre-Congress Symposium on Regional Planning, New Delhi, 21, I.G.C., India.
34. Mehta, D., 1978 : Micro-'Level Planning in Multi Level Planning Framework, Towards an Approach. Ind. Ji. of Regional Science X (2).
35. Misra, K.K., 1982 : System of Service Centres in Hamirpur District, (U.P., India Unpublished Ph.D. Thesis, Bundelkhand University, Jhansi.
36. Misra, O.P., 1983 : Integrated Rural Development A Case Study of Gonda Tahsil, District Gonda, (U.P.), Unpublished Ph. D. Thesis Avadh University, Faizabad.
37. Misra, O.P., 1987 : Integrated Rural Development Concept, Objectives Approaches, India, National Geographers, Vol.- II, 1987.
38. Misra, O.P., 1991 : Planning for social Infrastructures A Case Study of Tahsil Colonelganj District- Gonda, U.P., Geographical Review of India, Vol. 53, 1991.
39. 1966 : Stimulation in Geographic Analysis, Deccan. Geographers., XII (3).
40. 1966 A Priliminary Quantitative Analysis of Spatial Diffussion in Human Geography Continuum- N.G.J.I. XII (3)
41. 1967 : On the Concept of Region and Regional Planning, Paper presented at the All India Seminar on Regional Development and Planning, Mysore University.
42. 1969 : On the Concept of Region and Regional Planning, in Misra, R.P, (ed.), Regional Planning : Cencept, Techniques, Policies and Case Studies, Prasaranga, Mysore.
43. Misra, R.P., 1973 : Growth Foci and Development Impulses in Planning for Backward Areas, Development studies No. 9, Mysore, Institute of Deve. studies.
44. 1972 : District Planning, Development studies, No. 6, Inst. of Development studies, University of Mysore.

45. Misra, R.P., et. al, 1974 : Regional Development Planning in India- A New Strategy, Vikas Publishing House, New Delhi.

46. Misra. R.P., et. al. 1974 : Regional Development Planning in India.

47. Misra, R.P., 1978 : Regional Planning in Irah Problem and Prospects, In Misra, R.P., (ed.) Regional Planning and National Development, Vikas Pbulishing House, New- Delhi.

48. Misra, R.P., & Sunderam, K.V., 1980 : Multi- Level Planning and Integrated Rural Development in India, P- 40.

49. Misra, S.P., 1981 : Integrated Rural Area Development and Planning : A Geographical study of the four blocks of Karakat Tahsil, District Jaunpur, (U.P.), Unpublished Ph. D. Thesis, B.H.U. Varanasi.

50. Mitra, A., 1977 : Micro Planning of space, In Noble, A.G. et al. Indian Urbanization and Planning vehicles of Modernization, Tata Mc Graw Hill, Publishing Co. Ltd. New Delhi.

51. Mukherjee, A.B., 1974 : The Chandigarh- Shivalik Hills, Some Aspects of Rural Development, Indian Journal of Regional Science, VI (2), 206- 222

52. Mukherjee, S.B., 1976 : Nature and Content of Regional Planning in Developming Countries. Regional Development and Planning Strategies and Case Studies, VIII (1 & 2) Geography Deptt. of Calcutta University and Regional Science Association, India.

53. Naidu, K.M. 1984 : Problems of Regional Planning process in India, in Naidu, K.M., (ed.) Area Planning for Regional Development, P- 15.

54. Nanjundappa, D.M., 1981 : Area Planning and Rural Development, Associated Publishers, New Delhi.

55. Nagmine, Harou, Methods of Planning for Comprehensive Regional Development : A paradigm, Regional Symbiosis, vol. II, 1994 PP- 1- 27.

56. Nancy Birdsall, Social Development in Economic Development, Regional Symbiosis, Voi- II, 1994, PP- 17- 32.

57. Narain, V.K. and Roa, D.V. 1974 : Regional Planning Growth Centre Techniques, Indian Journal of Regional Science, VI (i) PP 46- 56.

58. Narsimha, Murti, K.L. & Sharma, P.B., 1985 : Indentification of Service centres in Tunuku Taluk- An Approach Towards Micro- Regional Level Planning, Ind. Ji. of Regional Science XVII (2).

59. Pal, M.N., 1962 : Statistical Approach to the Regional Planning : Paper Contributed to the Seminar on Regionalisation for Planning, School of Planning and Architecture, New Delhi.

60. 1963 : An Introduction of Regional Planning, Indian, Statistical Institute, Regional Survey Unit.

61. 1969 : Regional Analysis for National Development Techniques and Studies, University of Delhi.

62. : Pandit, P., 1968 : Planning for Micro- Regions and the Plans for Infrastructure in Wardha. District (Maharastra)

63. : Park, J.F. & Park, K., 1987 : Text Book Preventive and Social Medicine, Jabalpur, P- 569.

64. Pathak, C.R., 1973 : Integrated Area Development, Geographical Review of India, XXXV (3) PP- 221- 231.

65. Pathak, G.S., 1986 : Micro- Regional Development Planning- A Case Study of Utraula Tahsil, Gonda District, (U.P.) Unpublished Ph.D. Thesis, Avadh University, Faizabad.

66. Perrox, F., 1964 : L' Economic de xx, Sicle, Press, Universitaire de France, Paris.

67. Planning Commission, 1952 : First Fine year plan, Govt, of India.

68. 1956 - 61 : Second five year plan, Govt. of India.

69. 1961 : Third five year plan, Govt. of India.

70. 1969-74 : Fourth five year plan, Govt. of India.

71. 1974- 79 : Draft fifth five year plan Govt. of India.

72. : 1978- 83 : Draft, Sixth five year plan, Govt. of India.

73. 1985 : Seventh five year plan, Govt. of India.

74 1990 : Eighth five year plan, Govt. of India.

75 : Roa, V.L.S.P., 1949 : Regional Planning, Indian Finance Calcutta.

76. : 1960 : Regional Planning in Mysore State, The need for Re- adjustment of District Boundaries, Calcutta, Geogr. Review, 2, (i)

77. 1963 : Regional Planning, Asia Publishing House.

78 : Rao, V.L. S.P., 1969 : Theoretical Framework for Regional Planning, A Review Note, in Misra, R.P. (ed.) Regional Planning Concept, Techniques, Polieies and case studies prasaranga, Mysore.

79 1969 : Growth promoting and Relaxding factors in Development Muzaffarnagar District A Case Study R.P.C. Project, Delhi University.

80. Rao V.M. 1980 : Regional Development and Village, Perspective for Planning and Development, Sterling Publishers, Pvt., Ltd., New Delhi.

81. Reddy, Y.V., 1974 : A Note on Regionalization and Regional Development with Referance to Multi- Level Plan process in India, Indian Journal of Regional science VI (2) PP- 57-71.

82. 1979 : Multy- Level Planning in India, Vikas Publishing House, New Delhi.

83. Roy, P. and Patil, B.R., 1977 : Mannual for Block Level Planning, The macmillan Company of India, Ltd.

84. Saha, S.K., 1981 : Explanation in Regional Planning, in Singh, L.R., (ed.) New Perspective in Geography, P- 221.

85. : Sarkar, B.B. 1973 : Problems of Rural Development in Backward Districe of Bankura and Purulia in West - Bengal, Indian Journal of Regional seience VI (i) P- 49- 59.

86. Sen, L.K., 1972 : The Need for Micro- Level Planning and Rural Growth Centres, N.C.I.D. Hyderabad, P- 4.

87. : 1975 : Growth Centres in Raichur District, N.I.C.D. Hyderabad, P- 2.

88. Shah, S.M., 1972 : Sectoral Planning in India, in sen, L.K. (ed.) Reading in Micro- Level Planning and Growth Centres, P- 261.

89. 1975 : Planning Approaches for Rural Development, In Geog, Studies 5, Pp- 43- 49.

90. Shah, V., 1974 : Planning for Talala Block, A Study in Micro- Level Planning, Ahamadabad, P- 3.

91. Sharma, P.N., & Shastri, C. 1984 : Social Planning : Concepts and Techniques, Print House, Lucknow, P- 28.

92. Sharma, M.L., 1985 : Micro- Level Planning A Case Study of Tarabganj Tahsil, District Gonda, Unpublished Ph. D. Thesis, Avadh University, Faizabad.

93. Shukla, B.D., 1981 : Integrated Area Development of Hardoi Thasil, (U.P.) Unpublished Ph. D. Thesis, B.H.U., Varanasi.

94. Shukla, R.P., 1988 : Integrated Rural Development A Case Study of Nawabganj, Districe Barabanki (U.P.) Unpublished Ph. D. Thesis, Avadh, University, Faizabad.

95. Singh, L.R., 1986 : Regional Planning & Rural Development, Thinkers Library, Allahabad.

96. Singh, M.P., 1982 : Service Centres and Planning for Jaunpur District, (U.P.), Unpublished Ph.D. Thesis of B.H.U., Varanasi.

97. Singh, J., 1979 : Central Places and Spatial Ourganization in a Backward Economy : Gorakhpur Region - A Case Study in Integrated Regional Development Uttar Bharat Bhoogol Parishad, Gorakhpur.

98. Singh, L.R., 1981 : New Perspective in Geography, Thinkers Library, Allahabad.

99. Singh. R.P., 1982 : Studies in Regional Planning and Rural Development, P- 2.

100. 1981 : Bhambhua and Vikramganj Blocks, A comparative Geographical Analysis in Integrated Rural Area Development, Unpublished Ph. D. Thesis, B.H.U. Varanasi.

101. Singh, A.K., 1982 : Studies in Regional Planning and Rural Development of Lar Block, District Deoria (U.P.) : A Case Study in Micro level Planning.

102. Singh, R.R., 1982 : Studies in Regional Planning and Rual Development, Associated Block Agency, Patna.

103. Sundaram, K.V. & Rao, V.L. S.P., 1971 : Regional Planning in India, in Chaterjee, S.P. (ed.) Proceedings of symposium on Regional Planning, National Committee for Geot. Calcutta.

104. Swaminathan, S.M., 1982 : Science and Integrated Rural Development, Concept Publishing Company, New Delhi.

105. : Thunen, J.H. Von, 1826 : Der Isolerte state in Beziehung and Landuirtschaft and National Okonomie, Hamburg, Translated by C.M. Wartenberg, Von Thunen's Isolated State, Edited with an Introduction by Peter Hall, 1966, Pargamon Press.

106 : Tripathi, R.N. et al., 1980 : Block- Level Plan in the District Frame- A Development plan for Madakasari Block in Anantpur District, Andhra Pradesh, N.I.R.D. Hyderabad, P- 11.

107. Tripathi, D.N., 1987 : Integrated Rural Development- A Case Study of Amethi Tahsil, District Sultanpur (U.P.) Unpublished Ph.D. Thesis, Avadh University, Faizabad.

108. Verma, Ku. V., 1982 : Resource Planning in Kichchha Tahsil, District Nainital (U.P.), Unpublished Ph.D. Thesis, B.H.U. Varanasi.

109. Viveknond, M., 1980 : Planning Unit Areas for Integrated Rural Development, Ashish Publishing House, New Delhi.

110. Wanmali, S., 1967 : Regional Development, Regional Planning and the Hierarchy of Towns, Bombay, Geographical Mag. XV (i) PP- 1- 29.

111. Waterson, A., 1977 : Viable Model for Rural Development, Finance and Development, Vol. II. No. 4-, Dec. 1974.

अध्ययन क्षेत्र-एक परिच्छेदिका

STUDY AREA-A PROFILE

अध्याय- 2

CHAPTER-TWO

अध्ययन क्षेत्र- एक परिच्छेदिका

(STUDY AREA- A PROFILE)

प्रादेशिक संरचना (Regional Structure)-

किसी भी क्षेत्र की सांस्कृतिक भूदृश्यावली की विवेचना में वस्तुतः भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, परिवहन तंत्र, मानव अधिवास प्रणाली तथा अवस्थापनाओं की सहभागिता आवश्यक होती है। अतः मानव अधिवासों के विभिन्न पक्षों के विश्लेषण करने के पूर्व क्षेत्र विशेष की भौगोलिक परिस्थितियों की व्याख्या करना परमावश्यक है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रस्तुत अध्याय में जालौन जनपद की उरई तहसील की भौगोलिक पृष्ठभूमि का उल्लेख किया गया है।

स्थिति एवं विस्तार (Location & Extent) -

बुन्देलखण्ड क्षेत्र (उ.प्र.) के जालौन जनपद में अवस्थित उरई तहसील 26°4' से 26°14' उत्तरी अक्षांस तथा 79°13' से 79°38' पूर्वी देशान्तर के मध्य विस्तृत है। उरई तहसील के पश्चिम में कोंच, उत्तर में जालौन, पूर्व में कालपी तहसील तथा दक्षिण में झांसी एवं हमीरपुर जनपद स्थित हैं। इसकी उत्तर- दक्षिण लम्बाई 21 कि.मी. और पूर्व- पश्चिम चौड़ाई लगभग 34 कि.मी. है। सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल 946.40 वर्ग कि.मी. है। प्रशासनिक दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र 01 विकासखण्ड (डकोर), 11 न्याय पंचायतों, 86 ग्रामसभाओं, 01 नगरपालिका, 01 टाउन एरिया तथा 157 गांवों में (128 आवाद तथा 29 गैरआबाद) विभक्त है चित्र सं. (2.1)। 1991 की जनगणना के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या 2,54,345 है जिसमें 58.46 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों तथा 41.54 प्रतिशत नगरीय क्षेत्रों में निवास करती है। जालौन जनपद का मुख्यालय उरई में अवस्थित होने के कारण प्रशासनिक एवं विकासात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन क्षेत्र अन्य तहसीलों की अपेक्षा अत्यधिक लाभप्रद स्थिति में है।

भूगर्भिक संरचना एवं उच्चावच (Geological Structure•Relief) -

वेतवा नदी के तटवर्ती भाग को छोड़कर सामान्यतः उरई तहसील का सम्पूर्ण क्षेत्र एक समतल मैदानी भूभाग के अन्तर्गत आता है, जिसे भौमिकीय इतिहास के अन्तर्गत आधुनिक एवं नवीन समय की संरचना कहा जा सकता है। क्षेत्र की धरातलीय संरचना के निर्माण में वस्तुतः परतदार शैलों का बाहुल्य है। उरई तहसील के समस्त भूभाग के जलोढ़ निक्षेप में समरूपता की प्रवृत्ति दृष्टिगत नहीं होती है। नदी निक्षेप की मोटाई में भी स्थान- स्थान पर भिन्नता पाई जाती है। अध्ययन क्षेत्र के जलोढ़ निक्षेप को दो भागों में बांटा जा सकता है-

(1) बांगर, (2) खादर

उच्चभूमि, जहां वाढ़ का प्रकोप दृष्टिगत नहीं होता, वांगर भूमि कहते हैं, जबकि निम्न एवं अपरदित भूभाग को खादर कहते हैं। अध्ययन क्षेत्र का मैदानी ढाल, सामान्यतः दक्षिण- पश्चिम से उत्तर- पूर्व की ओर है। समुद्र तल से ऊंचाई एट में 169.02 मीटर तथा उरई में 141.60 मीटर है। धरातलीय विशिष्टताओं एवं प्रवाह प्रणाली के आधार पर अध्ययन क्षेत्र को तीन भ्वाकृतिक विभागों में बांटा जा सकता है (चित्र सं- 2.2A)।

TAHSIL ORAI
REFERENCE MAP
UTTAR PRADESH
STUDYAREA
KMS
N
FROM JALAUN
TAHSIL JALAUN
TAHSIL KALPI
TAHSIL KONCH
TO KANPUR
TO BONI
FROM KONCH
ORAI
AIT
FROM JHANSI
TAHSIL
DAKORE
KOTRA
TO RATH
HAMIRPUR
DISTRICT JHANSI
DISTRICT
DISTRICT BOUNDARY
TAHSIL BOUNDARY
BLOCK BOUNDARY
NYAY PANCHAYAT BOUNDARY
VILLAGE BOUNDARY
URBAN AREA
RAILWAY LINE
ROAD
RIVER

FIG. 2.1
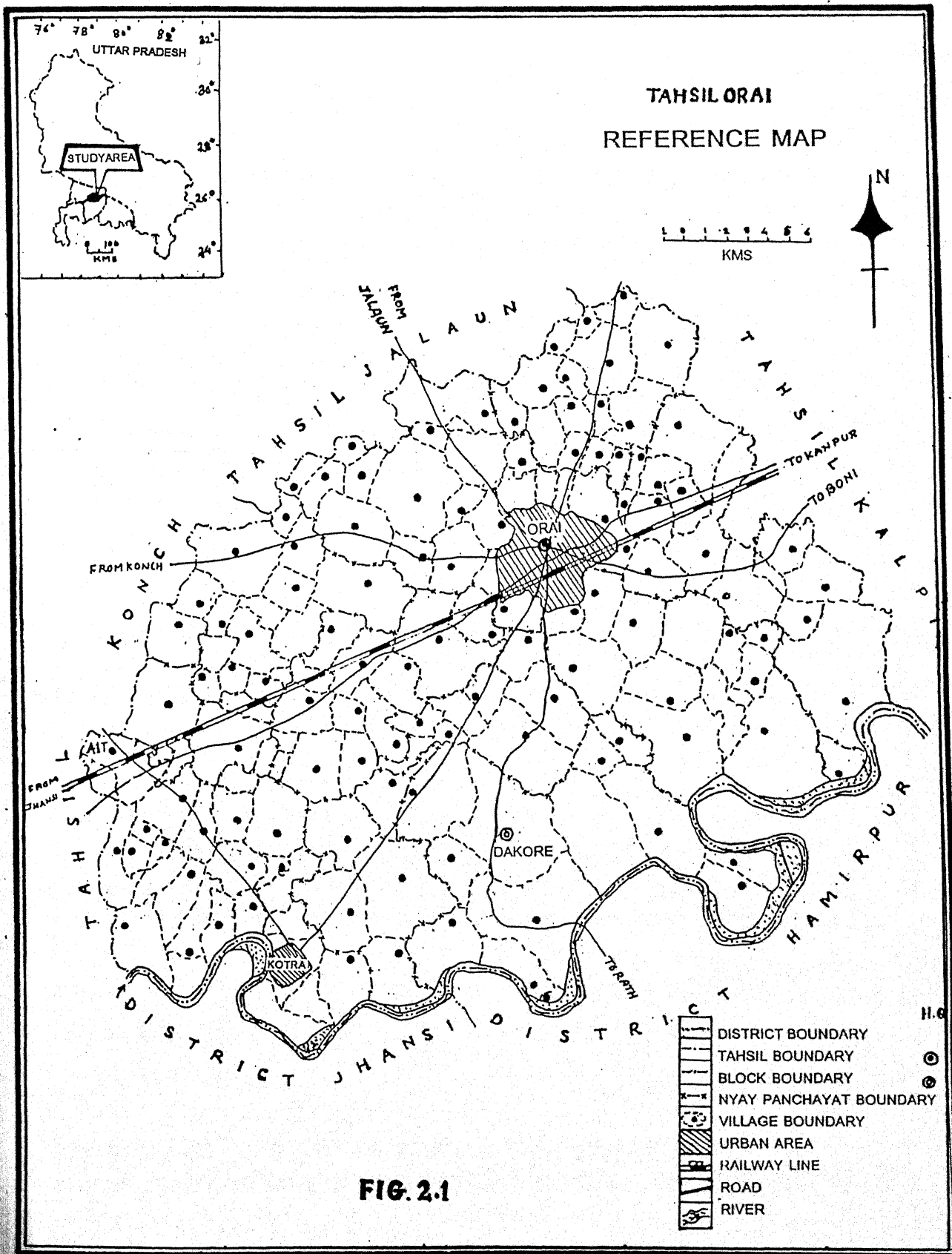
(1) वेतवा नदी के आसपास का क्षत- विक्षत (ऊबड़- खावड़) क्षेत्र
(2) शैल दृश्यांश क्षेत्र
(3) मैदानी भूभाग

वेतवा नदी के आसपास का ऊबड़- खाबड़ क्षेत्र (Disected Area Around the Betwa River) -

उरई तहसील के दक्षिणी भाग में वेतवा नदी के उत्तर तट के सहारे एक से तीन कि.मी. के क्षेत्र में यह भूभाग विस्तृत है। इस क्षेत्र में वेतवा नदी ने तटवर्ती रांकर प्रधान भूमि को अत्यधिक अपरदित कर दिया है। परिणाम स्वरूप एक पतली पट्टी के रूप में ऊवड़- खावड़ भूमि का निर्माण हुआ है, जो कि कृषि की दृष्टि से अधिक उपयुक्त नहीं है। असमतल धरातल, सिंचन सुविधाओं का अभाव, सुविधा संरचना का अल्पतम विकास आदि के कारण इस क्षेत्र में कृषि सम्वन्धी सुविधाओं का उरई मैदान की अपेक्षा अभाव है। यातायात व्यवस्था भी दयनीय स्थिति में है। जैसारीकला, मोहाना; गुढ़ा तथा खरका इस क्षेत्र के प्रमुख सेवा केन्द्र हैं।

शैल दृश्यांश क्षेत्र (Out Cropped Area)-

वेतवा नदी के ऊबड़- खाबड़ क्षेत्र के पश्चिमी भाग में सैदनगर के समीप एक सीमित क्षेत्र में दो चट्टानी शैल दृश्यांश पाए जाते हैं। नदी अपरदन के कारण इनकी ऊंचाई काफी कम हो गई है। वैसे बुन्देलखण्ड उच्च भूमि में पाई जाने वाली पहाड़ियों जैसे स्वरूप व लाल मिट्टी का अध्ययन क्षेत्र में अभाव है। फिर भी शैल दृश्यांश जैसी विशेषताओं के कारण अध्ययन क्षेत्र एक विलक्षण स्वभाव वाला भूभाग है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत सैदनगर, कोटरा, बिनौरा एवं धुरट सेवा केन्द्र आते हैं।

मैदानी भूभाग (Plain Tract) -

अध्ययन क्षेत्र का सबसे बड़ा भूभाग मैदानी क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र में नोन नामक एक छोटी नदी प्रवाहित होती है जो आगे चलकर कालपी तहसील में मलंगा नदी में मिलती है। इसका प्रभाव विशेषतः बरसात के दिनों में ही देखने को मिलता है। यह एक उपजाऊ क्षेत्र है जहां सघनतापूर्वक कृषि कार्य किया जाता है। जनपद का मुख्यालय केन्द्र उरई भी इसी क्षेत्र में स्थित है। इसके अतिरिक्त डकोर, एट, हरदोई गूजर, कुसमिलिया, सोमई आदि महत्वपूर्ण सेवा केन्द्र भी इस क्षेत्र में विकसित हैं।

प्रवाह तंत्र (Drainage Pattern)-

प्रवाह तंत्र के अन्तर्गत किसी क्षेत्र में प्रवाहित होने वाली विभिन्न नदीक्रमों का अध्ययन किया जाता है। जिसकी प्रकृति उस क्षेत्र में उपलब्ध भौमिकीय संरचना, चट्टानी प्रकार, धरातलीय स्वरूप, वर्षा एवं तापमान की मात्रा पर निर्भर करती है। अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत वेतवा एक प्रधान नदी है। इसके अतिरिक्त एक नोन नामक वरसाती नदी भी इस क्षेत्र में प्रवाहित होती है। क्षेत्र में नदी क्रमों का विवरण निम्नवत् है-

बेतवा प्रवाह तंत्र (Betwa Drainage System)-

बेतवा इस क्षेत्र की प्रमुख नदी है। अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत इसकी कुल लम्वाई 80 कि.मी. है। यह नदी झांसी जनपद की दक्षिणी- पश्चिमी दिशा से प्रवाहित होती हुई अमरोढ़ गांव के समीप उरई तहसील में प्रवेश करती है तथा ददरी गांव तक प्रवाहित होती हुई अध्ययन क्षेत्र की दक्षिणी सीमा का निर्धारण करती है। इस नदी के उत्तर में उरई तहसील एवं दक्षिण में झांसी एवं हमीरपुर

TAHSIL ORAI
A PHYSIOGRAPHY
N
KMS
DESECTED AREA
OUT CROPPED AREA
PLAIN TRACT
B DRAINAGE PATTERN
RIVER
NALA
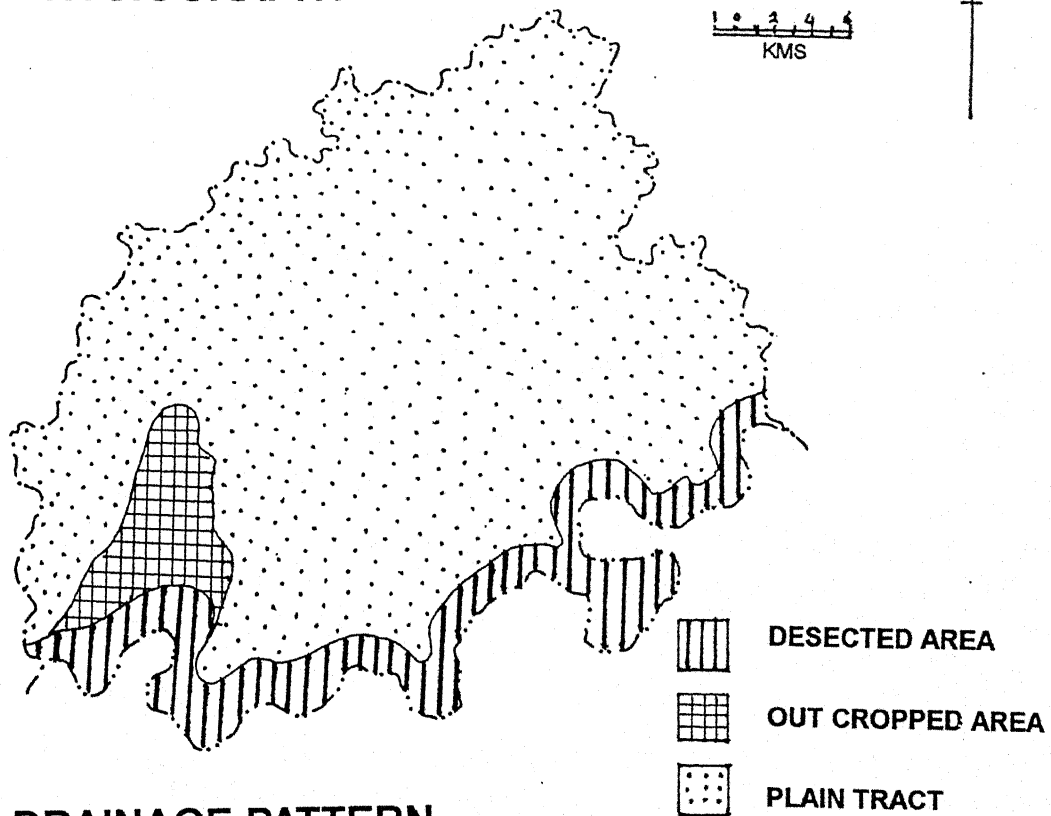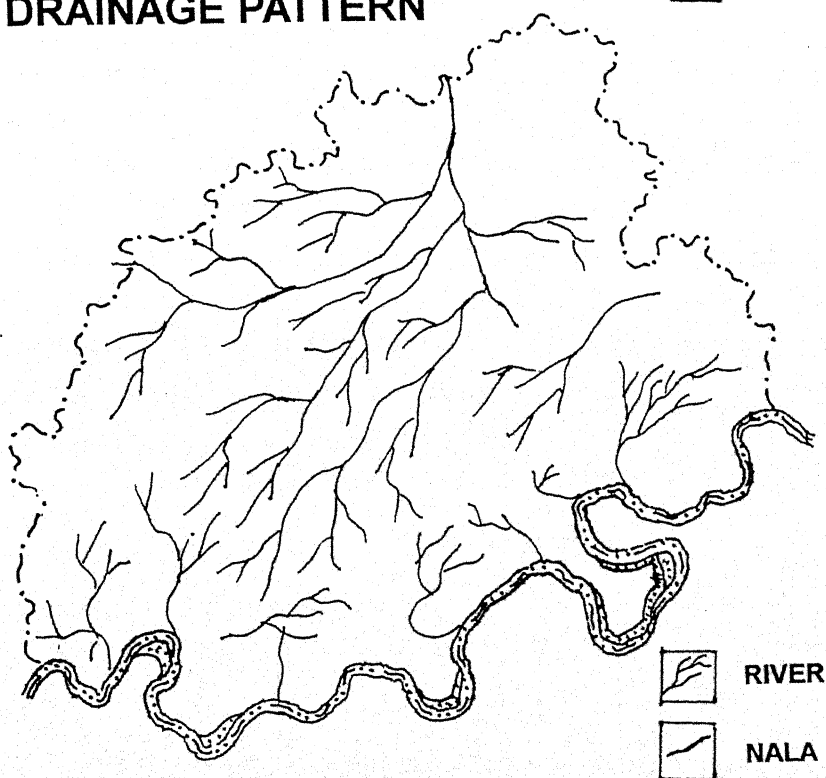
FIG. 2.2

जनपदों की सीमाएं हैं। यह नदी घुमावदार मार्ग का अनुसरण करती प्रतीत होती है क्योंकि इसमें जगह- जगह पर विभिन्न मोड़ पाए जाते हैं। यह रजापुर नन्धा गांव के पास अंग्रेजी के 'V' अक्षर के रूप में घुमावदार मार्ग बनाती हुई अग्रसर होती है (चित्र सं. 2.2 B)। पट्टीऐर, सिगिरिया तथा गुढ़ा गांवों के पास गोखुर झील जैसी आकृति का निर्माण करती है। उरई तहसील के ददरी गांव के पास यह नदी घुमावदार मार्ग बनाती हुई हमीरपुर जनपद में प्रवेश कर जाती है। तटवर्ती क्षेत्र के सूक्ष्म निरीक्षण से स्पष्ट है कि इस नदी ने उरई तहसील की सीमा से लगे 1 से 3 कि.मी. के मध्य के क्षेत्र में इतना अधिक अपरदन कर दिया है कि क्षेत्र काफी ऊबड़- खाबड़ हो गया है। कई छोटे- छोटे बरसाती नाले इसमें आकर मिलते हैं जिनका महत्व केवल वर्षा ऋतु में स्थानीय स्तर पर ही दृष्टिगत होता है।

नोन प्रवाह तंत्र (None Drainage System)-

उरई तहसील के उत्तरी भाग में दक्षिण- पश्चिम से उत्तर- पूर्व की ओर नोन नदी प्रवाहित होती है। जो कि यमुना की एक सहायक नदी है। इसमें कई छोटे- छोटे नाले आकर मिलते हैं। यह वस्तुतः एक बरसाती नदी है जिसका ग्रीष्म ऋतु में महत्व नगण्य रहता है, केवल वर्षा ऋतु में ही इसका प्रभाव देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र में कई छोटे- बड़े तालाब भी पाए जाते हैं जो कि लगभग प्रत्येक गांव में हैं। यह जलाशय न केवल जलीय आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हैं अपितु अधिवासों के निर्माण हेतु सामग्री भी प्रदान करते हैं। उरई नगर के बीचोंबीच डी.वी. डिग्री कालेज के पूर्व में एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तालाब है जिसे 'माहिल- तालाब' के नाम से जाना जाता है।

जलवायु (Climate)-

कर्क रेखा से अत्यधिक निकटता के कारण यहां की जलवायु यमुना नदी के उत्तर के जनपदों की तुलना में शुष्क है। यहां ग्रीष्म ऋतु शीघ्र प्रारम्भ हो जाती है और एक लम्बे अंतराल तक रहती है जबकि शीत ऋतु प्रायः छोटी, शुष्क एवं प्रभावकारी होती है। लेकिन कभी- कभी ओला एवं पाला पड़ जाने से फसलों को नुकसान पहुंचता है। वर्षा प्रायः देर से जून के अंत में प्रारम्भ होती है। औसत वार्षिक तापमान 27^0 सेल्सियस है। जनवरी में यह घटकर 3^0-4^0 सेल्सियस तथा मई माह में बढ़कर 36^0 सेल्सियस तक पहुंच जाता है लेकिन अपवाद स्वरूप पिछले कुछ वर्षों में यहां का सर्वाधिक तापमान 50^0 सेल्सियस तक आकलित किया गया है। राज्य के अन्य क्षेत्रों की तुलना में वर्षा कम होती है परिणामतः बाढ़ें बहुत कम आती हैं। औसत वार्षिक वर्षा 1029 मिलीमीटर रिकार्ड की गई है, जिसका 90% भाग जून से सितम्बर महीनों के मध्य प्राप्त होता है। वर्ष भर में सबसे अधिक वर्षा अगस्त माह में होती है (तालिका 2.1 एवं चित्र संख्या 2.3 A)।

तालिका सं. 2.1

उरई तहसीलान्तर्गत विभिन्न महीनों में होने वाली वर्षा का विवरण (मि.मी. में)

1993 से 1995 तक

वर्ष	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
1993	-	15.15	25.00	-	1.25	51.25	89.75	117.50	237.95	3.25	-	-
1994	12.50	14.00	-	-	3.75	79.75	355.50	209.65	13.25	-	-	-
1995	10.00	00.50	-	-	-	44.25	170.80	361.45	157.75	-	-	-

स्रोत- उरई तहसील के वर्षा रजिस्टर से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार।

मिट्टियां (Soils)-

मिट्टी मानव जीवन का आधारभूत संसाधन है, जो मानव को एक प्राकृतिक उपहार के रूप में प्राप्त है। मिट्टियों में अनेक तत्व जैसे- आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, वोरान, जिंक, कार्बनडाई आक्साइड, फास्फोरस, पोटेशियम, तांबा, मैगनीज, लोहा, सोडियम, ग्रेनाइट इत्यादि पाए जाते हैं। कुछ तत्व मिट्टी को निरंतर प्राप्त होते रहते हैं और कुछ तत्वों की पूर्ति मानव द्वारा प्रयुक्त किए गए उर्वरकों से होती है। अध्ययन क्षेत्र में पाई जाने वाली मिट्टियों के स्वरूप में भी वुंदेलखण्ड के अन्य क्षेत्रों की भांति विभिन्नता पाई जाती है। यहां मार, कावर, पंडुआ एवं रांकड़ प्रकार की मिट्टी पाई जाती है (चित्र सं. 2.3 B)। बुंदेलखण्ड क्षेत्र में पहला मृदा सर्वेक्षण उरई में सम्पन्न हुआ (पाण्डेय, 1979) तथा यांत्रिक गठन के आधार पर मिट्टियों का क्षेत्रीय विभाजन प्रस्तुत किया गया जिसमें प्रमुख कारक मिट्टी की उर्वरता तथा सिंचाई सुविधाओं का पता लगाना थे।

पंडुआ मिट्टी (Parua Soil)-

यह लाल मिट्टी का एक उपस्वरूप है। यह मिट्टी रंग में हल्की भूरी, वनावट में मध्यमवर्गीय, अच्छी जलाच्छादन क्षमता तथा ख़रीफ की फसल के लिए एक आदर्श स्वरूप है। यह मिट्टी 40 से 75 से.मी. गहराई वाली है तथा नमी धारण करने की क्षमता 100 से 250 मि.मी. तक है। इसमें नत्रजन एवं फास्फोरस पर्याप्त मात्रा में नहीं पाया जाता है। इसका विस्तार क्षेत्र प्रायः वेतवा नदी के प्रवाह प्रदेश की एक संकरी पट्टी के 160.07 वर्ग कि.मी. में है। कोटरा, जैसारी कला, मोहाना एवं गुढ़ा तथा खरका आदि सेवा केन्द्र इस पडुवा प्रधान मिट्टी क्षेत्र में स्थित हैं। इस मिट्टी में ज्वार, वाजरा, मक्का, अरहर, तिल, उड़द, मूंग, सोयावीन, चना, मटर, सरसों तथा अलसी इत्यादि के उत्पादन के लिए उपयुक्त है।

काबर मिट्टी (Kabar Soil)-

यह मिट्टी अध्ययन क्षेत्र के मध्यवर्ती निम्न समतल भूभागों में 297.62 वर्ग कि.मी. में विस्तृत है। इसका रंग काला होता है। यह चूने के सम्मिश्रण वाली मिट्टी है। यद्यपि काबर मिट्टी में कंकड़ नहीं पाए जाते हैं फिर भी कठोरता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान रहती है। इसमें समुचित जल निकास की सुविधाकम पाई जाती है। यह मिट्टी प्रमुख रूप से डकोर, टिमरों, नुनसाई, चिल्ली, मुहम्मदावाद, बड़ागांव एवं भुवा सेवाकेन्द्रों के क्षेत्रों में पाई जाती है। इस मिट्टी में गेहूं, चना, मटर, अलसी, सरसों आदि की अच्छी फसल ली जा सकती है।

मार मिट्टी (Mar Soil)-

वास्तव में, मार एवं काबर- काली मिट्टी के दो अलग- अलग रूप हैं। इसका रंग कावर की तुलना में गहरा होता है। यह एक चूना प्रधान मिट्टी है। जिसमें विभिन्न स्तरों पर चूने के कंकड़ पाए जाते हैं लेकिन जलधारण क्षमता पर्याप्त रहती है। इसमें नत्रजन एवं फास्फोरस की कमी एवं पोटाश की अधिकता पाई जाती है। इस मिट्टी का विस्तार प्रायः उरई तहसील के पश्चिमोत्तर भागों के 76.75 वर्ग कि.मी. में है। इस क्षेत्र के प्रमुख सेवा केन्द्र हरदोई गूजर, विनौरा, सोमई, कुंकरगांव तथा धगुंवाकला इत्यादि में है। यह मिट्टी सोयाबीन, चना एवं गेहूं के उत्पादन के लिए अत्यधिक उपयोगी है।

TAHSIL ORAI
A RAINFAL
N
1 0 1 2 3 4 5
KMS
RAINFALL (in Mms)
240
210
180
150
120
90
60
30
0
JANUARY
FEBRUARY
MARCH
APRIL
MAY
JUNE
JULY
AUGUST
SEPTEMBER
OCTOBER
NOVEMBER
DECEMBER
B SOILS
RANKAR SOIL
PARUA SOIL
KABAR SOIL
MAR SOIL
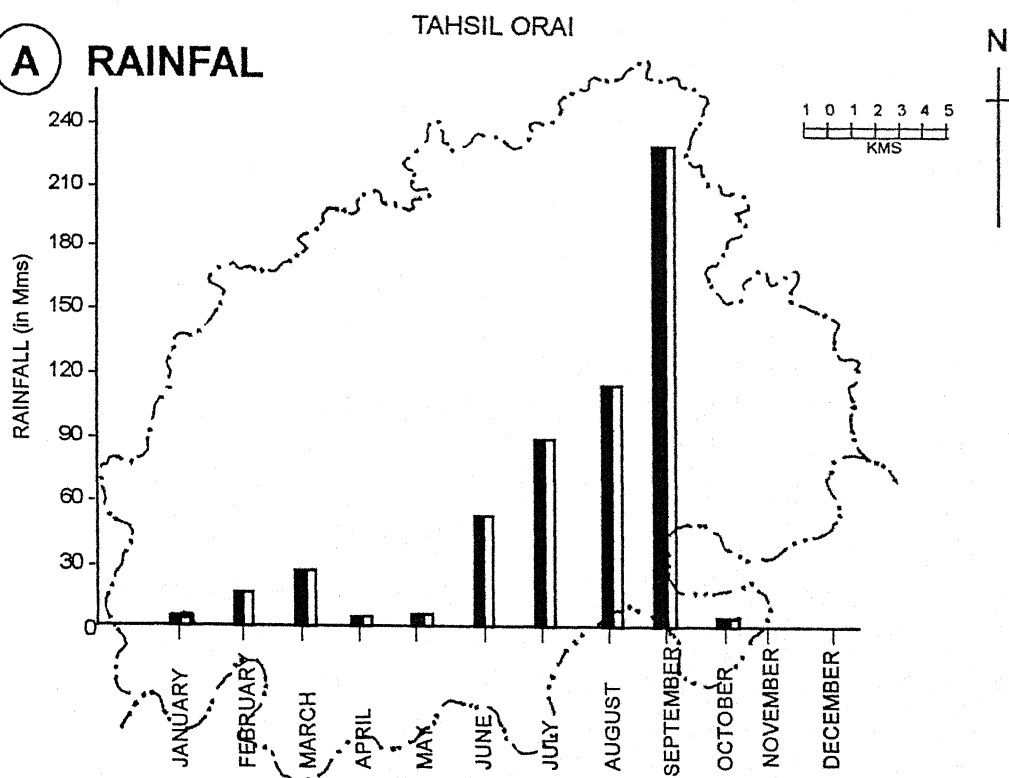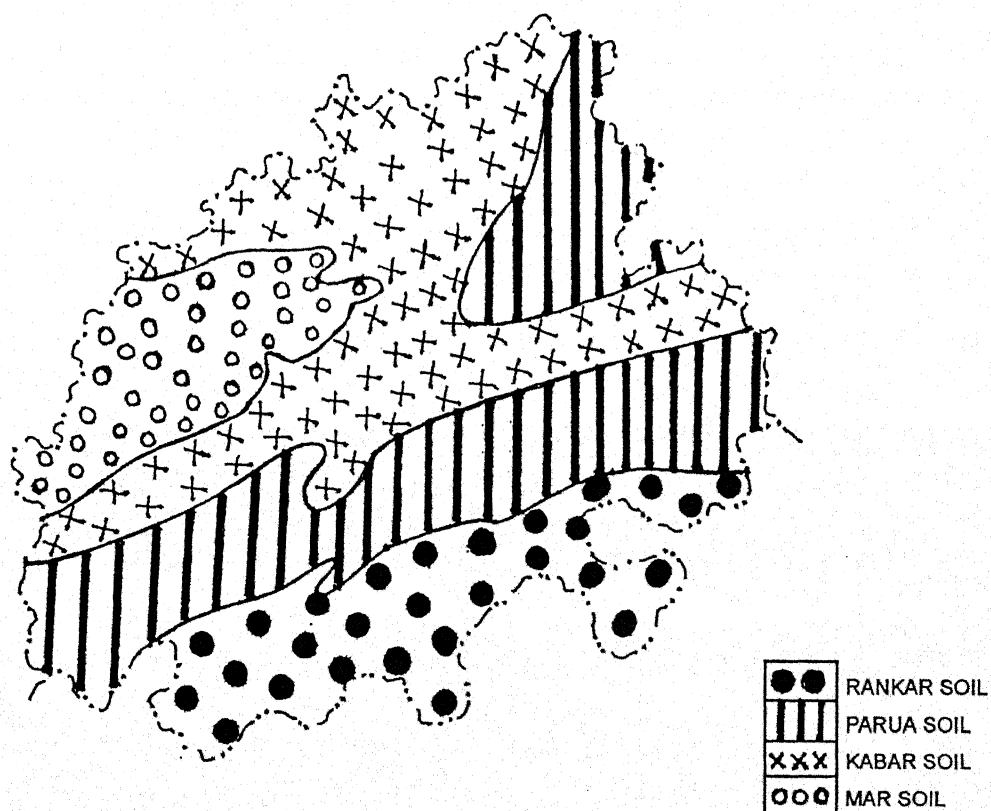
FIG. 2.3

रांकड़ मिट्टी (Rankar Soil)-

अध्ययन क्षेत्र के 126.45 वर्ग कि.मी. में विस्तृत इस मृदा का रंग लाल एवं भूरा मिश्रित होता है। निचली परतों में कंकड़ तथा सतह पर चीका मिलती है। जीवांश की मात्रा कम होने के कारण उर्वरा शक्ति उपयुक्त नहीं है। इसमें बालू की मात्रा 45 से 85 प्रतिशत तक रहती है। भूमिगत जलस्तर काफी नीचा रहता है। खनिजों की बहुलता रहती है। यह मिट्टी अध्ययन क्षेत्र के औंता, अटरिया, मगरायां, राहिया एवं गढ़हर आदि सेवा केन्द्रों पर पाई जाती है इसमें मुख्य रूप से ज्वार, गेहूं, मक्का इत्यादि फसलें उत्पन्न होती हैं।

उपर्युक्त मिट्टियों के अतिरिक्त दोमट एवं मोटे कणों से युक्त पीली मिट्टियां भी यत्र- तत्र अध्ययन क्षेत्र में पाई जाती हैं, जिनका क्षेत्रफल नगण्य है।

वन एवं उद्यान (Forest&Horticulture)-

मनुष्य आदिकाल से ही अपने भोजन, कृषि तथा मकान के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वनों पर ही आश्रित रहा है। आज भी मानव ईंधन, चारा, इमारती लकड़ी, जड़ी बूटियों, फल-फूल तथा अनेक उद्योगों जैसे- कागज, दियासलाई आदि के लिए कच्चे माल हेतु वनों पर आश्रित है। वन किसी क्षेत्र में वर्षा की मात्रा को प्रभावित करते हैं। प्राणवायु (आक्सीजन) का निर्माण केवल वनस्पति पर ही निर्भर है। इसके अतिरिक्त वन मिट्टी की संरचना एवं संरक्षण में कृषि हेतु प्रतियोगी ही नहीं, वरन सहयोगी के रूप में पशुओं के भोजनार्थ अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इस प्रकार यह कहना सार्थक ही होगा कि वास्तव में वन मानव मात्र के अस्तित्व की धुरी है। इनके बिना गतिशील मानवीय जीवन की कल्पना कर पाना मुश्किल है। किसी भी अध्ययन क्षेत्र में पाए जाने वाले वनों का विकास वहां के क्षेत्रीय धरातल, जलवायु तथा भूपृष्ठीय परिवर्तनों से अन्तर्सम्बन्धित होता है (पॉलूनिन, 1960)। यह धरातलीय कटाव एवं जलवहाव को रोकने, भूमि के जल स्तर को कायम रखने तथा उत्स्वेदन की क्रिया द्वारा आर्द्रता की वृद्धि में अपना प्रभावकारी महत्व रखते हैं। पर्यटन, मनोरंजन व वैज्ञानिक अध्ययन में भी वन बहुत उपयोगी हैं। मानव के उपयोगी जीवों का प्राकृतिवास भी वन ही है, जो कि प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में सहयोगी होते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण पर्यावरण संतुलन के लिए वनों का अत्यधिक महत्व है।

अध्ययन क्षेत्र के कुल भूभाग के मात्र 6.03 प्रतिशत भाग पर वन पाए जाते हैं। यहां वनीय क्षेत्र पर्यावरण संतुलन की दृष्टि से अत्यन्त न्यून है। शोध क्षेत्र में मुख्यतः बबूल, खैर, यूकेलिप्टस, शीशम, आम आदि के वृक्ष पाए जाते हैं। क्षेत्र में वनों की कमी के कारण भूमि का अत्यधिक कटाव एवं बहाव होने से जहां मिट्टी की उर्वरता क्षीण हो गई है। इसके संरक्षण हेतु वन विभाग द्वारा वृक्षारोपण का कार्य किया जा रहा है। यह वृक्षारोपण मुख्यतः ग्राम समाज, रेल पटरियों, सड़कों तथा नहरों आदि के किनारे खाली पड़ी जगहों पर किया जाता है। इसे सफल बनाने हेतु शासन द्वारा समस्त ग्रामीण एवं नगरीय जनता से प्रत्येक घर के सामने कम से कम दो वृक्ष लगाने का अनुरोध किया गया है। साधारण जनता द्वारा अधिक से अधिक वृक्ष लगाने हेतु 'स्मृति वन' की भू स्थापना की गई है। पौधों की पूर्ति हेतु पौधशालाओं में विभिन्न प्रकार के वृक्ष अधिक मात्रा में उगाएं जा रहे हैं। जिनका उपयोग विभिन्न संस्थाओं यथा- वन विभाग, किसान, स्कूल, जनता एवं अन्य विभागों द्वारा संचालित किए जाने वाले वृक्षारोपण कार्यक्रमों में किया जा रहा है।

सत्र 1994-95 में वन विभाग द्वारा वनों में विकास के अन्तर्गत सम्पादित कार्यों का विवरण तालिका संख्या 2.2 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 2.2

वन विभाग द्वारा सम्पादित कार्यों का विवरण (1994-95)

			लक्ष्य		पूर्ति			
क्र. स.	नाम योजना	इकाई का नाम	भौतिक	वित्तीय	भौतिक	वित्तीय	प्रतिशत	समीक्षा
1.	ईधन एवं चारा परियोजना	1. वृक्षारोपण	725 है.	40.00	725 है.	37.78	100 %	-
		2. अग्रिम मृदा कार्य	536 है.	-	360 है.		-	-
2.	सामाजिक वानिकी योजना	1. वृक्षारोपण	4 है.	12.00	4 है.	11.82	100%	-
3.	डी.पी.ए.पी. योजना	1. वृक्षारोपण	240 है.	18.05	240 है.	11.80	100%	-
		2. अग्रिम मृदा कार्य	92 है.	-	55 है.	-	-	-
4.	जवाहर रोजगार योजना	1. वृक्षारोपण	142 है.	22.15	143 है.	15.73	100%	-
		2. अग्रिम मृदा कार्य	459 है.	-	105 है.	-	-	-
5.	सुनिश्चित रोजगार योजना	1. वृक्षारोपण	35 है.	91,560	35 है.	91,560	100%	-
6.	संचार साधन	1. पक्की सड़क निर्माण	500 मी.	1.00	-	0.94	100%	-
		2. खड़ंजा निर्माण कार्य	-	-	159 मी.	-	-	-
7.	शहरी क्षेत्रों में सामाजिक वानिकी	1. पौध रोपण	1500	3.00	21.66	3.00	100%	-
		2. ट्री गार्ड	-	-	72	-	-	-
		3. ब्रिक गार्ड	-	-	130	-	-	-

स्रोत- वन विभाग कार्यालय, उरई (जनपद- जालौन) उ.प्र. तालिका संख्या २.२ के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वन विभाग द्वारा विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत वृक्षारोपण के विकास हेतु रखे गए लक्ष्यों की पूर्ति हेतु युद्ध स्तर पर प्रयास किया गया है फिर भी इस संदर्भ में शोधकर्ता का सुझाव है कि प्रयास यह होना चाहिए कि वृक्षारोपण का कार्य मात्र कागजी सीमा तक सिमट कर न रह जाए अपितु इसका व्यावहारिक पक्ष भी सवल होना चाहिए और यह तभी सम्भव है जबकि ईमानदारी पूर्वक कार्यो का संचालन हो।

भूमि उपयोग एवं फसल प्रतिरूप (Land-Use and Crops Pattern) -

भू संसाधनों का उपयोग भूमि संसाधन एवं उनके नियोजन का महत्वपूर्ण अंग है। किसी भी क्षेत्र में भूमि उपयोग का प्रारूप उसकी आर्थिक तथा कृषि सम्बन्धी दशाओं के तथ्यों को निरूपित करता है। भूमि उपयोग के माध्यम से क्षेत्र विशेष की कृषित, अकृषित एवं कृषि योग्य वेकार पड़ी भूमि आदि के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त होता है। अतएव इसकी व्याख्या कृषि विकास सम्वन्धी योजनाओं के निर्माण में विशिष्ट स्थान रखती है।

वस्तुतः उरई तहसील की अर्थव्यवस्था का मुख्य साधन कृषि है। यहां की लगभग 59.78 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है। उरई तहसील का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 946.40 वर्ग कि.मी. है। जिसके 80% भाग पर कृषि की जाती है। क्षेत्र के भूमि उपयोग का विवरण तालिका संख्या 2.3 एवं चित्र संख्या 2.4 A से स्पष्ट है।

तालिका संख्या 2.3

उरई तहसील का भूमि उपयोग 1993-94 (वर्ग कि.मी. एवं प्रतिशत में)

	भूमि उपयोग का प्रकार	क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी. में)	प्रतिशत
1.	प्रतिवेदित क्षेत्रफल	946.40 वर्ग कि.मी.	
2.	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	757.14 वर्ग कि.मी.	80.00%
3.	कृषि योग्य बंजर भूमि	18.20 वर्ग कि.मी.	1.94%
4.	ऊसर एवं कृषि अयोग्य भूमि	60.47 वर्ग कि.मी.	5.56%
5.	खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोग की भूमि	41.80 वर्ग कि.मी.	4.44%
6.	वन, उद्यान एवं चारागाह	68.77 वर्ग कि.मी.	8.23%
7.	एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल	298.13 वर्ग कि.मी.	31.50%
8.	सिंचित क्षेत्रफल	194.85 वर्ग कि.मी.	26.34%

तालिका संख्या 2.3 के विश्लेषण के उपरांत अध्ययन क्षेत्र के भूमि उपयोग को मुख्यतः पांच भागों में बांटा जा सकता है-

कृषि के अतिरिक्त भूमि- अध्ययन क्षेत्र की कुल भूमि का 4.44% भाग कृषि के लिए अनुपलब्ध है। बस्ती, रेलवे लाइन व सड़क के अन्तर्गत 3.18 प्रतिशत भूमि सम्मिलित है। जबकि तालाब, पोखव, झील इत्यादि के अन्तर्गत 1.26 प्रतिशत भूमि आती है।

कृषि योग्य बंजर एवं परती भूमि- इसके अन्तर्गत कृषि योग्य बंजर भूमि, पुरानी परती भूमि एवं नवीन परती भूमि सम्मिलित है जो कि कुल भूमि का 5.56 प्रतिशत है जिसमें क्रमशः 1.94, 1.09 तथा 2.53 प्रतिशत भूमि बंजर, पुरानी परती एवं नवीन परती के अन्तर्गत आती है।

कृषि अयोग्य एवं ऊसर भूमि- कृषि योग्य भूमि के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 5.56 प्रतिशत भाग आता है। पर्यावरण संरक्षण एवं वढ़ती हुई आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर इस भूमि को विकसित करने की आवश्यकता है।

वन, उद्यान एवं चारागाह- वन, उद्यान एवं चारागाहों के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की कुल प्रतिवेदित भूमि का 8.23 प्रतिशत भाग आता है। वनों, उद्यानों वं चारागाह के अन्तर्गत क्रमशः 6.03, 1.17;03 प्रतिशत भूमि आती है। वनों, उद्यानों एवं चारागाहों के अन्तर्गत आने वाली भूमि पर्यावरण संतुलन की दृष्टि से अत्यन्त कम है अतः वृक्षारोपण पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

कृषि कार्य में प्रयुक्त भूमि- अध्ययन क्षेत्र की कुल प्रतिवेदित भूमि का 80.00 प्रतिशत भाग कृषि योग्य भूमि के रूप प्रयुक्त हो रहा है। जिसके 31.50 प्रतिशत भाग पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं।

फसल प्रतिरूप (Crop- Pattern)-

शोध क्षेत्र में पैदा की जाने वाली फसलों को उनकी बुवाई, कटाई व जलवायु के समय के आधार पर तीन वर्गों (खरीफ, रवी तथा जायद) के अन्तर्गत रखा जा सकता है। सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 80 प्रतिशत भाग शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल के अन्तर्गत आता है। शुद्ध कृषि क्षेत्र का रवी, खरीफ एवं जायद की फसलों के अन्तर्गत क्रमशः 89.75, 10.24 एवं 0.01 प्रतिशत भूभाग आता है। शुद्ध

ORAI TAHSIL
A LAND-USE PATTERN (1992-93)
N
1 0 1 2 3 4 5
KMS
100%
0°
10%
20%
90°
30%
40%
180°
50%
60%
70%
270°
80%
90%
NET SOWN AREA
FOREST, ORCHARDS & GRAZING LAND
LAND UNDER OTHER USE
FALLOW & NON AGRICULTURAL LAND
CULTIVABLE WASTELAND
B CROPPING PATTERN (1992-93)
100%
0°
10%
20%
90°
30%
40%
180°
50%
60%
70%
270°
80%
90%
RABI CROPS
ZAID CROPS
KHARIF CROPS
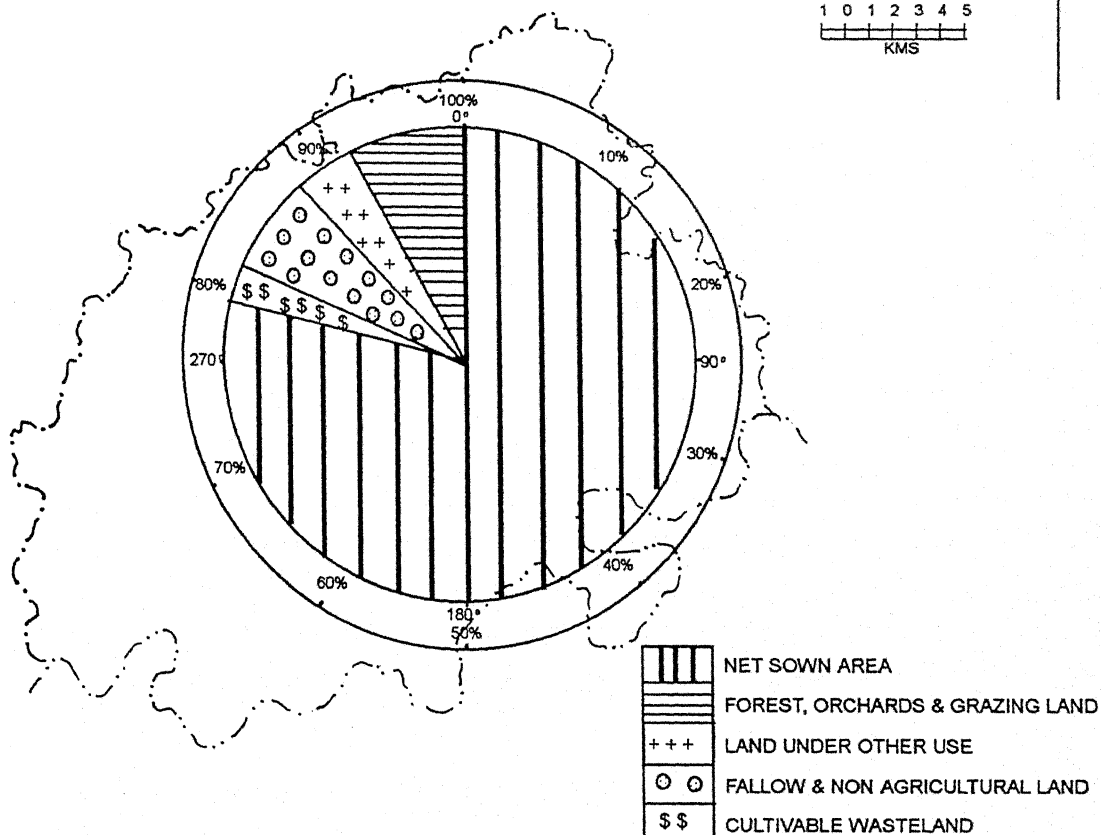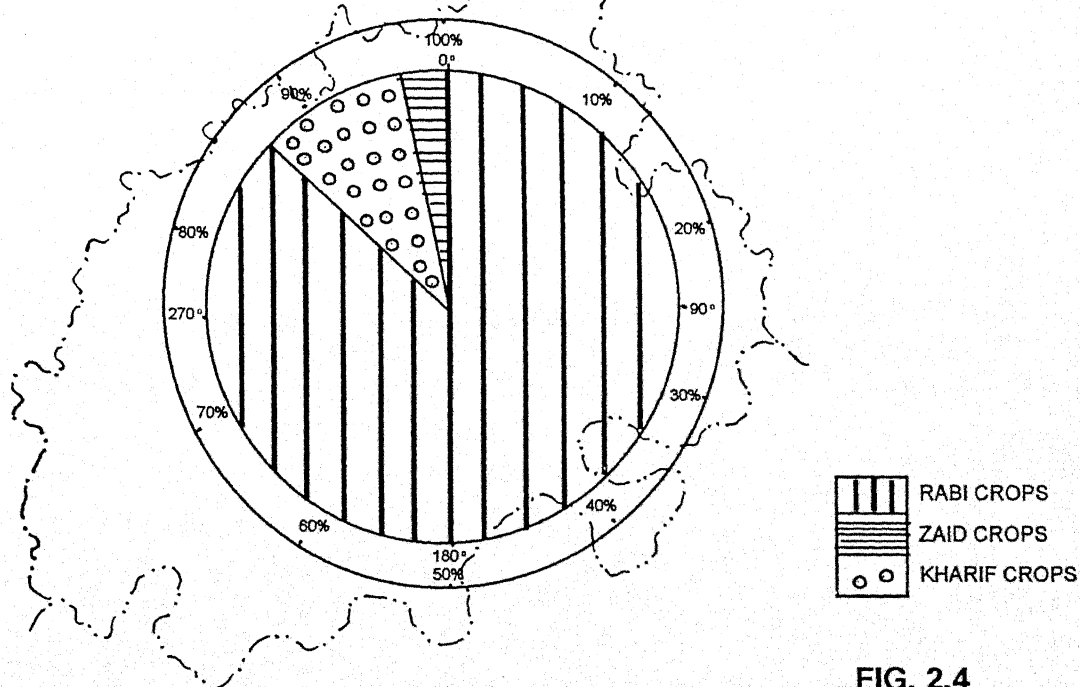
FIG. 2.4

कृषि भूमि का 26.34 प्रतिशत भाग सिंचित तथा शेष 73.66 असिंचित है। (चित्र संख्या 2.4 B) ।

खरीफ शस्य में भूमि उपयोग- खरीफ शस्य भूमि उपयोग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की वास्तविक कृषिगत भूमि का 10.24 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है।

तालिका संख्या- 2.4

उरई तहसील में खरीफ के अन्तर्गत क्षेत्रफल व प्रतिशत (1992-93)

क्र. सं.	नाम फसल	क्षेत्रफल (हेक्टयर में)	प्रतिशत
1.	चावल	1745	11.77%
2.	ज्वार/ बाजरा	6353	43.97%
3.	दालें	3779	25.86%
4.	तिलहन	900	5.92%
5.	अन्य	1687	11.78%

उपर्युक्त तालिका के विवेचन से स्पष्ट है कि खरीफ फसलों में खाद्यान्नों की प्रधानता है। इसके अन्तर्गत वास्तविक कृषि भूमि का 10.24% भाग सम्मिलित है। ज्वार, बाजरा, दालें (अरहर, उर्द, धान आदि मुख्य खाद्यान्न हैं। इसमें सबसे अधिक क्षेत्रफल ज्वार, बाजरा के अन्तर्गत आता है। इसके पश्चात दालों के अन्तर्गत क्षेत्र 25.86% आता है। अखाद्य फसलों के अन्तर्गत अत्यन्त न्यून क्षेत्र (5.92%) आता है।

रबी शस्य में भूमि उपयोग- रबी के अन्तर्गत उरई तहसील की वस्तविक कृषि भूमि का 89.75% क्षेत्रफल आता है।

तालिका संख्या 2.5

उरई तहसील रबी के अन्तर्गत क्षेत्रफल व प्रतिशत (1992-93)

नाम फसल		क्षेत्रफल (हेक्टयर में)	प्रतिशत
1.	गेहूं	13687	22.62%
2.	जौ	961	1.59%
3.	दालें	42,598	70.41%
4.	तिलहन	2430	4.01%
5.	अन्य	822	1.36%

तालिका से स्पष्ट है कि क्षेत्रफल की वास्तविक कृषि भूमि का 9.78% भाग खरीफ शस्य की वार्षिक उपजों (अरहर, गन्ना) के अन्तर्गत आता है। रबी शस्य में खाद्यान्नों के अन्तर्गत कुल वास्तविक कृषि भूमि का 75.61% भाग आता है। इस क्षेत्र की प्रमुख खाद्यान्न फसल गेहूं है, जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण रबी शस्य की वास्तविक भूमि का 22.62% भाग आता है तथा तिलहन के अन्तर्गत 4.01% भाग है। तिलहन के अन्तर्गत इस क्षेत्र के सर्वाधिक क्षेत्रफल में अलसी बोई जाती है। दालों के अन्तर्गत कुल रबी शस्य भूमि का सर्वाधिक क्षेत्रफल (31.41%) मसूर के अन्तर्गत आता है। दूसरा स्थान चना का है तथा तीसरे स्थान पर मटर आता है।

कृषि अर्थव्यवस्था के परीक्षण से स्पष्ट है कि यहां के अधिकतर किसान खेती में परम्परागत

कृषि तरीकों का प्रयोग करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि यहां के अधिकांश कृषक लघु विशेषतः सीमान्त वर्ग में आते हैं जो मात्र दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उत्पादन कर पाने में समर्थ हैं। इसके अतिरिक्त सिंचाई के साधनों की कमी एवं कृषि में नवीन आविष्कारों एवं वैज्ञानिक विधियों के अल्पतम प्रयोग से भी कृषि क्षेत्रों का सही उपयोग नहीं हो पाता है। आधुनिक समय में यद्यपि खेती करने के ढंगों में नवीनतम तकनीक के विकास पर बल दिया जा रहा है तथापि भूमि के नियोजित उपयोग के लिए सिंचन सुविधाओं की समुचित व्यवस्था तथा कृषि उत्पादन बढ़ाने एवं कृषि में प्रयोग किए जाने वाले नए- नए आविष्कारों के प्रति ईमानदारी से व्यवहारिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। यह कार्य न्याय पंचायत स्तर पर सुलभतापूर्वक सम्पन्न किया जा सकता है।

भूमि सिंचन (Irrigation)-

वस्तुतः सिंचाई एक ऐसा माध्यम है जो कि सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जलसम्पूर्ति करके तथा जल भराव वाले क्षेत्रों के जल को निस्सारित करके मानव को लाभान्वित करता है। कृषि कार्य के विकास के लिए अपर्याप्त एवं अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों में मनुष्य द्वारा विभिन्न जलस्रोतों का जल भिन्न-भिन्न विधियों द्वारा खेतों तक पहुंचाना सिंचाई कहलाता है। उरई तहसील की कुल बोई गई कृषित भूमि का 26.34% भाग ही सिंचित है। जिसमें सिंचाई साधनों के रूप में नहरों, कुओं, नलकूपों, बांधों एवं बंधियों का उपयोग किया जाता है। सर्वाधिक सिंचित भूमि का क्षेत्रफल नहरों के अन्तर्गत आता है। इसके अलावा कुओं, रहट, नलकूपों तथा निजी पम्पसेटों से भी सिंचाई की जाती हैं। तहसील में कुल नहरों की लम्बाई 461 कि.मी. है जिससे अध्ययन क्षेत्र के 17,120 हेक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई होती है।

सिंचाई के प्रमुख साधन और उनके द्वारा सिंचित क्षेत्र (Means of Irrigation and Irrigated Area)

इस क्षेत्र में प्रयोग किए जाने वाले प्रमुख सिंचाई के साधनों में नहरें, कुएं, नलकूप, तालाव, पोखर, झील इत्यादि आते हैं। सामान्यतः वर्तमान में उरई तहसील के अन्तर्गत पर्याप्त जल संसाधन उपलब्ध है, वेतवा इस क्षेत्र की प्रधान नदी है। इस नदी पर बांध बनाकर पारीक्षा नहर निकाली गई है जिसकी दो शाखाओं में से प्रथम पुलिया गांव के पास कुठौंद एवं दूसरी हमीरपुर में है। इन दोनों नहरों की कुल लम्बाई 916 कि.मी. है, लेकिन हमीरपुर शाखा के अन्तर्गत उरई तहसील का बहुत कम भाग ही आता है. और मात्र 17,120 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है। इसके अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र का 1998 हेक्टेयर क्षेत्र नलकूपों, 203 हेक्टेयर कुओं तथा 4 हेक्टेयर तालाब झील, पोखरों एवं 160 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई अन्य साधनों द्वारा होती है (तालिका सं. 2.6 एवं चित्र सं. 2.5 A एवं B)।

तालिका संख्या 2.6

सिंचाई के प्रमुख साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र (हेक्टेयर में)

	साधन	सिंचित क्षेत्र	प्रतिशत
1.	नहर	17120	87.86%
2.	नलकूप	1,998	10.25%
3.	कुआं	203	1.04%
4.	तालाव, झील, पोखर	04	0.02%
5.	अन्य साधन	160	0.82%

स्रोत- सिंचाई विभाग उरई जनपद जालौन।

TAHSIL ORAI
IRRIGATED AREA BY DIFFERENT MEANS OF IRRIGATION
(IN HECTARES)
N
1 0 1 2 3 4 5 6 7
KMS
100%
0°
10%
20%
90°
30%
40%
180°
50%
60%
70%
270°
80%
90%
CHANNALS
TUBE WELLS
WELLS
POND &LAKES
OTHERS
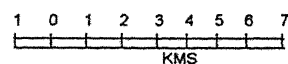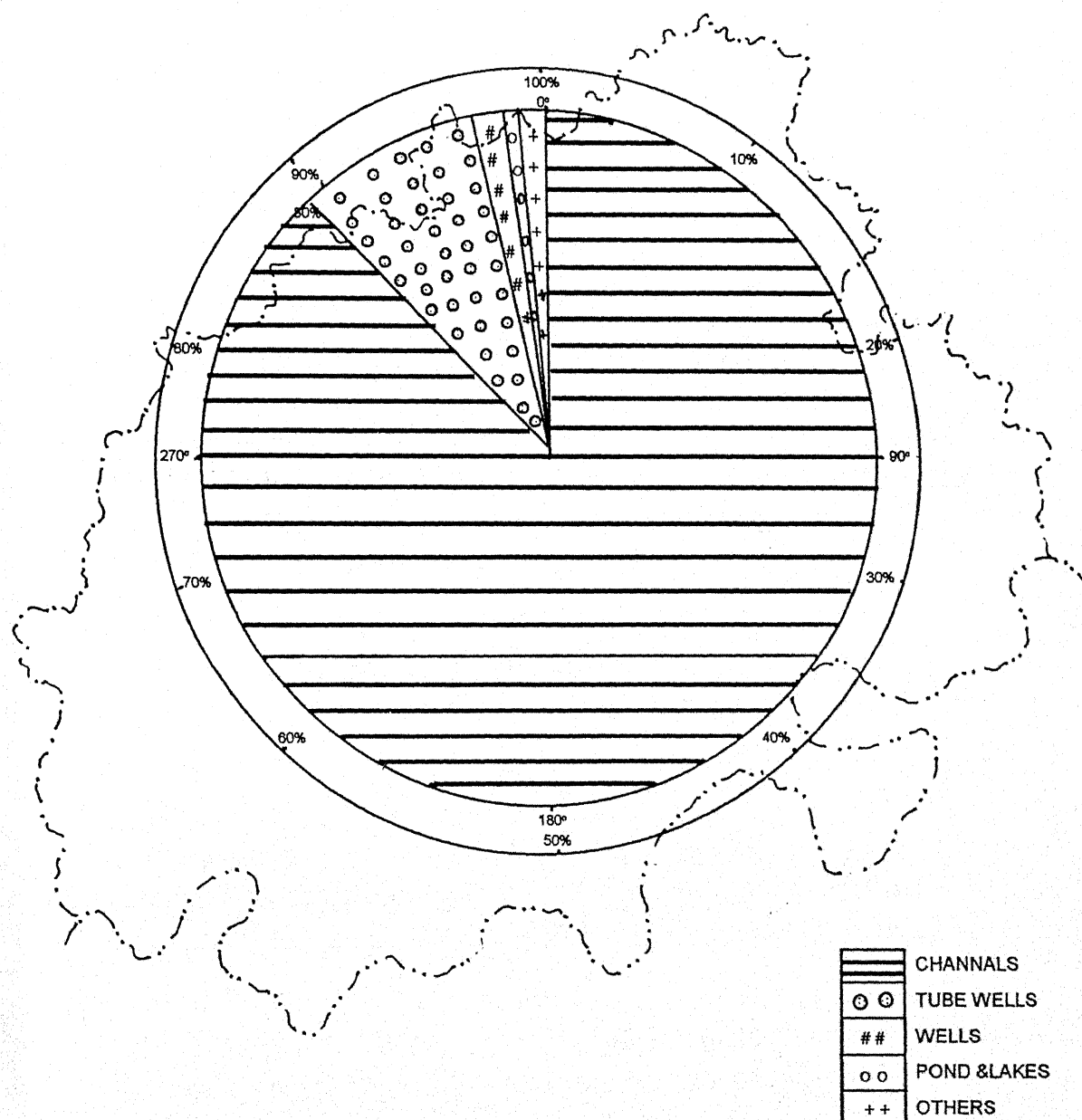
FIG. 2.5

खनिज संसाधन (Mineral Resources)-

किसी भी क्षेत्र के औद्योगिक विकास में खनन प्रक्रिया का विशेष महत्व है। शोध क्षेत्र खनिज उपलब्धता की दृष्टि से अत्यन्त पिछड़ा है और कोई महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ उपलब्ध नहीं है। यहां पर वेतवा नदी से भवन निर्माण कार्यों में उपयोग हेतु अत्यधिक उपयोगी पदार्थ बालू, मोरम प्राप्त की जाती है। नदी से बालू का खनन कार्य प्रमुखतः कहटाघाट, परासन घाट, मोहानाघाट तथा सैदनगर इत्यादि में होता है। यहां पर उपलब्ध बालू का प्रयोग न केवल स्थानीय स्तर पर होता है अपितु प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों यथा- उत्तरी- पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में बालू भेजी जाती है। इसके अतिरिक्त सैदनगर में छोटी- छोटी पहाड़ियां भी हैं, जिनमें गिट्टी तोड़ने तथा भवन निर्माण हेतु चौकोर पत्थरों को तैयार करने का कार्य किया जाता है। यहां पर उपलब्ध पत्थर उच्च कोटि का नहीं है।

उद्योग धन्धे (Industries)

जनपद एवं तहसील मुख्यालय की स्थिति, उपयुक्त भौगोलिक परिस्थिति, आवागमन की सुविधा एवं आठवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा घोषित विशिष्ट विभिन्न सुविधाओं,जैसे-केन्द्रीय पूंजी उपादान, राज्य पूंजी उपादान तथा विक्री कर इत्यादि में छूट को ध्यान में रखते हुए कई कम्पनियों ने अपने वृहद एवं मध्यम उद्योग उरई- कालपी मार्ग पर स्थित औद्योगिक क्षेत्र में स्थापित किए हैं। जिनमें मुख्यतः ग्लैक्सो, उर्वशी, सैन्थिटिक, भटिण्डा केमिकल्स, वलवीर स्टील वर्क्स, उरई फ्लोर मिल तथा कागज मिल इत्यादि हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक क्षेत्र उरई में अन्य अनेक मध्यम एवं वृहद-स्तरीय उद्योगों की स्थापना होने जा रही है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में भी राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित अनेक योजनाओं के माध्यम से उपलब्ध संसाधनों के आधार पर परम्परागत उद्योगों के विकास के लिए प्रयत्न किए जा रहे हैं। जून 1995 तक शोध क्षेत्र में 605 पंजीकृत लघु उद्योग एवं लघु स्तरीय औद्योगिक इकाइयों की स्थापना हुई है जिनमें रु. 633.12 लाख का पूंजी विनियोग हुआ है एवं 2514 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ है। लघु-स्तरीय औद्योगिक विकास का विवरण तालिका संख्या 2.7 में प्रस्तुत है।

तालिका सं. 2.7

उरई तहसील में स्थापित लघु औद्योगिक इकाइयां (30.6.95 तक की स्थिति)

क्र.सं.	नाम इकाई	संख्या	विनियोजन	रोजगार (व्यक्ति)	कार्यरत इकाइयां
1.	फूड प्रोडक्टस	120	225.00	514	113
2.	मेटल प्रोडक्टस	79	168.00	400	74
3.	नान मेटेलिक मिनरल प्रोडक्टस	06	18:20	145.	66
4.	केमिकल्स एण्ड केमिकल्स प्रोडक्टस	23	32.05	120	20
5.	बेसिक मेटल प्रोडक्टस	01	0.29	05	01
6.	पेपर प्रोडक्टस एण्ड प्रिंटिंग	35	1725	140	30
7.	रबर एण्ड प्लास्टिक प्रोडक्ट्स	12	24.00	60	11
8.	इलेक्ट्रिक मशीनरी एण्ड आपरेट्स	15	750	35	12
9.	वूड प्रोडक्टस	70	779	240	67
10.	रिपेयर सर्विसेज	102	16.45	250	99
11.	लेदर एण्ड लेदर गारमेंट्स	22	30.00	100	20

12.	होजरी एण्ड गारमेंट्स	80	18.22	212	79
13.	ट्रांसपोर्ट इक्युपमेंट्स एण्ड पेपर	01	0.35	02	01
14.	मिसलेनियस मैन्यूफैक्चरिंग	15	5.20	95	14
15.	फेब्रेरिस टोबैको एण्ड टोबैको प्रा.	08	2.00	100	07
16.	कोटन टेक्सटाइल्स	04	20.00	26	03
17.	पल्सेस एण्ड फेब्रेरिक टेक्सटाइल्स	12	40.12	60	11
18.	जेट हैण्ड पम्प	-	-	-	-
19.	अदर सर्विसेज	-	-	-	-
	योग	605	623.12	2514	568

स्रोत- जिला उद्योग केन्द्र उरई, जनपद- जालौन।

जनसंख्या एवं परिवहन तंत्र (Population and Transport System)-

किसी समाज में मनुष्यन केवल संसाधनों के लाभप्रद उपयोग के लिए आर्थिक प्रतिरूप का निर्धारण करता है अपितु वह स्वयं एक आवश्यक एवं गतिशील संसाधन है। क्योंकि इसी से प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की प्रक्रियाओं को नियोजित एवं प्रतिपादित करने के लिए इच्छित श्रम एवं कुशलता की प्राप्ति होती है (खान, 1987)। वस्तुतः देश के विभिन्न भागों में प्राकृतिक बातावरण को संशोधित करके सांस्कृतिक भूदृश्य का निर्माण करने वाला मानव भौगोलिक अध्ययन का प्रमुख बिन्दु है (ट्रिवार्था, 1963)। मानवीय संसाधन किसी क्षेत्र की आर्थिक प्रगति में एक महत्वपूर्ण आधारभूत तत्व है। मानव स्वयं भी संसाधनों के विकास एवं उपयोग की सम्पूर्ण प्रक्रिया में एक लाभार्थी है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मानव एवं संसाधनों में आपसी क्रियाओं द्वारा विकास के स्तर का निर्धारण होता है (डिकट्रिच, 1948)।

जनसंख्या का विकास (Development of Population)-

1991 की जनगणना के अनुसार, शोध क्षेत्र की कुल जनसंख्या 2,54,345 है जिसमें 54.77 प्रतिशत पुरूष तथा 45.23 प्रतिशत स्त्रियां हैं। यहां की कुल जनसंख्या का 58.46 प्रतिशत गांवों में व 41.54 प्रतिशत नगरों में निवास करता है। उरई इस क्षेत्र का प्रमुख विकसित नगर है। अनुसूचित जाति वर्ग में 70265 व्यक्ति निवास करते हैं जो कुल जनसंख्या का 27.63 प्रतिशत हैं। सम्पूर्ण अनुसूचित वर्ग की जनसंख्या में 38701 पुरुष तथा 31564 स्त्रियां हैं जो कि क्रमशः 55.07 तथा 44.92 प्रतिशत हैं। अनुसूचित जातियों का सर्वाधिक सकेन्द्रण गांवों में देखने को मिलता है। कुल अनुसूचित जाति की जनसंख्या 61.18 प्रतिशत गांवों में व 38.19 प्रतिशत नगरों में निवास करती है।

ग्रामीण - नगरीय जनसंख्या (Rural- Urban Population)-

उरई तहसील की 1,48,700 जनसंख्या गांवों में निवास करती है। उत्तरप्रदेश व अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण- नगरीय जनसंख्या की वृद्धि का विवरण तालिका संख्या 2.8 से स्पष्ट है।

तालिका संख्या- 2.8

उत्तरप्रदेश राज्य एवं उरई तहसील की नगरीय एवं ग्रामीण जनसंख्या 1971 से 1991 तक

	उत्तरप्रदेश			उरई तहसील		
वर्ष	कुल	ग्रामीण	नगरीय	कुल	ग्रामीण	नगरीय
1971	88341144	75952548	12388586	154778	112265	42513
1981	110862013	90962898	19899115	196738	124389	72349
1991	139112287	111506372	27605915	254345	148700	105645

स्रोत- जनगणना पुस्तिका जालौन, 1981 एवं जनगणना विभाग, लखनऊ, 1991।

तालिका संख्या 2.8 के विश्लेषण से स्पष्ट है कि 1981-91 में उरई तहसील की नगरीय जनसंख्या में वेतहाशा वृद्धि हुई। यह वृद्धि उत्तरप्रदेश की तुलना में अधिक है जबकि ग्रामीण जनसंख्या कमी का प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में नगरों की अपेक्षा सुविधाओं के अभाव व असुरक्षा के कारण ग्रामीण जनों का नगरों की ओर पलायन करना है।

जनसंख्या वितरण (Distribution of Population)-

किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या के स्थानिक वितरण में वहां पर उपलब्ध संसाधनों का प्रभाव पूर्णतः दृष्टिगत होता है। साथ ही भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों का प्रभाव भी दृष्टिगत होता है। वास्तव में जब तक किसी क्षेत्र में मानव वितरण के सम्बन्ध में हमें सही ज्ञान नहीं प्राप्त हो जाता है तब तक हम उस क्षेत्र विशेष के अन्य पक्षों का अध्ययन व्यवस्थित ढंग से नहीं कर सकते हैं। जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप के विश्लेषण में मुख्यतः जनसंख्या का विकास तथा उसका घनत्व अध्ययन के क्षेत्र होते हैं (चित्र सं. 2.6 A)।

उरई तहसील के जनसंख्या वितरण हेतु चित्र सं2.6में निर्मित विन्दु मानचित्र के अवलोकन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में बेतवा नदी के आसपास विस्तृत ऊबड़- खावड़ क्षेत्र में विरल जनसंख्या पाई जाती है। जबकि क्षेत्र का उत्तरी एवं मध्यवर्ती भाग जनसंख्या वितरण की दृष्टि से सघन क्षेत्र है। इसका प्रमुख कारण यह है कि यह एक समतल भूभाग है जहां कृषि कार्य हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध हैं।

जनसंख्या घनत्व (Density of Population)-

किसी भी क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों की संख्या तथा उस क्षेत्र के क्षेत्रफल के पारस्परिक अनुपात को जनसंख्या घनत्व कहते हैं। वस्तुतः जनसंख्या का घनत्व इस बात का प्रतीक है कि क्षेत्र में पाए जाने वाले संसाधनों का उपयोग कितने लोगों द्वारा किया जाता है। जनसंख्या घनत्व एवं वितरण परस्पर सम्बन्धित हैं। इनका सम्बन्ध भौतिक वातावरण से होता है। जो कि मानव के सकरात्मक एवं नकरात्मक सम्बन्धों को प्रदर्शित करते हैं (चित्र संख्या 2.6 B) जनसंख्या घनत्व के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि क्षेत्र की कितनी जनसंख्या स्थानीय रूप में उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर है। जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से उरई तहसील में 269 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. निवास करते हैं। जबकि उ.प्र. में 473 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. निवास करते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रदेश की तुलना में शोध. क्षेत्र का जनघनत्व अत्यन्त न्यून है।

अवस्थापनाओं की कमी, सम्पर्क केन्द्रों का अभाव आदि के कारण 1971 की जनगणना में इस क्षेत्र का घनत्व 165 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. तथा 1981 में 216 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था। 1971 से 1991 के मध्य जनसंख्या घनत्व में 61.3 प्रतिशत की वृद्धि अध्ययन क्षेत्र में हुई है।

TAHSIL ORAI
A DISTRIBUTION OF POPULATION, 1991
N
KMS
URBAN POPULATION
RURAL POPULATION
ONE DOT REPRESENT 100 PERSONS
B DENSITY OF POPULATION, 1991
PERSONS/KM²
< 100
100-200
200-300
> 300
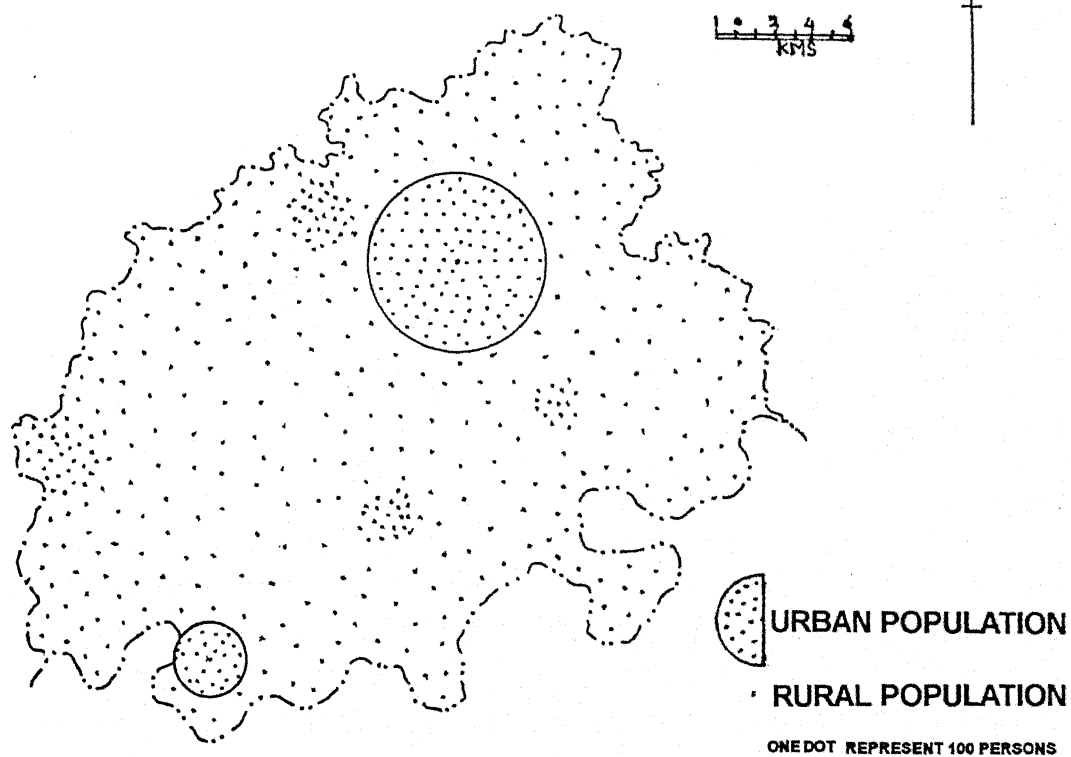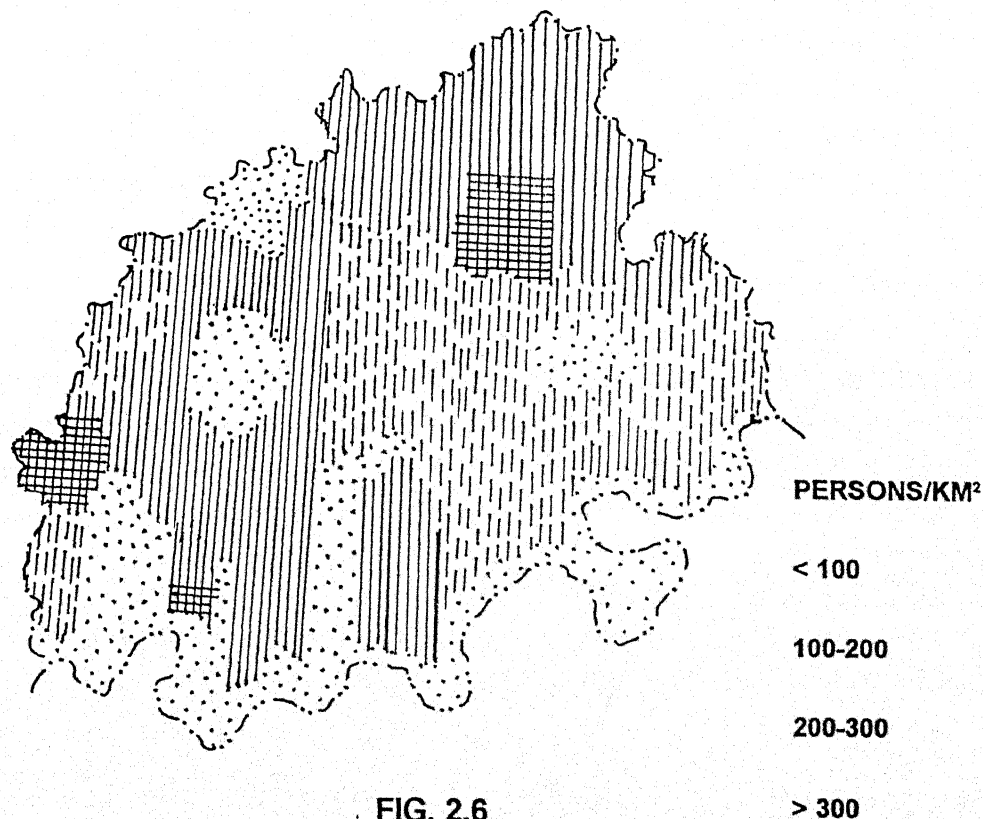
FIG. 2.6

इस वृद्धि का प्रमुख कारण यह है कि शासन द्वारा क्षेत्र में विकास हेतु अनेक योजनाएं क्रियान्वित की गई हैं तथा सुविधा- संरचना के विकास में तेजी आई। 1991 की जनगणना के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण जनसंख्या का घनत्व 165 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है जबकि नगरीय क्षेत्रों में यह 4516 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। जो कि ग्रामीण जनसंख्या से 27 गुना से भी अधिक है। यदि न्याय पंचायत स्तर पर जनसंख्या के घनत्व का विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक जनघनत्व एट न्याय पंचायत में (233 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि.मी.) देखने को मिलता है। जबकि सबसे कम जनघनत्व (108 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी.) बड़ागांव न्याय पंचायत में पाया जाता है। विशेषतया नगरीय क्षेत्रों के साथ ही एट न्याय पंचायत में सर्वाधिक जनघनत्व होने का कारण यह है कि इस न्याय पंचायत के अन्तर्गत एट एक विकसित एवं सुविधा सम्पन्न सेवा केन्द्र है। चूंकि यह केन्द्र राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है इसलिए देश के अन्य भागों से सीधे सम्पर्क में होने के कारण आसपास स्थित गांववासियों के लिए आकर्षण का केन्द्र है। यहां मानव बसाव त्वरित गति से हुआ है। परिणामतः जनसंख्या में वृद्धि हुई है। जबकि बड़ागांव न्याय पंचायत एक अविकसित भूभाग है। जहां बिरल जनसंख्या घनत्व पाया जाता है।

लिंग अनुपात (Sex Ratio)-

देश के अन्य भागों की भांति उरई तहसील में भी युवा वर्ग की अधिकता है। इस वर्ग की अधिकता स्त्री- पुरुष दोनों ही वर्गों में देखने को मिलती है। इसका कारण यह है कि यह वर्ग तीव्र उत्पादकता, परिवर्तनशीलता एवं अर्जित जनसंख्या का द्योतक है। इस संदर्भ में श्री पी.एन. चोपड़ा का यह कहना सत्य ही प्रतीत होता है कि बालकों की यह वृद्धि क्रियाशील जनसंख्या में कमी करके उस पर आश्रित भार को बढ़ाती है। जिसके परिणाम स्वरूप कई प्रकार की समस्याएं उद्भूत हो जाती हैं। लिंग अनुपात वस्तुतः स्थानिक विश्लेषण का एक प्रमुख एवं उपयोगी साधन है। लिंग अनुपात तीन आधारभूत कारकों– जन्मदर में लिंगानुपात, मृत्युदर में लिंगानुपात एवं प्रवासी जनसंख्या के लिंगानुपात का प्रतिफल होता है। वस्तुतः यह अनुपात, जनसंख्या वृद्धि, विवाह दर तथा व्यवसायिक संरचना पर अपना विशेष प्रभाव डालता है। अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या में 54.78 प्रतिशत पुरुष तथा 45.22 प्रतिशत स्त्रियां हैं। 1991 की जनगणना के अनुसार प्रति हजार पुरुषों पर 829 स्त्रियां हैं जबकि 1981 की जनगणना के अनुसार 1000 पुरुषों पर इनकी संख्या 846 थी। इस प्रकार 1981-91 के दशक के विश्लेषणात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि प्रति हजार पुरुषों के सापेक्ष स्त्रियों की संख्या कम हुई है।

लिंग अनुपात के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र के प्रत्येक भाग में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत कम है। वस्तुतः महिलाओं की अपेक्षा पुरुष बच्चों की उत्पत्ति, परम्परावादी सामाजिक व्यवस्था की देन है। लड़कियों की उचित देखभाल न किया जाना, दहेज एवं अन्य सामाजिक कुरीतियों यथा भौतिक परिवेश, अविकसित तंत्र, बाल विवाह, स्त्रियों में शिक्षा की कमी, असंतुलित आहार, हिन्दू समाज में स्त्रियों के प्रति अनुदारवादी व्यवहार आदि तत्वों के फलस्वरूप स्त्रियों की मृत्युदर में अधिकता होने के कारण न केवल यह क्षेत्र बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र ही एक पुरुष प्रधान देश की श्रेणी में आता है।

साक्षरता (Literacy)-

'साक्षरता' व्यक्ति, समाज एवं देश सभी स्तरों पर सामाजिक- आर्थिक विकास को एक सुदृढ़ आधार प्रदान करती है। साक्षरता गरीबी एवं मानसिक विरोधाभास को समाप्त कर शांति एवं सहयोगपूर्ण विश्वव्यापी सम्बन्धों के विकास तथा प्रजातंत्रीय प्रक्रियाओं में स्वतंत्र क्रिया की अनुमति प्रदान करने सम्बन्धी कार्यों में आवश्यक है (चांदना, 1980)।

यह लोगों की प्राचीन परम्पराओं की कुरीतियों को दूर करने की क्षमता तथा आधुनिक जीवन पद्धति को अपनाने में जागरुकता उत्पन्न करती है तो दूसरी ओर निरक्षरता, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं तकनीकी दृष्टि से पिछड़ेपन का द्योतक है (सिंह, 1986)। सम्भवतः यह कहा गया है कि निरक्षरता पीड़ा देने वाला एक ऐसा रोग है जो न केवल मौलिक मानवाधिकारों को प्राप्त करने में बाधा पहुंचाता है अपितु किसी राष्ट्र के समन्वित विकास को वाधित करता है (वलीदां, 1985)। अतः निरक्षरता किसी समाज के समाजार्थिक विकास एवं राजनीतिक कुशलता पर अंकुश का कार्य करती है (चांदना, 1980)। इसके अलावा साक्षरता का स्पष्ट प्रभाव प्रमुखतः शिशु जन्मदर, मृत्युदर तथा प्रजनन गति पर भी दृष्टिगत होता है। 1991 की जनगणना के अनुसार उरई तहसील की कुल शिक्षित जनसंख्या 1,24,676 है जो कि तहसील की कुल जनसंख्या का 49.01 प्रतिशत है और यह प्रतिशत उत्तरप्रदेश की साक्षर जनसंख्या के प्रतिशत (33.78 प्रतिशत) से अधिक हैं। यहां पर साक्षर स्त्रियों (32.98 प्रतिशत) की अपेक्षा साक्षर पुरुषों का साक्षरता प्रतिशत अधिक हैं। न्याय पंचायत स्तर पर किए गए तुलनात्मक विश्लेषण से यह प्रकाश में आता है कि अध्ययन क्षेत्र के नगरीय एवं ग्रामीण साक्षरता प्रतिशत में भी अंतर मिलता है। तहसील में नगरीय साक्षरता का प्रतिशत 62.77 है जवकि ग्रामीण साक्षरता प्रतिशत 37.22 है। इसका प्रमुख कारण यह है कि नगरीय क्षेत्रों में साधनों से परिपूर्ण एवं उच्च शिक्षा पद्धति पर आधारित शैक्षणिक संस्थान उपलब्ध हैं जवकि गांवों में व्यवस्थित शिक्षा केन्द्रों का अभाव है।

व्यवसायिक संरचना (Occupational Structure)-

किसी भी क्षेत्र के संरचनात्मक परिवर्तन तथा उसके माध्यम से आर्थिक आधार पर परिचर्चा करने के लिए व्यवसायिक संरचना का विश्लेषणात्मक विवेचन आवश्यक है। वास्तव में कार्यात्मक संगठन किसी क्षेत्र की आर्थिक गतिशीलता को चित्रित करने का प्रधान स्रोत है। व्यवसायिक संरचना के अध्ययन से क्षेत्र विशेष के निवासियों का रहन- सहन एवं जीवन- यापन के स्तर का सटीक अनुमान लगाया जा सकता है (अग्रवाल, 1977)। 1991 की जनगणना के अनुसार उरई तहसील की व्यवसायिक संरचना का स्वरूप निम्नवत् है।

तालिका संख्या 2.9

उरई तहसील की न्याय पंचायत वार व्यवसायिक संरचना 1991 (प्रतिशत में)

क्र.सं.	नाम न्याय पंचायत	क्रियाशील	अक्रियाशील	सीमान्तक
1.	खरुसा	28.24	66.68	5.08
2.	गढ़हर	32.66	60.66	6.67
3.	रुरा अड्डू	35.45	61.20	3.34
4.	करमेर	35.40	63.69	0.90
5.	ऐंर	27.58	67.76	4.65
6.	कुसमिलिया	29.83	62.80	7.35
7.	बड़ागांव	24.86	69.18	5.96
8.	एट	33.33	65.10	1.55
9.	बिनौरा	30.37	64.80	4.81
10.	जैसारीकला	31.88	60.62	7.50
11.	डकोर	35.79	60.71	4.42
12.	नगरीय क्षेत्र	35.36	64.38	0.24

स्रोत- तहसील कार्यालय, उरई से प्राप्त आंकड़ों की गणना पर आधारित।

उपर्युक्त तालिका के सूक्ष्म पर्यवेक्षण से स्पष्ट है कि शोध क्षेत्र की सभी न्याय पंचायतों व नगरीय क्षेत्र में कार्य न करने वाले लोगों की अधिकता है जिससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में अर्जक जनसंख्या की अपेक्षा आश्रित जनसंख्या की अधिकता है (मिश्रा, 1996)। तालिका संख्या 2.9 में प्रस्तुत व्यवसायिक जनसंख्या की क्रियाशील, अक्रियाशील व सीमान्तक जनसंख्या का विशद वर्णन निम्नवत है।

क्रियाशील जनसंख्या (Main Workers)-

किसी क्षेत्र की क्रियाशील जनसंख्या के अन्तर्गत काश्तकार, खेतिहर मजदूर, पारिवारिक एवं कुटीर उद्योग धंधों, परिवहन व विविध सेवाकार्यों में लगी जनसंख्या की गणना की जाती हैं। अध्ययन क्षेत्र की क्रियाशील जनसंख्या के विश्लेषण से स्पष्ट है कि क्रियाशील जनसंख्या का सर्वाधिक प्रतिशत (35.79) डकोर न्याय पंचायत के अन्तर्गत आता है। इसके उपरांत रूरा अड्डू (34.45 प्रतिशत), करमेर (45.40 प्रतिशत) न्याय पंचायतों तथा नगरीय क्षेत्र (35.36 प्रतिशत) का स्थान आता है। जहां पूर्ण समय कमाने वालोंका प्रतिशत 35 से अधिक है। 30 से 35 प्रतिशत व्यवसायिक जनसंख्या एट, गढ़हर, जैसारीकला तथा विनौरा न्याय पंचायतों में हैं। कुसमिलिया, खरुसा तथा ऐर न्याय पंचायतों में व्यवसायिक संरचना का प्रतिशत 25 से 30 के मध्य है। बड़ागांव न्याय पंचायत में मात्र 24.88 प्रतिशत जनसंख्या पूर्णरूप से क्रियाशील वर्ग में आती है।

अक्रियाशील जनसंख्या (Non Workers)-

अक्रियाशील जनसंख्या से तात्पर्य किसी क्षेत्र में निवास कर रहे लोगों की उस जनसंख्या से है जो कि 15 वर्ष से कम उम्र के बालकों, बेरोजगारों, अकर्मण्य या 60 वर्ष से अधिक उम्र वाले वृद्ध जनों से सम्बन्धित है। अध्ययन क्षेत्र की बड़ागांव न्याय पंचायत में अक्रियाशील जनसंख्या का सर्वाधिक प्रतिशत (69.18 प्रतिशत) देखने को मिलता है तथा सबसे कम प्रतिशत (60.71 प्रतिशत) डकोर न्याय पंचायत में दृष्टिगत होता है। अक्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत सभी अन्य पंचायतों में 60 प्रतिशत से ऊपर है।

सीमान्तक (Marginal Workers)-

अध्ययन क्षेत्र में पूर्णकालिक क्रियाशील एवं अक्रियाशील जनसंख्या के अतिरिक्त कुछ ऐसी भी जनसंख्या है जो कि वर्ष में कुछ समय ही कार्य करती है। सीमान्तक क्रियाशील जनसंख्या कहलाती है। अध्ययन क्षेत्र में 0.90 प्रतिशत (करमेर न्याय पंचायत) से लेकर 7.50 प्रतिशत के मध्य सीमान्त क्रियाशील जनसंख्या है। सीमान्तक क्रियाशील जनसंख्या सबसे अधिक जैसारीकला (7.50 प्रतिशत) व सबसे न्यून करमेर (0.90 प्रतिशत) न्याय पंचायत में है।

व्यवसायिक संरचना का स्थानिक प्रतिरूप (Spatial Pattern of Occupational Structure)-

अध्ययन क्षेत्र में व्यवसायिक संरचना के स्थानिक वितरण प्रतिरूप में भी विषमता दृष्टिगत होती है।

कृषक (Cultivator)-

इस वर्ग में वे व्यक्ति सम्मिलित हैं जो अपनी स्वयं की भूमि,सरकारी पट्टे द्वारा प्राप्त भूमि अथवा किसी दूसरी संस्था या व्यक्ति से बटाई या किराए पर ली गई भूमि या अन्य प्रकार से प्राप्त जमीन पर या तो स्वयं कृषि करते हैं या अपने निर्देशन व देखरेख में उस भूमि पर कृषि करवाते हैं (अग्रवाल, 1977)। क्रियाशील जनसंख्या में कृषकों का प्रतिशत 47.73 है।

कृषि श्रमिक (Agricultural Labourers)-

1991 की कार्यशील जनसंख्या का 24.27 प्रतिशत भाग कृषि श्रमिक है। शोध क्षेत्र में कृषि श्रमिक जनसंख्या में 28.49 प्रतिशत पुरुष तथा 20.05 प्रतिशत स्त्रियां कार्यरत हैं।

अन्य व्यवसायों में संलग्न जनसंख्या (Population Engaged in othor Works) -

कृषि श्रमिक एवं कृषक के अतिरिक्त उरई तहसील की जनसंख्या का 28.0 प्रतिशत भाग द्वितीयक एवं तृतीयक कार्यों यथा- पशुपालन, वनीय कार्यों, खनन कार्यों, मत्स्य आखेट, पारिवारिक व निर्माण उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, परिवहन, संचार तथा अन्य सेवाओं में भी संलग्न है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यह एक कृषि प्रधान क्षेत्र है तथा यहां की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था लगभग कृषि पर आधारित है। क्रियाशील जनसंख्या की वृद्धि हेतु रोजगार के सुअवसर बढ़ाने की महती आवश्यकता है। साथ ही महिलाओं को भी इस दिशा में जागरुक करने की आवश्यकता है।

मानव अधिवास एवं सुविधा संरचना- (Human settlement and Infrastructure)-

1991 की जनगणना के अनुसार उरई तहसील की 58.46 प्रतिशत जनसंख्या आज भी ग्राम्य अधिवासों तथा 41.54 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। 1981-91 के दशक में शोध क्षेत्र की कुल जनसंख्या में 29.28 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। ग्रामीण एवं नगरीय वितरण प्रतिरूप से स्पष्ट है कि ग्रामीण जनसंख्या (19.54) की अपेक्षा नगरीय जनसंख्या (45.93) प्रतिशत में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। जबकि 1971-81 के बीच नगरीय जनसंख्या में 40.18 प्रतिशत तथा ग्रामीण जनसंख्या में 15.80 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। नगरीय जनसंख्या में अधिक वृद्रि का कारण न केवल प्राकृतिक है अपितु संलग्न क्षेत्रों से ग्राम्यवासियों का नगर की ओर पलायन भी अपना महत्वपूर्ण योगदान रखता है। नगरोन्मुख जनसंख्या के स्थानान्तरण में असुरक्षा एवं अशिक्षा की विशेष भूमिका है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि तहसील में 1000 या इससे कम आवादी वाले ग्रामों की संख्या 104 है जवकि 1000 से अधिक आवादी वाले ग्रामों की संख्या 53 है। 5000 से अधिक आबादी वाले गांवों की संख्या 102 है। जिनमें से विकासखण्ड मुख्यालय डकोर व ग्रामीण व्यापारिक केन्द्र एट सम्मिलित हैं। इन गांवों की जनसंख्या वृद्धि या सुविधा संरचना के विकास को देखने से ऐसा महसूस होता है कि निकट भविष्य में नगर में परिवर्तित हो जाएंगे। इनकी नगरीय स्थिति पंचम वर्ग में है। उरई इस क्षेत्र का प्रमुख द्वितीय श्रेणी का नगर है। जो 1989 से नगरीय स्तर की दृष्टि से द्वितीय स्थान पर केन्द्रित है। कोटरा अधिवास का नगरीय वर्ग में प्रवेश सन् 1981 से हुआ है। इससे पूर्व यह एक विकसित गांव था।

शोध क्षेत्र के अधिवासीय बसाव एवं स्वरूप पर दृष्टिपात करने से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि यह प्राचीन काल से विकसित मानव अधिवास का एक प्रमुख क्षेत्र रहा है। जहां विभिन्न भागों से आकर लोग बसते रहे हैं। जनसंख्या की वृद्धि जोताकार में विभाजन, सड़कों एवं रेलवे लाइनों तथा अन्य सुविधाओं की स्थापना से सामान्यतः देश प्रदेश एवं विशेष रूप से अध्ययन क्षेत्र के अधिवासीय तंत्र का संशोधित रूप दृष्टिगत होता है।

यद्यपि वर्तमान समय में आर्थिक एवं औद्योगिक विकास के कारण नगरीय अधिवासों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है फिर भी ग्राम्य परिवेश की संख्या इस वात का द्योतक है कि भविष्य में कभी भी गांव समाप्त होने की स्थिति में नहीं हैं। अध्ययन क्षेत्र में न्याय पंचायत वार विभिन्न स्तर के गांवों का विवरण तालिका संख्या 2.10 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या 2.10

जनसंख्या के अनुसार न्याय पंचायत वार वर्गीकृत ग्राम 1991

न्याय पंचायत	200 से कम	200 से 499 तक	500 से 999 तक	1000 से 1999 तक	2000 से 50000 तक	5000 से अधिक	योग
1. खरुसा	06	03	01	03	03	00	16
2. गढ़हर	05	03	05	02	03	00	18
3. सूरा अड्डू	02	05	04	04	02	00	14
4. करमेर	03	05	04	04	02	00	18
5. ऐर	02	03	03	04	02	00	14
6. कुसमिलिया	02	03	01	01	02	00	09
7. बड़ागांव	03	03	06	01	00	00	13
8. एट	05	04	01	03	01	01	15
9. विनौरा	12	02	01	04	01	00	20
10. जैसारीकला	01	00	00	020	03	00	06
11. डकोर	03	01	03	03	02	01	13
योग	44	32	28	30	21	02	157

स्रोत- विकासखण्ड कार्यालय डकोर से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर।

यातायात एवं संचार व्यवस्था (Transport and Communication System)-

मनुष्य के लिए विभिन्न प्रकार की सामग्री और विचारों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने वाली परिवहन एवं संचार व्यवस्था का विकास देश के प्राकृतिक भूदृश्य, संसाधन स्वरूप, जनसंख्या की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रगति की अवस्था, राजनीतिक दशाओं और तज्जवित प्रादेशिक विविधता द्वारा हुआ है (वर्मा 1977)। इसके साथ ही परिसंचरण प्रक्रिया (हर्ट, 1974) द्वारा उद्भूत स्थानिक अन्योन्य क्रिया (उलमैन, 1974) की संतुलित सघनता में विकास प्रदेशों के मध्य क्षीण कार्यात्मक अन्तर्सम्बन्धों को स्थापित करके वहां की मानव अधिवास संरचना और आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में असंतुलन उपस्थित किया है।

यातायात एवं संचार व्यवस्था के अन्तर्गत क्षेत्र में सड़क, रेल परिवहन, डाकघर, दूरभाष एवं टेलीग्राफ आदि आते हैं। उरई तहसील में रेल परिवहन की तुलना में सड़क परिवहन का अधिक विकास हुआ है। जहां तक अध्ययन क्षेत्र में सड़कों की सघनता का प्रश्न है वह उतना अधिक सशक्त नहीं है। (चित्र सं. 2.7) वर्ष 1994 में सभी सड़कों को मिलाकर 260 कि.मी. पक्की सड़कें 26 कि.मी. खड़ंजा तथा 09 कि.मी. गिट्टी स्तर तक का मार्ग उपलब्ध है। उ.प्र. स्तर के पक्के मार्ग 100 कि.मी. में 29 कि.मी. है वहीं तहसील में मार्गों का औसत 27 कि.मी. है। इससे स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्रों में पेन्टिंग सड़कों का अत्यधिक अभाव है। राज्य में औसत को देखते हुए काफी मार्गों के डामरीकरण किए जाने की आवश्यकता है। तहसील में 224 कि.मी. लेपन स्तर तथा 14 कि.मी. खड़ंजा स्तर के मार्गों का निर्माण सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा किया गया है। ग्रामीण अभियंत्रण सेवा के अन्तर्गत लेपन स्तर 14 कि.मी. खड़ंजा स्तर 08 कि.मी. तथा कच्चे

स्तर 05 कि.मी. मार्गों का निर्माण किया गया है। जिला परिषद जालौन उरई द्वारा पक्के स्तर के 3 कि.मी. तथा कच्चे स्तर के 2 कि.मी. मार्गों का निर्माण हुआ है। नगर पालिका उरई द्वारा 19 कि.मी. लेपन स्तर के मार्गों का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त विकासखण्ड डकोर द्वारा 20 गांवों को पक्के मार्गों से जोड़ने हेतु सड़क निर्माण कार्य किया गया है। तहसील उरई के अन्तर्गत 100 गांव पक्की सड़कों से जुड़े हैं। उरई, डकोर, सैदनगर सेवाकेन्द्रों से चतुर्दिक सड़कों का विस्तार है। इसी कारण उक्त सेवाकेन्द्र क्षेत्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। तहसील के 32 गांव लेपन/ खड़ंजा सड़कों से जुड़े हैं जिसमें से 12 गांव पक्की सड़कों से जुड़े हैं। इसके अतिरिक्त सड़क परिवहन अपनी अन्य विशेषताओं जैसे लोचपन द्वारा, द्वार- सेवा मांग के अनुरूप सेवा समायोजन, बहुमुखी सेवा, यातायात की स्वतंत्रता, अधिकतम, सामाजिक लाभ तथा अन्य यातायात के परिपोषक पथ इत्यादि के कारण भी ग्रामीण विकास हेतु लाभ, सुविधाजनक एवं सर्वोत्तम साधन है (उलमैन, 1974)।

उरई तहसील का मुख्यालय मध्य रेलवे के महत्वपूर्ण कानपुर- झांसी सेक्सन पर स्थित होने के कारण देश के विभिन्न नगरों से जुड़ा है। देश के उत्तरप्रदेश एवं मध्यप्रदेश को जोड़ने वाला इकहरा किन्तु महत्वपूर्ण रेलमार्ग तहसील मुख्यालय एवं उपनगरीय केन्द्रों से होकर गुजरता है। यह रेलमार्ग कानपुर से उरई होता हुआ झांसी से भोपाल तथा ग्वालियर से दिल्ली की ओर जाता है। तहसील में कुल रेलमार्गों की लम्बाई 34 कि.मी. है तथा तीन प्रमुख रेलवे स्टेशन उरई, एट एवं भुवा है। यद्यपि तहसील का बहुत बड़ा भाग इस रेलमार्ग की सुविधा से वंचित है। फिर भी एक प्रमुख रेलमार्ग होने के कारण तहसील ही नहीं बल्कि जनपद की भी प्रगति काफी हद तक प्रभावित होती है।

डाकघर एवं दूरभाष सेवा केन्द्र का विकास वर्तमान समय की प्रगति का सूचक है। वर्ष 1992-93 में 32 डाकघर हैं। अध्ययन क्षेत्र के कुछ सेवाकेन्द्रों जैसे उरई, एट, कोटरा, डकोर में क्रमशः 8, 2, 1 तथा 1 डाकघर हैं। तारघरों की संख्या 02 है। इसके अतिरिक्त दूरभाष द्वारा जनता के कनेक्शन 658 हैं तथा पब्लिक काल आफिस की संख्या 02 है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में परिवहन एवं संचार के साधनों का विकास अपर्याप्त है। फिर भी क्षेत्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षमता प्रकट करते हैं। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना सार्थक होगा कि क्षेत्र के सर्वांगीण विकास हेतु इनके त्वरित विकास की आवश्यकता है ताकि अध्ययन क्षेत्र के कम से कम 1000 जनसंख्या वाले गांवों, सेवाकेन्द्रों, उपनगरों एवं नगरों से सीधे सम्पर्क बनाया जा सके। और ग्रामीण जनों को नगरों की ओर पलायन करने से कम किया जा सके।

1992-93 में अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत बच्चों की शिक्षा हेतु 230 प्राइमरी स्कूल थे। जिनमें से 152 ग्रामीण क्षेत्रों तथा 78 नगरीय क्षेत्रों में स्थापित हैं। जूनियर हाई स्कूलों की संख्या 43 हैं। जिनमें से 39 ग्राम अधिवासों में तथा 04 नगरीय अधिवासों में हैं। इसके अतिरिक्त हाईस्कूल एवं इंटरमीडिएट कालेजों की संख्या 26 है जिनमें से चार बालिकाओं के विद्यालय हैं।

अध्ययन क्षेत्र में कुल आबाद गांवों में क्रमशः 28.13 प्रतिशत और 67.97 प्रतिशत गांवों के बालक 5 कि.मी. से अधिक दूर पर स्थित सीनियर बेसिक तथा हायर सेकेण्डरी विद्यालयों में पढ़ने जाते हैं। जबकि बालिकाओं की स्थिति और भी दयनीय है। उदाहरणार्थ 75.00 प्रतिशत तथा 93.75 प्रतिशत गांवों की बालिकाएं 5 कि.मी. से अधिक दूरी पर स्थित सीनियर बेसिक स्कूलों तथा हायर सेकेण्डरी विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने जाते हैं। स्त्री शिक्षा स्तर में कमी होने का यह एक प्रमुख कारण है। नजदीकी दूरी पर बालिका विद्यालयों का अभाव बढ़ती हुई अराजकता, अनुशासनहीनता,

असुरक्षा एवं सामाजिक प्रतिबंधों के कारण माता- पिता अपनी युवा बालिकाओं को अधिक दूरी पर स्थित विद्यालयों में भेजने से कतराते हैं। अतः स्त्री शिक्षा स्तर में वृद्धि हेतु आवश्यकतानुसार गांवों में बालिका विद्यालय खोलने की महती आवश्यकता है (मिश्रा एवं पाल, 1989)। इसके अतिरिक्त चिकित्सा एवं बैकिंग व्यवस्था की भी अपर्याप्तता अध्ययन क्षेत्र में व्याप्त है। इनकी संख्या क्रमशः 38 तथा 25 है। ग्रामीण जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु शासन द्वारा ग्रामीण अधिवासों में प्रदत्त सुविधाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अधिकांश गांव सेवा सम्पादक स्थानों से 5 कि.मी. या इससे अधिक दूरी पर स्थित हैं जिसे सारिणी सं. 2.11 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 2.11

विभिन्न सामाजिक सुविधाओं से दूरी के अनुसार ग्रामों की संख्या 1992- 93

क्र. सं.	सेवाएं/सुविधाएं	1 कि.मी. से कम	1 कि.मी. से 5 कि.मी. तक	5 कि.मी. से अधिक	ग्राम संख्या
1.	जूनियर बेसिक स्कूल (मिश्रित)	2	24	-	102
2.	सीनियर बेसिक स्कूल (बालक)	-	63	36	29
3.	सीनियर बेसिक स्कूल (बालिका)	-	28	96	4
4.	हायर सेकेण्डरी स्कूल (बालक)	1	31	87	9
5.	हायर सेकेण्डरी स्कूल (बालिका)	-	08	120	-
6.	प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र	-	-	128	-
7.	एलोपैथिक औषधालय/स्वास्थ्य केन्द्र	-	10	116	2
8.	आयुर्वेद चिकित्सालय	-	29	92	7
9.	यूनानी औषधालय	-	-	128	-
10.	परिवार कल्याण केन्द्र	1	60	41	26
11.	डाकघर	2	74	20	32
12.	तारघर	1	36	90	01
13.	रेलवे स्टेशन	-	29-	97	02
14.	बस स्टाप	5	63	30	30
15.	भूमि विकास बैंक	-	15	113	-
16.	व्यवसाय/ ग्रामीण/ सहकारी	2	45	72	09
17.	क्रय/ विक्रय सहकारी समिति	-	23	105	-
18.	कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र/ उपकेन्द्र	-	39	85	04
19.	पशुपालन/ चिकित्सालय	-	44	75	09
20.	बीजगोदाम/उर्वरक/कीटनाशक भंडार	-	32	84	04
21.	थोकमण्डी	-	16	111	01
22.	बाजार/ हाट	-	22	105	01
23.	सस्ते गल्ले की दुकान	10	59	-	59
24.	पक्की सड़कें	3	68	10	47
25.	सहकारी समितियां	-	23	105	-
26.	ग्रामसेवक केन्द्र	-	44	72	12

स्रोत- सांख्यिकीय पत्रिका जनपद - जालौन, 1993।

तालिका संख्या 2.11 के अवलोकन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में आधारभूत सुविधाओं की कमी है। यही कारण है कि अध्ययन क्षेत्र के ग्रामवासी वर्तमान आर्थिक प्रगतिशील युग में भी विकासात्मक उपलब्धियों से लाभान्वित नहीं हैं। इतना ही नहीं, दूरदराज के गांवों तथा सेवाकेन्द्रों का विकास ही नहीं हो पाया है। अतएव ग्राम्य जनमानस के समग्र विकास हेतु यह आवश्यक है कि सेवा कार्यों की न्याय पंचायत स्तर पर स्थापना हो तथा वह स्थान सड़कों द्वारा अपने चतुर्दिक सेवा केन्द्रों से सम्बद्ध हो ताकि ग्राम्यजनों को उनकी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सरलतापूर्वक हो सके।

REFERENCES

1. Agrawal, S.N., 1977 : India's Population Problems, Tata Mc Graw Hill Publishing Pvt. Ltd., New Delhi, 1977, P- 59
2. Balido, Erlinda, Literacy Abstracts in Third World, N.I.P., October 10, 1985.
3. Chandna, R.C., 1980, Introduction to Pupulation Geography, Kalyani Publishers New Delhi, 1980, P- 159
4. Chandna, R.C. & Shindhu Manjit Singh, Introduction to Population Geography, Kalyani Pbulishers New Delhi, 1980, P- 96.
5. Dicttrich, S.D., Floricia's Human Resources, Geographical Review, Vol, 38, 1948, P- 278.
6. Hurt, M.E.H., The Geographic Study of Transportation, It's Definition, Growth and Scope : Transportational Geography, Comments and Reading edited by Hurt, Newyork, 1974, P- 2.
7. Khan, T.A., 1987 : Role of Service Centres in the Spatial (Planning) Development, A Case Study of Maudha Tahsil, District Hamirpur (U.P.) Ph.D. Thesis, B.U. Jhansi, 1987, P- 41.
8. Misra, K.K., System of Service Centres in Hamirpur District (U.P.) Unpublished Ph.D. Thesis, Bundelkhand University, Jhansi, 1981, P- 18.
9. Misra, K.K., 1996, Banda Janpad : Vikas Ki Drashti Me, Siddharth Jyoti, 1996, P.P. 23-25.
10. Misra, K.K. & Pal, Ketram, Increasing Poputation Present Poublems of Bundelkhand Region, U.P., Paper presented in the National Symposium Atarra, December, 1989, Under COHSSIP Scheme of U.G.C, New Delhi.
11. Pandey, M.D., 1979 : Impact of Irrigation on Rural Development : A Case Study, New Delhi, 1979.
12. Polunin, N., 1960; Introduction to Plants Geography, Longman's P- 283.
13. Population Tables, U.P. Paper Ist Supplement office of the Registrar General, New Delhi, 1981, PP-19-20.
14. Singh, R.P., Spatial Analysis of Female Literacy in Avadh Region, 1951- 81, Uttar Bharat Ka Bhoogal Patrika, 1986, Vol. 22, No. 2, P- 1.
15. Trewartha, G.T., 1953; The Case Study for Population Geography : An Association of Amerikan Geographers, Vol. 43, 1953, PP. 71- 97.
16. Ulman, B.L., Geography as Spatial Interaction, 1954, PP- 30- 33.
17. Verma, R.V., Bharat Ka Bhaugolic Vivechan, Kitabghar, Kanpur, 1977, P- 539.

3

आधारभूत नियोजन इकाइयों का परिचय

IDENTIFICATION OF BASIC PLANNING UNITS

अध्याय-3

CHAPTER THREE

प्राथमिक नियोजन इकाइयों का परिचय

(IDENTIFICATION OF BASIC PLANNING UNITS)

परिचय (Introduction)-

लघुस्तरीय नियोजन का मुख्य उद्देश्य स्थानीय संसाधनों के दक्षतापूर्ण उपयोग, उत्पादन वृद्धि तथा एक सामाजिक- आर्थिक ढांचे के साथ सभी को रोजगार के सुअवसर प्रदान करने के उपक्रम द्वारा ग्रामीण निर्धनों के सामाजिक- आर्थिक जीवन में उन्नति लाना है। वास्तव में लघु-स्तरीय नियोजन का आधारभूत लक्ष्य ग्राम्य स्तर पर विकास करना है ताकि विकास के परिणाम यथासम्भव रूप से अधिकांश लोगों तक पहुंचाए जा सकें (सेन, 1975)। यह कार्य तभी सम्भव हो सकता है जब क्षेत्र में विद्यमान विभिन्न गतिमान इष्टतम् इकाइयों की जानकारी हो तथा विकास प्रक्रिया में सहायक व सेवाकार्य प्रदान करने वाले केन्द्रों की भलीभांति पहचान हो।

आधारभूत नियोजन इकाइयों का आकार (Size of basic planning Units)-

प्रारम्भ से ही नियोजन की विचारधारा निचले स्तर से सम्बन्धित है इसलिए नियोजन क्रमबद्ध रूप से स्थानीय संसाधनों की गुणवत्ता एवं आवश्यकताओं से सम्बद्ध होना चाहिए। इस हेतु प्रारम्भ में जनपदों को उपयुक्त नियोजन इकाइयों के रूप में स्वीकार किया गया और यह सत्य भी था क्योंकि उस समय राज्य से छोटे स्तर पर केवल यही ऐसी इकाई थी जहां पर पर्याप्त प्रशासनिक एवं प्राविधिक निपुणता उपलब्ध थी और निचले स्तर से अत्यधिक निकटता से सम्बद्ध थी। साथ ही पर्याप्त वित्तीय एवं आवश्यक सूचनाएं नियोजन हेतु उपलब्ध रहती थीं (मिश्रा एवं सुन्दरम्, 1980)। लेकिन बाद में जनपद की विशालता को स्वीकारा गया और यह भी महसूस किया गया कि जनपद स्तर पर तैयार किए जाने वाले समरूप कार्यक्रम सम्पूर्ण क्षेत्र के गरीबों के विकास के लिए पूरी तौर पर अनुपयोगी है।

वस्तुतः स्थानिक वस्तुओं, मानवीय संसाधनों और विकेन्द्रीकृत आर्थिक क्रियाकलापों के संगठन हेतु एक लघु-स्तरीय उपागम की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आगे चलकर लघु-स्तरीय नियोजन इकाई हेतु विकासखण्ड को अंगीकृत किया गया परन्तु नियोजन का यह स्तर भी मूल्यांकन के मापदंडों के अनुसार विकास को प्रोत्साहित करने में असफल रहा जिसका कारण स्थानीय निर्णयों की कमी का होना माना जा सकता है (शर्मा एवं फौजदार, 1982)।

वास्तव में वर्तमान विकास सीमाएं मनमाने ढंग से बनाई गई हैं और विकासखण्ड मुख्यालय भी काफी दूर- दूर हैं जिससे क्षेत्र के कार्यात्मक केन्द्रों द्वारा अच्छे कार्यों की उम्मीद नहीं की जा सकती है (शिवलिंगाह, 1972)। इतना ही नहीं विकासखण्ड स्तरीय कार्यात्मक एकीकरण जो कि विकास के सक्षम क्षेत्रों के दृष्टिकोण में कमी के कारण वर्गीय उद्देश्यों की प्राप्ति से सम्बन्धित थे, भी ऐच्छिक परिणाम न दे सके (विवेकानन्द, 1980)।

इस प्रकार अतिरिक्त ग्राम स्तरीय अथवा उपखण्डीय भौतिक नियोजन इकाई क्षेत्रों, जो देश के विभिन्न भागों में जहां- तहां अपनी प्रगति कर चुके थे उनकी पहचान आवश्यक थी (रामचन्द्रन, 1980)। चूंकि बुनियादी नियोजन इकाइयों की पहचान के पीछे उद्देश्य संघनित क्षेत्रों को प्रगतिशील बनाना है ताकि विकास कार्यक्रमों को उचित ढंग से लागू किया जा सके, इसलिए उनके आंतरिक नजदीकी क्रियाकलापों एवं सुविधाओं को सुलभ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि नियोजन

इकाइयों का आकार यथासम्भव रूप से छोटा हो। यदि इकाइयां छोटी हैं तो शुद्ध भौगोलिक स्थिति एवं सर्वोत्तम स्तर पर बहुआयामी एवं अच्छे नियोजन का प्रबंध अधिक आसान हो जाता है (खान एवं त्रिपाठी, 1976)। अपने क्षेत्रीय अनुभवों के आधार पर त्रिपाठी ने उपर्युक्त से मिलता- जुलता यह विचार दिया कि अति लघु क्षेत्रों को नियोजन इकाई मानकर ही विकास को सफल बनाया जा सकता है तथा न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है। सेन (1975) का विचार भी लगभग वैसा ही है कि नियोजकों का प्रथम एवं आवश्यक कार्य सर्वोत्तम एवं सक्षम इकाइयों की पहचान करना है जिन्हें गांव से इतना सन्निकट होना चाहिए, जितना की सम्भव हो। लेकिन केवल एक गांव को नियोजन हेतु सक्षम आर्थिक इकाई के रूप में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इनके पास इतनी विपुल मात्रा में संसाधन नहीं होते कि विकास में मदद कर सकें। यह विकास की एक अत्यधिक छोटी इकाई भी है। इसलिए यह प्रस्तावित किया गया कि गांव को नियोजन इकाई के रूप में स्वीकार करने की बजाय, गांवों के समूहों को नियोजन इकाई के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए (दुबे, 1979)। क्योंकि एक क्षेत्र उपागम की पूर्ति हेतु 4 से 6 गांवों को नियोजन इकाई के रूप में लेने से ग्रामीण विकास को त्वरित गति प्रदान की जा सकती है (नन्जुन्दप्पा, 1981)। गाडगिल ने भी यह सुझाव दिया कि गांवों के समुचित विकास हेतु गांव समूह विधि ही उत्तम हैं। उनके अनुसार गांव समूहों में होने चाहिए तथा साथ ही नजदीकी मंडी/ कस्बों से भी ही जुड़े हों। ग्रामीण विकास से सम्बन्धित विचारों की पुष्टि लगभग राय एवं पाटिल (1977) ने भी किया है। लेकिन अंतर यह है कि वह गांवों को शहरी केन्द्रों से जोड़ने के पक्षधर नहीं थे, उनके मतानुसार गांवों को एक- दूसरे के साथ जोड़ा जाना चाहिए ताकि वे एक कार्यशील नियोजित क्षेत्र हो सकें तथा जो एक- दूसरे के आवश्यक विकास हेतु प्रतिदर्श का कार्य करने में समर्थ हों (अजीज, 1983)। गांवों के समूह का इस प्रकार सघन विकास कार्यक्रम गांवों के विकास हेतु निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अधिक व्यवहारिक तरीका उपलब्ध कराता है।

अध्ययन क्षेत्र आर्थिक रूप से एक अत्यधिक पिछड़ा क्षेत्र है। इसके सामाजिक आर्थिक विकास का स्तर भी राष्ट्रीय विकास औसत से बहुत कम है यातायात के साधन भी अभी अविकसित अवस्था में हैं।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यहां एक आधारभूत नियोजन इकाई को विकसित करने का प्रयास किया गया है जिसके विकास का प्रभाव गांव स्तर पर हो सके।

अतः वर्तमान अध्ययन में गांवों के एक समूह को एक प्राथमिक नियोजन इकाई के रूप में चयनित किया गया है। जिसमें एक विशेष विकसित नाभिक केन्द्र है। इन सेवाकेन्द्रों को केन्द्रीय स्थानों के रूप में दर्शाया गया है।

गांवों के समूह में केन्द्रीय स्थानों के चयन हेतु ऐसे गांवों को विशेष महत्व दिया गया है जो कि सम्पूर्ण इकाई की जनसंख्या के विकास में अपेक्षाकृत अधिक सेवाएं उपलब्ध कराते हैं। ऐसे कार्यशील समुदाय एक उपक्षेत्र का निर्माण करेंगे जिसमें गांवों के बीच चयनित एक केन्द्रीय गांव नाभिक बिन्दु के रूप में सेवा कार्य करेंगे। इन केन्द्रीय स्थानों या सेवाकेन्द्रों द्वारा अनेक सेवा कार्य सम्पन्न होते हैं। इन जीवनक्षम एवं कार्याधार इकाइयों को अपने आप में विकास के कार्यों के साथ- साथ स्वयं को एक वस्तु और सेवाओं के क्रय- विक्रय शक्ति के रूप में क्षेत्र के विकास हेतु विकसित करना होगा।

एक क्षेत्र में एक कार्यशील समुदाय का अध्ययन करने पर ऐसे बहुत से केन्द्रों के पदनुक्रमिक मापक का निर्धारण उनके भौगोलिक क्षेत्र और जनसंख्या के आधार पर बढ़ती हुई कार्यात्मक जटिलता के विकास केन्द्रों/ सेवाकेन्द्रों के साथ होगा। इस पदानुक्रमिक प्रारूप को हमेशा ध्यान

CLASSICAL MODELS OF CENTRAL PLACE THEORY

VERSORGUNG SPRINZIP MODEL

(K=3 Network)
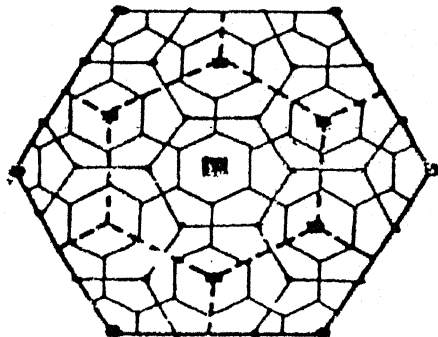
VERKEHRSPRINZIP MODEL

(K=4 Network)
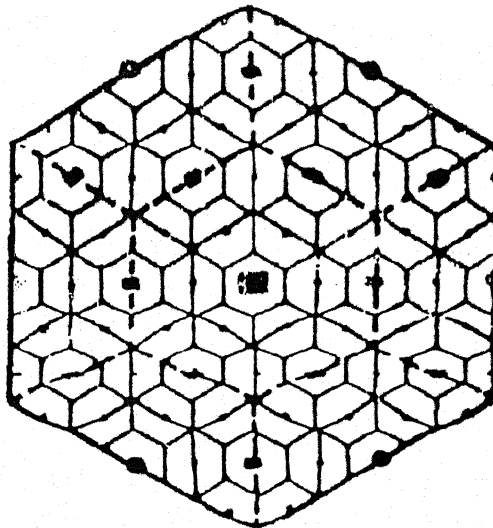
ABSONDERUNG SPRINZIP MODEL

(K=7 Network)
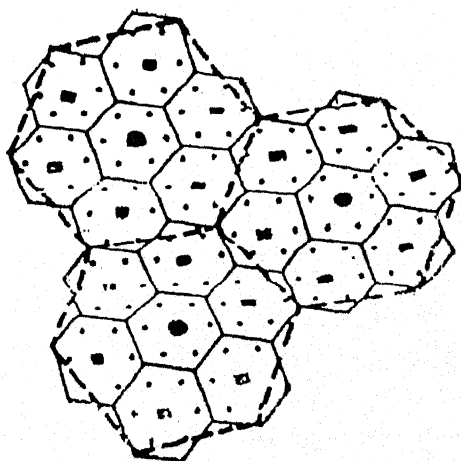
■ —— CITY & CITY LEVEL UMLAND

● ------ TOWN & TOWN LEVEL UMLAND

▬ —— VILLAGE & VILLAGE LEVEL UMLAND

• —— HAMLET & HAMLET LEVEL UMLAND

FIG. 3.1

में रखना चाहिए क्योंकि सूक्ष्म स्तरीय नियोजन, अधिवासों के किसी विशेष स्तर तक ही सीमित नहीं है।

इस प्रकार केन्द्रीय स्थानों के सम्पूर्ण पदानुक्रम एवं उनके प्रभाव क्षेत्र को मुख्य रूप से दर्शाया गया है। अतः व्यवहारिक शब्दों में पदानुक्रम की संकल्पना मुख्य रूप से सामाजिक न्याय एवं न्यून आवश्यकता कार्यक्रम के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु एक उचित एवं वास्तविक क्रियात्मक शब्द है।

सैद्धांतिक पृष्ठभूमि (Theoretical Farme Work) -

प्रादेशिक विकास नियोजन के क्रम में एक सर्वमान्य व्यूहरचना हेतु सेवाकेन्द्रों/ केन्द्रीय स्थानों की पहचान, उनके प्रभाव क्षेत्र तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों का ज्ञान आवश्यक है जिन्हें कुछ निश्चित संकल्पनाओं एवं सम्बन्धित सिद्धांतों की सहायता से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

केन्द्रीय स्थान सिद्धांत (Central Place Theory) -

यद्यपि केन्द्रीय स्थान सिद्धांत का विचार वाल्टर क्रिस्टॉलर (1933) से सम्बन्धित है लेकिन जेफरसन (1939) वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने पहली बार 'केन्द्रीय स्थान' शब्द का प्रयोग करते हुए लिखा कि नगर/ शहर अपने आप विकसित नहीं होते वरन् उन कार्यों का निर्धारण करते हैं जो केन्द्रीय स्थानों द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं (जेफरसन्, 1931)। इस सिद्धांत की बहुत सी संकल्पनाएं कुछ विद्वानों जैसे- वानथ्यूनेन (1826), लेलनी (1863) तथा गालपिन (1915) इत्यादि द्वारा दी गई।

इस सिद्धांत को आकस्मिक सत्यों एवं तार्किक संकल्पनाओं के साथ वैज्ञानिक मापदण्डों पर प्रस्तुत करने का श्रेय क्रिस्टॉलर को जाता है। वस्तुतः क्रिस्टॉलर उन तमाम भूगोल वेत्ताओं एवं अर्थशास्त्रियों में प्रथम थे, जिन्होंने स्थानों के आकस्मिक वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों को समझने के लिए संकल्पनाओं के विकास क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन्होंने वास्तव में अधिवासों के वितरण से सम्बन्धित कार्य ही नहीं किए अपितु उनका क्षेत्र अधिवासों की संख्या, आकार तथा पदानुक्रमीय व्यवस्था तक विस्तृत था। क्रिस्टॉलर ने अपना विश्लेषण एवं विवेचन अधिवासों एवं उनके अन्तर्सम्बन्धों से प्रारम्भ किया। उन्होंने यह स्वीकार किया कि अधिवास एवं उनके आंचलिक प्रदेश केवल आकार की दृष्टि से ही नहीं वरन् कार्यात्मक रूप से भी अलग होते हैं। तथा सभी स्थानों के लिए केन्द्रीय स्थान जैसे शब्द का विकास करते हैं।

क्रिस्टॉलर महोदय के शोध कार्य मूलतः जर्मनी के अधिवास तंत्र पर आधारित थे। इनका मौलिक प्रकाशन सर्वप्रथम 1933 में हुआ था परन्तु उसका अनुवाद 1966 में ही सम्भव हो सका (क्रिस्टॉलर, 1966)। क्रिस्टॉलर ने एक आदर्श भूदृश्य में केन्द्रीय स्थान तथा आंचलिक प्रदेशों के मध्य पदानुक्रमिक अन्तर्सम्बन्ध प्रदर्शित करने के लिए तथा अपने सिद्धांतों को स्पष्ट करने के लिए रेखात्मक विधियों का विकास किया। इन्होंने पदानुक्रम सम्बन्धी दो सम्पूरक संकल्पनाएं विकसित की। केन्द्रीय स्थानों में आर्थिक रूप से सक्षम सबसे बड़े केन्द्रीय स्थान अधिक से अधिक केन्द्रीय स्थानों को बाजार सम्बन्धी सीमाओं एवं वस्तुओं की पूर्ति करते हैं। इस स्थान से अपने कार्य को प्रारम्भ करके क्रिस्टालर महोदय ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि एकपूर्ण विकसित भूदृश्य पर अधिवासों का वितरण समदूरी एवं समान अक्षांसीय अंतर पर होगा। प्रत्येक अधिवास के आंचलिक प्रदेशों की सीमाएं षट्कोण रूप में विकसित होंगी। इस सम्वन्ध में इन्होंने तीन सिद्धांतों को स्वीकार किया (चित्र संख्या 3.1)।

(i) बाजार सिद्धांत (K3)

(ii) यातायात या ट्रैफिक का सिद्धांत (K4)

(iii) प्रशासकीय या राजनैतिक- सामाजिक सिद्धांत (K7)

निर्णयों की प्रतिस्पर्धात्मक प्रकृति के फलस्वरूप विभिन्न वस्तुओं के बाजार क्षेत्र एवं सुविधाएं साथ- साथ मात्र यह मानकर ज्ञात की गई हैं कि विस्तृत केन्द्रीय स्थान उन सभी सेवा केन्द्रों को प्रदान करेंगे। अधिवासों की सैद्धांतिक प्रतिमान की संकल्पना का आधार क्रिस्टॉलर महोदय ने बाजार सिद्धांत के रूप में संदर्भित किया, जहां एक व्यापारिक समिति, केन्द्रीय बाजार स्थानों के लिए सर्वाधिक सुगम यातायात व्यवस्था को अत्यन्त आवश्यक मानकर निर्णय करती है। वस्तुओं के परिवहन की मांग को न्यूनतम यातायात व्यय पर सुलभ कराने के उद्देश्य से वैकल्पिक प्रतिमानों को विकसित किया गया। क्रिस्टॉलर महोदय ने इसे यातायात या ट्रैफिक सिद्धांत (K4) के रूप में संदर्भित किया। फलस्वरूप रैखिक विस्तार वाले क्षेत्रों में अधिकतम वस्तुओं का परिवहन न्यूनतम परिवहन व्यय में हुआ। यहां पर वांछनीय है कि अधिकतम सम्भव केन्द्रीय स्थान मुख्य परिवहन मार्गों पर स्थित होने चाहिए।

प्रशासकीय या राजनैतिक सिद्धांत की यह विशेषता है कि प्रत्येक उच्च क्रम के केन्द्र अपने चतुर्दिक छः निम्न क्रम के केन्द्रों के अधिकारों के विवरण को पूर्ण रूपेण नियंत्रित करते हैं। यह अनुपात एवं उनके साथ ही केन्द्रों का क्रमांक निम्न रूप में विकसित होगा। 1, 6, 42, 294....। यही प्रशासकीय या राजनैतिक- सामाजिक सिद्धांत है।

वस्तुतः क्रिस्टॉलर की धारणा वास्तविक परिप्रेक्ष्य में अधिक सटीक नहीं है तथा इसकी उपयोगिता अप्रादेशिक क्रियाकलापों की सहायता के बिना केवल सेवाखण्डों की ओर निर्देशित करती है लेकिन कुछ निश्चित परिवर्तनों के साथ, इस सिद्धांत का उपयोग प्रादेशिक क्रियाकलापों और सामाजिक सेवाओं के स्थानिक विकास के प्रारम्भिक विन्दु के रूप में किया जा सकता है (मिश्रा, 1974)।

ऑगस्टक लॉश का आर्थिक भूदृश्य (The Loschian Economic Land Scape) -

जर्मन वैज्ञानिक ऑगस्ट लॉश ने केन्द्रीय स्थान सिद्धांत के स्थानिक स्वरूप का प्रतिविम्वन करने वाले पदानुक्रम में क्रमिक रूप से नीचे की ओर जाने वाली संकल्पना की वैधानिकता को चुनौती दी थी। उन्होंने सन् 1954 में अपने शोध परिणामों को प्रकाशित करवाते हुए एक मैदानी कृषि, क्षेत्र में स्थित ऐसे गांवों का जो कि एक त्रिकोणात्मक जाल पर स्थित थे, पर आधारित उत्पादन, व्यापार एवं विपणन सम्वन्धी तंत्र प्रदर्शित किया (ऑगस्ट लॉश, 1954)। उनके अनुसार सवसे लघु बाजार क्षेत्र ऐसे तीन बड़े अधिवासों की पारस्परिक क्रिया द्वारा उत्पन्न होगा जो कि एक त्रिभुज के शीर्ष विन्दुओं के रूप में अवस्थित होंगे। ये पारस्परिक क्रियाएं आदान- प्रदान त्रिभुजों की संख्या में तब तक वृद्धि करते रहेंगे जब तक कि वह एक षटकोणीय प्रणाली में विकसित न हो जाएं। लॉश महोदय ने यह तर्क इस भांति दिया कि इस प्रकार के अधिवासों के पदानुक्रम में किसी प्रकार की बढ़ोत्तरी आवश्यक नहीं है। सुविधाओं को प्राप्त करने वाले अधिवास अपने व्यापार हेतु विपणन केन्द्र तक पहुंच की शर्त के रूप में सबसे अधिक सुविधाजनक स्थिति का चयन करने की ओर झुकेंगे। व्यापारियों के मध्य स्वतंत्र स्पर्धा का परिणाममूलतः अनुमान लागत के सापेक्ष होगा तथा प्रभाव क्षेत्र का झुकाव न्यून होगा, फिर भी व्यापारिक क्षेत्र की आवश्यकता संतोषजनक मुनाफे की होगी। इस प्रकार एक जटिल, सघन एवं एक दूसरे को प्रभावित करते हुए विपणन तंत्र का विकास होगा जिनमें प्रत्येक बाजार क्षेत्र का अपना स्वतंत्र आंचलिक क्षेत्र विकसित होगा। लॉश महोदय ने इस प्रकार क्रिस्टालर महोदय द्वारा प्रस्तुत स्थिर अंक 'K' की संकल्पना को निरर्थक सिद्ध किया तथा इसके विपरीत एक पदानुक्रमीय संकल्पना को विकसित किया। इन्होंने यह तर्क प्रस्तुत

किया कि 'K' मूल्य सेवाओं या वस्तुओं का प्रतिविम्वन करेंगे। इस प्रकार सम्पूर्ण वस्तियों के मूल्यों की व्यवस्था निर्धारित होगी। जो कि अधिकांश दूसरी वस्तियों के 'K' मूल्यों पर अतिक्रमण करते हुए प्रतीत होंगे। इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न अधिवासतंत्र को लॉश महोदय ने आर्थिक भूदृश्य की संज्ञा प्रदान की है। इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि यह प्रतिमान नगरों के नियोजित क्षेत्रीय विकास हेतु आवश्यक सैद्धांतिक एवं वैचारिक रूपरेखा प्रदान करते हैं।

क्रिस्टॉलर एवं लॉश के केन्द्रीय स्थान सिद्धांतों की तुलना (Central Place System Christ Aller and Losch- A Comparision) –

(1) क्रिस्टॉलर और लॉश की व्यवस्था की आधारभूत विशेषताएं एक समान हैं। जैसे कि समतल मैदानों एवं उपभोक्ता की आवश्यकता/ रुचि के वितरण के आधार पर वस्तुओं की मांग प्रारम्भिक विन्दु हैं।

(2) लॉश अपना विश्लेषण सबसे छोटे केन्द्र से प्रारम्भ करते हैं एवं सबसे छोटे स्तर की सेवाओं पर अध्ययन करते हुए गौण कार्यों पर बल देते हैं जबकि क्रिस्टॉलर उच्च स्तर से प्रारम्भ करते हैं एवं व्यवस्था धीरे- धीरे ढलकर निम्न स्तर तक आती है।

(3) लॉश द्वारा प्रतिपादित प्रतिरूप में केन्द्रीय स्थानों की प्रधानता को कोई स्थान नहीं है और न ही निम्न स्तर के केन्द्रों की कोई संख्या सुनिश्चित की गई है जो कि उच्च स्तर के केन्द्रों का आधार होते हैं साथ ही वाजार के आकार को सीमित करते हैं जवकि क्रिस्टॉलर ने सभी स्थानों पर विभिन्न पदानुक्रमों की संख्या निर्धारित की है।

(4) लॉश की व्यवस्था के अन्तर्गत षटकोणों के आकार को भौगोलिक केन्द्रों से सम्वन्धित नहीं किया गया है अतः विभिन्न उत्पादों वाले एक केन्द्र में कई षटकोणीय वाजार केन्द्र हो सकते हैं।

विकास ध्रुव एवं विकास केन्द्र संकल्पना (Growth Pole and Growth Centre Concept)-

विकास ध्रुव की संकल्पना मूलतः फ्रांसीसी अर्थशास्त्री पेरॉक्स (1955) द्वारा प्रतिपादित की गई थी। विकास ध्रुव से उनका तात्पर्य- एक आर्थिक केन्द्र से है जिसमें केन्द्रोंपसारित शक्तियां केन्द्र से बाहर की ओर विकसित तथा वाहर से केन्द्रोभिसारित शक्तियां जिस केन्द्र की ओर आकर्षित होती हैं एवं प्रतिकर्षण का केन्द्र होने के कारण उसका स्वतः एक विकसित क्षेत्र होता है जो कि दूसरे केन्द्रों के क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है उनके द्वारा विचारित शक्तियां मुख्यतः आर्थिक थीं जो कि मुख्य रूप से छोटे उद्योगों एवं प्रतिष्ठानों द्वारा विकसित थीं। इस प्रकार उतने ही आर्थिक क्षेत्र हो सकते हैं जितने कि आदर्श सम्बन्धों की मौलिक संरचना पर ~~संरचना पर~~ सम्भव हैं तथा जिन्हें अर्थ-विज्ञान के प्रत्येक विषय में परिभाषित किया गया है (पेरॉक्स, 1955)।

वास्तव में पेरॉक्स की विकास ध्रुव संकल्पना प्राथमिक रूप में एक आर्थिक क्षेत्र की संकल्पना थी। यह एक यंत्र के रूप में विकसित की गई थी जिसके द्वारा आर्थिक गतिविधियां जैसे- प्रतिष्ठानों एवं उद्योगों की उत्पत्ति, वृद्धि एवं एक नियम, स्थिर और कभी- कभी लोप की प्रक्रिया का अध्ययन किया जा सके (हर्समैन, 1969)। इस सिद्धांत की विचारधारा मुख्य रूप से उद्योगों के उदय, ध्रुवीकरण एवं फैलाव के प्रभाव का अध्ययन करती है (ग्लैसन, 1974)।

मिरडयाल (1957), हर्समैन (1958), (हरमेन्सन 1972) और फ्रीडमैन (1969) कुछ अर्थशास्त्री और भूगोलविद् हुए हैं जिन्होंने विकास ध्रुव संकल्पना के विकास में उल्लेखनीय योगदान किया है। बाउडबिले (1966) ने आर्थिक क्षेत्र के भौगोलिक लक्षणों का विकास किया। उनके मतानुसार अर्थक्षेत्र को भौगोलिक क्षेत्र के साथ कार्यात्मक परिवर्तन सम्वद्ध किया जाना चाहिए जो कि आर्थिक

प्रक्रियाओं की तर्कसंगत विशेषताओं का वर्णन करता है। हर्समैन (1958), मिरडयाल (1957) एवं फ्रीडमैन (1969) ने संचयी कारण तथा परिणाम एवं प्रासंगिक विभिन्नताओं की प्रवृत्ति का उल्लेख किया है। मिरडयाल के अनुसार वृद्धि की क्रियाएं ऐसी होनी चाहिए जिनमें 'बैकवाश' प्रभाव विसरित प्रभावों की तुलना में शक्तिशाली और व्यापक हो ताकि अपनी इच्छानुसार आर्थिक विकास स्थान न पा सके। जबकि हर्समैन (1957) के अनुसार दुष्प्रवृत्तियों को समय के साथ हटाना ही विकास है। फ्रीडमैन (1969) के 'ध्रुवात्मक' विकास के सिद्धांत के अनुसार केन्द्रीय स्थान में नवाचरों को अपनाने अथवा उत्पन्न करने के लिए एक केन्द्र की क्षमता को अत्यधिक महत्व दिया गया है जो कि विकास एवं क्षेत्र के मध्य अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या करने का प्रयास करता है।

हरमेन्सन (1972) के अनुसार 'नाभिक क्षेत्र के प्रत्येक केन्द्र को विकासात्मक ध्रुव नहीं कहा जा सकता, केवल उन्हें प्रगतिशील प्रतिष्ठानों अर्थात बड़े प्रतिष्ठान, तकनीकी रूप से विकसित प्रतिष्ठानों, अन्वेषी और अग्रणी प्रतिष्ठानों जो कि प्रगतिशील उद्यमों (ऐसे प्रतिष्ठानों, जिनके अन्दर दूसरे सम्बद्ध उद्योगों के विकास की क्षमता हो) जो अपने वातावरण को शक्तिशाली ढंग से प्रभावित करें और एक लम्बे समय तक समग्र विकास कर सकें, को भौगोलिक विकास केन्द्र कहा जाना चाहिए।' इनके अनुसार विकास ध्रुव तीन प्रकार के होते हैं- प्रथम- राष्ट्रीय महत्व के केन्द्र, जो कि राष्ट्रीय विकास को दर्शाते हैं। दूसरे- ऐसे विकास वृद्धि केन्द्र, जो कि अन्ततः अत्यधिक विकसित राष्ट्रीय केन्द्रों को रोकने में सहायक हैं। तीसरे- वृद्धि केन्द्र वह हैं जो कि फैली हुई ग्रामीण आवादी के साथ आवश्यक बाजारीय, व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक सुविधाओं को दर्शाते हैं। इनको क्रमशः राष्ट्रीय महानगर, राष्ट्रीय नियंत्रित ध्रुव एवं स्थानीय वृद्धि केन्द्र भी कहते हैं (दुबे, 1979)।

'विकास केन्द्र' शब्द का प्रयोग विकास ध्रुव को इंगित करने के लिए किया गया है ताकि कार्यात्मक स्थान और भौगोलिक स्थान से सम्बन्धित विकास ध्रुवों में अंतर स्पष्ट हो सके (डारवेन्ट, 1969)। कैरॉल फॉक्स, होज, एलेन (1956) और हरमेन्सन (1972), निकोलस, कून और वेन्डर, कैसेटी, किंग (1962) और ओडलैण्ड, टुलोसा और रेनर वाइलैण्डर, लेविस, प्रेसकॉट और मिश्र (1974) द्वारा प्रयुक्त शब्दों का पुनरावलोकन करने के वाद मोसले (1974) ने कहा कि 'विकास ध्रुव सिद्धांत' एक उद्वेगात्मक संकल्पना है जो कि यह वताती है कि विकास एक भौगोलिक क्षेत्र में विकसित नाभि केन्द्रों जिनको 'विकास केन्द्र' कहते हैं के चारों ओर ध्रुवित होता है (मोसले, 1974)। वृद्धि ध्रुवों का विकास मानवीय क्रियाकलापों के केन्द्रीकृत संकेन्द्रण पर वल देता है जवकि स्थानीय नियोजन का उद्देश्य मानवीय क्रियाकलापों के विकेन्द्रीकरण पर वल देता है। इस प्रकार विकास ध्रुव सिद्धांत अपूर्ण प्रतीत होता है और वर्तमान समय में इसे तृतीय विश्व के देशों के प्रादेशिक विकास नियोजन हेतु भिन्न रूप से प्रयोग किया जा सकता है। इस संकल्पना का कुछ उपयोग हो सकता है यदि कुछ विकास- ध्रुव बड़े और छोटे केन्द्रों के रूप में विकसित हों तथा यदि इसे सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु सामान्य रूप से उपयुक्त वनाया जाए और सम्पूर्ण क्षेत्रीय विकास की प्रक्रिया को गतिशील समझा जाए। मिश्र (1974) के मतानुसार इसकी प्राप्ति हो सकती है यदि इसे केन्द्रीय स्थान सिद्धांत के साथ और स्थानिक विसरण सिद्धांत के साथ समाहित करके एक नई विचारधारा 'विकास केन्द्र की संकल्पना वना दिया जाए।'

भारतीय परिवेश में इन्होंने विकास केन्द्र को पांच स्तरीय पदानुक्रम में विभाजित किया है। जैसे- स्थानीय स्तर पर केन्द्रीय गांव, सूक्ष्म क्षेत्रीय स्तर पर सेवा केन्द्र, उपक्षेत्रीय स्तर पर विकास बिन्दु और क्षेत्रीय स्तर पर विकास केन्द्र तथा राष्ट्रीय स्तर पर विकास ध्रुव और वृद्धि के स्थान पर विकास शब्द का प्रयोग किया जाए।

विकास के स्थानिक विसरण का सिद्धांत (Theory of Spatial Innovation Diffussion)-

आर्थिक एवं सामाजिक विकास की संकल्पना का सम्बन्ध निकट रूप से आर्थिक एवं सामाजिक

स्तर के गुणात्मक परिवर्तन विकास में नवाचरों के विसरण और इन्हें अपनाने से सम्बन्धित है। हर्समैन (1958) के अनुसार विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है- 'विकास किसी कार्यात्मक और भौगोलिक क्षेत्र में नवाचरों की अनुक्रमिक तरंगों के सफलतापूर्वक विसरण से सम्बन्धित है।' नवाचरों का तात्पर्य एक दिए गए सामाजिक तंत्र में नवीन विचारों के सफलतापूर्वक समावेश से है और उनका स्थानिक विसरण समय और भौगोलिक क्षेत्र दोनों में नवाचरों की स्वीकृति से सम्बन्धित है (फ्रीडमैन 1969)। हैगरस्टैंड (1952) ने नवाचरों के स्थानिक विसरण की प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए एक सैद्धांतिक आधार दिया जिसको परिवर्ती अनेक विद्वानों ने अपने अध्ययन में अपनाया। उनके अनुसार एक सामाजिक तंत्र में नवाचरों का विसरण बहुमाध्यमों और व्यक्तिगत सम्बन्धों के द्वारा होता है और इसकी दिशा पदानुक्रमीय क्रम में एक उच्च श्रेणी के केन्द्रीय स्थानों से निम्न श्रेणी के केन्द्रीय स्थानों की ओर सीमित संख्या के स्रोतों द्वारा होती है। पदानुक्रमीय पद्धति में विभिन्न कड़ियों का अभाव विसरण की प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावित करता है।

सिद्धांतों की प्रासंगिकता (Relevance of the Theories)-

अध्ययन क्षेत्र के लिए उपर्युक्त वर्णित सिद्धांतों की उनके मौलिक रूप में कोई प्रासंगिकता नहीं है विशेषतः इस दिशा में जबकि क्षेत्र का स्वरूप सूक्ष्म स्तरीय हो। यद्यपि केन्द्रीय स्थान सिद्धांत बस्तियों के विशिष्ट अन्तरण, आकार और पदानुक्रम की अच्छी प्रकार व्याख्या करता है और यह एक तरफ प्रादेशिक स्थानिक संरचना को समझने के लिए एक ढांचा प्रस्तुत करता है तथा दूसरी तरफ भविष्य के नियोजन हेतु एक प्रतिदर्श प्रस्तुत करता है। यद्यपि उपर्युक्त वर्णित सिद्धांत काल्पनिक होने और सेवाक्षेत्रों में कुछ सीमाओं के कारण ये मूलरूप में अधिक प्रासंगिक नहीं है। वर्तमान अध्ययन क्षेत्र का एक स्थानिक अध्याय है जिसमें जनसंख्या वितरण एवं उपभोक्ता की प्राथमिकताओं इत्यादि को महत्व दिया गया है। इसी प्रकार विकास ध्रुव सिद्धांत के वर्तमान प्रारूप में आपत्तिजनक सीमाओं के रूप में यह सिद्धांत भी बहुत कम महत्व का है जबकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अध्ययन क्षेत्र एक तहसील है जिसमें सामाजिक एवं आर्थिक क्रियाकलापों का विकेन्द्रीकरण वृहत केन्द्रों से दूर है जो कि एक आधारभूत संयोजना है। वर्तमान अध्ययन में नवाचरों के स्थानिक विसरण का सिद्धांत भी बहुत प्रासंगिक नहींहै। फिर भी यह क्षेत्रीय आर्थिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तनों का मुख्य निर्धारक है।

यद्यपि उपरोक्त सिद्धांत अपने मूल रूप में वर्तमान अध्ययन के लिए अप्रासंगिक है तथापि मिश्र (1976) द्वारा केन्द्रीय स्थान सिद्धांत को विकास ध्रुव सिद्धांत और स्थानिक विसरण सिद्धांत में कुछ संसोधनों के साथ एवं समायोजनों के आधार पर सूक्ष्म स्तरीय नियोजन के जो तत्व बतलाए गए हैं, प्रासंगिक हैं। नगरीय एवं ग्रामीण नियोजन संस्थान उत्तरप्रदेश भी प्रादेशिक विकास कार्यक्रम तैयार करने के लिए इसी प्रतिदर्श का प्रयोग कर रहा है।

वस्तुतः प्रादेशिक विकास हेतु कार्यरत, विभिन्न उपागम सूक्ष्म स्तरीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को सेवा प्रदान करने में पूर्णतः सार्थक सिद्ध नहीं हो सके हैं। अस्तु नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे उपागमों के मध्य उद्भूत विचार विमर्श से यह आवश्यक हो गया है कि भारत जैसे गांव प्रधान देश हेतु ऐसी वैकल्पिक संयोजना का विकास किया जाए जिसका गांवों से नजदीकी सम्बन्ध हो और ग्रामीणों की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में पूर्णतया सहायक हो। इस दृष्टि से सेवाकेन्द्र उपागम का महत्वपूर्ण स्थान है।

सेवा केन्द्र संकल्पना (Concept of Service Centres)-

वस्तुतः सेवा केन्द्र उपागम को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वैकल्पिक व्यूह रचना के रूप में स्वीकार

किया गया है क्योंकि इन केन्द्रों के माध्यम से किसी भी क्षेत्र का सर्वांगीण विकास सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। यही कारण है कि वर्तमान समय में भूगोल वेत्ता, समाज शास्त्री, शिक्षाविद् तथा अन्य विषयविशेषज्ञ सेवा केन्द्रों के विविध पहलुओं यथा- अभिनिर्धारण, कार्य एवं कार्यात्मक पदानुक्रम, सेवा क्षेत्र आदि के अध्ययन पर विशेष बल दे रहे हैं। मार्गकेन्द्रों के रूप में सेवा केन्द्रों की भूमिका अपने सम्बद्ध क्षेत्रों में सर्वाधिक प्रभावशाली होती है। इनके द्वारा विविध प्रकार के सेवा कार्यों का सम्पादन तथा स्थानात्मक कार्यात्मक संगठन सम्भव होता है। साथ ही इनके द्वारा प्रतिपादित सेवा केन्द्रों का अधिकांश भाग वृहद केन्द्रों द्वारा निर्धारित होता है। वस्तुतः सेवा केन्द्र वे स्थायी अधिवास हैं जो अपने अनेक सेवा कार्यों के माध्यम से निकटवर्ती क्षेत्रों को विविध प्रकार की सेवाएं/ सुविधाएं प्रदान करते हैं। इन केन्द्रों से अपने निकटस्थ क्षेत्रों में सतत विकासात्मक लहरें उद्वेलित होती रहती हैं।

सर्वप्रथम जर्मन वैज्ञानिक वान थ्यूनेन (1826) ने सेवा केन्द्र के सम्बन्ध में अपना विचार प्रस्तुत किया था। इन्होंने सेवा केन्द्र की कल्पना उत्पादक क्षेत्र के मध्य में की है। इसका सेवा क्षेत्र उसके चतुर्दिक एवं वृत्ताकार रूप में पृथक- पृथक संकेन्द्रित पेटियों से निर्मित होता है। इनके पश्चात सेवा केन्द्र स्थानों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सैद्धांतिक अध्ययनजर्मन भूगोल वेत्ता क्रिस्टॉलर (1933) द्वारा किया गया इनके मतानुसार नगर अपने निकटवर्ती पृष्ठ प्रदेश के लिए केन्द्रीय स्थान के रूप में कार्य करते हैं।

लघु केन्द्रों की अपेक्षा वृहत क्षेत्रों का विस्तार बड़ा होता है। जिसकी कल्पना इन्होंने षटकोण के आधार पर की है। इसके पश्चात लॉश (1826) ने क्रिस्टॉलर के केन्द्र स्थान सिद्धांत को संशोधित कर अलग ढंग से प्रस्तुत किया। इन्होंने परिवर्तित पदानुक्रम को स्वीकार किया इसीलिए इनके द्वारा प्रस्तुत सिद्धांत को Relaxed 'K' सिद्धांत तथा उनके पदानुक्रम को Variable 'K' या Relaxed 'K' पदानुक्रम कहा जाता है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों यथा- बेरी एवं गैरीसन (1958), डिकिन्सन (1932), ब्रश (1953), थॉमस (1960), किंग (1962), स्टैफोर्ड (1963), गुनावार्डोना (1964), कार्टर, स्टैफोर्ड व गिलवर्ट (1970), फॉल्क स्टीम (1968) आदि ने सेवा केन्द्रों/ केन्द्र स्थानों के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए हैं। भारतीय भूगोलवेत्ताओं यथा सिंह (1962, 66), लाल (1968), बंसल (1975), कृष्णन (1978), यादव (1989), सिंह (1973), वनमाली (1970), सिंह (1976), सिंह (1971), मिश्र (1981), मिश्रा, सिंह (1979), साही (1984), सेन (1971), मिश्रा एवं खान (1991), आर.एम. ठाकुर (1985), मेयर (1992), मिश्रा (1985, 86), मिश्रा (1991), खान (1993) अनेक भूगोलवेत्ताओं ने सेवाकेन्द्रों की संकल्पना, अभिनिर्धारण, पदानुक्रमिक स्वरूप, प्रभाव क्षेत्र आदि विभिन्न पक्षों पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं।

तालिका सं. - 3.1

जालौन जनपद की उरई तहसील में सेवासुविधाओं की उपस्थिति 1992-93

क्र. सं.	नाम सेवा केन्द्र	जनसंख्या	प्राथमिक स्कूल	जूनियर हाई स्कूल	आटा चक्की	दर्जी की दुकान	साइकिल मरम्मत केन्द्र	कपड़े की दुकान	सब्जी एवं फल विक्रेता	पुस्तकों की दुकान	बस स्टाप	बिजली के सामान विक्रेता	मिडवाइफ	मातृ/शिशु कल्याण केन्द्र	परिवार कल्याण केन्द्र	प्राथमिक स्वा. केन्द्र/उपकेन्द्र	पोस्ट आफिस	टेलीग्राफ आफिस	चिकित्सालय/औषधालय	सहकारी समिति	खाद एवं बीज भंडार	हाई स्कूल	इंटरमीडिएट कालेज	मेडिकल स्टोर	बर्तनों की दुकान	बैंक	न्याय पंचायत मुख्यालय	आरा मशीन	फोटो ग्राफर	विकासखण्ड मुख्यालय	होटल / जलपान गृह	विश्राम गृह/ धर्मशाला	रेलवे स्टेशन	ट्रैक्टर मरम्मत केन्द्र	बाजार	पशु चिकित्सालय	पुलिस स्टेशन	पुलिस चौकी	डिग्री कालेज	तकनीकी संस्थान	तहसील मुख्यालय	जिला मुख्यालय	कार्यों की संख्या	कार्यात्मक इकाइयों की संख्या	श्रेणी
1.	उरई	98716	75	33	35	50	40	42	35	26	04	35	10	01	06	06	10	02	03	12	03	15	05	22	40	08	-	10	15	-	20	11	01	25	04	04	01	07	03	01	01	01	38	690	01
2.	एट	7148	05	03	20	15	10	20	10	03	02	08	04	01	02	01	01	01	01	08	02	01	01	06	10	03	01	02	08	-	07	02	01	10	03	02	01	01	-	-	-	-	35	167	02
3.	डकोर	7016	03	03	04	04	04	07	02	02	01	01	05	01	01	01	01	01	01	01	02	01	-	01	02	02	01	-	01	01	01	-	-	-	01	01	-	-	-	-	-	-	29	57	03
4.	कोटरा	6929	04	01	10	07	07	02	02	01	01	02	01	01	-	-	01	01	01	01	01	02	-	01	01	01	-	-	02	-	02	01	-	01	01	01	01	-	-	-	-	-	29	58	04
5.	सैदनगर	4312	01	01	04	03	07	02	01	01	01	01	01	01	-	-	01	-	-	01	01	01	-	01	02	01	-	-	01	-	-	-	-	01	01	01	-	-	-	-	-	-	23	35	05
6.	मुहम्मदाबाद	3821	01	01	03	04	05	07	02	02	01	01	01	01	-	01	01	01	-	01	01	-	-	-	02	01	-	-	-	-	-	-	-	01	01	01	-	-	-	-	-	-	23	40	06
7.	जैसारीकला	3522	01	01	02	05	03	02	-	03	01	01	01	01	01	01	01	01	01	-	-	01	-	-	02	03	01	-	01	-	-	01	-	01	01	-	-	-	-	-	-	-	24	35	07
8.	कुसमिलिया	3329	01	01	02	04	02	02	02	04	01	02	01	-	01	01	01	01	-	01	01	-	01	01	02	01	01	-	01	-	02	-	-	-	01	01	-	-	-	-	-	-	27	40	08
9.	हरदोइ गूजर	3244	02	01	02	08	04	03	02	04	01	02	01	01	-	01	01	01	01	01	-	-	01	02	03	01	-	-	01	-	01	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	25	38	09
10.	खरुसा	2975	01	01	04	04	02	01	01	-	-	-	01	-	01	01	01	-	-	01	01	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	27	20	10
11.	ऐर	2884	01	01	04	05	04	02	01	-	01	01	01	01	01	01	01	01	-	01	01	01	-	01	01	02	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	22	34	11
12.	खरका	2862	01	01	05	03	02	-	-	01	-	-	01	-	01	-	01	01	-	-	-	-	-	02	-	02	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	12	21	12
13.	अटरिया	2819	01	01	01	01	01	-	-	-	-	-	01	-	-	-	01	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	09	09	13
14.	गढ़र	2762	02	01	05	05	-	01	-	02	-	-	01	-	-	-	01	01	-	01	-	01	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	01	-	-	-	-	13	23	14
15.	करमेर	2560	02	01	10	02	02	02	02	02	01	-	-	-	01	-	01	-	-	-	-	01	-	01	-	01	01	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	22	25	15
16.	टिमरों	2381	01	01	03	03	01	-	-	05	01	02	01	-	01	01	01	01	-	01	01	01	-	02	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	19	29	16
17.	कुकरगांव	2308	01	01	02	-	-	-	-	-	01	-	01	-	-	01	01	01	01	01	01	-	-	-	-	02	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	13	15	17
18.	मुहाना	2306	01	01	04	03	01	-	-	-	01	-	01	-	01	01	01	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	10	15	18
19.	धगुवा कला	2256	01	01	02	04	01	-	-	-	-	-	01	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	08	12	19
20.	रूराअड्डू	2206	01	01	04	03	02	-	-	-	-	01	-	-	01	01	01	01	-	01	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	10	15	20
21.	अकोढी	2156	02	01	05	06	01	-	02	02	01	-	-	-	-	-	-	-	-	01	-	-	01	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	13	25	21
22.	मिनौरा उरई	2001	01	01	01	02	01	-	-	-	01	-	-	-	01	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	06	07	22
23.	धुरट	1986	01	01	04	02	02	01	02	02	01	-	01	01	01	-	-	01	01	-	-	01	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	15	22	23
24.	औंता	1903	01	01	05	04	04	02	-	-	-	-	01	01	01	01	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	11	22	24
25.	सोमई	1900	02	01	02	02	03	02	01	01	01	-	01	01	-	-	01	01	01	-	01	-	-	-	01	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	19	26	25
26.	बड़ागांव	1884	01	01	02	02	02	-	-	01	01	-	01	-	-	-	01	01	01	-	-	-	-	-	-	01	01	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	15	18	26
27.	बम्हौरी कला	1700	02	01	01	-	01	01	-	-	-	01	-	-	-	-	01	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	08	27
28.	चिल्लो	1416	01	01	02	02	02	-	-	-	01	-	01	-	-	-	-	01	01	-	-	-	-	02	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	15	28
29.	बिनौरा	1270	01	01	02	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	01	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	08	29
30.	नुनसाइ	917	01	01	03	02	01	-	-	-	01	-	-	01	01	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	10	30
31.	भुवा	820	01	01	01	02	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	07	31
32.	राहिया	726	01	01	01	02	-	-	-	01	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	07	08	32
33.	मगरायां	610	01	01	01	-	01	-	-	-	01	-	-	-	-	-	01	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	05	05	33
	सेवा केन्द्रों की संख्या		33	32	33	30	28	17	14	19	22	14	23	12	16	14	27	21	11	15	13	11	06	13	12	17	11	02	08	01	08	05	04	08	03	07	03	04	01	01	01	01			
	कार्यात्मक इकाइयां		122	68	156	160	116	99	65	64	26	48	34	12	22	19	36	22	13	33	17	26	10	44	67	38	11	12	13	01	36	16	04	41	14	11	03	10	03	01	01	01			
	श्रेणी		01	02	03	04	05	06	07	08	09	10	11	12	13	14	15	16	17	16	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	34	35	36	37	38	39	40			

सेवा केन्द्रों का अभिनिर्धारण (Indentification of Service Centres)-

सेवा केन्द्र, वे अधिवास होते हैं जो मुख्यतः अपने चतुर्दिक विस्तृत क्षेत्र में उपभोक्ताओं को सेवाएं प्रदान करने तथा उत्पादन वितरण को अपनी ओर आकृष्ट करने में सचेष्ट रहते हैं। सामान्यतः जनसाधारण इस शब्द का आशय कस्बे या नगर केन्द्र से ही लगाते हैं किन्तु सेवा केन्द्र मात्र नगरीय केन्द्र ही नहीं होते, अपितु ग्रामीण वस्तियां, जो अपने चतुर्दिक स्थित क्षेत्र को सेवाएं प्रदान करें, सेवा केन्द्र हो सकती हैं। हां, यह सत्यता अवश्य है कि सभी नगरीय केन्द्रों को सेवा केन्द्र कह सकते हैं सभी गांवों को नहीं। इसी आवश्यकता के कारण समय- समय पर ग्राम्य क्षेत्रों में उद्भूत समस्याओं के समाधान हेतु भूगोलविदों, अर्थशास्त्रियों व समाजशास्त्रियों द्वारा प्रेषित लघु आकार के सेवा केन्द्रों को विकास नियोजन का मुख्य आधार माना गया है।

ग्राम्य भूदृश्य प्रधान जालौन जनपद की उरई तहसील में 128 आबाद, 29 गैरआबाद तथा 2 नगरीय केन्द्र है। अध्ययन क्षेत्र में सेवा केन्द्रों की पहचान सम्बन्धी प्रक्रिया के संदर्भ में सबसे पहले जनपद की 1991 की जनगणना से प्राप्त द्वितीयक आंकड़ों की सहायता से उपयुक्त सेवा केन्द्रों की एक सूची निर्मित की गई तथा उन्हीं मानव अधिवासों को सेवा केन्द्र माना गया जिनमें निम्नलिखित सुविधाएं उपलब्ध हैं-

(i) वह किसी भी आकार का मानव अधिवास हो।

(ii) उसमें निम्न कार्यों में से कोई चार कार्य पाए जाते हों।

(अ) शैक्षणिक सुविधाएं-

जूनियर बेसिक स्कूल के अतिरिक्त अन्य शैक्षणिक सुविधाओं को इनके अन्तर्गत शामिल किया गया है क्योंकि जूनियर बेसिक स्कूल लगभग सर्वत्र सुविधापूर्वक पाया जाने वाला कार्य है।

(ब) चिकित्सा सुविधाएं-

औसधालय, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, पशु चिकित्सालय एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र।

(स) साप्ताहिक, द्विसाप्ताहिक तथा प्रतिदिन विपणन सुविधा वाले केन्द्र।

(द) बैंक सुविधाएं-

भारतीय स्टेट बैंक, कोआपरेटिव बैंक, इलाहाबाद बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, ग्रामीण बैंक आदि।

(य) परिवहन सुविधाएं-

बस स्टेशन, रेलवे स्टेशन आदि।

(र) प्रशासनिक सुविधाएं-

जिला मुख्यालय, तहसील मुख्यालय, विकास क्षेत्र मुख्यालय एवं न्याय पंचायत।

इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में सेवा केन्द्रों की पहचान के आधार पर 33 सेवाकेन्द्रों का चयन किया गया है। चयनित सेवा केन्द्रों की सूची परिशिष्ट 'ए' में अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

कार्य एवं कार्यात्मक इकाई-

किसी भी वस्ती में सम्पन्न होने वाला एक कार्य, जो अपने समीपवर्ती प्रभावित क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करता है। उसे केन्द्रीय कार्य कहते हैं। कोई केन्द्र

कितनी दूरी तक के क्षेत्र की सेवा कर सकता है। यह उस केन्द्र में सम्पन्न होने वाले सेवा कार्यों की संख्या एवं प्रकृति पर निर्भर करता है। वस्तुतः केन्द्रीय कार्य वह कार्य है जो अत्यन्त कम अधिवासों में मिलते हैं संख्या में कम होते हैंऔर अधिकांश वस्तियों को सेवाएं प्रदान करते हैं वनमाली, 1970)। इन्हीं के अनुसार एक केन्द्रीय कार्य में अनेक उप कार्य होते हैं एक विशेष केन्द्रीय कार्य के अन्तर्गत सम्पन्न होने वाले विभिन्न स्तर के कार्यों का अभिनिर्धारण सम्भव है जैसे शैक्षणिक के अन्तर्गत विभिन्न उप शैक्षणिक स्तर यथा-जू. हाई स्कूल, प्राइमरी स्कूल आदि। इसी प्रकार स्वास्थ्य सेवाएं भी अलग- अलग स्तर पर पाई जाती हैं जैसे- प्रेक्टिस करने वाले चिकित्सक, औषधालय एवं चिकित्सालय आदि।

सामाजिक स्थिति तथा कार्यों की उपयोगिता के अनुसार केन्द्रीय कार्यों का एक मापक वनाया जा सकता है जिससे किसी क्षेत्र विशेष में पाए जाने वाले कार्यों की क्षमता के सम्वन्ध में पूर्व ज्ञान हासिल किया जा सकता है। निम्न स्तर के कार्यों की संख्या अधिक और उनका सेवा क्षेत्र कम जबकि उच्च स्तर के कार्यों की संख्या कम और सेवा क्षेत्र वड़ा होता है (खान एवं त्रिपाठी)।

कार्यात्मक इकाई-

किसी सेवा बस्ती में कार्यों की उपस्थिति से उसकी गुणवत्ता का ~~कन~~ आकलन नहीं हो सकता है। अपितु उस कार्य की वारंवारता अपने सापेक्षिक महत्व को दो या दो से अधिक क्षेत्रों में दर्शाती है। किसी भी सेवा बस्ती में किसी भी कार्य का एक से अधिक बार पाया जाना कार्यात्मक इकाई कहलाता है।

प्रत्येक बस्ती में प्रादेशिक एवं स्थानीय महत्व के कार्य सम्पादित होते हैं। अध्ययन क्षेत्र में वर्तमान समय में उपलब्ध कार्य एवं कार्यात्मक इकाइयों का विवरण तालिका संख्या 3.1 में अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

कार्यों एवं सेवाओं का पदानुक्रम-

अध्ययन क्षेत्र के सेवा केन्द्रों में उपलब्ध विभिन्न कार्यों को उनकी विशेषताओं तथा महत्व के आधार पर निम्न रूपों में वांटा जा सकता है।

प्रथम श्रेणी के कार्य-

वे कार्य जो प्रधानतः वड़े सेवाकेन्द्रों में मिलते हैं, प्रथम श्रेणी के कार्य कहलाते हैं। होटल, फोटोग्राफर, ट्रैक्टर मरम्मत केन्द्र, अस्पताल, उप डाकघर आदि।

द्वितीय श्रेणी के कार्य-

वे सेवा कार्य,जो वृहद केन्द्रों में तो पाए ही जाते हैं साथ ही छोटे स्तर के सेवा केन्द्रों में भी मिलते हैं लेकिन अत्यधिक छोटे सेवा केन्द्रों में नहीं पाए जाते हैं। उन्हें द्वितीयक श्रेणी के कार्य कहते हैं। जैसे औषधालय, पुस्तक विक्रेता,हाई स्कूल, इण्टरमीडिएट, कालेज, न्याय पंचायत आदि।

तृतीय श्रेणी के कार्य-

वे कार्य जो छोटे स्तर के सेवा केन्द्रों में पाए जाते हैं।जैसे जू. वेसिक स्कूल, प्रैक्टिस करने वाले चिकित्सक आदि।

केन्द्रीयता (Centrality) -

अधिवास प्रणाली पदानुक्रम के निर्धारण में केन्द्रीयता की परिकल्पना एक महत्वपूर्ण अंग है। अधिवासों का पदानुक्रम केन्द्रीयकरण पर आधारित है क्योंकि केन्द्रीयता की सहायता से किसी

भी सेवा केन्द्र का सापेक्षिक महत्व ज्ञात किया जा सकता है। अधिवासों का पदानुक्रम निर्धारित करते समय केन्द्रीयता तथा केन्द्रीय प्रकार्य जैसे- प्रमुख शब्द स्वतंत्रता के साथ बार- बार प्रयोग में लाए जाते हैं। किसी सेवाकेन्द्र के पदानुक्रम में कोई विशेष स्थान दिए जाने के लिए उसकी केन्द्रीयता का आंकलन करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। इस सम्बन्ध में प्रमुख समस्या केन्द्रीयता का आंकलन करना है। इस आंकलन के लिए कुछ विद्वान सर्वव्यापी प्रकार्यों पर ही विचार करते हैं जबकि कुछ विद्वान सर्वव्यापी प्रकार्यों के साथ- साथ अन्य प्रकार्यों पर भी ध्यान देते हैं।

केन्द्रीयता पर विचार करते समय भट्ट (1976) महोदय ने इंगित किया कि गतिशील दृष्टिकोण में यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी अधिवास में वर्तमान समय में स्थित सेवाओं अथवा प्रकार्यों के महत्व पर ही नहीं वरन् उनकी संभावनाओं पर भी विचार किया जाना चाहिए। खान (1977) महोदय का विचार है कि केन्द्रीयता किसी क्षेत्र की जनसंख्या के उपभोक्ता व्यवहार का प्रदर्शन मात्र है, जिसके आधार पर केन्द्रीय स्थानों के आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जा सकता है। केन्द्र की केन्द्रीयता का आभास काफी हद तक उसकी जनसंख्या आकार से भी हो सकता है लेकिन यह आवश्यक नहीं कि आकार में बड़े केन्द्र की केन्द्रीयता अपेक्षाकृत कम है। केन्द्रीयता का मापन या निर्धारण भिन्न- भिन्न ढंगों से हो सकता है। परन्तु हमें बहुत से स्थानों की केन्द्रीयता की तुलना करनी होती है और केन्द्रों का बहुचर्चित पदानुक्रम भी प्रायः इसी आधार पर बनाया जाता है।

केन्द्रीयता के मूल्यांकन में कुछ विधि तंत्रीय समस्याएं आती हैं। अतः इसके आंकलन हेतु विभिन्न विद्वानों यथा- बेरी तथा गैरिसन (1958) गाटमैन (1975), ब्रश तथा ब्रेसी (1967), वनमाली (1972), सेन (1971), नित्यानंद (1976), खान एवं त्रिपाठी (1976) तथा मिश्रा (1986) आदि ने अनेक प्रमुख विधियों का प्रयोग किया है। लेकिन केन्द्रीयता के निर्धारण हेतु कोई मानक विधि अभी तक प्राप्त नहीं हुई है।

सेवाकेन्द्रों का पदानुक्रम (Hierarchy of Service Centres)-

पदानुक्रम की संकल्पना का प्रादेशिक अध्ययन में विशेष महत्व है। इसके माध्यम से सम्पूर्ण प्रदेशों को वर्गों में विभाजित कर शुद्धतापूर्वक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा इसके आधार पर अध्ययन क्षेत्र के आदर्श कार्यात्मक समाकलन के सम्बन्ध में नियोजित स्वरूप भी प्रस्तुत किया जा सकता है। पदानुक्रम से तात्पर्य अधिवासों को उनकी आकृति तथा विशेषताओं यथा उनके द्वारा प्रतिपादित विविध प्रकार के कार्यों एवं सुविधाओं के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में विभाजन से है। स्पष्टतया नगरीय भूगोल में पदानुक्रम की विचारधारा क्रिस्टॉलर के चिरसम्मत केन्द्रीय स्थान सिद्धांत से ही अस्तित्व में आई। क्रिस्टॉलर के अनुसार ऐसा स्थान, जो आसपास के क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों को एक या एक से अधिक सेवाएं उपलब्ध कराता है उसे केन्द्रीय स्थान के रूप में परिभाषित किया जाता है क्रिस्टॉलर (1966)। वृहद आकार का सेवाकेन्द्र उच्च श्रेणी की सुविधाओं को अधिक मात्रा में उपलब्ध कराता है। ये उच्च श्रेणी की सुविधाएं, निम्न स्तर की उन सुविधाओं के अतिरिक्त होती हैं जो लघु आकार के सेवाकेन्द्रों की तरह यहां भी विद्यमान रहती हैं। इस प्रकार लघु आकार के सेवा केन्द्रों का सेवा क्षेत्र, वृहद आकार के सेवाकेन्द्रों के सेवा क्षेत्र के अन्दर ही व्यवस्थित रहता है। क्रिस्टॉलर महोदय के अनुसार पदानुक्रम का वितरण प्रतिरूप केन्द्रीय स्थानों के तीन प्रमुख वितरण सिद्धातों यथा बाजारीय सिद्धांत, यातायात सिद्धांत तथा प्रशासनिक सिद्धांत पर आधारित होता है।

केन्द्रीय स्थान सिद्धांत को बाद में ई. उलमैन (1945) और लॉश (1954) ने कुछ परिवर्तन करके प्रस्तुत किया। यद्यपि क्रिस्टॉलर द्वारा प्रतिपादित केन्द्र स्थान सिद्धांत की बहुत आलोचनाएं

हुई फिर भी इसका व्यवहारिक महत्व है क्योंकि यह सिद्धांत एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत करता है जिसके विचलनों की व्याख्या परिवर्तित दशाओं में भी की जा सकती है। यह सिद्धांत अनेक शोध छात्रों के लिए विषय सामग्री प्रस्तुत करता है। पदानुक्रम ज्ञात करने के लिए अनेक विधियां प्रचलित हैं। प्रथम विधि में केन्द्रों के द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं तथा वस्तुओं के आधार पर अनुमान किया जाता है तथा दूसरी विधि में किसी केन्द्र पर वस्तुओं तथा सेवाओं के लिए निर्भर क्षेत्रों की गणना की जाती है। इस क्षेत्र में वेरी तथा गैरीसन (1958), एवाइदून (1967), स्टैफोर्ड तथा हैफल्स ने सेवाओं को आधार माना है जबकि ब्रेशी (1953), ब्रश (1953) तथा फील्ड (1967) ने मांग क्षेत्र पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है। इन प्रमुख पाश्चात्य विद्वानों के अलावा कुछ प्रसिद्ध भारतीय भूगोलवेत्ताओं ने भी सेवाकेन्द्रों के पदानुक्रम निर्धारण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस क्षेत्र में प्रासंगिक कार्य सिंह, वनमाली (1968), पाण्डेय (1970), मण्डल (1975), जायसवाल (1976), मिश्रा (1976) ने प्रस्तुत किया है। मिश्रा (1987) ने हमीरपुर जनपद के 59 सेवाकेन्द्रों का पदानुक्रम अनुभवात्मक एवं सांख्यिकीय विधियों के आधार पर ज्ञात किया।

वर्तमान कार्य में प्रयुक्त विधियां (Use of Methads in Present Work)-

जैसा कि पूर्व पंक्तियों से स्पष्ट है कि सेवा केन्द्रों का महत्वांकन उनमें सम्पादित होने वाले विभिन्न किस्म के कार्यों पर निर्भर करता है। सेवा केन्द्रों में सम्पादित होने वाले प्रत्येक कार्य का महत्व समान नहीं होता। जैसे- प्राइमरी स्कूल, जूनियर हाई स्कूल की अपेक्षा तथा हाई स्कूल, इंटर कालेज की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है। इस प्रकार के उदाहरण स्वास्थ्य, संचार व्यवस्था और प्रशासनिक सेवाओं के रूप में भी दिए जा सकते हैं। इस प्रकार एक ओर समरूप कार्यों के पदानुक्रम में अत्यधिक विभिन्नता मिलती है। अस्तु किसी भी सेवा केन्द्र को कार्यों की संख्या के रूप में नहीं वल्कि पदानुक्रम के रूप में समझा जाना चाहिए इसलिए कार्य और कार्यात्मक पदानुक्रम का स्तर जितना अधिक होगा उस स्थान के कार्यों की केन्द्रीयता उतनी ही उच्च स्तर की होगी। अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत सेवा केन्द्रों की केन्द्रीयता को श्रेणीबद्ध करने के लिए बस्ती सूचकांक विधि को अपनाया गया है।

बस्ती सूचकांक विधि (Settlement Index Method)-

जालौन जनपद की उरई तहसील के सेवाकेन्द्रों के पदानुक्रम निर्धारण हेतु वस्ती सूचकांक तकनीक का प्रयोग अधिक शुद्ध विधि है क्योंकि सम्पूर्ण क्षेत्र को ध्यान में रखकर कार्यात्मक मूल्य ज्ञात किया जाता है। इसलिए इस तकनीक द्वारा ज्ञात पदानुक्रम प्रादेशिक प्रतिरूप को व्यक्त करता है। कार्यात्मक मूल्य अधोलिखित सूत्र की मदद से ज्ञात किया गया है।

सूत्र-

$$F.C.V = \frac{1 \times 100}{F}$$

जिसमें,

F.C.V. = कार्यात्मक केन्द्रीयता मान

F = समस्त सेवा केन्द्रों में एक कार्य की आवृत्तियों का योग।

उपर्युक्त समीकरण के आधार पर प्रत्येक कार्य का केन्द्रीयता मान ज्ञात किया गया है। जिसका विवरण तालिका संख्या 3.2 में प्रदर्शित है।

तालिका 3.2

कार्यों का केन्द्रीय मान

क्र. सं.	कार्य कार्यात्मक	केन्द्रीयता मान
1.	प्राथमिक स्कूल	0.82
2.	जूनि. हाई स्कूल	1.47
3.	इंटर कालेज	10.00
4.	हाई स्कूल	03.85
5.	डिग्री कालेज	33.33
6.	तकनीकी संस्थान	100.00
7.	पशु चिकित्सालय	9.09
8.	बैंक	2.67
9.	पुलिस थाना	33.33
10.	बस स्टाप	3.85
11.	रेलवे स्टेशन	25.00
12.	कपड़े की दुकान	1.01
13.	साइकिल मरम्मत	0.86
14.	तहसील मुख्यालय	100.00
15.	ब्लाक मुख्यालय	100.00
16.	जिला मुख्यालय	100.00
17.	न्याय पंचायत	9.09
18.	पोस्ट आफिस	2.78
19.	टेलीग्राफ आफिस	4.55
20.	पुलिस चौकी	10.00
21.	चिकित्सालय/ औषधालय	7.69
22.	मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र	8.33
23.	परिवार कल्याण केन्द्र	4.55
24.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	5.26
25.	खाद/ वीज भंडार	5.88
26.	सहकारी समिति	3.03
27.	फोटोग्राफर	3.33
28.	आरामशीन	8.33
29.	दर्जी की दुकान	0.63
30.	फल/ सब्जी की दुकान	1.54
31.	वर्तनों की दुकान	1.49
32.	पुस्तक विक्रेता	1.56
33.	मिडवाइफ	2.56
34.	वाजार	7.14
35.	ट्रैक्टर मरम्मत केन्द्र	2.44
36.	आटा चक्की	0.64
37.	बिजली का सामान	2.04
38.	मेडिकल स्टोर	2.27
39.	होटल/ जलपान गृह	2.78
40.	विश्राम गृह/ धर्मशाला	6.25

तालिका के कार्यात्मक केन्द्रीयता मूल्यों का प्रयोग वस्ती सूचकांक ज्ञात करने के लिए किया गया है निम्नांकित सूत्र की सहायता से वस्ती सूचकांक ज्ञात किया जा सकता है।

S.I. = F.C.V. X OF

जिसमें,

S.I. = वस्ती सूचकांक

F.C.V. = कार्यात्मक केन्द्रीयता मान

OF = सेवाकेन्द्रों में कार्यों की उपस्थिति

उपरोक्त सूत्र के आकलन से प्राप्त वस्ती सूचकांक को तालिका सं. 3.3 में प्रदर्शित किया गया है और कार्यात्मक महत्व के अनुसार इसका प्रयोग सेवा केन्द्रों के पदानुक्रम को निर्धारित करने में किया गया है।

तालिका सं. 3.3

सेवा केन्द्रों का बस्ती सूचकांक

क्र. सं.	नाम सेवा केन्द्र	बस्ती सूचकांक	कोटिसं.
1.	उरई	1735.43	01
2.	एट	455.95	02
3.	डकोर	247.57	03
4.	कोटरा	154.99	04
5.	सैदनगर	82.39	09
6.	मुहम्मददाबाद	87.24	08
7.	जैसारीकला	93.09	07
8.	कुसमिलिया	110.60	05
9.	हरदोई गूजर	105.02	06
10.	खरुसा	40.24	18
11.	एर	76.21	11
12.	खरका	34.98	19
13.	अटरिया	18.86	27
14.	गढ़र	49.45	17
15.	करमेर	81.59	10
16.	टिमरों	52.21	15
17.	कुकरगांव	50.36	16
18.	मुहाना	24.04	26
19.	धगुवां कला	16.84	29
20.	रूराअड्डू	32.49	23
21.	अकोढ़ी	34.03	20
22.	मिनौरा उरई	8.90	32
23.	धुरट	57.97	13
24.	औंता	33.17	22
25.	सोमई	65.62	12
26.	बड़ागांव	53.81	14
27.	बम्हौरीकला	13.54	30

28.	चिल्ली	31.65	24
29.	बिनौरा	17.57	28
30.	नुनसाई	30.53	25
31.	भुवा	33.83	21
32.	राहिया	10.59	31
33.	मगरायां	7.64	33

तालिका सं. 3.3 के परीक्षण से अध्ययन क्षेत्र के प्रत्येक सेवा केन्द्र का तहसील स्तर पर महत्व स्पष्ट हो जाता है। बस्ती सूचकांक की दृष्टि से उरई सर्वोच्च स्थान पर है। इसका बस्ती सूचकांक 1735.43 है जो कि अध्ययन क्षेत्र में सबसे कम बस्ती सूचकांक मूल्य रखने वाले मगरायां सेवाकेन्द्र से 227.15 गुना अधिक है। वस्ती सूचकांक की दृष्टि से एट एवं डकोर क्रमशः द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर आते हैं (चित्र संख्या 3.2) इसके बाद वस्ती सूचकांक की क्रमिक प्राप्ति की दृष्टि से कोटरा (154.99) सैदनगर, कुसमिलिया, हरदोईगूजर, मुहम्मदाबाद तथा जैसारीकला आते हैं। तत्पश्चात के सेवाकेन्द्रों का बस्ती सूचकांक 100 से कम है।

तालिका सं. 3.4

बस्ती सूचकांक के आधार पर सेवाकेन्द्रों की संख्या एवं पदानुक्रमिक वर्ग

क्र. सं.	पदानुक्रम	श्रेणी	सेवाकेन्द्रों की संख्या	सेवाकेन्द्र कोड संख्या
1.	I	500 से अधिक	01	01
2.	II	251 से 500 तक	01	02
3.	III	101 से 250 तक	04	03, 04, 08, 09
4.	IV	51 से 100 तक	10	05,06, 07, 15, 11, 25, 23, 26, 16, 17
5.	V	50 से कम	17	10, 12, 13, 14, 18, 19, 20, 21, 22, 24, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33

प्रथम श्रेणी-

प्रथम श्रेणी में उरई का स्थान सर्वोच्च है जिसका वस्ती सूचकांक 1735.43 है। यातायात की महत्वपूर्ण स्थिति, जिला मुख्यालय केन्द्र, तहसील मुख्यालय, उच्च शैक्षणिक सुविधाएं, स्वास्थ्य एवं बैकिंग आदि की सुवधाओं से युक्त एवं औद्योगिक दृष्टि से विकसित यह केन्द्र अध्ययन क्षेत्र का एक प्रमुख प्रादेशिक सेवाकेन्द्र है।

द्वितीय श्रेणी-

प्रथम श्रेणी की भांति इस श्रेणी के अन्तर्गत भी केवल एक सेवाकेन्द्र (एट) आता है जिसका बस्ती सूचकांक 455.95 है। राष्ट्रीय मार्ग संख्या 25 पर अवस्थित एवं कार्यों की दृष्टि से यह एक विकसित केन्द्र है। यहां पर विभिन्न प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सेवाएं उपलब्ध हैं।

तृतीय श्रेणी-

इसके अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के चार सेवाकेन्द्र आते हैं। इनमें डकोर विकासखण्ड मुख्यालय है तथा कोटरा एक लघु स्तर का नगरीय केन्द्र है। कुसमिलिया व हरदोई गूजर प्रमुख वाजारीय

TAHSIL ORAI
HIERARCHY OF SERVICE CENTRES
(BASED ON SETTLEMENT INDEX)
N
KMS
I ORDER
II ORDER
III ORDER
IV ORDER
V ORDER
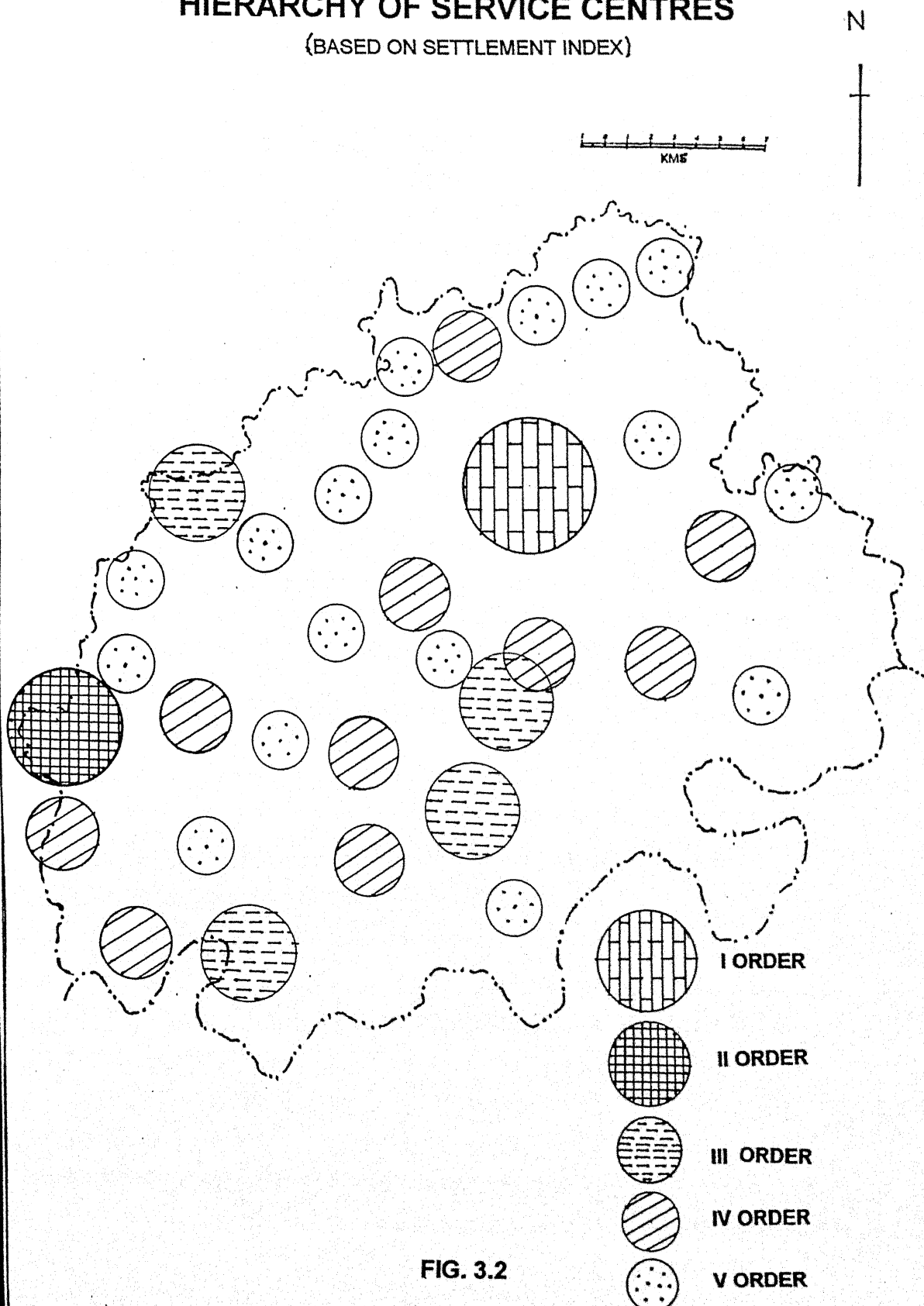
FIG. 3.2

केन्द्र हैं। इसके अतिरिक्त यहां पर परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य मध्यम श्रेणी की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

चतुर्थ श्रेणी-

इस श्रेणी के अन्तर्गत 10 सेवाकेन्द्र आते हैं जिनका बस्ती सूचकांक 51 से 100 के मध्य है। बाजारीय दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र के विकसित केन्द्र हैं, जहां समीपवर्ती गांवों के लोग आकर विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्राप्त करते हैं।

पंचम श्रेणी-

इस श्रेणी के अन्तर्गत 17 सेवाकेन्द्र आते हैं। जिनका बस्ती सूचकांक 50 से भी कम है। इन सेवा केन्द्रों में निम्न स्तर के विविध प्रकार के सेवा कार्य सम्पन्न होते हैं। इनका सेवा क्षेत्र चतुर्थ श्रेणी के सेवाकेन्द्रों की अपेक्षा छोटा होता है। इन केन्द्रों में केवल स्थानीय महत्व के कार्य सम्पादित होते हैं। यथा- जूनियर बेसिक स्कूल, आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाएं, डाकसेवा, खाद एवं बीज भंडार आदि।

विभिन्न चरों के मध्य सम्बन्ध-

सूक्ष्म स्तरीय विकास नियोजन के अध्ययन में सेवा केन्द्रों के विभिन्न चरों के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करना आवश्यक है। इसके आधार पर क्षेत्रीय योजना का प्रारूप तैयार करने में मदद मिलती है। विभिन्न चरों के मध्य सम्बन्धों को निम्न पंक्तियों में वर्णित किया गया है।

आकार एवं कार्य के मध्य सम्बन्ध-

किसी भी बस्ती के आकार में वृद्धि होने के साथ ही साथ उसके कार्यों में भी वृद्धि होती है। इस तथ्य को समाश्रयण विधि द्वारा ज्ञात किया गया है। आकार एवं कार्यों के सहसम्बन्ध एवं कोटिक्रमों के विश्लेषणात्मक अध्ययन से ज्ञात हुआ कि कार्य एवं जनसंख्या का सहसम्बन्ध +0.75 है जो कि धनात्मक है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जनसंख्या आकार एवं कार्य आपस में परस्पर सम्बन्धित हैं।

आकार एवं कार्यात्मक इकाई-

सेवा केन्द्रों को जनसंख्या आकार तथा कार्यात्मक इकाइयों के आधार पर श्रेणीबद्ध किया गया है दोनों के क्रमों का सहसम्बन्ध r+0.85 है जो धनात्मक है और इस विचार धारा को प्रमाणित करता है कि जनसंख्या एवं कार्यात्मक इकाइयां अन्तः आश्रित हैं (चित्र संख्या 3.3. A)।

कार्य एवं कार्यात्मक इकाइयां-

आकार एवं कार्यात्मक इकाई की भांति ही यह भी विचारधारा सेवा केन्द्रों में सम्पन्न होने वाले विभिन्न कार्यों एवं कार्यात्मक इकाइयों को श्रेणीबद्ध करके ज्ञात किया गया है। यह परिकल्पना इस तथ्य को स्पष्ट करती है कि कार्यों की संख्या एवं कार्यात्मक इकाइयां एक दूसरे पर निर्भर हैं। स्पष्ट है कि दोनों एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं।

कार्य एवं कार्यात्मक इकाइयों के सम्बन्ध को चित्र सं. 3.3B में प्रदर्शित किया गया है जिसके निरीक्षण से ज्ञात होता है कि कार्यों की संख्या के साथ- साथ कार्यात्मक इकाइयों की संख्या बढ़ती है। इन दो मानों का सम्बन्ध + 0.84 आया है जो कि एक- दूसरे की घनिष्ठता का सूचक है।

ORAI TAHSIL

RELATIONSHIPS
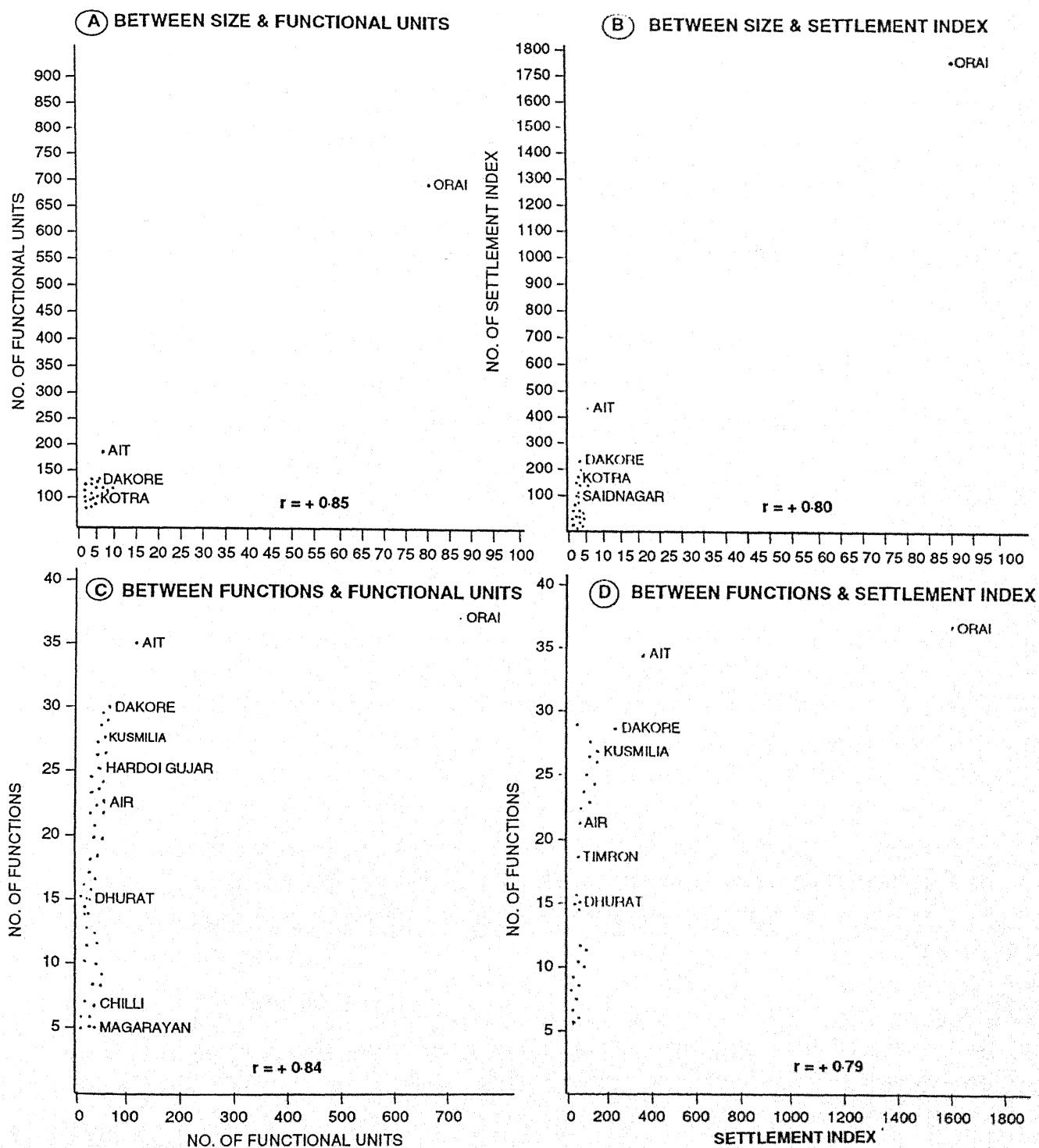
FIG. 3.3

आकार एवं बस्ती सूचकांक सहसम्बन्ध-

सेवा केन्द्रों की जनसंख्या अस्थिर प्रतिनिधि के रूप में वर्तमान एवं सम्भावित कार्यों हेतु सेवित होती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि के साथ सेवाओं एवं कार्यों की मांग के प्रतिशत में भी वृद्धि होती है। अध्ययन क्षेत्र के सेवा केन्द्रों के सम्बन्ध में विश्लेषण करने से इस तथ्य की पुष्टि हुई है। जनसंख्या एवं बस्ती सूचकांक के मध्य सम्बन्ध को रेखाचित्र सं. 3.3 C में प्रदर्शित किया गया है। स्पीयरमैन कोटि सहसम्बन्ध नियतांक $r = +0.8$ दोनों के मध्य धनात्मक और महत्वपूर्ण सम्बन्ध प्रदर्शित करता है। इस प्रकार इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है कि आकार एवं बस्ती सूचकांक के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध है।

कार्य एवं बस्ती सूचकांक सहसम्बन्ध-

कार्य एवं बस्ती सूचकांक के मध्य सम्बन्ध को सिद्ध करने के लिए भी रेखाचित्र सं. 3.3. D तैयार किया गया है। कार्यों की संख्या और केन्द्रीयता मूल्यलब्धि एक बार पुनः धनात्मक सम्बन्ध की उच्च मात्रा को दर्शाती है। इसका मान $+0.79$ है। जिससे कार्य एवं बस्ती सूचकांक के मध्य घनिष्ठता का पता चलता है।

सेवा केन्द्रों का स्थानिक वितरण (Spatial Distribution of Service Centres)-

प्रादेशिक नियोजन में सेवा केन्द्रों के स्थानिक वितरण प्रति रूप का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि किसी विशेष प्रकार के उत्पादन के स्थानिक क्रम तथा संतुलित सामाजिक-आर्थिक स्थानिक संगठन तंत्र को स्थानिक नियोजन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।किसी एक क्षेत्र में भौतिक, सामाजिक एवं आर्थिक रुकावटों पर आधारित वितरण का स्वरूप नियमित- अनियमित एवं समान या असमान हो सकता है। इसके अतिरिक्त बहुत से कारक यथा- धरातल, जल प्रवाह, यातायात जाल तथा कृषि उत्पादन आदि भी हैं, जो आंशिक रूप से क्षेत्र में प्रचलित वितरण प्रतिरूप की व्याख्या करते हैं। भूगोल में परिमाणात्मक विधियों के प्रवेश होने के बाद अनेक समीकरण एवं मॉडल पारस्परिक कारकों के सम्बन्धों तथा प्रतिरूपों की व्याख्या करने हेतु प्रयोग में लाए जा रहे हैं। इस प्रकार बस्तियों के स्थानात्मक वितरण का अध्ययन सांख्यिकीय विधियों एवं सूत्रों के माध्यम से वर्तमान समय में बहुतायत मात्रा में प्रचलित हैं। निकटतम् पड़ोसी विधि हालांकि भारत वर्ष एवं विदेशों में अत्यधिक प्रचलित हैं तथा अनेक भूगोलवेत्ताओं द्वारा क्षेत्रीय वितरणात्मक स्वरूप की व्याख्या करने के लिए स्वतंत्र रूप में प्रयोग की जा रही है। निकटतम् पड़ोसी बिन्दु तकनीक का सुझाव पारिस्थितिक विशेषज्ञ क्लार्क और ईवान्स (1954) ने दिया। यह असमानता से वितरण के स्थानिक प्रतिरूप विचलन को किसी बिन्दु से नापता है। तत्पश्चात डेसी (1960), किंग (1962) महोदय ने भूगोल के क्षेत्र में इस कार्य को प्रारम्भ किया। तत्पश्चात अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय भूगोल वेत्ताओं ने भी स्थानात्मक वितरण प्रतिरूपों के विश्लेषण हेतु इस विधि को महत्वपूर्ण यंत्र के रूप में प्रयोग किया है।

निकटतम पड़ोसी विधि का प्रयोग-

मानव अधिवासों के स्थानिक वितरण के अध्ययनों में प्रत्येक केन्द्र के निकटतम् पड़ोसी केन्द्र से उसकी दूरी सीधी रेखा द्वारा मालूम की जाती है। पड़ोसी केन्द्र वस्तुतः विचाराधीन केन्द्रों में बड़े अथवा छोटे वर्ग के अथवा उसी के पदानुक्रमीय वर्ग के होंगे। केन्द्रों के आकार एवं पदानुक्रमीय स्वरूप को ध्यान में रखकर किसी भी क्षेत्र के समस्त केन्द्रों की निकटतम् पड़ोसी दूरियों की सहायता से केन्द्रों के सम्पूर्ण वितरण प्रतिरूप के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। जैसा कि चित्र सं. 3.4A से स्पष्ट है। सेवा केन्द्रों एवं उनके निकटतम् पड़ोसी बिन्दुओं के मध्य सीधी दूरी पर आधारित स्थानिक भिन्नता तालिका सं. 3.5 में प्रस्तुत है।

TAHSIL ORAI
A NEAREST NEIGHBOURS OF SERVICE CENTRES
N
KMS
ATARIA
AUNTA
RURRAADDU
KUKARGOAN
MAGARAYAN
GARHAR
RAHIYA
MINORAORAI
ORAI
HARDOIGUJAR
BAMHAURIKALA
KHARUSA
KARMER
AKORHI
BARAGOAN
BHUA
MOHAMDABAD
AIR
CHILLI
DHAGUANKALA
KHARKA
KUSMILIYA
SOMAI
AIT
NUNSAI
TIMRON
DAKORE
DHURAT
BINORA
JAISARIKALA
MOHANA
SAIDNAGAR
KOTRA
(BASED ON NEAREST NEIGHBOUR DISTANCE)
B
NO. OF SERVICE CENTRES
20
16
12
8
4
3
4·5
6·0
7·5
DISTANCE (IN KMS)

FIG. 3.4

तालिका सं. 3.5

सेवाकेन्द्रों के मध्य की दूरी एवं उनके पड़ोसी केन्द्र (कि.मी. में) 1992-93

क्र.सं.	नाम सेवा केन्द्र	सेवा केन्द्र एवं उसके निकटतम पड़ोसी केन्द्र की दूरी	मध्य से प्रत्येक सेवा केन्द्र की दूरी का विचलन	परिकल्पित दूरी से प्रत्येक सेवा केन्द्र की दूरी का विचलन	आकार के अनुसार कोटि	दूरी के अनुसार कोटि
1.	उरई	6.0	-2.02	-0.30	1	25
2.	एट	3.4	+0.58	+ 5.30	2	21.0
3.	डकोर	4.4	- 0.42	+ 1.30	3	11.5
4.	कोटरा	4.8	- 9.82	+ 0.90	4	6.0
5.	सैदनगर	4.6	- 0.62	+ 1.10	5	90
6.	मुहम्मदाबाद	3.0	+ 0.98	+ 2.70	6	28.5
7.	जैसारीकला	4.6	- 0.62	+ 1.10	7	90
8.	कुसमिलिया	3.0	+ 0.98	+ 2.70	8	28.5
9.	हरदोई गूजर	3.4	+ 0.58	_ 2.30	9	21.0
10.	खरुसा	3.4	+0.58	_ 2.30	10	21.0
11.	एर	4.0	- 0.02	_ 1.70	11	15.0
12.	खरका	4.8	- 0.82	+ 0.90	12	60
13.	अटरिया	3.0	+ 0.98	+2.70	13	28.5
14.	गढ़र	3.2	+ 0.78	_ 2.50	14	25.0
15.	करमेर	4.0	- 0.02	+ 1.70	15	32.5
16.	टिमरों	4.6	- 0.62	+ 1.10	16	15.0
17.	कुकरगांव	2.8	+ 1.18	+ 2.90	17	9.0
18.	मुहाना	4.4	- 0.42	+ 1.30	18	11.5
19.	धगुवां कला	3.4	+ 0.58	+ 2.30	19	21.0
20.	रूरा अड्डू	3.4	+ 0.58	+ 2.30	20	21.0
21.	अकोढ़ी	4.0	0.02	+ 1.70	21	15.0
22.	मिनौरा उरई	3.2	+ 0.78	+ 4.50	22	25.0
23.	धुरट	5.0	- 1.02	+ 0.70	23	4.0
24.	औंता	3.0	+ 0.98	+ 2.70	24	28.5
25.	सोमई	4.0	- 0.02	+ 1.70	25	15.0
26.	बड़ागांव	3.4	+ 0.58	_ 2.30	26	21.0
27.	बम्हौरीकला	6.2	- 2.22	- 0.50	27	1.0
28.	चिल्ली	3.2	+ 0.78	+ 2.50	28	25.0
29	बिनौरा	4.8	- 0.82	+ 0.90	29	6.0
30.	नुनसाई	4.0	- 0.02	+ 1.70	30	15.0
31.	भुवा	3.8	+ 0.18	+ 1.90	31	18.0
32.	राहिया	6.0	- 2.02	- 0.30	32	2.5
33.	मगरायां	2.8	+ 1.18	+ 2.90	33	32.5

X = 131.6

परिकल्पित दूरी = 5.70

743 X 2

r = 0.51

तालिका संख्या 3.5 से यह प्रदर्शित होता है कि स्थानात्मक दूरी मगरायां और कुकरगांव के मध्य 2.8 कि.मी. तथा बम्हौरीकला से करमेर के मध्य 6.2 कि.मी. है। सेवाकेन्द्रों की आवृत्ति को दर्शाने के लिए एक आयत चित्र की भी रचना की गई है जिसके अनुसार यह ज्ञात होता है कि अधिकांशतः सेवाकेन्द्र 4.1 से 5.0 कि.मी. के मध्य स्थित हैं।

सेवा केन्द्रों का नियंत्रित क्षेत्र (Influence Area of Service Centers) -

प्रत्येक बस्ती चाहे वह आकार में छोटी होया बड़ी, गांव हो या कस्बा, नगर हो या महानगर, केन्द्रीय कार्यों के माध्यम से अपने चारों ओर स्थित क्षेत्रों को अनेक प्रकार की सेवाएं व सुविधाएं प्रदान करती है। यह अनेक प्रकार के सामाजिक- आर्थिक कार्यों का संग्रह केन्द्र होती है। वास्तव में सेवा केन्द्रों के नियंत्रित क्षेत्र की व्यापकता उनमें सम्पन्न होने वाले केन्द्रीय कार्यों की गुणवत्ता पर आधारित होती है। यदि सेवा वस्ती में निम्न स्तर के कार्य होते हैं तो उसका अपने चारों ओर स्थित नियंत्रण क्षेत्र भी सीमित होता है और यदि इसकी अपेक्षा किसी सेवा वस्ती में महत्वपूर्ण एवं विशेषीकृत कार्य सम्पन्न होते हैं तो उसका नियंत्रित क्षेत्र विस्तृत होता है।

सेवाकेन्द्रों के प्रभाव क्षेत्र के परिसीमन के सम्बन्ध में पाश्चात्य एवं भारतीय भूगोलविदों ने समय-समय पर शोध कार्य प्रस्तुत किए हैं। इन विभिन्न विद्वानों ने गुणात्मक एवं मात्रात्मक उपागमों के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में सेवा केन्द्रों के प्रभाव क्षेत्र का अध्ययन किया है जिनका अनुगमन करते हुए शोधकर्ता ने अपने शोध क्षेत्र का सीमांकन करने के लिए गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों उपागमों का सहयोग लिया है। अध्ययन में इन दोनों विधियों का प्रयोग इसलिए और भी किया गया है ताकि वास्तविकता एवं यथार्थता का परीक्षण सरलतापूर्वक किया जा सके।

गुणात्मक उपागम (Qualitative Approach)-

इस उपागम द्वारा अध्ययन क्षेत्र के प्रभाव क्षेत्र को सीमांकित करने के लिए सबसे पहले प्राथमिक आंकड़े ग्राम्य स्तर पर एकत्र किए गए ताकि शुद्धतापूर्वक यह ज्ञात किया जा सके कि प्रत्येक सेवा केन्द्र का विभिन्न कार्यों की दृष्टि से कितने गांवों से सम्बन्ध है। अध्ययन हेतु छः सेवाकार्यों को आधार माना गया है जो निम्न हैं- (1) शिक्षा सेवा (2) स्वास्थ्य सेवा (3) बैंकिंग (4) विपणन (5) ट्रैक्टर मरम्मत (6) न्याय पंचायत सेवा।

चूंकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में निवास करने वाली जनसंख्या अधिकांशतः इन्हीं कार्यों के लिए सेवा केन्द्रों पर निर्भर करती है। इसलिए सेवाकेन्द्रों के प्रभाव क्षेत्रों को सीमांकित करने के लिए उपर्युक्त सूचकांकों को आधार माना गया है। उरई तहसील के गांव या तो उपर्युक्त समस्त सेवा कार्यों या फिर उनमें से किसी एक के लिए क्षैतिज सम्बन्ध द्वारा सेवा केन्द्रों से जुड़े हुए हैं। प्रत्येक सेवाकेन्द्र के गुणात्मक, सीमांकन हेतु सबसे पहले उपर्युक्त कार्यों द्वारा प्रभावित क्षेत्रों के मानचित्रों को एक- दूसरे पर अध्यारोपित किया गया है। इनमें विभिन्न सेवाकार्यों की प्रभावित रेखाओं को, जो लगभग सभी से मिलती हैं, रेखांकित कर गुणात्मक सीमा रेखा निर्धारित की गई है (चित्र सं. 3.5)।

उपर्युक्त वर्णित सेवाओं के लिए स्थानात्मक सम्बन्धों में उपभोक्ताओं की स्थानिक पसन्दगी तथा व्यवहार के सम्बन्ध में कुछ मुख्य तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं। क्षेत्र में ट्रैक्टर सेवा का प्रभाव क्षेत्र सर्वाधिक है क्योंकि यह सेवा शोध क्षेत्र के अन्तर्गत केवल आठ सेवा केन्द्रों जैसे- उरई, एट, कोटरा, सैदनगर, मुहम्मदाबाद, कुसमिलिया, करमेर एवं टिमरों पर सम्पन्न होती है। दूसरे क्रम में विपणन सेवा का स्थान आता है जो कि 9 सेवा केन्द्रों- उरई, एट, डकोर, कोटरा, सैदनगर, मुहम्मदाबाद, जैसारीकला, कुसमिलिया एवं हरदोई गूजर में उपलब्ध है। न्याय पंचायत सेवा तृतीय स्तर पर आती

TAHSIL ORAI
EMPIRICAL COMMAND AREA
(BASED ON FIELD SURVEY)
N
KMS
AUNTA
ATARIA
RURRAADDU
KUKARGOAN
MAGARAYAN
RAHIYA
MINORAORAI
GARHAR
ORAI
HARDOIGUJAR
KHARUSA
KARMER
BAMHAURIKALA
AKORHI
BHUA
DHAGUANKALA
SOMAI
BARAGOAN
CHILLI
MOHAMDABAD
AIR
KHARKA
NUNSAI
AIT
KUSMILIYA
TIMRON
DAKORE
DHURAT
BINORA
JAISARIKALA
SAIDNAGAR
KOTRA
MOHANA
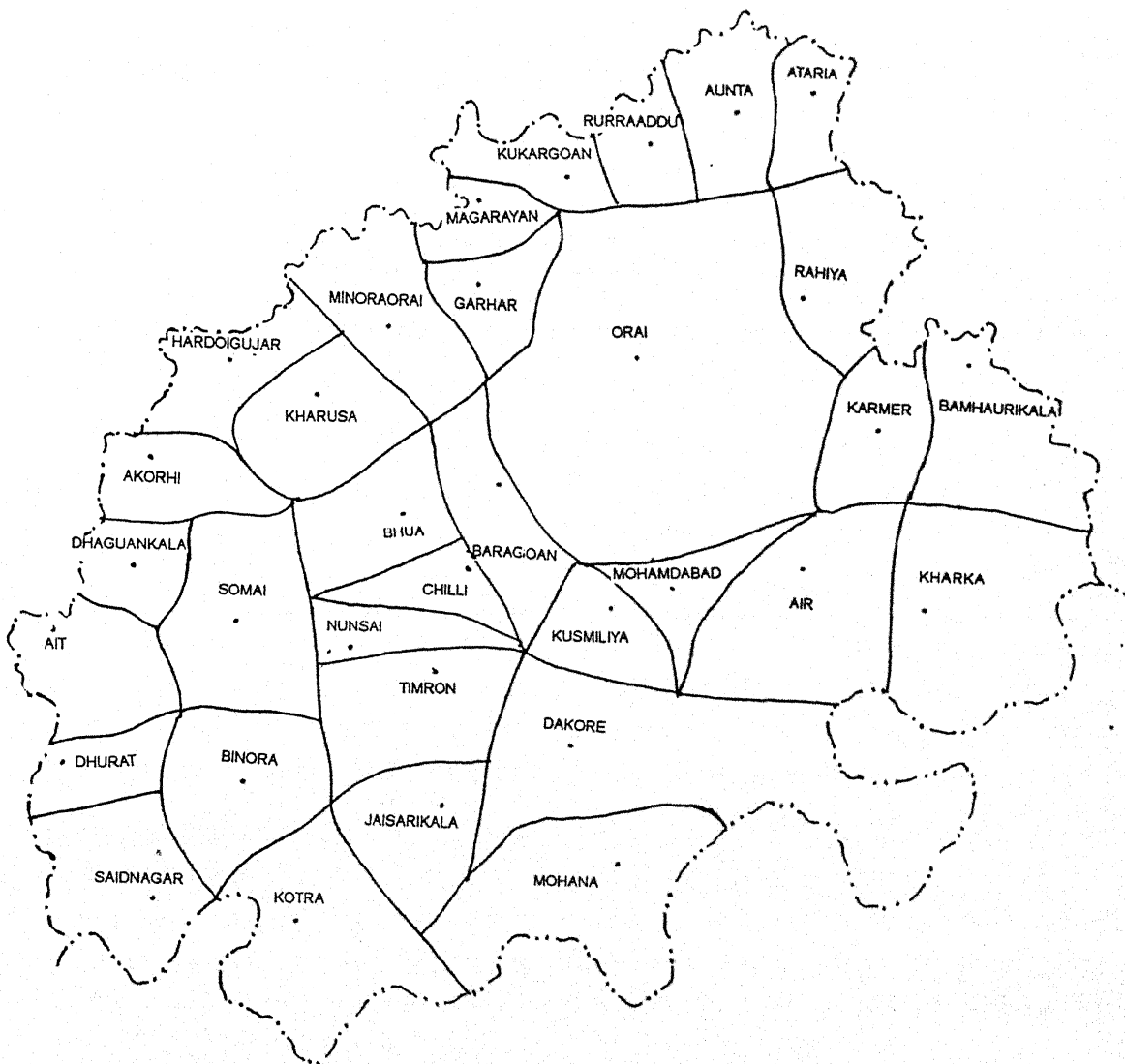
FIG. 3.5

है। क्षेत्र के 11 सेवा केन्द्र ऐसे हैं जहां पर यह सुविधा ग्रामीण जनों को प्राप्त है। इस क्षेत्र में वैंकिंग सेवा का चतुर्थ स्थान है जो क्षेत्र के 17 सेवा केन्द्रों में उपलब्ध है। इसके वाद स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत उरई तहसील में 26 मातृ शिशु कल्याण केन्द्र व उप स्वास्थ्य केन्द्र, 07 औषधालय, 04 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 01 जिला चिकित्सालय, 12 पशु अस्पताल एवं पशु सेवा केन्द्र हैं। जो लगभग 1,95,796 व्यक्तियों को सुविधाएं प्रदान करते हैं। जो कि 120 गांवों और 02 नगरीय केन्द्रों में निवास करते हैं। यद्यपि शोध क्षेत्र में प्राथमिक स्तर की शिक्षा सुविधा उपर्युक्त दूसरे कार्यों की तुलना में अधिक स्थानों पर उपलब्ध है। फिर भी उच्च शिक्षा सुविधा कम स्थानों में पाई जाती है। जैसे क्षेत्र में 43 जूनियर हाई स्कूल, 26 हाई स्कूल, 10 इंटर कालेज, 03 डिग्री कालेज स्थित हैं।

क्षेत्र में सम्पन्न सर्वेक्षण एवं गुणात्मक उपागम के आधार पर निम्न चित्र सं. 3.5 में सेवा केन्द्रों द्वारा प्रभावी क्षेत्रों में पर्याप्त अन्तर विद्यमान है। इसका प्रमुख कारण सेवा कार्यों एवं अवस्थापनाओं में विभिन्नता का पाया जाना है।

सेवा केन्द्रों की प्रकृति एवं उनका प्रसार कार्यात्मक पदानुक्रम में स्थित सेवा केन्द्रों पर आधारित होता है।

तालिका सं. 3.6

गुणात्मक नियंत्रित क्षेत्र

	गांवों की सं.	क्षेत्र (वर्ग कि.मी. में)	जनसंख्या	औसत
प्रथम श्रेणी	34	129.60	1,20,791	1,20,791
द्वितीय श्रेणी	05	20.80	10,752	10,752
तृतीय श्रेणी	28	200.00	32,504	1,160.86
चतुर्थ श्रेणी	47	213.20	47,729	1,015.51
पंचम श्रेणी	45	384.00	42,569	945.93
योग	157	946.40	254345	

इसके द्वारा स्थानिक कार्यात्मक सम्बन्धों तथा कार्यात्मक पदानुक्रम को आसानी से सहसम्बन्धित किया जा सकता है। अध्ययन क्षेत्र में सेवा केन्द्रों का यह पदानुक्रमिक अनुपात 1, 1, 4, 10, 17 में वितरित है। यद्यपि यह अनुपात क्रिस्टॉलर द्वारा प्रतिपादित नगरीय सिद्धांत से मेल नहीं खाता फिर भी लगभग उसी किस्म के प्रतिरूप को व्यक्त करता है।

औसतन प्रत्येक सेवा केन्द्र 5.7 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में वितरित है। 33 सेवा केन्द्रों में से 17 सेवा केन्द्र पंचम श्रेणी में आते हैं इनमें विशेष रूप से निम्न स्तर के सेवा कार्य सम्पन्न होते हैं। इनका प्रभाव क्षेत्र प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के सेवा केन्द्रों से निम्न होता है। इसके अलावा प्रभाव क्षेत्र कुल सेवा केन्द्र क्षेत्र द्वारा प्रभावित औसत श्रेणी से भी कम है। इसके अलावा प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ कोटि में आने वाले सेवा केन्द्रों की सम्मिलित संख्या 16 है।

अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत सेवा केन्द्रों के पांच वर्ग निर्धारित किए गए हैं। प्रथम एवं दूसरे वर्ग के अन्तर्गत केवल एक- एक सेवा केन्द्र (उरई, एट) आते हैं जो कि क्रमशः 34 एव 05 गांवों की 1,20,791 तथा 10,752 जनसंख्या को सेवाएं प्रदान करते हैं। इनका प्रभाव क्षेत्र क्रमशः 129.60 वर्ग कि.मी. तथा 20.80 वर्ग कि.मी. है। तृतीय वर्ग के 4 सेवा केन्द्र 28 गांवों के 200 वर्ग कि.मी. क्षेत्र की 32,504 जनसंख्या को सेवाएं प्रदान करते हैं। जवकि चतुर्थ वर्ग के अन्तर्गत आने वाले 10 सेवा केन्द्र 47 गांवों के 213.20 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में बसने वाली 47,729 जनसंख्या को सेवाएं

प्रदान करने में समर्थ है। पांचवें एवं अंतिम पदानुक्रमीय वर्ग के अन्तर्गत वाले 17 सेवा केन्द्र क्षेत्र के 45 गांवों के 384 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में रहने वाले 42,569 व्यक्तियों को अपनी सेवाएं देकर लाभान्वित करते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के अधिकतर सेवा केन्द्र अल्प नियंत्रण क्षेत्र वाले हैं। परिणामतः सेवा केन्द्रों द्वारा सेवित क्षेत्र एवं इनके पदानुक्रमीय वर्गों में घनिष्ठ सम्बन्ध परिलक्षित होता है जो कि एक लघु प्रदेश की बहुस्तरीय योजना निर्माण हेतु अत्यधिक फलदायक सिद्ध होनी चाहिए।

सैद्धांतिक उपागम (Theoretical Approach)-

गुणात्मक अध्ययन पर आधारित सेवा क्षेत्रों का सीमांकन करने के उपरांत सैद्धांतिक उपागम के अन्तर्गत अलगाव बिन्दु समीकरण का प्रयोग करते हुए नियंत्रित क्षेत्र का सीमांकन सैद्धांतिक रूप से भी करने का प्रयास किया गया है। अलगाव बिन्दु समीकरण इस प्रकार है-

$$\frac{\text{दो सेवा केन्द्रों (A तथा B) के मध्य दूरी}}{1 + \sqrt{\dfrac{\text{A सेवा केन्द्र की जनसंख्या}}{\text{B सेवा केन्द्र की जनसंख्या}}}}$$

अलगाव बिन्दु, वह बिन्दु होता है जहां एक सेवा केन्द्र का प्रभाव रहता है लेकिन उसके आगे दूसरे सेवा केन्द्र का प्रभाव प्रारम्भ हो जाता है। इसके अन्तर्गत दो प्रतियोगी सेवा केन्द्रों के बीच अलगाव बिन्दुओं का निर्धारण करके नियंत्रित क्षेत्र सीमाओं को चित्र सं. 3.6 पर बने मानचित्र में प्रदर्शित किया गया है। अलगाव बिन्दु समीकरण की गणनाओं के अनुसार उरई का प्रभाव क्षेत्र हरदोई गूजर की ओर 10 कि.मी. पड़ता है। इसी प्रकार अन्य सेवा केन्द्रों के पदानुक्रमीय वर्गों का नियंत्रित क्षेत्र, सेवित गांव और पदानुक्रमीय वर्गों द्वारा सेवित जनसंख्या को तालिका संख्या 3.7 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका सं. 3.7

पदानुक्रमीय वर्गों के आधार पर सैद्धांतिक नियंत्रण क्षेत्र एवं जनसंख्या

क्र.सं.	पदानुक्रमीय वर्ग	संख्या	सेवित ग्रामों की संख्या	औसत	सेवित क्षेत्र वर्ग कि.मी.	औसत	सेवित जनसंख्या	औसत
1.	प्रथम वर्ग	1	36	36	160.00	160.00	1,22,525,	1,22,525
2.	द्वितीय वर्ग	1	08	08	36.60	36.60	14,254,	14,254
3.	तृतीय वर्ग	4	20	05	188.80	47.20	29,571	7,392.75
4.	चतुर्थ वर्ग	10	36	3.6	210.20	21.02	42,912	4,291.20
5.	पंचम वर्ग	17	59	5.9	350.80	20.64	45,083	2,651.97

पदानुक्रमीय आधार पर प्रथम वर्ग के अन्तर्गत आने वाला केन्द्र उरई 160.00 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में विस्तृत 36 गांवों की 1,22,525 जनसंख्या को प्रभावित करता है। जबकि एट सेवा केन्द्र जो कि द्वितीय वर्ग के अन्तर्गत आता है, 36.60 वर्ग कि.मी. क्षेत्र के 08 गांवों की 14,254 जनसंख्या की सेवा करता है। पदानुक्रम का तृतीय वर्ग जिसके अन्तर्गत 4 सेवाकेन्द्र हैं। अध्ययन क्षेत्र के 20 गांवों की 29,571 जनसंख्या को सेवाएं प्रदान करता है। चतुर्थ वर्ग के 10 सेवा केन्द्र 36 गांवों के 210.20 कि.मी. क्षेत्र में अधिवासित 42,912 व्यक्तियों को अपनी सेवाओं का लाभ प्रदान करते

TAHSIL ORAI
THEORETICAL COMMAND AREA
(BASED ON BREAKING POINT EQUATION)
N
KMS
ATARIA
AUNTA
MAGARAYAN
RURRAADDU
KUKARGOAN
GARHAR
RAHIYA
ORAI
HARDOIGUJAR
MINORAORAI
KARMER
KHARUSA
BAMHAURIKALA
AKORHI
BARAGOAN
BHUA
CHILLI
MOHAMDABAD
DHAGUANKALA
SOMAI
AIR
KHARKA
KUSMILIYA
AIT
TIMRON
NUNSAI
DAKORE
BINORA
DHURAT
JAISARIKALA
MOHANA
SAIDNAGAR
KOTRA
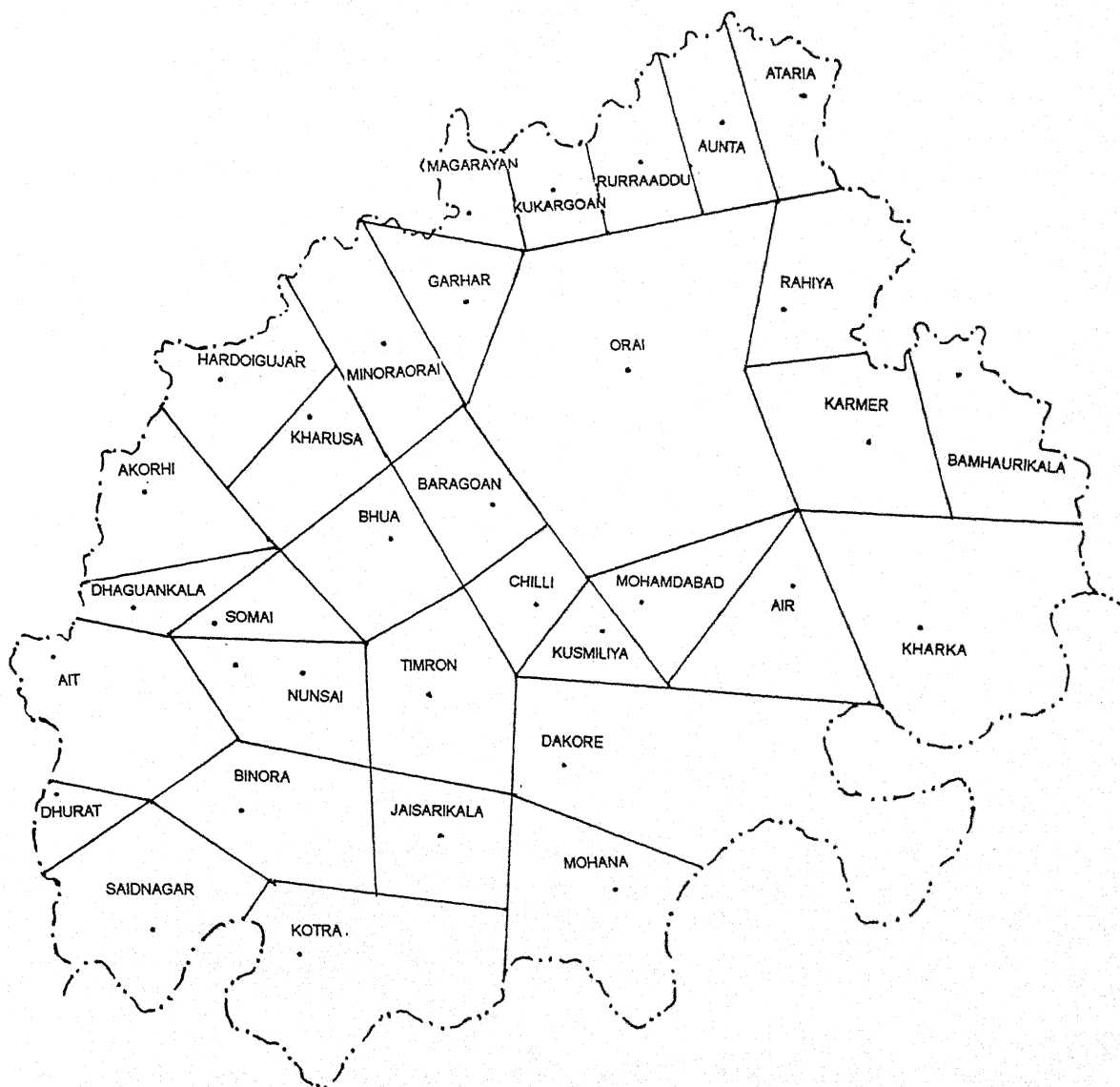
FIG. 3.6

हैं जबकि पंचम वर्ग जिसके अन्तर्गत 17 सेवा केन्द्र व 59 गांव शामिल हैं, 350.80 वर्ग कि.मी. के 45,083 व्यक्तियों को सेवाएं प्रदान कर लाभान्वित करते हैं। प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ वर्गो के सेवा केन्द्र पंचम श्रेणी के सेवा केन्द्रों की तुलना में क्रमशः लगभग 8 गुने, 2 गुने, ढाई गुने तथा बराबर क्षेत्र को सेवाएं प्रदान करते हैं।

कार्यात्मक रिक्तता एवं अतिव्याप्तता (Functional Gaps and Overlaps) -

कार्यात्मक रिक्तता से तात्पर्य उस क्षेत्र से है जहां निवास करने वाली जनता के लिए इच्छित सेवाओं की उपलब्धि हेतु कोई स्थान या सेवा केन्द्र न हो इसके विपरीत कार्यात्मक अतिव्याप्तता का अर्थ उस क्षेत्र से है जो एक या एक से अधिक सेवा केन्द्रों द्वारा सेवित हो। इस सन्दर्भ में कल्पना यह है कि अतिव्याप्त क्षेत्र अच्छी तरह से सेवित रहते हैं। इसके विपरीत रिक्तता के क्षेत्र में सुविधा संरचनाओं का अभाव होता है। क्षेत्र की समाकलित विकास योजना के लिए इस प्रकार के समस्या ग्रस्त क्षेत्रों का अंकन आवश्यक है एक निश्चित पैमाने पर सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के कार्यों तथा केन्द्रीय स्थानों के अभाव में सामाजिक- आर्थिक दशाओं में परिवर्तन लाना असम्भव है। इसलिए सामाजिक- आर्थिक विकास के लाभ के वितरण हेतु संरचनात्मक विश्लेषण आवश्यक है। अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत सेवा केन्द्रों की कार्यात्मक अतिव्याप्तता एवं रिक्तता को जानने के लिए आधोलिखित सूत्र को आधार माना गया है।

$$R = \sqrt{\frac{T \times A}{\pi U}}$$

जहां,

R = वृत्त का अर्धव्यास

T = एक सेवा केन्द्र की कुल जनसंख्या

U = सभी सभी सेवा केन्द्रों की कुल जनसंख्या

A = अध्ययन क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल

उपरोक्त सूत्र की आधारभूत अवधारणा यह है कि कस्बे या सेवा केन्द्र द्वारा सेवित क्षेत्र की प्रकृति गोलाकार होती है। इसके आधार पर सेवा केन्द्रों के गोलाकार सेवा क्षेत्रों को आरेखित किया गया है। जो अधोलिखित पांच रूपों में अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत पाए जाते हैं।

1- एक सेवा केन्द्र द्वारा सेवित क्षेत्र

2- दो सेवा केन्द्र द्वारा सेवित क्षेत्र

3- दो से अधिक सेवा केन्द्रों द्वारा सेवित क्षेत्र या वहुसेवित सेवा क्षेत्र

4- असेवित क्षेत्र

(तालिका सं. 3.8)

कार्यात्मक रिक्तता एवं अतिव्याप्तता

क्र.सं.	सेवा क्षेत्र का प्रकार	सेवित क्षेत्र (वर्ग कि.मी. में)
1.	असेवित क्षेत्र	430.00 वर्ग कि.मी.
2.	एक सेवा केन्द्र द्वारा सेवित क्षेत्र	416.40 वर्ग कि.मी.
3.	दो सेवा केन्द्रों द्वारा सेवित क्षेत्र	96.80 वर्ग कि.मी.
4.	दो से अधिक सेवा केन्द्र द्वआरा सेवित क्षेत्र	3.20 वर्ग कि.मी.
	योग-	946.40 वर्ग कि.मी.

विभिन्न प्रकार के सेवा केन्द्रों के क्षेत्र मानचित्र (चित्र सं. 3.7) में दर्शाए गए हैं।

सेवा केन्द्रों एवं उनके द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों के मध्य सम्बन्ध की मात्रा और सेवा केन्द्रों के मध्य प्रतियोगात्मक प्रभाव की भी पुष्टि करते हैं। मानचित्र के परीक्षण से ज्ञात होता है कि बहुसेवित क्षेत्र जो अध्ययन क्षेत्र को अत्यधिक सुविधा प्रदान करने वाला क्षेत्र है केवल 0.34 प्रतिशत क्षेत्रफल में विस्तृत है। दो सेवा केन्द्रों के द्वारा सेवित क्षेत्रफल कुल अध्ययन क्षेत्र का 10.23 प्रतिशत है। इसके पश्चात सेवा केन्द्रों द्वारा सेवित वह क्षेत्र आता है जिसमें केवल एक ही सेवा केन्द्र की सुविधा प्राप्त है इसका क्षेत्रफल उपर्युक्त क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक है। इसके अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र का 43.99 प्रतिशत भाग आता है। इसके अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र का 45.44 प्रतिशत क्षेत्र पूर्णतः असेवित है। इससे यह दृष्टिगोचर होता है कि क्षेत्र में आवश्यकतानुसार सेवा केन्द्रों की कमी एवं वर्तमान केन्द्रों का असमान वितरण है। इस प्रकार की स्थिति देश के अन्य क्षेत्रों में भी देखने को मिलती है।

अतः निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत निवास करने वाली अधिकांश जनसंख्या जो कि अपनी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु समुचित सेवा केन्द्रों के अभाव में त्रस्त है, उसे सुख सुविधा प्रदान करने के लिए सेवा केन्द्रों के एक ऐसे पदानुक्रम का विकास किया जाए जिसमें छोटे, मध्यम एवं उच्च श्रेणी के सेवा केन्द्र क्षेत्रीय आवश्यकतानुरूप स्थित हो और स्थानिक जनता की आधारभूत आवश्यकता की पूर्ति करने में पूर्णतः समर्थ हों।

वृद्धिजनक केन्द्रों का प्रस्तावित पदानुक्रमिक प्रारूप (Proposed Hierarical System of Growth Foci)-

उपरोक्त वर्णित मानकों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दूरी, क्षेत्रफल एवं सेवित जनसंख्या या तो छोटे हैं या बड़े। इस प्रकार शासन द्वारा निर्धारित मानकों एवं क्षेत्र की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए सेवा केन्द्रों के विभिन्न क्रमों एवं उन पर निर्भर बस्तियों के मध्य अधिकतम दूरी क्रमशः 3, 5, 10, 16 तथा 30 कि.मी. को प्रदेश के वृद्धिजनक केन्द्रों हेतु पदानुक्रमिक प्रारूप में प्रस्तावित किया गया है।

तालिका सं. 3.9

क्र.सं.	पदानुक्रमिक प्रारूप	दूरी (कि.मी. में)
1.	केन्द्रीय गांव	3
2.	सेवा बिन्दु	5
3.	सेवा केन्द्र	10
4.	विकास बिन्दु	16
5.	विकास केन्द्र	30

TAHSIL ORAI
FUNCTIONAL GAPS AND OVERLAPS
N
KMS
UNSERVED AREA
SINGLE SERVED AREA
DOUBLE SERVED AREA
TRIPPLE SERVED AREA
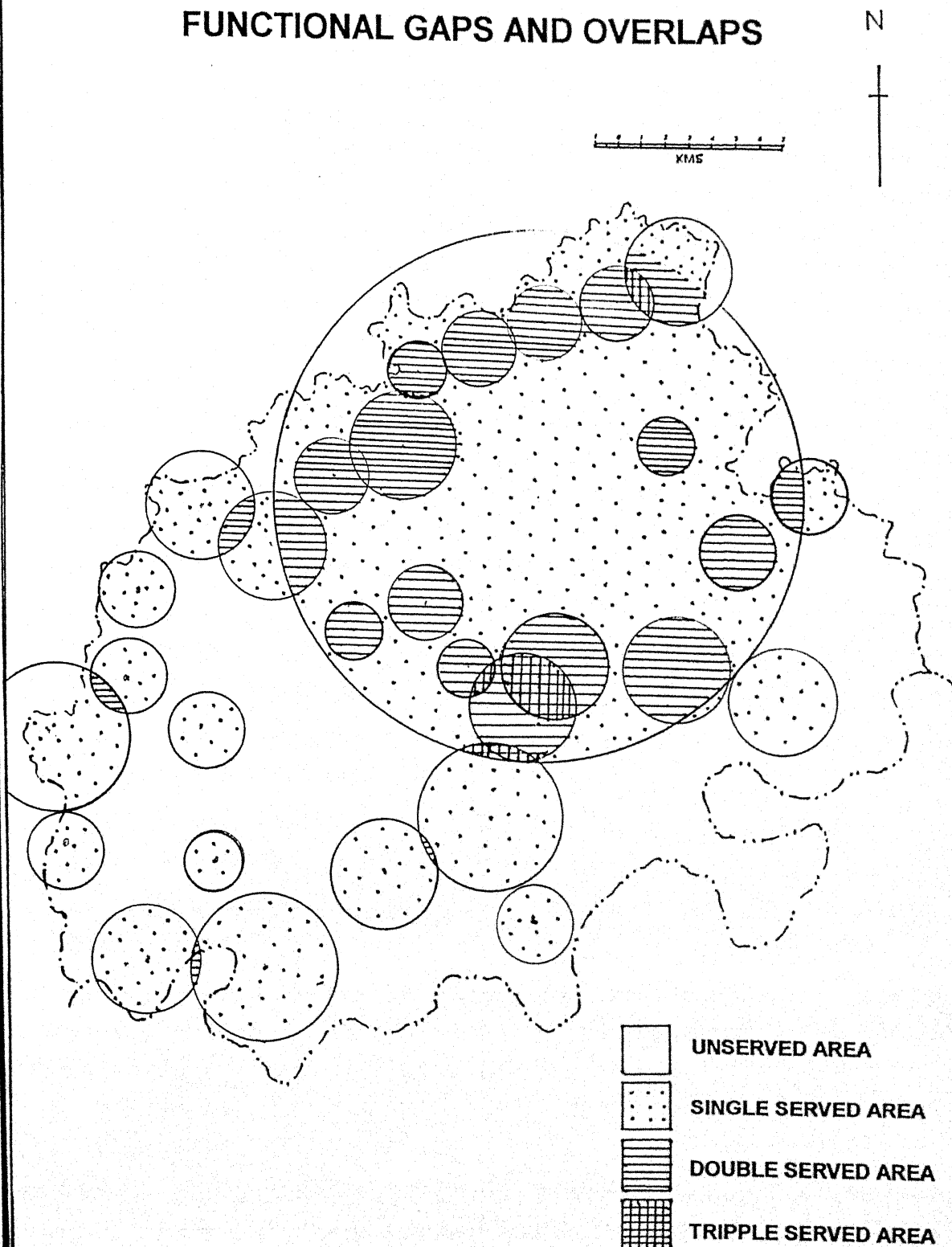
FIG. 3.7

इन प्रस्तावित केन्द्रों की अवस्थिति को चित्र सं. 3.8 में दर्शाया गया है।

केन्द्रीय गांव (Central Villages)-

वृद्धिजनक केन्द्रों के पदानुक्रमिक प्रारूप में केन्द्रीय गांव सबसे निम्न स्तरीय केन्द्र होते हैं जो कि ग्रामीण लोगों की आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु आवश्यक सेवाएं एवं सुविधाएं प्रदान करते हैं। ग्रामीणजन अपनी नियमित जरूरतों को पूरा करने हेतु इन केन्द्रीय गांवों में अधिकांशतः पहुंचते रहते हैं। यह तभी सम्भव है जब ये केन्द्र उनकी साधारण पहुंच के करीब हों। क्षेत्रीय अनुभवों से यह रहस्योद्घाटित होता है कि अध्ययन क्षेत्र आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से एक पिछड़ा क्षेत्र है तथा दक्षतापूर्ण आवागमन के साधनों का अभाव है। बेतवा नदी का तटवर्ती भाग अत्यधिक खण्डित है। ऐसी स्थिति में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचने में कठिनाई है। इसलिए 3 कि.मी. की क्षेत्रीय दूरी को सर्वाधिक उपयुक्त माना गया है। इतनी दूरी ग्रामीणजन आधे घंटे में पैदल चलकर आसानी से तय कर सकते हैं। यह दूरी राष्ट्रीय नीति का भी अनुसरण करती है जिसका उद्देश्य 3 कि.मी. के अर्धव्यास में एक जूनियर हाई स्कूल की सुविधा प्रदान करना है। इस प्रकार के केन्द्रों का चयन करने के लिए ३ कि.मी. के अर्धव्यास के वृत्त सभी वर्तमान सेवा केन्द्रों के चारों ओर खींचे गए हैं तथा उनके अंतिम चयन हेतु निम्नांकित सिद्धांतों को अपनाया गया है।

(1) वृत्तों के अधिव्यापन की स्थिति में जब कभी किसी वर्तमान केन्द्र के वास्तविक पूरक क्षेत्र का दो तिहाई क्षेत्र किसी अन्य एक अधिक महत्वपूर्ण केन्द्र को ढक लेता है तो इसे सेवा केन्द्र के रूप में चयनित नहीं किया जाएगा क्योंकि इस स्थिति में कम महत्वपूर्ण केन्द्र भविष्य में कार्यों की स्थिति के लिए क्षमतापूर्ण एवं जीवन योग्य नहीं रह पाएंगे। आगे इस क्षेत्र में किया गया व्यय बेकार हो जाएगा क्योंकि इसके द्वारा प्रतिपादित किए जाने वाले कार्य/ सेवाएं पहले से ही निकटतम अधिक महत्वपूर्ण केन्द्र पर उपलब्ध हैं।

(2) छोटे- छोटे बीच के रिक्त स्थानों जो कि एक नए केन्द्रीय गांव की स्थापना में अनुपयुक्त हैं, को अनदेखा कर दिया गया है और इनको निकटतम केन्द्रीय गांवों के साथ उनके उपलब्ध पूरक क्षेत्रों और भौतिक व्यवधानों को ध्यान में रखते हुए विभाजित कर दिया गया है।

(3) असेवित रिक्त क्षेत्र में एक नए केन्द्र को विकसित किया जाएगा जहां एक पूरक क्षेत्र के औसत भाग का 50 प्रतिशत से अधिक भाग असेवित रह गया है।

(4) भौतिक व्यवधानों जैसे- बिना पुल के जल धाराओं एवं क्षत- विक्षत क्षेत्र आदि पर उचित ध्यान केन्द्रित किया गया है।

प्रवेशगम्यता पर विशेष ध्यान रखते हुए वृत्तों के आधार पर प्रस्तावित केन्द्रों के पूरक क्षेत्रों को निर्धारित किया गया है।

पदानुक्रम प्रणाली में निकटतम स्तर पर कुल पांच सेवा क्षेत्र हैं जिनको कि नए केन्द्र के रूप में विकसित किया जाना है। अतः इन क्षेत्रों में 5 नई क्षमतापूर्ण बस्तियों जैसे इटवां जालौन, चकजगदेवपुर, अजनारा, खदान एवं बर्ध को केन्द्रीय गांवों के रूप में विकसित करने का प्रस्ताव है और उनके पूरक क्षेत्रों का विकास उपर्युक्त वर्णित आधारों पर किया जाएगा।

इस प्रकार अन्ततः 30 केन्द्रों का चयन केन्द्रीय गांव के रूप में विकसित करने हेतु किया गया है जो कि इन केन्द्रों से 3 कि.मी. की दूरी में रह रहे ग्रामीणजनों को आवश्यक सेवाएं उपलब्ध कराते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि ये केन्द्र स्वाभाविक रूप से उच्चतर स्तरीय सेवा केन्द्रों को भी

TAHSIL ORAI
PROPOSED GROWTH FOCI OF SERVICE CENTRES
N
KMS
AUNTA
RURRAADDU
KUKARGOAN
CHAKJAGDEOPUR
ETWANJALAUN
RAHIYA
AJNARA
HARDOIGUJAR
ORAI
KARMER
AKORHI
BARDH
BHUA
CHILLI
KUSMILIYA
KHARKA
AIT
SOMAI
NUNSAI
DAKORE
BANDHAULI
DHURAT
BINORA
JAISARIKALA
GURHA
KHADAN
MOHANA
SAIDNAGAR
KOTRA
SIKARI
KAHTA
GROWTH POLE
GROWTH POINT
SERVICE CENTRES
SERVICE POINT
CENTRAL VILLAGES
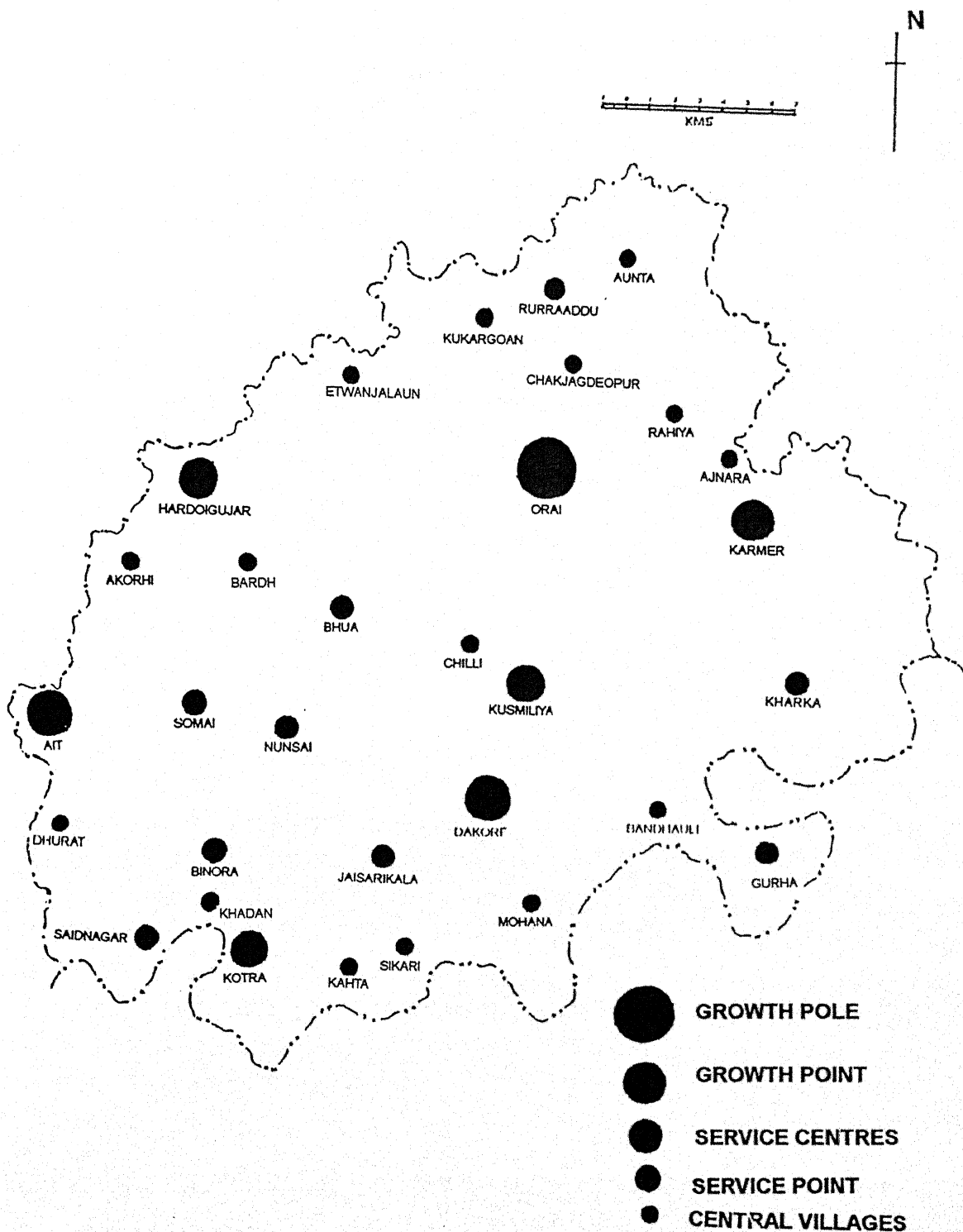
FIG. 3.8

समाहित करते हैं। ग्रामीणजन इन केन्द्रों पर 30 मिनट में पैदल ही पहुंच सकते हैं और दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भ्रमण कर सकते हैं। इस प्रकार ये केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों के सीधे सम्पर्क में होंगे और ये उनको आवश्यक सेवाएं एवं सुविधाएं उपलब्ध कराएंगे। ये केन्द्र औसतन 12,045 जनसंख्या को सेवाएं प्रदान करेंगे जो कि 81.55 वर्ग कि.मी. की दूरी में प्रकीर्णित औसतन 20 गांवों में निवास करती है।

वृद्धिजनक केन्द्रों की प्रस्तावित पदानुक्रमीय प्रणाली में केन्द्रीय गांवों में कम से कम संस्थाएं एवं सुविधाएं यथा- जूनियर हाई स्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, ग्रामीण बैंक, उपडाक घर, सहकारी समितियां और फुटकर आवर्ती बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, पशु चिकित्सालय, उर्वरक/ बीज/ कीटनाशक वितरण केन्द्र (प्राइवेट/ सरकारी) कुटीर उद्योग, मरम्मत और विदेशी कृषि यंत्रों को किराए पर उपलब्धकराने वाले केन्द्र जैसे न्यूनतम सेवा संस्थान व सुविधाएं होंगी। ये केन्द्रीय गांव सभी मौसमों में सेवाएं उपलब्ध कराएंगे तथा यह प्राथमिकता के आधार पर डामरीकृत मार्गों पर स्थित होंगे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रत्येक केन्द्रीय गांव में ग्रामीण जनता की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्याप्त सुविधाएं होंगी।

तालिका संख्या 3.10

प्रस्तावित वृद्धिजनक केन्द्र प्रणाली के अन्तर्गत सेवित क्षेत्र, जनसंख्या एवं गांवों की संख्या

क्र.सं.	पदानुक्रमीय वर्ग	सेवित क्षेत्रफल	सेवित जनसंख्या	गांवों की संख्या
1.	वृद्धि केन्द्र	410.00 वर्ग कि.मी.	1,70,800	90
2.	वृद्धि विन्दु	120.24 वर्ग कि.मी.	36,000	14
3.	सेवा केन्द्र	160.16 वर्ग कि.मी.	20,500	16
4.	सेवा बिन्दु	134.45 वर्ग कि.मी.	15,000	17
5.	केन्द्रीय गांव	81.55 वर्ग कि.मी.	12,045	20

सेवा बिन्दु (Service Point)-

वृद्धिजनक केन्द्रों की प्रस्तावित पदानुक्रमीय प्रणाली में द्वितीय स्तर के केन्द्रों को सेवा विन्दु का नाम दिया गया है। ये सेवाविन्दु केन्द्रीय गांवों से वड़े एवं कार्यों की दृष्टि से अधिक समर्थ होते हैं। 5 कि.मी. के अर्धव्यास पर ये केन्द्र स्थित होते हैं तथा 5 कि.मी. की दूरी पर निवास करने वाली जनता को विविध प्रकार की सेवाएं प्रदान करते हैं। अध्ययन क्षेत्र में कुल 14 सेवा विन्दु प्रस्तावित किए गए हैं। वे सेवा बिन्दु जिनका अधिकांश भूभाग यथा 50 प्रतिशत से अधिक पूरक क्षेत्र अन्य श्रेणी के सेवा क्षेत्रों में आते हैं कि गणना नहीं की गई है। इसके अन्तर्गत कुल प्रस्तावित सेवा बिन्दुओं में से 10 सेवा विन्दु आते हैं। इनके अन्तर्गत उच्चतर पदानुक्रमीय श्रेणी के केन्द्र समाहित होते हैं। 134.45 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में विसरित औसतन 17 गांवों में निवास करने वाली औसतन 15,000 जनसंख्या को ये केन्द्र सेवा प्रदान करेंगे। इन सेवा केन्द्रों में इंटरमीडिएट, हाई स्कूल, पुलिस स्टेशन, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उप डाकघर, पशु औषधालय, कृत्रिम गर्भाधान सुविधा से परिपूर्ण पशु औषधालय खाद, वीज एवं कीटनाशक दवाओं के गोदाम, कृषि सेवा उप केन्द्र, नियमित बस स्टैण्ड, व्यापारिक बैंक, नियमित खुदरा वाजार, ग्रामीण उद्योग आदि जैसी सुविधाएं उपलब्ध होंगी। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के प्रत्येक केन्द्र में एक बहुउद्देशीय सहकारी समिति की एक शाखा होगी जो कि आधुनिक कृषि यंत्रों व दवा छिड़कने के उपकरणों

को कम किराए पर छोटे किसानों को जोतने- बोने के लिए प्रदान करेगी। ऐसे केन्द्रों पर कोल्ड स्टोरेज की सुविधाएं होंगी। ट्रैक्टर मरम्मत एवं आटो स्पेयर पार्ट्स, साइकिल विक्री केन्द्र, दुग्ध उत्पाद तथा दुग्ध निर्मित वस्तुएं प्रदान की जाएंगी। इसके अलावा यहां पर किसानों के प्रशिक्षण एवं उचित सलाह की सुविधा की व्यवस्था भी होगी ताकि वे अपने खेतों में नई तकनीक का प्रयोग करके अधिक उपज ले सकें। आमोद- प्रमोद की सुविधाएं तथा सामुदायिक सुविधाओं की भी इन केन्द्रों में व्यवस्था होगी।

सेवा केन्द्र (Service Centres)-

वृद्धिजनक केन्द्रों की प्रस्तावित पदानुक्रमीय प्रणाली में सेवा विन्दुओं के उपरांत सेवा केन्द्र आते हैं। जो कि ग्रागर समुदायों की स्थिति में ग्रामीण व्यवस्था में सूक्ष्मतर मापक पर उपस्थित शहरीय सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं (मिश्रा, 1974)। इन्हीं केन्द्रों में तृतीयक स्तर के कार्यों जैसे- विपणन साख, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन इत्यादि भी विशेषज्ञता होनी चाहिए, जो कि ग्रामीण जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप हों (मिश्रा, 1974)। कुछ केन्द्रों में बड़े स्तर की विपणन व भण्डारण सुविधाओं के साथ- साथ कृषि उत्पादों के प्राथमिक प्रसंस्करण करने की सुविधाएं भी होनी चाहिए। इन केन्द्रों में नवाचरों के विसरण की आधारभूत अवस्थापनाएं तथा लघु प्रसंस्करण और विनिर्माण उद्योग भी होने चाहिए। इन स्थानों पर कृषि उत्पादों और कृषि यंत्रों के रखरखावकी कार्यशालाएं भी स्थित होनी चाहिए (सिंह 1979)। इस प्रकार ये सेवा केन्द्र ऐसे तरीके उपलब्ध कराएंगे जिससे कि उच्च स्तरीय केन्द्रों से विसरित नवीन आविष्कार अध्ययन क्षेत्र के छोटे स्तर के केन्द्रों और सुदूरवर्ती गांवों में सुविधापूर्वक पहुंच सकें।

वर्तमान अध्ययन के संदर्भ में सेवा केन्द्रों द्वारा उनके चारों तरफ 10 कि.मी. के क्षेत्र को सेवाएं प्रदान करने का प्रस्ताव है। इस उद्देश्य से सभी द्वितीयक एवं प्राथमिक स्तर के केन्द्रीय स्थानों के चारों ओर 10 कि.मी. के अर्धव्यास वाले वृत्त खींचे गए हैं और पूर्व में प्रयुक्त विधि तंत्रों के आधार पर इनके सम्भावित पूरक क्षेत्रों का चयन किया गया है। ऐसा करते समय यह पाया गया कि तृतीयक स्तर के सभी चारों सेवाकेन्द्रों जैसे- कोटरा, करमेर, कुसमिलिया एवं हरदोई गूजर भविष्य में पूंजी लगाने हेतु सक्षम और लाभदायक हैं। यह भी पाया गया कि इस अध्ययन क्षेत्र में केवल एक स्थानिक रिक्तता है। इस रिक्त क्षेत्र में अत्यधिक क्षमतापूर्ण तृतीय स्तर के सेवा केन्द्र सोमई को विकसित करने का प्रस्ताव है। इस प्रकार क्षेत्र में अंतिम रूप से कुल 5 सेवा केन्द्र चयनित किए गए हैं जो कि 160.16 वर्ग कि.मी. में फैले औसतन 16 गांवों की औसतन 20,500 जनसंख्या को सेवाएं प्रदान करेंगे। इन सेवा केन्द्रों में इंटरमीडिएट कालेज, वालिका इंटर मीडिएट कालेज, शैय्याओं की सुविधा से परिपूर्ण प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, व्यवसायिक वैंक, उप डाक घर, तार घर एवं दूर संचार विभाग, विपणन समिति, उर्वरक/ बीज/ कीटनाशक उप भण्डार, कृषि सेवा केन्द्र, पशु चिकित्सालय, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, पुलिस स्टेशन, थोक एवं फुटकर दुकानें एवं लघु तथा मध्यम आकार के उद्योगों की स्थापनाएं की जाएंगी।

वृद्धि विन्दु (Growth Points)-

सेवा केन्द्रों की प्रस्तावित पदानुक्रमीय प्रणाली में वृद्धिजनक केन्द्रों की अगली कड़ी में वृद्धि विन्दु आते हैं। किसी क्षेत्र के विकास के लिए तैयार किए गए प्रारूप में यह विन्दु वृद्धि केन्द्रों की पूर्ववर्ती एवं महत्वपूर्ण श्रृंखला के रूप में कार्य करते हैं क्योंकि ये विशेषतया पिछड़े या विकास अवरुद्ध क्षेत्र के प्रवेश विन्दु हैं जिनके माध्यम से किसी क्षेत्र में गतिशीलता एवं विकास भावना को प्रविष्ट कराया जा सकता है (रिचर्डसन, 1969)। ये महत्वपूर्ण वाजारीय केन्द्र हैं जिनमें तुलनात्मक दृष्टि से नाभिकीय प्रवेशगम्यता की दृष्टि उच्चतर स्तरीय सुविधाएं हैं और यहां पर

स्थानीय उपलब्ध संसाधनों पर आधारित स्वदेशोत्पन्न उद्योगों के लिए उत्कृष्ट अवस्थाएं हैं। ये शहरीय एवं ग्रामीण वातावरण के बीच सेतु का काम करते हैं और कृषि और ग्रामीण विकास के बड़े क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभातेहैं (सुन्दरम् 1972)।

एक विकास केन्द्रकी पहचान एक लघु स्तरीय शहरी केन्द्र, जिसका कि स्वयं का आर्थिक एवं सामाजिक आधार हो और जिसके अन्दर एक उचित आकार की ग्रामीण जनसंख्या जो कि बड़े शहरों की झुग्गी झोपड़ियों में रहती हों, उनको समाहित करने की क्षमता हो, के रूप में की जाती है (मिश्रा, 1974)। यह केवल सामान्य सेवाओं को ही सम्पादित नहीं करेंगे बल्कि ये उन अन्य क्रियाओं का भी सम्पादन करेंगे जो कि आविष्कार सह- उत्पादक चरित्र की होंगी और सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करेंगे (सुन्दरम् 1977)। वृद्धि विन्दु उप- प्रादेशिक नवप्रवर्तनीय एवं उत्प्रेरक नगरीय केन्द्र होंगे। यह अन्य वृद्धि विन्दुओं से सभी मौसमों में प्रवेशगम्य राजमार्गो व स्थानीय सड़क व्यवस्था द्वारा सेवा केन्द्रों से सम्बद्ध होंगे (मिश्रा, 1978)।

इस प्रकार वृद्धि विन्दुओं के लक्षणों से स्पष्ट है कि ये केन्द्र विविधतापूर्ण और विभिन्न प्रकार की सेवाओं एवं सुविधाओं से युक्त होंगे। ये विकसित बाजारीय केन्द्र होंगे जोकि अत्यधिक उच्च स्तरीय व्यवसायिक, आर्थिक, शैक्षिक, सामाजिक और प्रशासनिक सेवाएं एवं सुविधाएं प्रदान करेंगे। उत्पादकता, कृषि एवं दुग्ध उत्पादों का संचालन एवं प्रसंस्करण सम्बन्धी कार्य इन केन्द्रों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य होगा। जहां तक सेवा विशेषज्ञता का प्रश्न है कृषि क्षेत्र में अवस्थित एक वृद्धि विन्दु में कृषि पर आधारित उद्योग होंगे। जानसन के मतानुसार वृद्धि विन्दु प्रवल रूप से कृषि-उद्योगों पर आधारित लक्षणों वाला होना चाहिए और इसे उन सब अवस्थापनाओं की सुविधाओं से युक्त होना चाहिए जो एक औद्योगिक वातावरण को उत्पन्न करने हेतु आवश्यक है (जानसन, 1970)। परन्तु क्षेत्र में उपलब्ध वृद्धिजनक केन्द्रों की पदानुक्रमीय प्रणाली में यह कड़ी अनुपस्थित है। वृद्धि विन्दुओं के बीच की दूरी उपभोक्ता की स्थानिक पसंदगी के आधार पर 16 कि.मी. प्रस्तावित है। इस आधार पर इस क्षेत्र में ऐसे दो विन्दु होने चाहिए। उरई पदानुक्रमीय प्रणाली का उच्चतम श्रेणी का केन्द्र होने के कारण अत्यधिक उच्च कार्यात्मक मात्रा के साथ पूर्व से ही वृद्धि विन्दु के रूप में कार्यों को सम्पादित कर रहा है और यह इस तहसील के उत्तरी भाग में अवस्थित होने के कारण अधिकांशतः उत्तरी भाग में निवास करने वाले लोगों को उच्च कोटि की सेवाएं व सुविधाएं प्रदान कर रहा है परन्तु इस क्षेत्र के पश्चिमी दक्षिणी भाग में इस प्रकार का कोई केन्द्र न होने के कारण एक वृहद स्थानिक रिक्तता व्याप्त है जिसे इस स्तर की सुविधाओं हेतु या तो उरई पर पूर्ण रूप से निर्भर रहना पड़ता है अथवा इस प्रकार के किसी वाहरी केन्द्र पर। इस रिक्तता को समाप्त करने के लिए इस क्षेत्र में वृद्धि विन्दु का प्रस्ताव वांछित है। इसके लिए क्षेत्र में इस प्रकार के वृद्धि विन्दु के चयन हेतु वर्तमान सेवा केन्द्रों में से सर्वाधिक क्षमतापूर्ण केन्द्र को ध्यान में रखना होगा। इस प्रकार के केन्द्रों में एट की जनसंख्या सर्वाधिक है और यह केन्द्रीयता सूचकांक की दृष्टि से सर्वाधिक महत्व का है परन्तु सम्पूर्ण क्षेत्र के संदर्भ में इसकी सीमान्त स्थिति होने के कारण यह विकास को प्रोत्साहित करने वाले नवाचरों के विसरण हेतु सक्षम नहीं है अतएव यह केन्द्र, इंस क्षेत्र की जनता की आवश्यकताओं को दक्षतापूर्ण ढंग से पूरा कर सकने में असमर्थ है। इसलिए यह एक दक्ष वृद्धि विन्दु के मापदंडों पर खरा नहीं उतरता है। जवकि दूसरा सेवा केन्द्र डकोर यद्यपि की जनसंख्या की दृष्टि से एट की तुलना में छोटा है परन्तु उच्चतर अवस्थितिक दशाओं एवं मूल्यांकन की दृष्टि से अत्यधिक महत्व का है। यह पक्की सड़क, जो कि इसे एट एवं उरई से जोड़ती है, पर स्थित है। कुल मिलाकर एक विकासखण्ड मुख्यालय होने के कारण यहां पर भविष्य के विकास हेतु अच्छी संख्या में अवस्थापना सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध हैं। अतः यह स्थान सर्वाधिक क्षमतापूर्ण प्रतीत होता है। इसलिए इसका चयन वृद्धि विन्दु के रूप में किया गया है। जिससे कि छूटी हुई कड़ी के जोड़ने का कार्य सम्पादित हो सके और विकास प्रोत्साहनों एवं नवाचरों को,

जो कि क्षेत्रीय विकास को गति प्रदान करने में सहायक हैं, का विसरण सुनिश्चित हो सकता है। यह वृद्धि विन्दु औसतन 14 गांवों और औसतन 36,000 जनसंख्या, जो कि 120.24 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में बसी हैं, को सेवाएं उपलब्ध करा सके। वृद्धि विन्दु में थोक एवं फुटकर दुकानों एवं शीत भण्डार गृह, महाविद्यालय, आई.टी.आई., लघु उद्योग क्षेत्र, डाकघर (टेलीफोन एक्सचेंज के साथ), किसान प्रशिक्षण केन्द्र, कोतवाली, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, भूमि विकास वैंक, अन्य दूसरे वाणिज्यिक बैंक, पशु चिकित्सालय, वीज प्रसंस्करण इकाई, सरकारी एवं व्यक्तिगत अभिकरणों, जो कि कृषिगत समावेशों जैसे- उर्वरकों, कीटनाशकों, कृषि यंत्रों एवं वाहनों के मरम्मत की दुकानों का संचारन करती हैं, होना चाहिए। इन केन्द्रों का प्राथमिक कार्य विकासोत्पादक होगा। आगे इन विकास विन्दुओं में दुग्ध सहकारी समितियां वड़ी संख्या में होनी चाहिए। लघु स्तरीय उद्योग, मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला, ट्रैक्टरों की मरम्मत हेतु उच्च स्तर की सुविधाएं, प्रेशर, लिफ्ट पम्प और कृषि यंत्र तथा सिनेमा हाल होने चाहिए।

इसके साथ- साथ प्रत्येक वृद्धि विन्दु में एक नियोजन इकाई, जिसका कार्य वृद्धि विन्दु एवं क्षेत्र, जिसको कि यह सेवाएं प्रदान करता है, के विकास हेतु विकास संयोजनाएं तैयार करना भी होना चाहिए। ये संयोजनाएं समाकलित ग्रामीण- शहरीय विकास योजनाएं होंगी और ये हमारी वर्तमान विकास नीति को स्थानीय और उपप्रादेशिक स्तर पर विना प्रभाव डाले पुनर्स्थापित करेंगी (मिश्रा, 1974)।

वृद्धि केन्द्र (Growth Centres)-

अध्ययन क्षेत्र में वृद्धिजनक केन्द्रों की प्रस्तावित पदानुक्रमीय प्रणाली के शीर्ष पर वृद्धि केन्द्र आता है। प्राथमिक रूप में यह एक मजवूत औद्योगिक आधार वाला केन्द्र होता है जो कि लोगों को रोजगार प्रदान करता है (सिंह 1979)। इसमें उच्चीकृत नाभिक प्रवेशगम्यता और औद्योगिक अवस्थिति के लिए आवश्यक अवस्थापनाओं के अस्तित्व को केन्द्रीय स्थान पदानुक्रम में कार्यात्मक स्तर की अपेक्षा अधिक अधिमान प्रदान किया जाता है (सिंह, 1979)। वृद्धि केन्द्र ऐसे स्थान होंगे जो कि स्वयं में उच्च स्तर के कार्यों को समाहित करके निरंतरता वनाए रखते हुए आगे विकास के अवसर उत्पन्न करेंगे (सेन, 1971) और वे पढ़े, लिखे नोजवानों को वाहर जाने से रोकने में सक्षम होंगे। वे आवश्यक व्यवसायियों एवं नौकरी- पेशा के लोगों को उनकी जरूरतें पूरा करने में सक्षम होने के कारण आकर्षित करेंगे और उनकी आशाओं के अनुरूप उपलब्धियों की सिद्धि में सहायक होंगे (प्रेस्टन, 1972)। मिश्रा के मतानुसार एक वृद्धि केन्द्र में कम से कम 50,000 की जनसंख्या होनी चाहिए और इसे मजवूत निर्माण आधारों के कारण लगभग 1,000,000 से भी अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करने वाला होना चाहिए (मिश्रा, 1974)। साथ ही एक वृद्धि केन्द्र को मजबूत विनिर्माण औद्योगिक आधार वाला भी होना चाहिए।

आगे उनका कहना है कि इसका कार्यात्मक ढांचा ऐसा होना चाहिए जिसमें आंतरिक एवं वाह्य दोनों ही अर्थव्यवस्थाएं अधिकतम क्षमता तक कार्यशील हो सकें (मिश्रा, 1974)। इन आधारों पर उरई जो कि इस क्षेत्र का जिला एवं तहसील मुख्यालय है, अच्छी प्रकार से वृद्धि केन्द्र होने की क्षमता रखता है। यह अपनी मूल वाणिज्यिक, वित्तीय, सामाजिक और प्रशासनिक अवस्थापनाओं के कारण यह सम्पूर्ण क्षेत्र के लोगों को आकर्षित करता है वल्कि यह जिले के अन्य भागों के लोगों को भी आकर्षित करता है। यह कुछ हद तक न केवल हमीरपुर एवं झांसी जनपदों के क्षेत्रों अपितु मध्यप्रदेश राज्य में अवस्थित कुछ क्षेत्रों को भी अपनी विस्तृत एवं गुणात्मक स्तर की विविध सेवाओं के कारण आकर्षित करता है। आगे यह केन्द्र पर्याप्त रूप से क्षमतापूर्ण एवं दूसरे उच्च स्तरीय कार्यों, जो कि भविष्य में यहां स्थापित किए जाएंगे, को पूर्ण करने में सक्षम है।

उरई में पूर्ण विकसित एवं विविध प्रकार की अवस्थापनात्मक सुविधाएं एवं सेवाएं उपलब्ध हैं और इसे औद्योगिक क्षेत्र घोषित कर दिया गया है। इस क्षेत्र में कुछ विशिष्ट उद्योग लगाए जा रहे हैं। सुविधाओं से परिपूर्ण जब इस केन्द्र का औद्योगिक विस्तार अपनी चरण सीमा पर होगा तब यह केन्द्र न केवल अपने क्षेत्र के पूर्ण तैयार, अर्द्ध तैयार व कृषि उत्पादों की खपत में समर्थ होगा अपितु सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र के कच्चे संसाधनों का प्रमुख आयातक केन्द्र होगा। वृद्धि केन्द्र में स्थानीय रूप से उपलब्ध सामानों के बड़े संग्रहण, भण्डारण और प्रसंस्करण की सुविधा उपलब्ध होगी। यह इसके विकास के लिए आवश्यक अधिकांश कृषि समावेशों को पैदा करेंगे। इनमें पॉलीटेक्नीक संस्थान, महिला महाविद्यालय, मुख्य डाकघर और दूरभाष केन्द्र, भूमि विकास बैंक, अन्य वाणिज्यिक बैंक जिसमें विशेष सुविधाएं उपलब्ध हैं। मेनयार्ड के साथ नियंत्रित थोक बाजार, एग्रोनॉमिक रिसर्च सेन्टर, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, बड़े एवं मध्यम आकार के उद्योग, सिविल जज कोर्ट और ग्रामीण एवं शहरी जनता के उपयोग में आने वाले समस्त साधन होंगे।

तालिका संख्या 3.11

वृद्धिजनक केन्द्रों की प्रस्तावित प्रणाली

(अ) **वृद्धि केन्द्र**
1. उरई

(ब) **वृद्धि विन्दु**
2. डकोर
3. एट

(स) **सेवा केन्द्र**
4. कोटरा
5. करमेर
6. कुसमिलिया
7. हरदोई गूजर

(द)- **सेवा विन्दु**
8. सोमई
9. सैदनगर
10. खरका
11. रूरा अड्डू
12. भुआ
13. नुनसाई
14. गुढ़ा
15. जैसारीकला
16. बिनौरा

(य) **केन्द्रीय गांव**
17. कुकरगांव
18. चिल्ली
19. अकोही
20. घुरट
21. इटवां जालौन
22. चकजगदेवसर
23. राहिया

24. अजनारा
25. खदान
26. औंता
27. वर्ध
28. सिकरी
29. कहटा
30. बन्धौली

नीतिगत कार्य एवं उनका औसत प्रभाव क्षेत्र (Policy Function and Thier Average Range)-

कार्यात्मक पुनर्गठन के लिए केवल नीतिगत कार्य- 'वे कार्य हैं, जो पूर्ण अथवा आंशिक रूप से सरकारी नियंत्रण में हों।' यहां पर केवल उन्हीं कार्यों पर विचार किया गया है। यह भली प्रकार ज्ञात है कि अनीतिगत कार्य अक्सर उन्हीं स्थानों पर संघनित होते हैं, जहां पर कि नीतिगत कार्यों का एक ही समूह (Set) उपलब्ध' कराया गया हो। इन रिक्तताओं के सुगमतापूर्वक पुनर्गठन हेतु विभिन्न नीतिगत कार्यों के प्रभाव क्षेत्र की गणना निम्नलिखित सूत्र की सहायता से की गई हैं (दुवे, 1979)।

$$X \sqrt{A/N \times 2.598}$$

जहां,

X = कार्यों का औसत प्रभाव क्षेत्र

A = क्षेत्र की सम्पूर्ण क्षेत्रफल

N = कार्ययुक्त बस्तियों की संख्या

कार्यों के प्रस्तावीकरण में अपनाए गए मापदंड (Criteria Adeopted for proposing the functions)-

जैसा कि पूर्व में ही वर्णित किया जा चुका है कि नियोजन के मुख्य उद्देश्यों में से एक मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय का प्राविधान, आर्थिक प्राप्तियों का समान वितरण और सामाजिक आर्थिक सुविधाओं का इस प्रकार वितरण जिससे कि वे आसानी से ग्रामीणों में भी पहुंच में हों और इस प्रकार उपलब्ध असंतुलन को प्रत्येक वृद्धि जनक केन्द्रों पर अधिकतम सेवाएं उपलब्ध कराकर न्यूनतम स्तर तक लाना है। इस प्रकार भविष्य के लिए प्रस्ताव तैयार करते समय निम्नांकित विन्दुओं को ध्यान में रखा गया है।

(1) विभिन्न कार्यों और सुविधाओं का उपलब्ध औसत प्रभाव क्षेत्र,
(2) राज्यीय एवं राष्ट्रीय नियम, तथा
(3) व्यक्तिगत निरीक्षण पर आधारित स्थानीय आवश्यकताएं।

उपर्युक्त वर्णित विन्दुओं को ध्यान में रखते हुए यह प्रस्तावित किया गया हैं कि 3 कि.मी. प्रभाव क्षेत्र वाले कार्य केन्द्रीय गांवों में हों और 5 कि.मी. प्रभाव क्षेत्र वाले कार्य सेवा विन्दुओं पर हों। 5.1 से लेकर 10 कि.मी. औसत प्रभाव क्षेत्र वाले कार्यों को सेवा केन्द्रों पर सम्पादित होना चाहिए जबकि 10.1 से 16 कि.मी. वाले कार्यों को वृद्धि विन्दु और इससे ऊपर वाले कार्यों को वृद्धि केन्द्र में प्रस्तावित किया गया है। इन नियमों के आधार पर एक प्रतिरूप भी वनाया गया है (चित्र सं. 3.9)।

उपर्युक्त वर्णित विचारों के अतिरिक्त प्रत्येक प्रस्ताव को वनाते समय निम्नलिखित वातों क

PROPOSED FUNCTIONAL ORGANISATION OF GROWTH FOCI

GROWTH FOCI SERVICE	CENTRAL VILLAGE	SERVICE POINT	SERVICE CENTRE	GROWTH POINT	GROWTH CENTRE
EDUCATION	JUNIOR HIGH SCHOOL	HIGH SCHOOL/ INTERMEDIATE COLLAGE.	DIBLS'INTER COLLEGE WOMEN CRAFT SCHOOL	DEGREE COLLEGE FARMER TRAINING CENTRE I.T.I.	P.G. COLLEGE GIRL'S DEGREE COLLEGE POLYTECNNIC INSTITUTE
HEALTH	SUB- HEALTH CENTRE	ADDITIONAL P.H.C.	P.H.C. WITH BEDS FACILITIES	COMMUNETY HEALTH CENTRE	SUB- DIVISIONAL HEALTH CENTRE
COMMUNICATION	BRANCH POST OFFICE	SUB- POST OFFICE	SUB- POST & TELEGRAPH OFFICE TELEPHONE EXCHANGE	LOWER SELECTION GRADE POST & TELEGRAPH TELEPHONE EXCHANGE	HEAD P & T.O. S.T.D. TELEPHONE EXCHANGE
ADMINISTRATION	RURAL DEVELOPMENT OFFICE H.Q. POLICE OUT POST	POLICE STATION	---	BLOCK HEADQUARTERS KOTWALI	TAHSIL HEADQUARTERS
CREDIT FINANCE & BANKING	CO-OP CREDIT SOCIETY RURAL BANK	COMMERCIAL BANK	COMMERCIAL BANK	LAND DEVELOPMENT BANK COMMERCIAL BANKS	ASSEMBLAGE OF BANKS WITH SPECIALIZED FACILITIES
MARKETING	RETAIL REGULATED PERIODIC MARKET	RETAIL REGULATED MARKET	MARKETING SOCIETY	WHOLE SALE REGULATED MARKET WITH SUB- YARD	WHOLE SALE REGULATED MARKET WITH MAIN- YARD WARE- HOUSE
EXTENSION	FERT/ SEED/PEST DISTRIBUTION CENTRE V.E.T. DISPENSARY AGRO- SERVICE CENTRE	FERT/SEED/PEST. GODOWN AGRO-SERVICE SUB STATION VET. DISPENSARY WITH ARTIFICIAL INSEMINATION FACILITY	FERT/SEED/PEST SUB-DEPOT AGRO- SERVICE STATION VET. HOSPITAL	FERT/SEED/PEST. DEPOT SEED PROCESSING UNIT COLD STORAGE	WARE- HOUSE AGRONOMIC RESEARCH CENTRE

FIG. 3.9

भी ध्यान में रखा गया है।

(क) विशिष्ट कार्यों हेतु चयनित केन्द्र स्वयं को जीवित रखने में सक्षम हों।

(ख) चयनित केन्द्र में नवीनतम अवस्थित कार्यों के लाभ चारों ओर प्रकीर्णित एवं उसके ऊपर आश्रित बस्तियों में पहुंच सकें (सेन, 1972)।

उपर्युक्त वर्णित मापदंडों के आधार पर विभिन्न कार्यों को आगे के अध्यायों में नियोजन के विभिन्न पक्षों का वर्णन करते हुए विविध पदानुक्रमिक स्तरों पर प्रत्येक पांच वर्षों के दो चरणों में प्रस्तावित किया गया है।

REFERENCES

1. Allen, R.G.D., Mathematical Analysis for Economics Macmillan & Co. 1956, PP-401-408.

2. August Losch, 1954; The Economics of Location Translated by W.F. Stelper, Yale University Press.

3. Aziz. A., 'The Economy of Primary Production in Mew at', An Analysis of Spatial Patterns, Unpublished M. Phil. Dissertation, Centre for the Study of Regional Development, J.N.U., New Delhi, 1974, PP- 135- 144.

4. Bansal, S.C., Town Country Relationship in Shahar- City Region, A Study in Interdependent Problems, Vol. 6, 1969, PP- 1- 18.

5. Berry, B.J.L. Cities as Systems with in System of Cities, Papers of Regional Science Association, 1964, PP- 147- 64

6. Berry, B.J.L., et al (eds), Spatial Analysis : A Reader in Statistical Geography, Engleweed Cliffs; N.J. Prentice Hall, 1968.

7. Berry, B.J.L. & Garrission, W.L., A Note on the Central Place Theory and Range of a Good Economic Geopraphy, 1958, PP- 304- 11.

8. Bhatt, L.S. Et al. 1976, Micro- Level Planning : A Case Study of Karnal Area Haryana, India, K.B. Publications New Delhi, 1976, P- 5.

9. Boudville, J.R., Problem of Regional Econimic Planning Edinbury University Press, Edinbury, 1966.

10. Bracy, S.E., Towns and Rural Service (Entries- An Index of Centrality with Special refernce to somerest, Transaction of the Institute of British Geog, 1953, P- 95- 105.

11. Brush, J.E., The Hierarchy of the Central Place in South- Western, Geographical Review- 43, 1953, Pp- 414- 16

12. Carruthers, W.I., Service Centres in Greater London Town Planning Review- 33, 1962, P- 531.

13. Carol. H., The Hierarchy of Central Functions with in the city, Annals of the Association of American Geographers- 50, 1960, PP- 419- 439.

14. Christaller, W. 1933, Central Places in Southern Germany, Translated by C.W. Baskin, Engleweed cliffs, New Jersey, 1966.

15. Clark, P.D., and Evance, F.c., Distance to Nearest Neighbour as a Measure of Spatial Retation ship in population Econlogy 1954.

16. Dickinson, R.E., Distribution and Functions of Smaller Urban Settlements of East Angils Geog, Vol. 17, 1932, PP- 19- 31.

17. Dubey, J.P., 1979, Growth Centres of Jhansi, Laltipur, Jalaun Region, Town and Country Deptt., Lucknow, (U.P.) PP- 1- 3.

18. Falke Stem, Central Place System and Spatial interaction in Jucabsen, 21, International Geographical Cengress Collected Papers, 1968, P- 57.

19. Gunawardena, K.A., Service Centres in South Ceylon, University of Combridge, Ph.d. Thesis, 1964.

20. Haggett, P., Location Analysis in Human Geography : Edward Arnald Ltd., London, 1966, P- 101.

21. Jaiswal, S.N.P., Hierarical Grading of Service Centres of Eastern Part of Ganga- Yamuna Doab and their Role in Regional Planning in Singh R.L. (edit.) Urban Geography in Developing Countries, '1973 PP- 327- 333.

22. Jaiswal, S.N.P., Hierarical Arrangement of Service Centres of Bardwan Distt. According to the level of potentiality, Geographical Review of India- 40, 1978.

23. Jefferson, M., The Law of Primate city, Geographical Review, vol. 29, 1939, PP- 226- 232.

24. Johnson, E.A.J., 1970- The Organization of Space in Developing Countries, Harvard University, Press.

25. Joshi, S.C. Functional Hierarchy of Urban Settlements, Kuman Studies, 1968, PP- 103- 115.

26. Kar, N.R., Urban Hierarchy and Central Functions around Calcutta in Lower West Bengal India and their Significance Proceedings of the I.G.U. Symposium in urban, Geography Londan, 1960, PP- 253- 274.

27. Khan, S.A., Consumer Special Behaviour in a Backward Economy, The Deccan Geographers 1990, Vol XXVIII No. 2- 3, P- 645.

28. Khan, W., Extention Lecture on Integrated Rural Development, Hyderabad, N.I.C.D. Oct. 1977, P- 2.

29. King, L.J., The Functional Role of Small Towns in Centrabury area, Proceedings of the Third North, 1962, PP- 139- 149.

30. King, L.J., A Quantitative Expression of the pattern of Urban Settlement in Selected Areas of the united states,Tijdschrist Voor Economics on Social Geographic,1962,PP. 1-7.

31. A Multivariate Analysis of the Spacing of Urban Settlements in the United states, A.A.A.G., 51, 1961, PP- 222- 33, Thomas E.N. Towards on Expanded Central Place Model, G.R. 51, 1961, PP- 400- 411.

32. Hirschman, A.O. The Strategy of Economic Development New Haven, 1969.

33. Lal, R.S. Dighwara, A. Urban Service Centres in Lower Ganga- Ghaghra Doab, The National Geopgraphi cal Journel of India Vol. 7, 1961, PP- 200- 213.

34. Lorch, A., The Economics of Location, New Haven, 1954.

35. Mandal, R.B., Hierarchy of Central Places in the Bihar Plain, N.G.J.I. No. 21, 1975, PP- 120- 126.

36. Mayer, I.A., Creation of Service Centres in Jammu Kashmir State, A. Approach Towards

Regional and balanced Urban Development, G.R.I. 1992, Vol. 54, P- 78.

37. Mayfield, R.C., A Central Place Theory in Nothern India, Quantitative Geography, pt. 1, Economic Cultural Topics, 1967, PP- 120- 166.

38. Misra, G.K., A Methodology for Indentifying Service Centres in Rural Area- A Study of Miryaguda Taluk Behavioural Seience and Community Development PP- 48- 63.

39. Misra, H.N., Hierarchy of Towns in Allahabad Umland, The Deccan Geographers- 14, 1976, PP- 34- 47.

40. Misra, K.K., System of Service Centres in Hamirpur District (U.P.) Unpublished Ph. D. Thesis, Bundelkhand University, Jhansi, 1981.

41. ---------------, 1986, Identification of Functicnal Hierarchy of Service Centres in Hamirpur District, The Deccan Geographers, Vol. XXIV, No. 3, 1986, PP- 97- 144.

42. -------------, 1987, Functional System of Service Centres in Backward Econoney A Case Study of Hamirpur District (U.P.) India, N. Voll. 2, 1987.

43. ----------------, Soeio- Econimic and Environmental Problems in Banda- Hamirpur District (U.P.) J.N.G., 1991, Vol. 1 & 2 PP- 83- 90.

44. -----------, Misra, K.K. & Khan, T.A., Spatial System of Towns in Hamirpur District, U.P. Paper Presented in Geology and Geography Section on the Occassion 74th ISCA, Banglore University, 1987.

45. --------------, 1991, Evalutionary Model of Service Centres in Maudha Tahsil, Hamirpur District, Vol. 1, 1991.

46. --------------, 1992, Service Area Mosaies in a Slow Going Economy, Geographical Review of India, Vol. 54, 1992.

47. -------------, Misra, R.P., 1974, et. al., Regional Development Planning in India, Vikas Publishing House, New Delhi, p- 177.

48. ----------,1978, Regional Planning in Iran, Problems and Prospects in Misra, R.P. (ed.) Regional Planning and National Development, Vikas Publishing House, New- Delhi, P- 210.

49. Mohammad Hussain, Research Scholar, Identification of Rural Service Centres in Bahraich District (U.P.) Geographical Science Journal Vol. III, Pt. 2, 1987, PP- 104- 112.

50. Mukherjee, A.B., Spacing of Rural Settlement in Rajsthan : A Spalial Analysis Geographical Qutlook, Agra, Vol. I, No. 1 1970.

51. Negi, D.S., The Rank Size Rule : A Quantitative Analysis, Geographical Review, Vol. 1 and 2, 1974, PP- 19- 25.

52. Nityanand, P. and Bose, S., Integrated Development Plan for Keonjhar District, Orissa, N.I.C.D. Hyderabad, 1976.

53. Pandey, P., Urban Hierarchy, An Assesment, Impact, of Industrialisation of Urban Growth (A Case study of Chhota Nagpur) Central Block Deptt. Allahabad, 1970, PP- 163- 175.

54. Patil, S.R., A Comparative Study of Urban Rank Size Relationship of Urban Settlement of Mysore State, The Indian Geog Journal, Madras, Vol. XII V- 1 and 2 PP- 35- 43.

55. Preston, A., 1972, The Growth Centre Concept in Sen, L.K., (ed.) Reading on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres, N.I.C.D. Hyderabad.

56. Rao, U.L.S.P., The Town of Mysore State, Asia Publishing House Calcutta, 1964, PP- 45- 53.

57. Raskevaskey, N., Mathematical Theory of Human Relationships Bloomington, 1947.

58. Reddy, N.B.K., A Comparative Study of the Urban Rank Size Relationship in Krishna-Godawari Deltas and South Indian States, N.G.J.I. Vol. XV 2, 1969, PP- 63- 90.

59. Richardson, H.W., 1969, Elements of Regional Economics, Penguin, Modern Economic Texts Series, P- 107.

60. Sahi, Sanjay, Service Centres Planning and Rural Development of Deoria District, (U.P.) Unpublished Ph. D. Thesis, B.H.U. Varanasi, 1984.

61. Scott, P., The Hierarchy of Central Places in Tasmania, The Australian Geographers, Vol. 9, 1964, P- 134- 147.

62. Sen, L.K., Growth Centres in Raichur District, N.I.C.D. Hyderabad, 1975, Chapter- III.

63. ------------, Planning Rural Growth Centres for Integrated Rural Development : A Sludy in Miralgunda Taluk, Hyderabad, (1971) Micro- Level Planning Rural Growth Centres, N.I.C.D. Hyderabad.

64. --------------- , et. al;, 1972, Rural Institutions in Khan, W., (ed.), Papers and Proceedings of the workshop Cum Seminar on Rural Institutions and Agricultural Development N.C.I.D., Hyderabad, P- 9.

65. Simson, H.A. On a Class of Skew Distribution Functions Biometrika, Vol. 42, P- 955, Quoted in Berry, B.J.L., and Garrission, W.L. Alternative Explanations of Urban Rank Size Retationship etc. 1947.

66. Singh, C.D. Service Centres in Regional Development and Planning in Saryupar Plain, U.P., Unpbulished Ph.D., Thesis, Gorakhpur University, Gorakhpur, 1979.

67. Singh, G., Service Centres, Their Functions and Hierarchy, Ambala District, Punjab (India) 1973, P- 1.

68. Singh, J., 1979; Central Places and Spatial Organization in a Backward Economy Gorakhpur Region : A Study in Integrated Regional Development, U.B.B.P. Gorakhpur.

69. Singh, O., Hierarchy and Spacing of Towns in Uttar Pradesh in Singh, R.L. (ed.) Urban Geography in Developing Countries Proceeding of I.G.U. Symposium No. 15, Varanasi, PP- 318- 326.

70. ----------------, Toward Determining Hierarchy of Service Centres, 1971, Op. Cit. Ref. 2, PP- 165- 177.

71. Singh O.P. and Iden, Spatial Distribution of Sizable Central Places of U.P. On a Nearest Neighbour Method, N.G. 7, 1972, PP- 78- 84.

72. Singh, K.N., Rural Market and Urban Centres in Eastern U.P., A Geogoaphical Analysis, Unpublished Ph.D. Thesis, B.H.U. Varanasi, 1962.

73. Singh, R.L. Urban Hierarohy in Umland of Vanaras, The Journal of Scientific Research, B.H.U. Varanasi, Vol. 6, Pp- 181- 190.

74. Siddque, N.A., Town of Ganga- Ramganga Doab, Hierarical Model, Geographical Outlook Vol. 6, 1969, PP- 54- 55.

75. Staford, H.A. The Functinol Basis of Small Towns, Economic Geography, Vol. 39, 1963, PP- 165- 175.

76. Stuwart, C.T.,The Size of Spacing of Cities Geog Review, Vol. 48, 1958, PP- 225- 45.

77. Sunderam, K.V., 1972; Urban and Regional Planning in India, Vikas Publishing House, New Delhi, P- 300.

78. ---------, 1974; Urban and Regional Planning in India Vikas Publishing House, New Delhi.

79. Thakur, R.N., Micro- Regional Central Place System in India, Inter India Publications, 1985, New Delhi.

80. Thakur, B., Nearest Neighbour Analysis as a Measure of Urban Place Patterns, Indian Geographical Studies, Research Bulletin, No. 4, 1974, PP- 55- 59.

81. Thomas, E., Some Comments on the Functinal Basis for Small Towa Towns, Towa Buisness Digest 1960, Vol. 31, PP- 10- 16.

82. Tripathi, R.N. and Others,' 1980; Block Planning in the District Frame- A Development Plan for Madakasisra Block in Anantpur District, (A.P.) N.I.C.D. Hyderabad.

83. Ulman, E.A., Theory of Location for Cities, The American Journal of Sociology, Vol. 46. 1945, PP- 853- 64.

85. Wanmali, S., Hierarchy of Towns in Vidarbh, India and its Signification Deptt. of Geography, London School of Economics (Two Parts) London, 1968, P- 49.

86. --------------, Regional Planning for Social Studies- An Examination of Central Place Concept and their Application N.I.C.D. Hyderabad, 1970, P- 19.

87. Weber, A., Theory of the Location of Industries (Ed. g. Tr. C.J. Friedicl) University of Chicago Press, Chincago, 1928.

84. Vonthunen, H., Derisalierte State in Beiziehung and Land Ueristschaft and National Konomic Rostock, 1826, Translated by Wastenburg, C.M. as Vonthynen Isolated Slate, London, Oxford University Press, 1966.

88. Yadav, H.S. & Tiwari, R.C., Spatial Pattern of Service Centres in Allahabad District, India National Geographers Vol. XXIV, No. 1, 1989, Allahabad.

के लिये सांख्यिकीय उपागम के द्वारा व्याख्यात्मक एवं मात्रात्मक सूचनाएं उपयोग में लाई गयीं हैं ।कृषि सम्बन्धी आंकड़ों का संकलन ग्राम्य स्तर पर किये गये क्रमवद्ध क्षेत्रीय सर्वेक्षण के द्वारा किया गया है। इसके अतिरिक्त दूसरे स्त्रोतों जैसे – राजस्व विभाग के कृषि अभिलेखों,तहसील मुख्यालय के भूमि उपयोग सम्बन्धी अभिलेखों, जिला सांख्यिकीय कार्यालय इत्यादि से भी आंकड़ों का संकलन किया गया है। इन आंकड़ों को उपयोगी सांख्यिकीय विधियों की सहायता से मानचित्रों में प्रदर्शित किया गया हैं, ताकि अप्रादेशिक इकाइयों का चयन निम्नस्तर के प्रस्तावित पूरक प्रदेशों के रूप में हो सके। प्रस्तुत अध्याय दो भागों में विभक्त हैं।

(अ) भूमि उपयोग नियोजन; तथा (ब) कृषि अवस्थापनाओं का नियोजन ।

भूमि उपयोग नियोजन (Land -Use Planning) -

भविष्य के लिये योजना बनाने से पूर्व क्षेत्र में उपलब्ध भूमि उपयोग प्रतिरूप का अध्ययन, विश्लेषण एवं समीक्षात्मक मूल्यांकन कर लेना आवश्यक है।

उपलब्ध भूमि के उपयोग प्रतिरूप (Existing Land Use Pattern) -

सामान्य भूमि उपयोग प्रतिरूप (General Land - Use Pattern) -

अध्याय दो में प्रस्तुत सामान्य भूमि उपयोग की तालिका संख्या 2.3 के अनुसार अध्ययन क्षेत्र का अधिकांश भाग (80.00%) शुद्ध बोये गये क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मलित है। जबकि 3.26% भूमि परती के रूप में पड़ी है। जिसका उपयोग भविष्य में कृषि के लिये किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त 7.18% भूमि कृषि कार्यों हेतु अनुपलब्ध है, 7.26% भूमि वन, उद्यान एवं चरागाहों के अन्तर्गत आती है, तथा 1.94% भूमि अन्य अकृषित है। जिस पर खेती नहीं की जाती है(चित्र सं. 2.4 A)।

कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि (Land not Available for Cultivation)-

कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि के अन्तर्गत कुल 7.18% भूमि आती है। जिसमें 1.26% जलाशयों,3.16% बस्तियों एवं मार्गो तथा 2.76% कृषि अयोग्य भूमि एवं ऊसर भूमि के अन्तर्गत आती है। शोध क्षेत्र के दक्षिणी– पश्चिमी क्षेत्र में पड़ने वाली न्याय पंचायत बिनौरा में अधिकतम् 5.24% भूमि जलाशयों के अन्तर्गत तथा निम्नतम् 0.32% डकोर न्याय पंचायत में है। अधिवासों एवं मार्गों के अन्तर्गत सर्वाधिक क्षेत्रफल 6.23% गढ़र न्याय पंचायत तथा सबसे कम 0.14% बिनौरा न्याय पंचायत में हैं और ऊसर एवं कृषि अयोग्य भूमि का वितरण शोध क्षेत्र में 3.23% से 0.45% के बीच है।

अन्य अकृषित भूमि - (Other Uncultivated Land)-

इस श्रेणी में वनों, झाड़ियों,बगीचों,घास–भूमियाँ, वृक्षवाटिकाओं, चरागाहों एवं कृषि योग्य बंजर भूमियों को शामिल किया गया है। इस तरह की भूमि का शोध क्षेत्र के 9.20% भूभाग पर विस्तार है। इस तरह की भूमि की सर्वाधिक सघनता 19.69% डकोर न्याय पंचायत तथा सर्वाधिक विरलता 0.25% खरूसा न्याय पंचायत में है। वन,वृक्षवाटिकाओं एवं बगीचों 7.26% का सर्वाधिक एवं न्यूनतम क्षेत्रफल 15.86% से 0.20% के बीच है। जो कि पर्यावरण संतुलन की

कृषि विकास नियोजन

PLANNING FOR AGRICULTURAL DEVELOPMENT

अध्याय- 4

CHAPTER- FOUR

कृषि विकास नियोजन

PLANNING FOR AGRICULTURAL DEVELOPEMENT

शोध क्षेत्र की प्रगति प्रधानतः कृषि अर्थव्यवस्था पर आधारित है। कृषि यहाँ के गृाहस्थिक प्रबंध के लिये रीढ़ की हड्डी के समान है।इसके अर्न्तगत कार्यशील जनसंख्या का 59.78 प्रतिशत भाग लगा हुआ है तथा सम्पूर्ण तहसील के कुल क्षेत्रफल का 80.00 प्रतिशत भाग कृषीय भूमि के अर्न्तगत आता है। यद्यपि क्षेत्र की जनसंख्या के जीवकोपार्जन का मुख्य स्त्रोत कृषि है फिर भी देश के अन्य पिछड़े क्षेत्रों की भाँति शोध क्षेत्र में भी कृषि विकास अत्यल्प है क्योंकि स्वतंत्रता के उपरान्त इस क्षेत्र में जो उपलब्धियाँ अपेक्षित थीं, प्राप्त नहीं हो सकीं। ऐसा मुख्यतः अवस्थापनाओं की कमी, सिंचन सुविधाओं की अपर्याप्तता, कृषि यंत्रीकरण के निम्न स्तर पर प्रयोग तथा मानसून की अनिशचितता आदि के परिणामस्वरूप खेती से कम पैदावार प्राप्त होने के कारण हुआ है। इसके अतिरिक्त बढ़ती आबादी एंव घटती भूमि के कारण भी कृषि क्षेत्र का विकास अवरूद्ध हुआ है। ऐसी स्थित में कृषि संसाधन के उचित नियोजन हेतु वास्तविक सर्वेक्षण द्वारा वर्तमान स्थित की जानकारी आवश्यक है एवं कृषि का वैज्ञानिकीकरण तथा वर्तमान एवं भूतकाल की कृषि विधियों एवं लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए भविष्य की खुशहाली बढ़ाने हेतु योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए प्रस्तुत अध्याय में शोधार्थी ने वर्तमान भूमि उपयोग का विश्लेषण करते हुए भविष्य की उन्नति हेतु कृषि नियोजन प्रारूप प्रेषित करने का प्रयत्न किया है।

अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास के लिये जिन संयोजनाओं को अपनाया गया है वे इस प्रकार हैं:–

1. क्षेत्र में कृषि संसाधनों का अनुमान करना ;
2. भविष्य में क्षेत्र के लिये उपयोगी कृषि उपजों की मांगो का अनुमान करना ;
3. भविष्य में सम्पूर्ण कृषि भूमि का अधिकतम उपयोग करना ;
4. अध्ययन क्षेत्र की भूक्षमता फसलों की मांग एवं सिंचाई सुविधाओं के आधार पर विभिन्न इकाइयों के लिये उपयोगी कृषि प्रतिरूप (Model) का निर्धारण करना तथा उपयोग में लाना;
5. कृषि के क्षेत्र में आवश्यक परिर्वतन लाने के लिये लोगों को नवीनतम प्रौद्योगिकी के उपयोगार्थ प्रलोभन देना ;
6. अवस्थापनाओं के विकास यथा – बाजार,परिमार्जन एकत्रीकरण, परिवहन पूर्व फसल विश्लेषण, सफाई एवं कृषि यंत्रों की मरम्मत, भूमि सुधार एवं विस्तार तथा प्रशिक्षण ; और
7. कृषि उपज को बढ़ाने एवं कृषि विकास हेतु क्षेत्र की कृषि प्रधान इकाइयों की पहचान करना।

उपागम एवं विधितंत्र (Approaches and Methodology)

एम. सी. मास्टर (1972) के अनुसार निर्वाहक कृषि के भौगोलिक अध्ययन के मुख्यतः तीन उपागम हैं। जैसेः– पारिस्थितिक उपागम, भूमि उपयोग उपागम तथा सांख्यिकीय उपागम । सिंह (1976) ने उपरोक्त तीनों उपागमों को सांख्यिकीय, प्राकृतिक एवं भ्वाकृतिक रूपों में समायोजित किया है। जिसका उपयोग उन्होंने हरियाणा के कृषि भूगोल के अध्ययन में किया है। कृषि को बेहतर ढंग से जानने एवं भूमि उपयोग के स्थानिक वितरण एवं कृषि वितरण प्रतिरूप को समझने

दिशा में अत्यधिक न्यून है और वर्तमान परती व अन्य परती भूमि 3.62% का सर्वाधिक क्षेत्रफल 8.67% बिनौरा न्यायपंचायत तथा सबसे कम 1.77% खरूसा न्यायपंचायत में है।

जोतने एवं बोने योग्य भूमि- (Arable land)

जोतने एवं बोने योग्य भूमि के अन्तर्गत बंजर भूमि एवं शुद्ध बोये गये क्षेत्र को भी शामिल किया गया है। जिसका कि कुल क्षेत्रफल 83.62% भाग आता है। क्षेत्र में बंजर भूमि का (3.62 %) का प्रतिशत 0.45% से 3.23% के मध्य है तथा शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 59.15% से 90.10% के बीच है जो कि क्रमशः डकोर एवं खरूसा न्यायपंचायतों के अन्तर्गत है। शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल राज्यस्तरीय (54.14%) व राष्ट्रीयस्तर (42.06%) की तुलना में अधिक है।

एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल- (Cropped Area More than One Time) -

एक वर्ष में शोध क्षेत्र का 298.13 वर्ग किमी. क्षेत्रफल एक बार से अधिक बोये गये क्षेत्रफल के अन्तर्गत आता है जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 39.38% हैं यह राष्ट्रीय औसत (18.44%) दुगने से भी अधिक है। तहसील के विभिन्न भागों में क्षेत्रफल के लघुस्तरीय वितरण में अत्यधिक अन्तर है। जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के 49.21% तथा 30.34% प्रतिशत के बीच, क्रमशः बिनौरा एवं एट न्याय पंचायतों में पाया जाता है।

सामान्य भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन (Changes in General Land- Use Pattern)

भूमि उपयोग प्रतिरूप विभिन्न समयों में विभिन्न क्षेत्रों के लिये किये गये सामाजिक निर्णयों का वर्णन है, जो कि एक श्रेणी के भूमि उपयोग के अन्य श्रेणी की कीमत पर विस्तार के लिये जिम्मेदार है (सिंह,1976), के परिवर्तन को तालिका एवं चित्र संख्या 4.1 में दिखाया गया है तालिका से यह भी प्रमाणित होता है कि कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि में क्रमिक रूप से वृद्धि हुई है। वर्ष 1973-74 में तहसील के कुल क्षेत्रफल का 6.85% भूभाग इसके अतिरिक्त था जो कि 1983-84 में बढ़कर 7.11% तथा 1993 - 94 में बढ़कर 7.18% हो गई। यह वृद्धि बढ़ती हुई जनसंख्या की संतुष्टि हेतु भूमि के अकृषिगत उपयोग जैसे-बस्ती, सड़क, पगडंडी इत्यादि में वृद्धि के परिणाम स्वरूप हुई। तालिका से यह स्पष्ट है कि परती भूमि के अतिरिक्त अन्य अकृषित भूमि वर्ष 1973 -74 में 13.05% थी जो घटकर 1983-84 में 11.56% तथा 1993-94 में 9.20% हो गयी। यह घटोत्तरी मुख्यतः जनसंख्या के बढ़ते दबाब और जुताई क्षेत्र में अनुवर्ती वृद्धि से हुई। तालिका यह भी दर्शाती है कि क्षेत्र के जोतने बोने योग्य भूमि के प्रतिशत में क्रमिक वृद्धि हो रही है। इसके अतिरिक्त शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 1973-74 में सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 80.00% था जो कि 1983-84 में 81.45% तथा 1993-94 में 83.62% हो गया है इसी प्रकार शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल में भी क्रमिक वृद्धि हुई है। इसके अन्तर्गत 1973-74 में 80.00% हो गया। इसके परिपेक्ष्य में मुख्य कारण है कि बढ़ती हुई जनसंख्या, जिसने अधिक से अधिक भूमि को जोतने के अन्तर्गत लाने के लिये बाध्य कर दिया लेकिन बंजर भूमि का क्षेत्रफल क्रमिक रूप से घटने की प्रवृति का द्योतक है ।यह 1973-74 में 3.45% थी ,जो कि 1983-84 में घटकर 2.00% तथा 1993-94 में 1.94% रह गई इस प्रवृति के विकास का श्रेय मूलतः मौसमी दशाओं की अस्थिरता को जाता है पूर्वगामी विश्लेषण से स्पष्ट है कि कृषि

TAHSIL ORAI
CHANGE IN GENERAL LAND-USE PATTERN
N
1 0 1 2 3 4 5 6 7
KMS
PERCENTAGE OF TOTAL AREA
90
84
78
72
66
60
56
48
42
36
30
24
18
12
6
LAND NOT AVAILABLE FOR CULTIVATION
OTHER UNCULTIVATED LAND
ARABLE LAND
SOWN AREA MORE THAN ONE TIME
1973 - 74
1983 - 84
1993 - 94
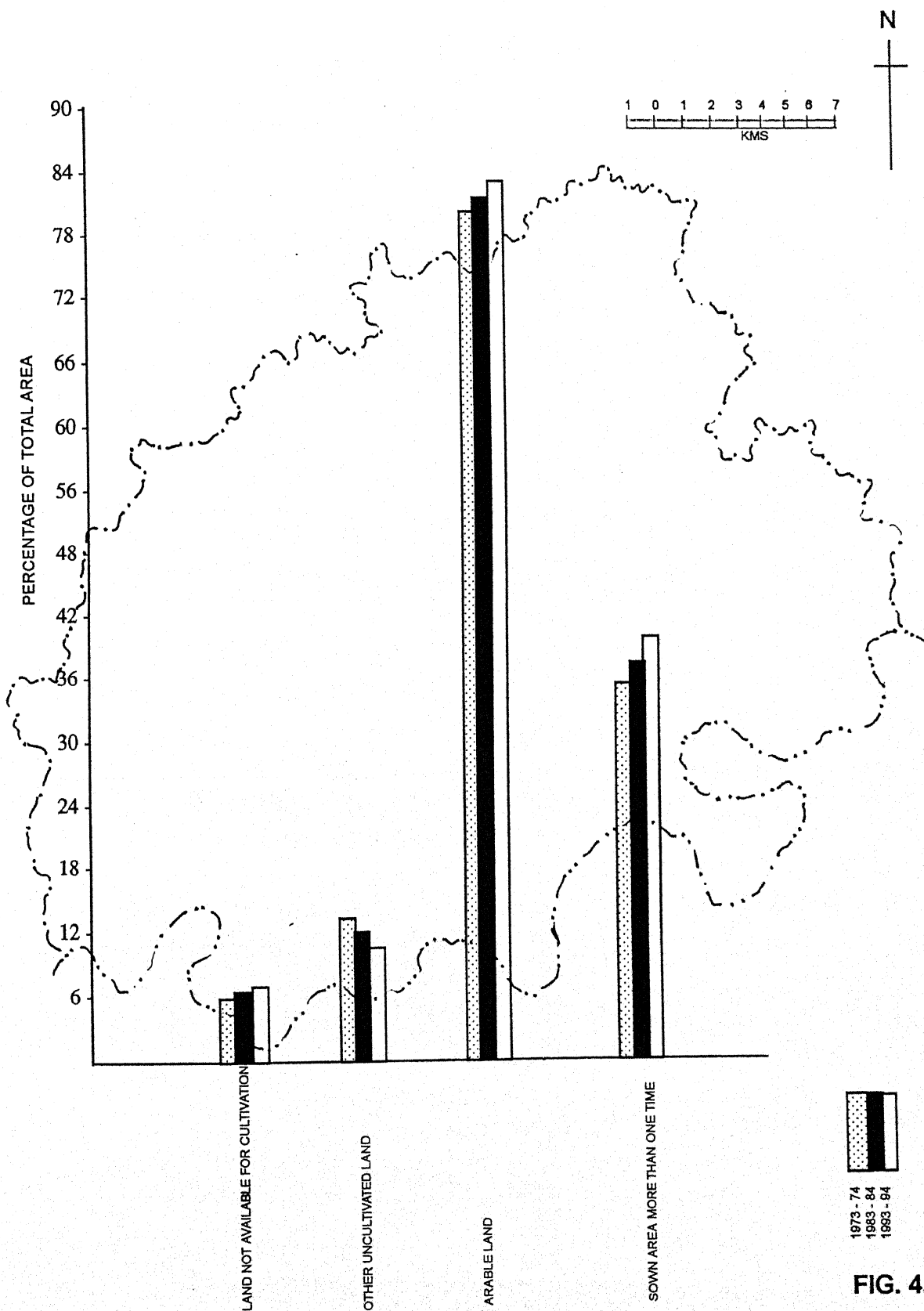
FIG. 4.1

भूमि के क्षैतिजीय विस्तार का अब भी कुछ महत्त्व है लेकिन बहुत अधिक नहीं।

तालिका सं. 4.1

उरई तहसील के सामान्य भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन 1973 - 74 से 1993 - 94

क्र. सं.	भूमि उपयोग प्रतिरूप	1973 - 74	1983 - 84	1993 - 94
(A)	**कृषि कार्यो के लिये अनुपलब्ध भूमि**	6.85	6.99	7.18
1.	तालाब, पोखर, झील व नदी	1.10	1.22	1.26
2.	बस्ती, सड़क, रेलमार्ग	3.10	3.13	3.16
3.	कृषि अयोग्य ऊसर भूमि	2.65	2.68	2.76
(B)	**अन्य अकृषित भूमि**(परती भूमि को छोड़ कर)	13.05	11.56	9.20
1.	उद्यान, वन एवं चरागाह	9.60	8.97	7.26
2.	कृषि योग्य बंजर भूमि	3.45	2.00	1.94
(C)	**जोतने योग्य भूमि**	80.10	81.45	83.62
1.	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	77.00	77.90	80.00
2.	वर्तमान परती एवं अन्य परती	3.10	3.55	3.62
	योग-	100.00	100.00	100.00
(D)	**एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल (शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का प्रतिशत)**	35.22	36.98	39.38

स्त्रोत - 1973 -74 एवं 1983 - 84 के आंकड़े के मौजा रजिस्टर से एवं 1993 - 94 के आंकड़े तहसील मुख्यालय के मिलान खसरा से प्राप्त।

फसल प्रतिरूप (Cropping Pattern)

प्रति इकाई सामाजिक स्थानिक परिस्थितियों में मांग के अनुकूल नियोजित विकास को प्रस्तावित करने, प्रति इकाई अधिकतम् उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से वर्तमान फसल प्रतिरूप का विश्लेषण करना आवश्यक है क्योंकि फसलप्रतिरूप एक दूसरे के सापेक्षतः विभिन्न फसलों की स्थानिक व्यवस्था हैं इससे तात्पर्य यह है कि समय के आधार पर प्रदेश में फसलों का क्रम निर्धारित करना, बोने एवं काटने के समय के आधार पर वृद्धिकाल की अवधि तथा अनुकूल जलवायु की परिस्थितियों के अनुसार अध्ययन क्षेत्र की फसलों को खरीफ, रबी एवं जायद तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

खरीफ की फसलें (Kharif 's Crops)

खरीफ की फसलें मूलतः ग्रीष्म मानसून की फसलें हैं । जो कि जून –जुलाई में बोकर अक्टूबर– नवम्बर में काटी जाती हैं। इन फसलों को उच्चतम तापमान और पर्याप्त जल की आपूर्ति आवश्यक है। तालिका संख्या 4.2 दर्शाती है कि खरीफ की फसलें अध्ययन क्षेत्र के शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 20.07% हैं।क्षेत्र की मुख्य फसलों का विवरण इस प्रकार है (चित्र सं 4.2A)।

1. ज्वार -बाजरा (Jowar Bajra)–

ज्वार बाजरा अध्ययन क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण खरीफ की फसल है। इसका क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान है। इसके अन्तर्गत खरीफ के क्षेत्रफल का 43.97% भाग आता है जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 8.39 % है।

2. दालें (Pulses)–

अध्ययन क्षेत्र में खरीफ के अन्तर्गत बोयी गई फसलों में दूसरा स्थान दालों का है। जो कि 3779 हेक्टेयर में उगाई जाती हैं। इनमें से अरहर, मूंग तथा उर्द प्रमुख हैं। दालों में सर्वाधिक क्षेत्र अरहर तथा सबसे कम क्षेत्रफल मूँग के अन्तर्गत आता है। यहाँ पर दालों का क्षेत्रफल खरीफ में बोये गये क्षेत्रफल का 26.12 % है जो कि कुल शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 4.99% है।

चावल (Rice) -

क्षेत्र में खरीफ के अन्तर्गत उत्पादित की जाने वाली फसलों में चावल का तीसरा स्थान है जो खरीफ तथा शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल को क्रमशः 12.06%तथा 2.30% भाग पर बोया जाता है।

अन्य फसलें (Other Crops)-

खरीफ की फसलों के अतंर्गत तेल–बीज, सब्जियाँ, भूसे वाली फसलें मिर्च व अन्य मसाले आदि आते हैं। जो कि खरीफ के कुल क्षेत्रफल के 17.89% शुद्ध भूमि में बोये जाते हैं।

तालिका संख्या 4.2

खरीफ के अन्तर्गत विभिन्नफसलों का क्षेत्रफल 1992- 93

क्र. सं.	नाम फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत में
1.	चावल	1745	11.77
2.	ज्वार बाजरा	6353	43.97
3.	दालें	3779	25.86
4.	तिलहन	900	5.92
5.	अन्य	1689	11.78

स्त्रोत- सांख्यिकीय पत्रिका- जनपद जालौन, 1993।

रबी की फसलें (Rabi Crops)-

यह फसलें शीतकालीन फसलें है जो कि अक्टूबर – नवम्बर में बोयी जाती हैं और मार्च-अप्रैल में काटी जाती हैं इन फसलों को ठंडे मौसम एवं मध्यम स्तरीय जल आपूर्ति की आवश्यकता होती है। तालिका संख्या 4.3 से स्पष्ट है कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 79.90% भाग रबी की फसलों के अन्तर्गत आता है रबी का 29.86% खाद्यान्नों, 65.46% दालों एवं 1.48% अन्य खाने के योग्य फसलों के अन्तर्गत आता है (चित्र सं. 4.2B)। इस प्रकार रबी के अन्तर्गत शुद्ध बोये क्षेत्रफल का कुल 96.75% भाग खाद्य फसलों तथा 3.25% अखाद्य फसलों के अन्तर्गत आता है। स्थानीय तौर पर रबी की फसलों का अनुपात अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी एवं मध्यभाग में अधिक तथा उत्तरी – पूर्वी भागों में कम है। रबी की मुख्य फसलें इस प्रकार है :–

1. दालें (Pulses)-

दालों के अन्तर्गत रबी की फसलों का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र आता है। इनके अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की रबी की फसलों का 64.46% भूभाग आता है जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 56.26% है। मसूर,चना एवं मटर इस क्षेत्र की मुख्य दालें है।

मसूर (Lentil) -

केवल रबी में ही नहीं बल्कि अध्ययन क्षेत्र में उगाई जाने वाली सभी दालों के अन्तर्गत आच्छादित क्षेत्रफल की दृष्टि से मसूर प्रथम स्थान पर है तथा लोकप्रियता में अरहर के उपरान्त दूसरे स्थान पर है। तालिका सं. 4.4 स्पष्ट करती है कि यह रबी फसलों के 31.41% क्षेत्र में बोयी जाती है जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 25.10% है यह शुष्क एवं असिंचित फसल है। जिसके लिए मिट्टी में उपस्थित आर्द्रता ही पर्याप्त होती है। वेतवा नदी के तटवर्ती भाग में मसूर फसल की सघनता देखने को मिलती है।

चना (Gram)-

चना भी एक लोकप्रिय उत्पाद है। जिसका प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है। महत्व की दृष्टि से दालों में यह दूसरे स्थान पर है जबकि रबी की फसलों में चना का स्थान तीसरे

ORAI TAHSIL
AREA OF DIFFERENT CROPS
N
1 0 1 2 3 4 5
KMS
Ⓐ KHARIF CROPS
100%
0°
10%
20%
90°
30%
40%
180°
50%
60%
70%
270°
80%
90%
JWAR BAJRA
PULSES
OIL SEEDS
RICE
OTHERS
Ⓑ RABI CROPS
100%
0°
10%
20%
90°
30%
40%
180°
50%
60%
70%
270°
80%
90%
BARLEY
WHEAT
OIL SEEDS
PULSES
OTHERS
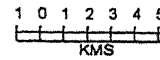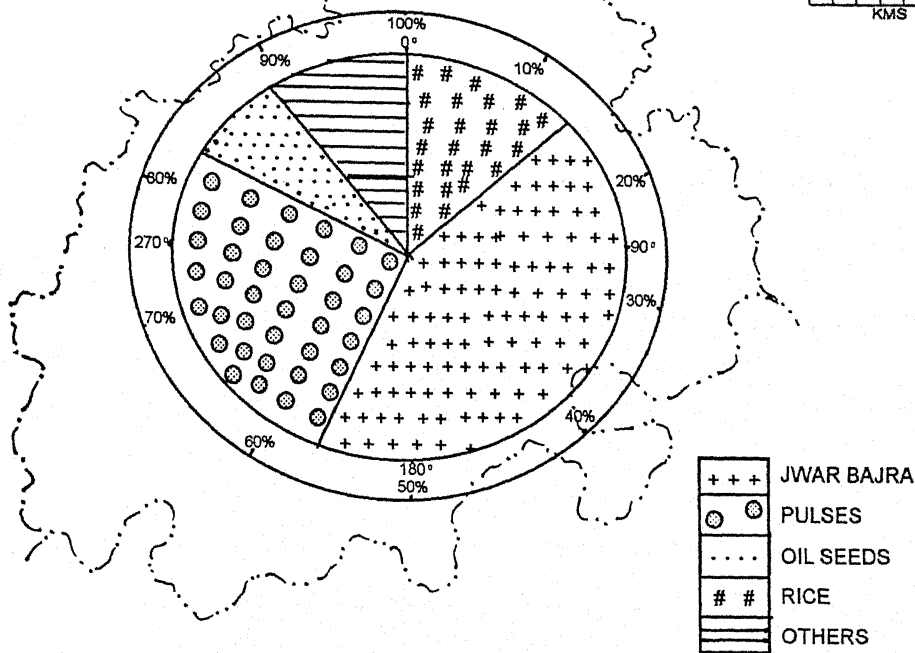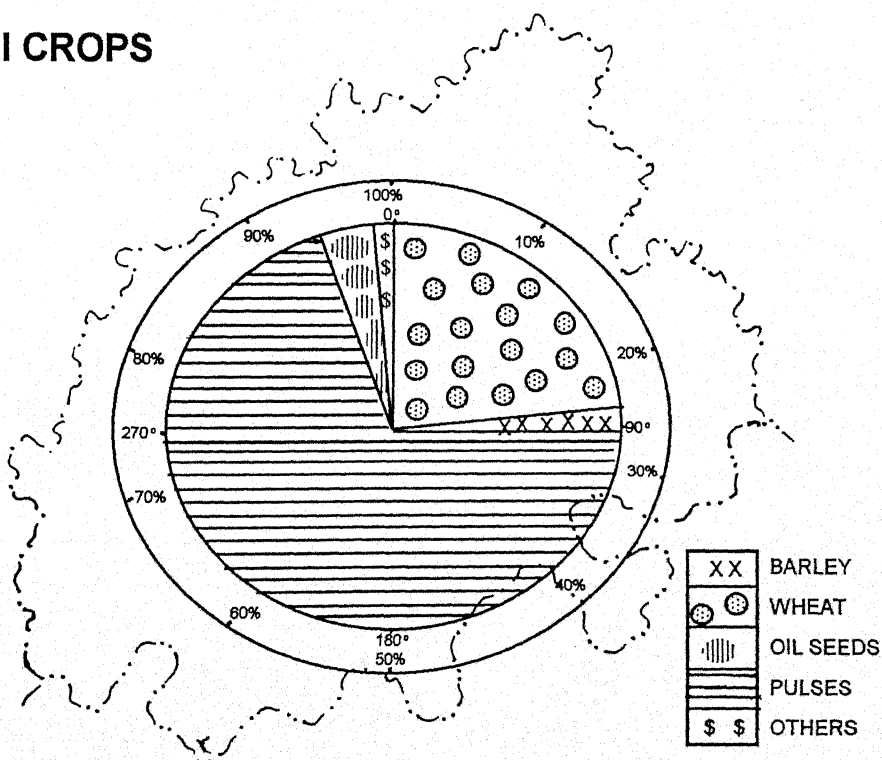
FIG. 4.2

क्रम में आता है। इसके अन्तर्गत रबी का 24.47% भाग आता है। जो कि शुद्ध कृषित भूमि के 19.55% भाग पर बोया जाता है। मौसमी तत्व विशेष के निर्धारण के आधार पर मिट्टी की उत्पादकता को बढ़ाने में इसकी निर्णयात्मक भूमिका है यह पुष्टिकर भोजन का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। चना का उत्पादन लगभग सम्पूर्ण क्षेत्र में किया जाता है।

मटर (Peas)-

रबी की फसलों के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रफल के 14.21% तथा शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के 11.52% भाग पर यह बोया जाता है यह फसल रबी के मौसम में उगाई जाने वाली दालों में सबसे अधिक मूल्यवान होती है। यह मुख्यतः वेतवा नदी के निकटवर्ती भाग में पैदा होती है।

गेहूँ (Wheat)-

रबी की फसलों के अन्तर्गत दालों के बाद गेहूँ अध्ययन क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण फसल है जो कि रबी के अन्तर्गत कुल कृषित भूमि के 22.62% भाग पर बोयी जाती है जो कि शुद्ध बाये गये क्षेत्रफल का 17.97% है। उत्पादन कम होते हुए भी स्थानीय लोगों के लिये खाद्यान्न उपलब्ध कराने में सक्षम है।

जौ (Barley)–

रबी के अन्तर्गत बोयी जाने वाली खाद्यान्न फसलों में जौ का स्थान दूसरा है। जिसके अन्तर्गत रबी की फसलों के क्षेत्रफल का 1.59% भाग तथा शुद्ध बोये गये क्षेत्र का 1.26% क्षेत्र में आता है।

तालिका सं. 4.3

रबी की फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल एवं प्रतिशत

क्र. सं.	नाम फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत में
1.	गेहूँ	13687	22.62
2.	जौ	961	1.59
3.	दालें	42598	69.41
4.	तिलहन	2430	4.01
5.	अन्य	822	1.36

स्त्रोत – सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद जालौन, 1993।

खाद तेल बीज (Edible Oil Seeds)-

खाने योग्य तेल बीजों के अन्तर्गत सरसों एवं तिल को शामिल किया जाता है। तालिका संख्या 4.4 से स्पष्ट है कि क्षेत्र में तिल का उत्पादन लगभग नगण्य है जबकि सरसों का उत्पादन रबी के अन्तर्गत आने वाले 1.40% तथा शुद्ध बाये गये क्षेत्रफल के 0.91% क्षेत्र में होता है। तहसील में सरसों का उत्पादन विशिष्टता के साथ किया जाता है। रबी की फसलों में इसका छठा स्थान है।

अखाद्य तेल बीज(Non- Edible Oil Seeds)-

अखाद्य तेल बीजों के क्रम में अलसी प्रमुख है। यह अपनी औद्योगिक एवं व्यवसायिक कीमत के लिये अच्छी प्रकार से जानी जाती है। रबी की फसलों के 3.25% तथा शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के 2.90% भूभाग पर बोयी जाती है। उत्पादन की दृष्टि से रबी की फसलों में इसका पांचवा स्थान है। तहसील में वेतवा नदी के उत्तरी क्षेत्र में अलसी का सर्वाधिक उत्पादन होता है।

अन्य फसलें (Other Crops)

सब्जियाँ एवं पशुभोज रबी की अन्य फसलें हैं जो कि रबी एवं शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के क्रमशः 1.00% और 0.85% क्षेत्रफल में उगाई जाती हैं। ये मुख्यतः बाजारी केन्द्रों के आसपास के क्षेत्रों में अधिक उगाई जाती हैं।

जायद की फसलें (Zaid Crop)–

सिंचन सुविधाओं की कमी एवं अत्याधिक गर्मी के कारण जायद फसलों का शोधक्षेत्र में कोई खास महत्व नहीं है। मात्र 0.2% क्षेत्रफल में ही इनका उत्पादन सम्भव हुआ है। जायद की प्रमुख फसलें सब्जियाँ, मक्का, मूंग, एवं पशुभोज हैं। मुख्यतः यह तहसील के दक्षिणी भाग जहाँ पर्याप्त मात्रा में सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं, में पैदा की जाती हैं। जबकि तहसील का उत्तरी एवं पूर्वी क्षेत्र प्राकृतिक आर्द्रता एवं सिंचन सुविधाओं की अपर्याप्तता के कारण जायद की फसलों के अनुकूल नहीं है।

फसल संयोजन विश्लेषण (Crop Combination Analysis)–

विभिन्न फसलों के महत्व को समझने के लिये फसलों के समूह के स्थानिक प्रतिरूप के विश्लेषण का अत्यधिक महत्व है। जे.सी. वेवर के अनुसार फसलों के संयोजन का अध्ययन करना अनेक अर्थो में उपयोगी एवं सार्थक है। क्योंकि यह (अ) व्यक्तिगत फसल भूगोल को समझने की प्रवृति को जन्म देता है; तथा (ब) फसल एक समाकलित वास्तविकता है जोकि विवरणात्मक विश्लेषण की मांग करती है।

फसल संयोजन प्रदेश (Crop Combination Regions)–

फसल प्रतिरूप का विश्लेषण एवं फसल श्रेणी निर्धारण यह स्पष्ट करता है कि फसलों के पूर्ण पृथकत्व में उनका उत्पादन बढ़ना कदाचित सम्भव है। वे समूहों में उगती हैं अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न भागों में अत्याधिक अन्तर्सम्बन्धित फसल समूहों को रोकने हेतु उनका अध्ययन एवं विश्लेषण करना आवश्यक है (शफी, 1983)।फसल संयोजन प्रदेशों के सीमांकन हेतु अनेकों सांख्यिकीय विधियाँ उपनायी जाती हैं। संदर्भ के रूप में वेवर, डॉल एवं जॉनसन के विचारों को लिया जा सकता है। यहां पर डॉल की विधि, जो कि अन्य सभी से एक विकसित विधि है, को अपनाया गयाहै। जिसके द्वारा आवश्यक फसल संयोजन मूल्यों के गुण– दोषों की विवेचना की जा सकती है (डॉल1957)। शस्य संयोजना विश्लेषण के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र को सामान्यतः तीन फसल संयोजन प्रदेश जैसे मसूर–चना–गेहूँ प्रधान क्षेत्र की कोटि में रखा जा सकता है

लेकिन न्याय पंचायत स्तर पर इन प्रदेशों में कुछ भिन्नता देखने को मिलती है।

भूमि पर जनसंख्या का दबाव(Population Pressure on Land)-

भूमि पर जनसंख्या का दबाव क्षेत्र में भूमि एवं मानव के अनुपात को दर्शाता है। अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति क्षेत्रफल 0.37 हेक्टेयर और शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 0.30 हेक्टेयर है। लेकिन द्विफसलीय प्रति व्यक्ति शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 0.41 हेक्टेयर है। इस प्रकार प्रति व्यक्ति भूमि के क्षेत्रफल में प्रादेशिक स्तर पर अत्यधिक अन्तर है प्रति व्यक्ति कुल क्षेत्र दक्षिणी तथा दक्षिण –पूर्व में अधिक है। जबकि प्रति व्यक्ति शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल एवं कुल फसलीय क्षेत्रफल उत्तर एवं उत्तरी – पश्चिमी भाग में अधिक है।

उत्पादन, उपभोग एवं निर्यात (Production, Consumption& Export)–

इस अध्याय के पूर्ववर्ती क्षेत्रों में भूमि उपयोग प्रतिरूप,फसल संयोजना एवं भूमि पर जनसंख्या दबाब आदि का विश्लेषण किया गया है वास्तविक भौतिक नियोजन हेतु उत्पादन मात्राओं और विभिन्न फसलों का कुल उत्पादन कृषि प्रदेश में व्याप्त आर्थिक दशाओं का सर्वोत्तम आकलन होगा। महत्वपूर्ण फसलों के उत्पादन को विभागीय आंकड़ों एवं क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान व्यक्तिगत निरीक्षणों के आधार पर अनुमानित किया गया है। तहसील में महत्वपूर्ण फसलों का प्रति हेक्टेयर उत्पादन गेहूँ,चना,मटर, मक्का, दालें (मसूर, अरहर, चना आदि) खाद्य तेल बीज का क्रमशः 20.06, 9.10, 14.93, 06.35, 11.86, 08.87,कुन्तल है। इन औसतों एवं उनके हेक्टेयर्स के आधार पर इन फसलों का वास्तविक उत्पादन वर्ष 1993-94 में क्रमशः 27456, 82243,80223,18, 60452 तथा 9072 मीटरी टन अनुमानित है। सर्वेक्षण के दौरान देखा गया है कि क्षेत्र के उत्पादन का 33.45% प्रदेश के बाहर निर्यात कर दिया जाता है। अनुमानतः 15.57% जानवरों के भोजन तथा अन्य उद्देश्यों के लिये प्रयोग होता है इस प्रकार उत्पादन का यह हिस्सा मनुष्यों के उपभोग के लिये उपलब्ध नहीं रहता है। शुद्ध रूप में उपभोग हेतु अनाजों, दालों एवं तेलों का क्रमशः 15621,950578 तथा 5582 मीटरी टन प्राप्त होता है। इस प्रकार क्षेत्र की जनसंख्या हेतु उपलब्ध तेल का औसत हिस्सा मानव आवश्यकताओं से काफी कम है जबकि दालें तो पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहती हैं। तालिका संख्या 4.4 में भोजन की मानक आवश्यकताओं को प्रेषित किया गया है। **तालिका संख्या - 4.4**

क्र.सं.	भोजन सामग्री का नाम	मात्रा ozs	ग्राम	भोजनप्रतिनिधि	मात्रा
1.	अनाज	07	200 ग्राम	प्रोटीन	70 ग्राम
2.	ज्वार – बाजरा	07	200 ग्राम	बसा	50 ग्राम
3.	दालें	03	85 ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स	440 ग्राम
4.	पत्तीदार सब्जियाँ	04	116 ग्राम	कौलोरीज	2500 ग्राम
5.	अन्य सब्जियाँ	05	85 ग्राम	कैल्शियम	0.8 ग्राम
6.	फल	06	57 ग्राम	फास्फोरस	1.4 ग्राम
7.	दूध	07	170 ग्राम	आयरन	40 ग्राम
8.	शक्कर	08	57 ग्राम	विटामिन 'ए'	7300 I.U.
9.	वनस्पति तेल	01	28 ग्राम	विटामिन 'बी'	1.8 किग्रा.
10.	गोस्त मछली एवं अंडे	01	28 ग्राम	विटामिन 'सी'	200 मिग्रा.

Source - Agkroyd, W.R. and et. al'The Nutrative Value of Indian Foods andThe Planning of Satisfactoy Diet, Special Report Series No. 42, IndianCouncil of Medical Research, New -Delhi (1963), P - 26 .

वर्तमान स्थिति की दृष्टि से दालों एवं तेल बीजों के उत्पादन और आवश्यक मात्राओं में असमानता है।यह स्थिति वर्तमान में आशाओं के अनरूप है। लेकिन यदि वर्ष 2001 एवं 2005 की प्रस्तावित जनसंख्या पर दृष्टिपात करें तो यह स्थिति अनुपयुक्त होगी। इस प्रकार स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या को मानक पोषक तत्व प्रदान करने तथा उनके रहन – सहन के स्तर को ऊँचा उठाने एवं भूमि उपयोग को अधिकतम सीमा तक बढ़ाने के लिये एक विशिष्ट नियोजन की आवश्यकता है।

भूमि उपयोग नियोजन (Land - Use Planning)–

पूर्ववर्ती निर्णयों के विश्लेषण के आधार पर स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के संसाधनों का उनकी क्षमता अनुसार उचित उपयोग नहीं हुआ है। इसके परिणामस्वरूप क्षेत्र के लोगों में निम्न पोषकता और पिछड़ी आर्थिक दशाओं का व्यापीकरण है। ग्रामीण जनता की आर्थिक दशा को सुधारने के लिये जिसमें उनके संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सके, कोई योजना नहीं है। इसके लिये निम्नांकित उपायों को प्रस्तावित किया जा रहा है :–

शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का विस्तार करके (Expantion of Net Sown Area)-

तालिका संख्या 4.5 दर्शाती है कि यद्यपि तहसील के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल उच्च स्तर का है और भूमि इस श्रेणी के अन्तर्गत निम्न मापकों के आधार पर लाई जा सकती है।

(अ) बंजर भूमि को कृषि के उपयोग में लाकर (By Bringing fallow Land Under Cultivation)

बंजर भूमि के अन्तर्गत शोध क्षे त्र की 18.20 हेक्टेयर भूमि आती है। यह भूमि भी कृषित भूमि के समान ही अच्छी है और बहुत ही आसानी से कृषिगत क्षेत्र में लाई जा सकती है। जिसके कृषित भूमि के अन्तर्गत आने पर शुद्ध भूमि के बोये गये क्षेत्रफल में 1.94% की वृद्धि की जा सकेगी।

(ब) **कृषि योग्य परती भूमि का दुबारा उपयोग करके** (By Reclaiming the Cultivable Wasteland)

कृषि योग्य परती भूमि के अन्तर्गत क्षेत्र की 3433 हेक्टेयर भूमि आती है। क्षेत्र के सर्वेक्षण के दौरान ज्ञात हुआ कि कृषि योग्य परती भूमि का 60% (2059हेक्टेयर) अच्छी गुणवत्ता वाला है। और आसानी से कृषि कार्यों के उपयोग में लाया जा सकता है। इस प्रकार यह प्रस्तावित किया जाता है कि ग्रामीण अर्थ–व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने हेतु इस तरह की सम्पूर्ण भूमि को कृषि के अन्तर्गत लेते हुए सरकार द्वारा इस भूमि के विकास हेतु अनुदान प्रदान किया जाना चाहिए। इसके साथ ही निम्न गुणवत्ता वाली कृषि योग्य परती भूमि, जो कि लगभग 1373 हेक्टेयर क्षेत्र में विस्तृत है, को वृक्षवाटिकाओं, बगीचों और वनों के अन्तर्गत लेकर पारिस्थितिकीय समानता को बनाये रखने में सहायता मिल सकती है। इसके साथ ही क्षेत्र के लोगों के ईधन एवं फलों की आवश्यकता की पूर्ति भी हो सकती है। इस प्रकार की भूमि को भूमिहीन मजदूरों एवं समाज के अन्य कमजोर वर्गों को वृक्षारोपण एवं वागवानी की कुछ निश्चित शर्तों के अधीन दिये जाने का प्रस्ताव है। इन शर्तों का निर्धारण सामाजिक–वानिकी विभाग द्वारा निर्धारित निर्देशों के अनुसार किया जाना चाहिए। तालिका सं० 4.5 में कुछ प्रमुख प्रस्तावित केन्द्रों का नियोजित भूमि उपयोग प्रस्तुत है।

तालिका संख्या 4.5

नियोजित भूमि उपयोग (हेक्टेयर में)

क्रम संख्या एवं नाम केन्द्र	भूमि,जो कृषि के लिये उपलब्ध नहीं है	वन,झाड़ियां एवं बगीचे			कृषियोग्य परती भूमि	कृषि अयोग्य भूमि	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल		
		1992-93	2001	2005	1992-93	1992-93	1992-93	2001	2005
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1. उरई	347	88	94	100	30	87	1086	1123	1191
2.डकोर	530	130	139	152	85	190	1500	1600	1723
3.एट	446	57	69	88	78	238	667	712	952
4. कोटरा	389	61	64	70	22	208	381	479	602
5. करमेर	402	39	50	59	70	188	744	856	982
6. कुसमिलिया	341	70	76	80	25	149	1326	1402	1490
7. हरदोईगूजर	463	32	37	46	35	207	1093	1182	1319
8. सोमई	322	43	51	61	46	296	928	1019	1252
9. सैदनगर	294	34	41	50	41	347	427	580	799
10. खरका	488	185	197	201	40	128	1302	1390	1454
11. रूराअड्डू	590	29	40	51	55	143	521	609	697
12. भुवा	290	26	49	78	81	159	542	657	742
13. नुनसाई	437	71	84	97	65	225	733	859	997
14. गुढ़ा	606	164	179	194	74	495	433	608	912
15. जैसारीकला	322	97	102	110	33	150	1472	1503	1642
16. बिनौरा	179	65	73	85	51	153	500	599	684
17. कुकरगांव	201	86	96	102	39	188	1045	1118	1256
18. चिल्ली	295	40	53	62	54	159	731	827	922
19. अकोढ़ी	432	53	65	71	44	121	853	937	1000
20. धुरट	213	84	97	108	61	351	528	740	914
21.इटवांजालौन	360	28	35	38	24	226	279	397	519
22.चकजगदेवपुर	195	40	47	52	31	109	197	272	325
23. राहिया	205	121	134	143	55	145	450	541	628
24. अजनारा	132	69	76	79	25	160	567	674	742
25. खदान	159	22	25	28	15	18	183	196	210
26. औंता	141	51	57	61	24	375	814	1010	1203
27. बर्ध	169	35	39	41	16	152	574	620	736
28. सिकरी	618	111	124	135	60	191	848	909	1075
29. कहटा	196	79	86	117	95	130	801	889	988
30. बन्धौली	1188	215	217	219	10	562	1446	1752	2010

PLANNING FOR INTEGRATED AGRICULTURALDEVELOPMENT
LANDUSE PLANNING
PLANNING FOR INFRASTRUC TURES & INPUTS
RELATED COMPLE-MENTARY INDUSTRIAL DEVELOPMENT
(A) EXPANSION OF N S A
1. RECLAMATION OF USAR LAND
2. RECLAMATION OF WATER LOGGED AREA
3. RECLAMATION OF CULTURABLE WASTE LAND
4. RECLAMATION OF FALLOW
(B) INTENSIVE USE OF N S A
1. INCREASING CROPPING INTENSITY
2. INCREASING PER UNIT AREA YIELD
3. SUITABLE CHANGES IN CROPPING PATTERN
4. SCIENTIFIC CROP ROTATION
(C) MIXED FARMING
1. DAIRY FARMING
2. POULTRY FARMING
3. PIGGERY DEVELOPMENT
4. FISHERY DEVELOPMENT
(D) FORESTRY
1. FARM FORESTRY
2. SOCIAL FORESTRY
INFRASTRUCTURES
INPUTS
(A) PHYSICAL INF RASTRUCTURE
1. IRRIGATION
2. MARKETING
3. STORAGE
4. PACKAGING & PROCESSING
5. ROADS
6. POWER
1. INPROVES SEEDS
2. FERTILIZERS & MANURES
3. PLANT PROTECTION MEASURES
4. IMPROVED IMPLEMENTS
5. FARM CREDIT
(B) INSTITUTIONAL INFRASTRUCTURE
1. AGRICULTURAL CREDIT
2. BANKING FACILITIES
3. EXTENSION & TRAINING
4. AGRO- SERVICE CENTRES
5. VETERINARY FACILITIES
6. IMPLEMENTATION OF CROP INSURANCE SCHEME
7. LAND REFORMS
8. PRICE POLICY
1. AGRO BASED INDUSTRIES
2. ANIMAL- BASED INDUSTRIES
3. DEMAND- BASED INDUSTRIES
4. FOREST- BASED INDUSTRIES

FIG. 4.3

C.बाढ़ नियंत्रण द्वारा (By Controlling Floods)–

सूखा एवं बाढ़ दो प्राकृतिक संकट हैं जो कि अध्ययन क्षेत्र की कृषि व्यवस्था को सीधे प्रभावित करते हैं। सिंचन सुविधाएं जुटाने पर सूखे की समस्या हल हो सकती है। लेकिन बाढ़ की समस्या को रोकने के लिये एक विस्तृत नियोजन की आवश्यकता है। वेतवा एवं उसकी सहायक छोटी नदियाँ विशेषतः उरई तहसील के दक्षिणी भाग को वर्षा ऋतु में बाढ़ से अत्यधिक प्रभावित करती हैं। सामान्यतः बाढ़ के कारण इस क्षेत्र के एक तिहाई भाग की कृषि उत्पादकता प्रभावित होती है। बाढ़ के मुख्य कारणों में–

1. अधिक वर्षा से नदी के जलस्तर में वृद्धि तथा तटवर्ती क्षेत्र जलमग्न;
2. वनों की कमी; तथा
3. अनियमित नहरें तथा उनकी सतह का उथला होना।

वस्तुतः यदि बाढ़ नियंत्रण हेतु उपयुक्त बाँध नहीं बनाए गए तो भूमि उपयोग को बढ़ाने एवं कृषि विकास की कोई भी योजना सफलतापूर्वक क्रियान्वित नहीं की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य उपाय भी इस समस्या के समाधान हेतु प्रस्तावित हैं–

1. कुछ क्षेत्रों के बाढ़ के पानी को एकत्र करने हेतु वेतवा पर प्रस्तावित दोनों ओर बांध तैयार कियेजायें, साथ ही उसकी सहायक नदियों मलंगा एवं नोन पर भी बांध बनाये जायें।
2. कटाव क्षेत्रों एवं नालों को भरने का प्रस्तावित अपूर्ण कार्य पूर्ण कराया जाय।
3. नदियों एवं नालों की तली में रेत के जमाव को समाप्त किया जाय।
4. बाढ़ग्रस्त क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले सभी गाँवों के तलों को ऊँचा उठाया जाय।
5. पानी के भराव वाली सड़कों पर पुलियों का निर्माण कराया जाय ताकि पानी सड़क पर न रूक सके।

6. तहसील एवं निकटवर्ती क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण का कार्य हो। यह उपाय निश्चित रूप से बाढों को रोकने तथा मौसमी उद्वेगों से कृषित भूमि को अत्यधिक अपरदित होने से बचाने में सहायता कर सकते हैं, जो कि कृषि फसलों के उत्पादन की वृद्धि में सहायक होंगे।

कृषि का विस्तार करना (Intensification of Cultivation)–

पूर्ववर्ती विश्लेषण से स्पष्ट है कि शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के क्षैतिकीय विस्तार का विशेष महत्व नहीं है। इस प्रकार कृषिगत भूमि का लम्बवत् दिशा में विस्तार होना चाहिए। दूसरे शब्दों में- कृषि के विकास हेतु यह प्रयत्न होना चाहिए जो कि कृषि उत्पादन के विकास के साधन के रूप में प्रभावकारी हों। फसलों की तीव्रता को बढ़ाने और सार्थक फसल प्रतिरूप एवं वैज्ञानिक फसल चक्र को अपनाकर विभिन्न फसलों का प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाना, लाभकारी कृषि यंत्रों का उपयोग आदि। कृषि उत्पादन को बढ़ाने में द्विसतही परिमाणों का उपयोग करना।

प्रति हेक्टेयर उत्पादन क्षमता को बढ़ाना (Improving Hectare Yeild Efficiencies)–

फसलों के उपलब्ध विभागीय आंकड़ों और क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त व्यक्तिगत अनुभवों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र का प्रति हेक्टेयर उत्पादन संतोषजनक नहीं है। जिसमें वृद्धि करने हेतु निम्नांकित उपाय सुझाये जा रहे हैं:–1. उपयुक्त फसल प्रतिरूपों को विकसित करना; तथा
2. वैज्ञानिक फसल चक्र को अपनाना।

शोध-क्षेत्र के लिये प्रस्तावित फसल चक्र प्रतिरूप
(Proposed Crop Pattern For Research Areaa)-

A. परतदार चिकनी मिट्‌टी (Silty Loam)-

1. शीघ्र पकनेवाली धान–गेहूं–प्याज; 2. शीघ्र होने वाली धान, अरहर–मसूर–सूरजमुखी
3. शीघ्र होने वाली धान–अलसी–सरसों–गन्ना।

B. चिकनी उपजाऊ मिट्‌टी (Clayey Loam)-

1. शीघ्र होने वाली धान–गेहूं–गन्ना;2. शीघ्र होने वाली धान–मोटे अनाज–प्याज;3.शीघ्र होने वाली धान–अरहर–वरसीम;तथा 4.शीघ्र होने वाली धान–सरसों–अलसी–गन्ना

C. चिकनी (Clayey)-

1. देर से पकने वाली धान–मसूर–अलसी–सूरजमुखी; 2. देर से पकने वाला धान–गेहूं – सब्जियाँ;तथा 3. देर से पकने वाला धान–सरसों–चना–सब्जियाँ।

D. चिकनी उपजाऊ (Clayey Fertile)-

1. शीघ्र पकने वाला धान–गेहूँ–मूंग, 2. शीघ्र पकने वाला धान–आलू–सूरजमुखी,3.शीघ्र पकने वाला धान–अरहर–वरसीम,4. शीघ्र पकने वाला धान–मटर–सरसों–गन्ना,5.शीघ्र पकने वाला धान–अलसी–मसूर–गन्ना।

E. बालू युक्त चिकनी मिट्‌टी (Sandy Loam)-

1. शीघ्र पकने वाला धान–गेहूँ–मूंग लोबिया;2.मक्का–गेहूँ–मूंग 3.देर से पकने वाला धान–वरसीम; तथा 4. शीघ्र पकने वाला धान–मटर–गन्ना।

आधुनिक लागतों का उपयोग (Use of Modern Inputs)-

प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाने के लिये यह आवश्यक है कि आधुनिक तकनीकी एवं लागतों का पर्याप्त एवं विशेष उपयोग किया जाय । इस सम्बन्ध में अगले भाग में विस्तृत चर्चा की जायेगी।

मिश्रित कृषि एवं अन्य कृषि का विकास (Emphasis on the Development of mixed farming and Agricutural allied sector)-

कृषि जोत हदबन्दी के साथ यह आवश्यक है कि लघु एवं सीमांत कृषकों की निर्धनता को कुछ सीमा तक समाप्त करने के उददेश्य से कृषि के विकास व कृषि क्षेत्र में अन्य सहायक व्यवासायों (दुग्ध व्यवसाय, मत्स्य पालन, मुर्गीपालन, एवं सुअरपालन आदि) को प्रोत्साहित करने की महती आवश्यकता है । इससे खाद्य समस्या तो हल होगी ही, साथ ही खेती का गहन उपयोग भी हो सकेगा (अरोरा,1979)।

दुग्ध व्यवसाय (Dairy Industry)-

गहन निर्वाहक एवं मिश्रित कृषि अपनाने के साथ – साथ डेयरी व्यवसाय के विकास पर बल

दिया जाय इससे काफी हद तक निर्धनता दूर की जा सकेगी । दुग्ध व्यवसाय के चर्तुमुखी विकास के लिये निम्नांकित व्यूहरचना अपनायी जानी चाहिए।

1. नियंत्रित जन्म दर; 2. संतुलित भोजन के प्रावधानों के अनुसार उचित भोजन प्रदान करना; 3. रोगों पर नियंत्रण; 4. प्रबंधन एवं बाजार; तथा 5. अनुचित भोजन एवं कूड़ाकरकट का लोप।

सुअर पालन (Piggery)-

सुअर पालन व्यवसाय में बसोर जाति को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है ताकि व्यापक स्तर पर इस उद्योग को बढ़ावा मिल सके। क्षेत्र में सुअर उद्योग को बढ़ावा देने के लिये निम्नांकित व्यूहरचना सुझाई जा रही है :

1. उन्नत किस्म की पालन – पोषण सामग्री के गरीब वर्गों में वितरण हेतु सुअर उत्पादन हेतु पालन पोषण सामग्री केन्द्र/ कृषि क्षेत्र स्थापित हों;2. उन्नत किस्म के सुअरों को उपयोग हेतु प्रोत्साहित करना; 3. विश्वसनीय कृषकों को उत्तम किस्म के सुअर उपलब्ध कराने की व्यवस्था करना; तथा 4. सुअर भोजन सामग्री की स्थानिक उपलब्धि हेतु फसल – चक्र में पीली मक्का की कृषि को प्रोत्साहित करना।

मुर्गीपालन विकास (Poultry Development)-

अध्ययन क्षेत्र में मुर्गीपालन उत्पादों, विशेषकर अण्डों की पर्याप्त मांग है। अण्डे क्षेत्र के बाहर से आयात किये जाते हैं । इस प्रकार क्षेत्र में मुर्गीपालन के विकास का विशेष महत्व है । अस्तु यह संस्तुति की जाती है कि क्षेत्र के प्रत्येक केन्द्रीय गांव में मुर्गीपालन केन्द्र स्थापित किये जायें। गुणात्मक वृद्धि केन्द्रों को विकासखण्ड मुख्यालय पर करने का सुझाव है जहां से छोटे एवं सीमान्त कृषकों को इस व्यवसाय के विकास हेतु सस्ते दामों पर अच्छे मुर्गी के बच्चे उपलब्ध कराये जाने चाहिये। एकत्रीकरण एवं बाजारीय केन्द्रों को प्रत्येक सेवा केन्द्र पर स्थापित करने का प्रस्ताव है ताकि मुर्गीपालक कृषक अपने उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त करने को आश्वस्त हों । मुर्गीपालन योजना का विकास निम्नांकित की उपलब्धता पर सफल होगाः–

1. अच्छे मुर्गी के बच्चे; 2. संतुलित मुर्गीपालन भोजन ; 3. तकनीकी जानकारी ; 4. रोग नियंत्रण; 5. प्रशीतन एवं बाजारीय सुविधायें ; तथा 6. किसानों को प्रशिक्षण सुविधायें ।

मत्स्यपालन विकास (Fishery Development)-

अध्ययन क्षेत्र में कुछ तालाब,झीलें,नदी तथा नाले हैं,जिनके अन्तर्गत कुल क्षेत्र का 1.26% भाग आता है जिसका1/3 भाग जलाशयों में वर्षभर जल भरा रहता है और उसे मछली व्यवसाय हेतु उपयोग किया जा सकता है। यहां तक कि मौसमी तालाब भी छोटे खर्चे के साथ इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उपयोग किये जा सकते हैं। क्षेत्र में उपलब्ध मछलीपालन का प्रबन्धन व्यक्तिगत लोगों द्वारा हो रहा है। इसके समुचित विकास हेतु निम्नांकित व्यूहरचना अपनानी चाहियेः–

1. कम से कम वर्षों के लिये मछली उत्पादकों को सम्बन्धित क्षेत्र पट्टे पर दिया जाना चाहिये।
2. मत्स्यविकास सम्बन्धी जलाशयों के विकासार्थ एवं गहराई हेतु मत्स्य कृषकों को पर्याप्त सहायता उपलब्ध कराई जानी चाहिये ।
3. अवस्थापनात्मक सुविधायें यथा-कूड़ाकरकट हटाने वाले औजार,प्रशीतन एवं बाजारीय सुविधायें,उर्वरक एवं खादें तथा ग्रीष्मकाल में सामान्य दरों पर पानी की आपूर्ति होनी चाहिये ।

सामाजिक वानिकी (Social Forestry)-

सामाजिक वानिकी कार्यक्रम जलाऊ लकड़ी की उपलब्धता बढ़ाने,पशु भोजन एवं ग्रामीण गरीबों को छोटे बाँस/लकड़ी के टुकड़े और विगड़ी पर्यावरणीय पद्धति को संतुलित करने का एक उपाय प्रस्तुत करती है। सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है (चित्र सं. 4.4)।

1. ग्रामीण क्षेत्रों में लकड़ी की आपूर्ति; (2) छोटे बॉस /लकड़ी के टुकड़ों की आपूर्ति करना; (3) पशु भोजन आपूर्ति; (4) पर्यावरणीय संतुलन दुरस्त रखना ; तथा (5) मिट्टी के अपरदन पर नियंत्रण।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के क्रम में सामाजिक वानिकी कार्यक्रम एक विशिष्ट उपाय है। उनमें से एक व्यक्तिगत भूमि पर क्षेत्र वनीकरण और सरकारी पट्टे की भूमि तथा वन विभाग द्वारा प्रदत्त सहायता पर आधारित है इस कार्यक्रम के अन्तर्गत वृक्षों के अनेक प्रकार खेतों की बंधियों पर उगाये जा सकते हैं। अध्ययन क्षेत्र में राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही सामाजिक वानिकी योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से इस कार्यक्रम के अन्तर्गत डकोर विकासखण्ड के कुसमिलिया ,डकोर ,कुकरगांव ,एट, कोटरा, सैदनगर, नुनसाई, चिल्ली ,मुहाना ,गुढ़ा, मगरायां,बिनौरा,बड़ागांव,राहिया,खरका ,सोमई तथा उरई में नर्सरी का विकास किया गया है। जिससे किसानों को सस्ते दामों पर पौधों की आपूर्ति की जाती है। फलस्वरूप वे अपने व्यवसाय के एक भाग के रूप में सामाजिक वानिकी कार्यक्रम को अपनाने के लिये प्रोत्साहित हो रहे हैं।

कृषिगत सुविधा संरचना का नियोजन (Planning for Agricultural Infrastructure)–

किसी क्षेत्र की कृषिगत क्षमताओं के उचित उपयोग हेतु कृषिगत अवस्थापनाओं का उचित नियोजन अत्यन्त आवश्यक है। कृषिगत अवस्थापनाओं में सिचाई की सुविधाएं ,यन्त्रों ,लागतों एवं साख वितरण,नवीन तकनीकी का हस्तांतरण,कृषि उपकरणों की मरम्मत एवं सर्विसिंग,कटाई के बाद की क्रियायें,भूमि सुधार,विस्तार एवं प्रशिक्षण ,कीमत नीति और प्राकृतिक विपदाओं इत्यादि से बचाव के उपाय आदि शामिल हैं । इन पूरक अवस्थापनाओं के अभाव में किसी क्षेत्र का एक सर्वांगीण विकास असम्भव है। अस्तु आवश्यक है कि कृषिगत विकास नियोजन का निर्धारण
अधिंकाश किसानों द्वारा अपनायी गई कुशलता एवं तकनीकों पर होना चाहिये और उन्हें रसायन, उर्वरक,कीटनाशक,उच्च उत्पादकता वाले बीज और विकसित सिंचन सुविधायें उपलब्ध कराकर की जानी चाहिये (फ्रेजर,1970)। आगे के पृष्ठों में अध्ययन क्षेत्र हेतु इन अवस्थापनाओं के नियोजनार्थ समुचित प्रयास किये गये हैं।

सिंचाई (Irrigation)–

कृषिगत विकास में, सिंचाई की एक निर्णयात्मक भूमिका है। जिसके अभाव में कृषि पिछड़ी तथा अस्थिर अवस्था में रहने को वाध्य है। यह मूलभूत अवस्थापनाओं में से एक है जिसके द्वारा बेहतर कृषि विधियां प्रभावशाली ढंग से स्थापित की जा सकती हैं । परन्तु अभी तक क्षेत्र के कृषीय अध्ययन में यह महत्वपूर्ण स्थान नहीं प्राप्त कर सकी हैं। वर्तमान समय में शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल की केवल 26.34% क्षेत्र ही सिंचित है। अतः भविष्य में कृषि विकास हेतु यह आवश्यक है कि बड़े पैमाने पर सिंचन सुविधाओं का विकास किया जाय । स्थानिक स्तर पर सिंचाई

SOCIAL FORESTRY IN THE SERVICE OF RURAL POOR
SOCIAL FORESTRY PROJECT
TIMBER FOR HOUSING & FARM IN PLEMENTS
EDIBLE ERUITS FLOWERS SEEDS SMALL TIMBERS ETC.
RAW MATERIAL FOR COTTAGE INDUSTRY SILKWORMS ETc.
EMPLOYMENT FOR COLLECTION OF FUEL WOOD BY RURAL CHILDREN
EMPLOYMENT
RURAL ECONOMY
FUEL WOOD ENERGY
RELEASE OF COWDUNG
EDUCATION OF RURAL CHILDREN
FODDER
GRASS
CATTLE
MANURE
FARMS
HIGHERYIELD OF FOOD GRAINS
SOIL & MOISTURE CONSERVATION
IMPROVING SOIL FERTILITY & ENVIRONMENT
REDUCED FLOOD & SOIL EROSION
BETTER HEALTH
REDUCTION IN EXODUS TO URBAN AREAS
FEEDBACKS AS PARTICIPATION OF RURAL POOR
SOURCE : SOCIAL FORESTRY IN INDIA - BY K.M. TIWARI

FIG. 4.4

सुविधाओं में असमानताएं विद्यमान हैं। यही कारण है कि इस क्षेत्र में प्रति हेक्टेयर पैदावार में विषमता पाई जाती है। नदियों के किनारे वाले ऊबड़–खाबड़ क्षेत्रों में प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम व मैदानी भागों में अधिक है। वेतवा नदी द्वारा प्रभावित बाढ़ क्षेत्र / मैदानी भागों में भी कृषि कार्य अधिकांशतः मृदा में उपलब्ध प्राकृतिक नमी की सहायता से किये जाते हैं जिसके कारण इस पट्टी में भी सिंचित क्षेत्र का अनुपात सामान्यतः निम्न है। जैसे – बड़ागांव न्याय पंचायत में शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 20% भाग ही सिचिंत है और ऐर न्यायपंचायत में 20 से 50 प्रतिशत क्षेत्रफल सिंचित है । यहां यह तथ्य उल्लेखित किया जा सकता है कि दक्षिण क्षेत्र मे सिंचाई की तीव्रता का कारण यहां के किसानों का प्रति हेक्टेयर अधिक उपज प्राप्ति हेतु कृषि संसाधनों के विकास की ओर झुकाव है इसके विपरीत अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी भागों में सिंचित क्षेत्रों का अनुपात सामान्य से उच्च अर्थात् 40 से 60 प्रतिशत और अत्यधिक उच्च 70 प्रतिशत से भी अधिक है। इसका कारण क्षेत्र में नलकूपों की संख्या की अधिकता है। इसके साथ ही उत्तरी भूभाग का धरातल समतल होने के कारण कुएं एवं तालाबों द्वारा भी सिंचाई की जाती है।

सिंचाई के साधन (Sources of Irrigation)-

कृषि कार्य हेतु जल उपलब्ध कराने वाले साधनों को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:–

१. भूमिगत जल – नलकूप एवं कुएं।

२. सतही जल – तालाब और झीलें, नाला एवं नदियां तथा नहरें ।

तालिका सं.4.6

विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल 1992 - 93

क्र.सं. एवं साधन का नाम	सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	शुद्ध बोये गये क्षेत्र का प्रतिशत	शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
1. नलकूप	17120	87.86	22.61
2. कुएं	1998	10.25	2.63
3. तालाब	203	1.04	0.26
4 नहरें	04	0.03	0.01
5 अन्य साधन	160	0.82	0.21

स्त्रोत - चिट्ठा मिलान खसरा,1394 फसली, तहसील उरई।

चित्र सं.4.6 से यह स्पष्ट है कि भूमिगत जल ही सिंचाई का मुख्य साधन है जिसके अन्तर्गत नलकूप एवं कुओं को शामिल किया गया है। यह शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के 87.86 प्रतिशत भाग में सिंचाई के लिये प्रयुक्त होता है जबकि सतही जल केवल 13.14 प्रतिशत भाग में ही सिंचाई हेतु उपयोग में लाया जाता है लेकिन उत्तरप्रदेश राज्य में यह स्थिति इससे बिलकुल भिन्न है जहां कि भूमिगत जल का प्रयोग 56.10 प्रतिशत क्षेत्र में और सतही जल का प्रयोग 47.90 प्रतिशत भूभाग में सिंचन हेतु होता है।

नलकूप (Tube-Wells)-

नलकूप सिंचाई के सर्वाधिक विश्वसनीय साधन हैं जो कि तहसील के शुद्ध सिंचित क्षेत्र के 77.62 प्रतिशत भाग की सिंचाई के काम आते हैं। क्षेत्र में 59 व्यक्तिगत नलकूप, 66 शासकीय और 734 पम्पसेट हैं। इनका विकासखण्ड स्तर पर वितरण तालिका संख्या-4.7 में दर्शाया गया है चित्र सं. 4.5 A।

तालिका सं.-4.7

नलकूपों एवं पम्पसेट्स का वितरण 1992-93

क्र.सं. एवं साधन का नाम	संख्या
1. निजी कूप (पक्के)	261
2. रहट	26
3. पम्पसेट/बोरिंग	734
4. निजी नलकूप	59
5. राजकीय नलकूप	66

तालिका संख्या 4.7 द्वारा यह स्पष्ट है कि नलकूपों एवं बोरिंग पम्पसेट्स की अत्यधिक सघनता तहसील के उत्तरी एवं मध्य भाग में है। जहां कि भूमिगत जल का उचित स्तर इनकी खुदाई में सहायक है। इसके विपरीत इनकी संख्या दक्षिणी एवं दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र में बहुत कम हैं। विशेषतः इसके उत्तरी पश्चिमी भाग में पम्प सेट्स की कमी को कुछ हद तक पूरा करते हैं। ये पम्पसेट्स पानी को नालों, नहरों, तालाबों और टैंकों से पम्प करके यथा सम्भव स्थानों तक पहुंचाकर सिंचाई का कार्य पूरा करते हैं।

कुएं (Wells)-

अध्ययन क्षेत्र के शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के 10.42 प्रतिशत क्षेत्र की सिंचाई का कार्य कुओं के द्वारा सम्पन्न होता है तथा सिंचाई साधनों के वरीयता क्रम में इनका स्थान तीसरा है। कुएं साधारणतम् एवं सर्वसुलभ सिंचाई के साधन हैं। शोध क्षेत्र के पूर्वी भाग में कुओं की संख्या सर्वाधिक है। क्योंकि यहां पर नलकूप कम मात्रा में है। साथ ही इस क्षेत्र में जल स्तर ऊंचा होने के कारण शीघ्रता से जल प्राप्त हो जाता है।

तालाब एवं झीलें (Ponds and Lakes)-

सिंचाई के अन्य प्रमुख साधन के रूप में तालाब एवं झीलों का स्थान आता है। जो कि शुद्ध सिंचित क्षेत्र के 0.002 प्रतिशत भाग की सिंचाई करते हैं। ये जलस्रोत भी तहसील में असामान्य रूप से फैले हैं। इनकी संख्या दक्षिणी भाग में विशेषतः कम है जबकि अध्ययन क्षेत्र के मध्य क्षेत्र इनसे भरे पड़े हैं। इनके अतिरिक्त नदियों, नालों एवं नहरों का भी अपना स्थान है जो संयुक्त रूप से शोध क्षेत्र में सिंचित क्षेत्रफल के 0.84 प्रतिशत भूभाग की सिंचाई करते हैं।

नहरें (Cannals)-

नहरें तहसील की कुल सिंचित भूमि के मात्र 0.3 प्रतिशत भाग की सिंचाई करती हैं। क्षेत्र की जनता को नहर द्वारा सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने की दृष्टि से शासन ने वेतवा नदी पर दो पम्पसेट्स एवं मलंगा नदी पर एक पम्पसेट लगाया गयाहै। जो कि उपरोक्त जलाशयों से पानी पम्प करके अपने चारों ओर की भूमि की सिंचाई करते हैं। वेतवा नदी के पम्पसेट्स हर समय चालू रहते

TAHSIL ORAI
A DISTRIBUTION OF TUBEWELLS & PUMPSETS
N
1 0 1 2 3 4 5
KMS
NO. OF TUBEWELLS & PUMPSETS
700
600
500
400
300
200
100
PERSONAL WELLS
WATER WHEELS
PUMPSETS
PERSONAL TUBEWELLS
GOVT. TUBEWELLS
B ESTIMATED SEEDS OF HIGH YIELDING CAPACITY
QUANTITY OF SEEDS (IN QUINTAL)
4500
4000
3500
3000
2500
2000
1500
1000
500
PADDY
WHEAT
MAIZI
PULSES
OILSEEDS
SUGARCANE
PROPOSED FOR
2001
2005
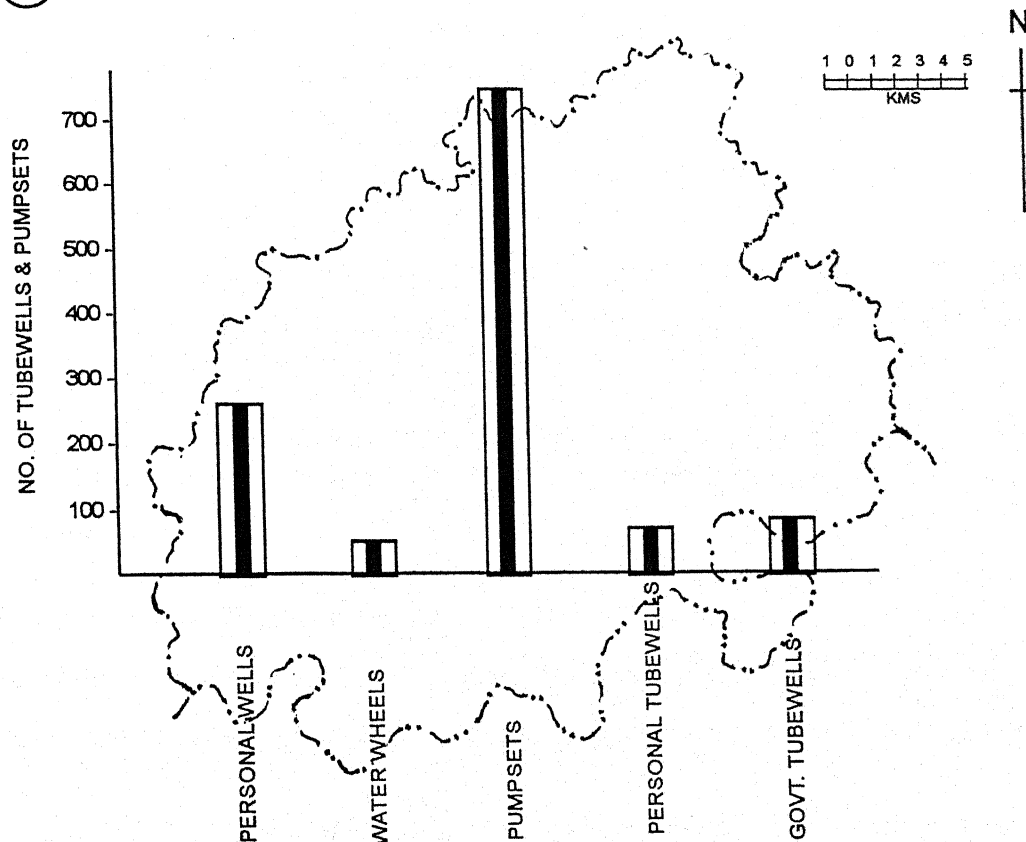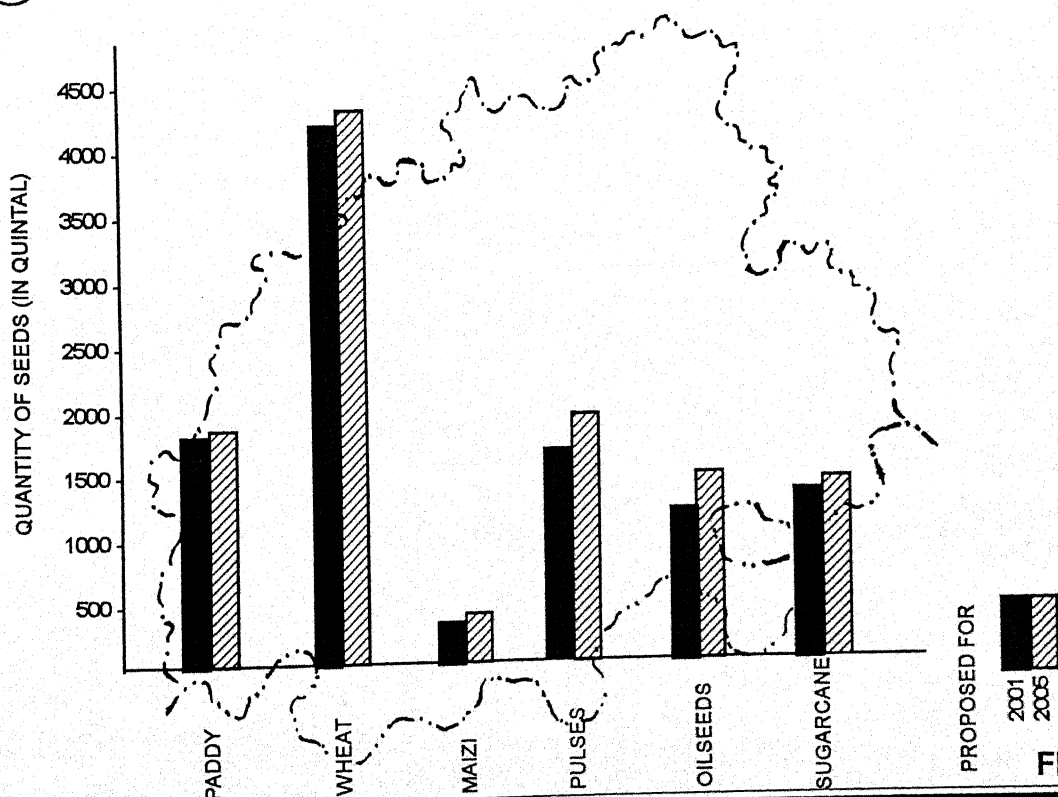
FIG. 4.5

हैं जबकि मलंगा नदी का पम्प सेट केवल बरसात के दिनों में ही चालू रह सकता है।

सिंचाई सुविधाओं के विकास हेतु प्रस्ताव (Proposal for Extention of Irrigation Facilities)-

पूर्व वर्णित परिस्थितियों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में सामान्य तौर पर और विशेष रूप से क्षेत्र में विद्यमान सिंचाई व्यवस्था पूर्णतः असंतोषजनक स्थिति में है। यह इस बात की चेतावनी है कि क्षेत्र की सिंचाई व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने हेतु उपयुक्त साधनों की खोज की जाय। इस कार्य हेतु निम्नलिखित उपाय प्रस्तावित किये जा रहे हैं।

(1) जलाशयों में वर्षा के जल का संग्रहण करके उन्हें विकसित किया जाय ताकि शुष्क मौसम में भी सिंचाई के काम आ सकें।

(2) असिंचित क्षेत्रों में विस्तृत रूप में ताल-तलैयों की खुदाई व साफ करने पर बल दिया जाय।

(3) बरसाती जल को उपयोग में लाने हेतु नालों पर स्थानिक स्तर के चेक डैम बनाये जायें।

(4) नहरों के विस्तृतीकरण व विकास पर बल दिया जाय।

(5) क्षेत्र में बहुत से तालाब एवं झीलें ऐसी हैं जो कि बाढ़ को रोकने में मददगार एवं मत्स्य पालन हेतु उपयोगी होने के साथ कुछ भागों की सिंचाई में भी सहयोग कर सकती हैं, को संरक्षित किया जाना चाहिए।

(6) किसानों को व्यक्तिगत नलकूपों के उत्खनन हेतु पर्याप्त ऋण सामान्य शर्तों पर एवं नाममात्र की ब्याज दरों पर उपलब्ध कराया जाय।

(7) सिंचाई कार्यों हेतु वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर फसलों को अधिकाधिक लाभ पहुंचाया जाय।

(8) वेतवा नदी पर बांध बनाकर भी मुहाना तथा उसके आसपास की तमाम भूमि की सिंचाई की जा सकती है।

(9) शोध क्षेत्र को पूर्णरूपेण सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराने की दृष्टि से व्यक्तिगत नलकूपों के उत्खनन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

उच्च उत्पादन देने वाले बीजों की किस्में (High Yeilding Varieties of Seeds)-

बीजों की गुणवत्ता एवं किस्में कृषि पैदावार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। कृषि पैदावार की अधिकतम वृद्धि हेतु उच्च उत्पादन देने वाले बीजों की आवश्यकता होती है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि कृषकों द्वारा गेहूं एवं धान की कृषि में उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग किया जा रहा है। यद्यपि यह प्रयोग विशेषतः सम्पन्न अथवा जागरुक किसानों द्वारा ही किया जा रहा है। इनके प्रयोग को अन्य किसानों द्वारा भी अपनाया जाना चाहिए। उच्च उत्पादन क्षमता वाले बीजों की अनुमानित आवश्यकता तालिका संख्या 4.8 में एवं चित्र सं. 4.58में दर्शायी गयी है।

तालिका सं. 4.8

उच्च उत्पादन क्षमता वाले बीजों की अनुमानित मात्रा

क्र.सं.एवं नाम फसल	वर्ष	
	2001	2005
1. धान	1854	1865
2. गेहूं	4025	4489
3. मक्का	0202	0212
4. दालें	1552	1847
5. तेल बीज	1059	1440
6. गन्ना	1272	1350

वस्तुतः किसानों को उचित समय में सही दर एवं मात्रा में उच्च गुणवत्ता वाले कृषि बीज उपलब्ध कराने के उद्देश्य से एक उपयुक्त प्रबंधन की व्यवस्था की जानी चाहिए। बीज प्रबंधन कार्यक्रम के निम्नांकित तीन स्तर हैं।

(1) बीज उत्पादन; (2) बीज प्रमाणीकरण; तथा

(3) बीज संवितरण।

क्षेत्र सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ कि क्षेत्र में कुछ सहकारी समितियां, सरकारी संस्थाएं और व्यक्तिगत अभिकरण बीज वितरण का कार्य कर रहे हैं लेकिन उनका कार्य संतोषजनक नहीं है। वैसे तहसील के अन्दर सरकारी/अर्धसरकारी बीज उत्पादन एवं प्रमाणीकरण की मात्र एक संस्था उरई में है। जो समस्त क्षेत्र के किसानों को त्वरित एवं आवश्यक सुविधाएं देने हेतु पर्याप्त नहीं हैं। अतः किसानों को बीजों के सम्बन्ध में त्वरित सेवाएं प्रदान करने हेतु बीज प्रमाणीकरण, परीक्षण एवं वितरण का उचित प्रबंधन तथा कृषि शिक्षा एवं प्रशिक्षण सभी सेवा केन्द्रों में स्थापित किये जाने चाहिए।

उर्वरक एवं खादें (Fertiligers and Mannurs)-

उर्वरक एवं खादें पौधों के विकास हेतु आवश्यक उचित तत्व प्रदान करते हैं। मिट्टी से एक फसल लेने के पश्चात यह आवश्यक है कि मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए आवश्यक उर्वरक प्रदान किये जायें। यदि ऐसी व्यवस्था नहीं होगी तो मिट्टी की उर्वरता नष्ट होगी और फसलोत्पादन प्रभावित होगा। अस्तु कृषि विकास हेतु आवश्यक है कि मिट्टी के खोये हुए तत्वों की पूर्ति के उपाय किये जायें। जो कि नाइट्रोजन, फासफोरस एवं पोटाश जैसे पोषक तत्वों की आपूर्ति में सहायक हों। विशेषकर नाइट्रोजन पौधों की वृद्धि तथा तनों एवं पत्तियों के हरे रंग हेतु उत्तरदायी है। इसकी कमी के कारण पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और पौधों की बाढ़ रुक जाती है। इससे पैदावार में कमी आती है। फासफोरस जड़ों की वृद्धि के साथ फलों एवं बीजों के निर्माण में सहायक हैं। इसकी कमी के कारण तनों का रंग लाल या बैंगनी हो जाता है। पोटेशियम पौधों को बदलते मौसम को बरदाश्त करने की क्षमता में वृद्धि करता है। साथ ही बीमारियों एवं कीटों से सुरक्षा प्रदान करता है (अरोरा, 1979)।

सर्वेक्षण से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि मिट्टी में नाइट्रोजन, फासफोरस एवं पोटाश की कमी है जिससे उर्वरता में कमी आयी है। इसके लिए कुछ हद तक कृषि कार्य, जो कि एक

लम्बे समय से परम्परागत रूप से किये जा रहे हैं, भी उत्तरदायी हैं। इतना ही नहीं, आंशिक रूप से जलवायु दशाएं भी पोषक तत्वों का सन्तुलन बिगाड़ने के लिए उत्तरदायी हैं। इसलिए मृदा में उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग किया जाना आवश्यक है। ताकि उनकी उर्वरता शक्ति में एक लम्बे समय तक कोई विपरीत प्रभाव न पड़े। इसलिए विभिन्न फसलों की अधिकतम पैदावार निर्धारित करने से पूर्व यह आवश्यक है कि विभिन्न फसलों द्वारा मृदा से हटाये जाने वाले उर्वरकों की मात्रा की जानकारी हो। जिसे निम्नांकित तालिका संख्या 4.9 में दर्शाया गया है।

तालिका सं. 4.9

विभिन्न फसलों द्वारा मृदा से हटाये गये पोषक तत्वों की मात्रा

क्र.सं. एवं	नामकरण	उत्पादन प्रति	मात्रा प्रति हेक्टेयर		(कि.ग्रा. में)
	नामकरण	हेक्टे.(किग्रा.में)	नाइट्रोजन	फासफोरस	पोटाश
1.	गेहूं	2,000	61.25	25.00	50.00
2.	चावल	4,775	65.00	20.00	75.00
3.	मसूर	2,375	55.00	27.00	48.75
4.	गन्ना	90,000	87.50	53.75	192.50
5.	आलू	25,000	105.00	47.50	212.50
6.	प्याज	30,000	80.00	40.00	121.25
7.	तम्बाकू	2,000	132.50	40.00	242.50

स्रोत-अरोरा, 1976, पेज 61

तुलनात्मक क्षमता की दृष्टि से मिश्रित उर्वरकों (एन. पी. के.) का प्रयोग एकल उर्वरक के प्रयोग की अपेक्षा अधिक फलदायी है। अतः कृषि वैज्ञानिक इन उर्वरकों का मिश्रण अधिकतम उत्पादन की दृष्टि से संतुलित मात्रा में प्रयोग करने की सिफारिश करते हैं। क्षेत्र के मृदा परीक्षण के आधार पर विभिन्न उर्वरकों की अनुमोदित मात्रा तालिका सं. 4.10 में प्रदर्शित है।

तालिका सं. 4.10

विभिन्न फसलों में प्रयोग हेतु उर्वरकों की अनुमोदित मात्रा

क्र.सं.एवं	अनुमोदित मात्रा		प्रति हेक्टे.	(कि.ग्रा.में)	
	नामफसल	गोबर की खाद	नाइट्रोजन	फासफोरस	पोटाश
1.	गेहूं	8,000	125	65	40
2.	धान	8,000	135	45	35
3.	मक्का	8.500	140	50	35
4.	मटर	1,500	10	45	-
5.	सरसों	-	90	50	45
6.	गन्ना	5,000	220	55	45
17.	आलू	6,000	220	65	90

स्रोत- भूमि परीक्षण सेवा, कृषि विभाग, झांसी मंडल (उ.प्र.) 1989

चूंकि उर्वरकों की विभिन्न बोरियों में पृथक-पृथक तत्वों का प्रतिशत अलग-अलग मात्रा होता है। इसलिए उर्वरकों की सही मात्रा की गणना हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया गया है।

$$\text{उर्वरक की मात्रा} = \frac{\text{उर्वरक की अनुशंसित मात्रा} \times 100}{\text{दिये गये बैग (बोरी) के उर्वरक में तत्व की मात्रा}}$$

उदाहरणार्थ- यदि हमें तालिका संख्या के संदर्भ में एक बोरी, जिसमें नाइट्रोजन 46 प्रतिशत है, में नाइट्रोजन की सही मात्रा ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित मात्रा में प्रति गेहूं के उत्पादन हेतु उर्वरक का प्रयोग करना पड़ेगा।

$$\frac{125 \times 100}{46} = 271.74kg$$

उर्वरकों की गणना के इस नियम और विभिन्न फसलों की वर्तमान और प्रस्तावित प्रति हेक्टेयर उत्पादन एवं वर्तमान प्रति हेक्टेयर उत्पादन को ध्यान में रखते हुए उर्वरकों की आवश्यकता का अनुमापन किया गया है।

क्षेत्र की विभिन्न फसलों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता के आधार पर नाइट्रोजन, फासफोरस (सिंगल सुपर फासफेट) और पोटाश की सकल आवश्यक मात्रा 1992-93 में क्रमशः 22.148, 28832, और 4,889 मीट्रिक टन थी। लेकिन वास्तविक रूप से प्रयुक्त नाइट्रोजन की मात्रा 2095 मी. टन. फासफोरस की मात्रा 54० मी. टन तथा पोटाश की मात्रा 154 मी. टन है जो कि नाइट्रोजन की आवश्यक मात्रा की मात्र 9.13 प्रतिशत फासफोरस की आवश्यक मात्रा 1.87 प्रतिशत तथा पोटाश की वास्तविक मात्रा का 3.15 प्रतिशत है। इससे यह सिद्ध होता है कि क्षेत्र में उर्वरकों के प्रयोग की मात्रा का स्तर अत्यन्त न्यून है।

क्षेत्रीय अन्वेषण के दौरान किसानों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि उर्वरकों की ऊंची कीमत, सिंचाई की अपर्याप्तता, आसान किश्तों पर ऋण की अनुपलब्धता, समय पर उर्वरकों का न मिल पाना और तकनीकी ज्ञान का अभाव आदि उर्वरकों के निम्न स्तरीय प्रयोग का प्रमुख कारण है। जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्यान्नों की अधिक मांग को ध्यान में रखते हुए समय की यह मांग है कि कृषि उत्पादों की वृद्धि हेतु किसानों को उर्वरकों की उचित मात्रा के प्रयोग के लिए हेतु सहमत किया जाय। यह कार्य उर्वरकों के मूल्य को कम करके पर्याप्त सिंचाई सुविधाएं व पर्याप्त मात्रा में ऋण उपलब्ध कराकर और समय पर उर्वरकों की प्राप्ति का प्रबंध कर तकनीकी सहायता निश्चित करके व उचित मार्गदर्शन देकर सम्भव बनाया जा सकता है।

भविष्य की अनुमानित आवश्यकताएं (Estimated Requirments For Future)-

भविष्य में विभिन्न फसलों की प्रति हेक्टेयर अधिक पैदावार के कारण भविष्य में उर्वरकों की अनुमानित आवश्यकता में भी वृद्धि होगी। सन् 2001 के लिए नाइट्रोजन, फासफोरस (सिंगल सुपर फासफेट) और पोटाश की अनुमानित मात्रा क्रमशः 25981, 31673 और 5477 एवं 2005 के लिए नाइट्रोजन, फासफोरस (सिंगल सुपर फासफेट) तथा पोटाश की मात्रा क्रमशः 28,355, 34,854 और 5,988 होगी। इसमें तनिक संदेह नहीं की कृषि उपज की वृद्धि हेतु उर्वरकों का प्रयोग अपरिहार्य है तथापि उनका आवश्यकता से अधिक प्रयोग वातावरण एवं मृदा की गुणवत्ता को विपरीत रूप से प्रभावित करता है। इसलिए कृषकों को उनके संतुलित मात्रा में उपयोग हेतु सलाह देने की महती आवश्यकता है (शफी 1983)। इसके अतिरिक्त उर्वरकों का वितरण प्रभावशाली तरीके से होना चाहिए जिससे वे आसानी से किसानों की पहुंच में समय पर उपलब्ध हो सके। इस हेतु सम्पूर्ण केन्द्रीय गांवों को वितरण बिन्दु के रूप में विकसित करने का प्रस्ताव है। उर्वरकों की आपूर्ति हेतु प्रत्येक

सेवाबिन्दु में गोदाम सेवाकेन्द्रों में उपडिपो तथा विकास बिन्दु में डिपो एवं वृद्धि केन्द्र में बड़े डिपो बनाने का प्रस्ताव है।

जैवीय उर्वरक (Biological Fertiligers)-

उर्वरकों की महती आवश्यकता को ध्यान में रखकर वैज्ञानिकों ने एक नवीन तकनीक का विकास किया है जिसके द्वारा किसी नाइट्रोजन युक्त उर्वरक का प्रयोग किये बिना भी कृषि उपज को 70 प्रतिशत से भी अधिक बढ़ाया जा सकता है। इसको खेतों में ढाल लगाकर प्राप्त किया जा सकता है। यह तकनीक इस तथ्य पर आधारित है कि दलहन की फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन को सीधे ही मृदा में शोषित कर लेती है। इन फसलों के पौधों की जड़ों में 'राइजोबियम' नामक बैक्टीरिया पाया जाता है जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अवशोषित करके सीधे पौधों को उपलब्ध करा देता है (बन्सल, 1977)। अतः इन फसलों में नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों का प्रयोग व्यर्थ है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए दलहन, तिलहन और चारा फसलों के क्षेत्र को बढ़ाने की सलाह दी जानी चाहिए। इससे नाइट्रोजन के आयात में बचत होगी और इसकी कमी को जैवीय उर्वरक द्वारा पूरा किया जा सकेगा।

खादें (Mannurs)-

रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक मात्रा में एकल प्रयोग नुकसान दायी है। इससे शनैः शनैः मिट्टी की उर्वरता में ह्रास होता है और मिट्टी में क्षारीय तत्वों का समावेश होने लगता है। अतः मृदा की प्राकृतिक उर्वरता को लम्बे समय तक बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि रासायनिक उर्वरकों के साथ विभिन्न प्रकार की खादों का प्रयोग किया जाय। शैलाधर इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज, इलाहाबाद के वैज्ञानिक डा. धर के अनुसार कृत्रिम उर्वरकों का प्रयोग स्थायी कृषि हेतु कोई समाधान नहीं है। उनके अनुसार एक जैवीय द्रव्यों और फासफेट्स का मिश्रण, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करता है, पौधे को समस्त तत्वों की पूर्ति करने में सक्षम है। यह सम्पूर्ण विश्व में स्थायी कृषि हेतु सर्वाधिक उपयुक्त है।

गोबर की खाद (Farm Yard Mannure)-

यह मृदा हेतु पोषक तत्वों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है (अरोरा, 1979) की गणनानुसार एक पशु के द्वारा प्रतिवर्ष 35 प्रतिशत नाइट्रोजन, 12 प्रतिशत फासफोरस और 15प्रतिशत पोटाश प्राप्त होती है। इसी प्रकार एक भेंड के द्वारा प्रतिवर्ष 25 प्रतिशत नाइट्रोजन, 50 प्रतिशत फासफोरस और 15प्रतिशतु पोटाश की प्राप्ति होती है। जानवरों के गोबर का बेहतर उपयोग गोबर गैस संयंत्र और हड्डी पीसने के संयंत्र में हो सकता है जिसके द्वारा एकऔसत आकार के परिवार की आवश्यकता पूर्ति हेतु पर्याप्त मात्रा में खाद भी उपलब्ध होती है। इन संयंत्रों का संचालन वैज्ञानिक विधि से किया जाना चाहिए जिससे कि जानवरों के मूत्र और अन्य जैवीय पदार्थों की बरवादी न हो। फसलीय कृषि में गोबर की खाद का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसमें पौधे के समुचित आहार हेतु सम्पूर्ण तत्व प्राप्त हो जाते हैं। यह मृदा की नमी बनाये रखने की क्षमता में वृद्धि करता है और पौधों की वृद्धि रासायनिक उर्वरकों के अवशोषण में भी सहायता करता है। अन्य अनुपयोगी वस्तुएं जैसे-घरों का कूड़ाकरकट, भूसा, मक्के की टहनियां, पेड़ों की पत्तियां इत्यादि का उपयोग भी कम्पोस्ट खाद के निर्माण हेतु किया जा सकता है। इन वस्तुओं को डिकम्पोंज करके कम्पोस्ट खाद बनाने हेतु शोध क्षेत्र के समस्त गांवों में वैज्ञानिक मापदण्डों के आधार पर कम्पोस्ट गड्ढे खोदने की अनुशंसा की जाती है।

हरी खादें (Green Mannurs)-

हरी खादें भी मृदा की उर्वरता की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। यह मृदा की भौतिक दशा में सुधार करती हैं। जलग्रहण क्षमता में वृद्धि करने के साथ-साथ पौधों द्वारा पोषक तत्वों के अवशोषण की क्षमता को बढ़ाने में सहायक हैं। जिनके द्वारा अन्ततः कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। परन्तु शोध क्षेत्र में अपर्याप्त सिंचाई सुविधाएं होने के कारण हरी खादों का प्रयोग लोकप्रिय नहीं है। यद्यपि कि रासायनिक उर्वरकों की कमी और हरी खादों से होने वाले लाभों के कारण इनके प्रयोग की अनुशंसा सिंचाई सुविधायुक्त क्षेत्रों में की गयी है। अध्ययन क्षेत्र में ढैंचा, सनई और बाजरा के डन्ठलों, पत्तियों एवं खरपतवार का प्रयोग हरी खाद हेतु किया जा सकता है। लेकिन, चूंकि सभी प्रकार की खादें संयुक्त रूप से भी आधुनिक कृषि की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाने में अक्षम है अतः इनका प्रयोग रासायनिक उर्वरकों के साथ किया जाना अधिक लाभकारी सिद्ध होगा इससे मृदा की उर्वरकता को संरक्षण प्राप्त होने के साथ-साथ पैदावार में भी पर्याप्त वृद्धि होगी।

पौध संरक्षण के तरीके (Plant Protection Measures)-

कृषि उपज में वृद्धि हेतु आधुनिक कृषि तकनीक में पौध संरक्षण के तरीकों पर अत्यधिक बल दिया गया है। क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान यह बात प्रकाश में आयी कि फसली कीटों एवं बीमारियों के द्वारा फसलों और रोपित पौधों विशेषतः अधिक उपज देने वाली फसलों को सर्वाधिक नुकसान पहुंचाते हैं। अतः इन कीटों एवं बीमारियों द्वारा फसलों के नुकसान में कमी लाने के लिए उच्च उत्पादकता वाली फसलों के बीज, जिनकी खेती काफी मंहगी है, के पौधे हेतु अत्यधिक मात्रा में पौध संरक्षण के तरीकों की आवश्यकता है अन्यथा इसकी असफलता खेतिहर किसानों को पूर्ण रूप से बरवाद कर देगी।

पौध संरक्षण के तरीकों का (1) रासायनिक; (2) यांत्रिक; (3) सांस्कृतिक; तथा (4) जैवीय नियंत्रकों के रूप में अपनाया जा सकता है। पौधों के संरक्षण हेतु एवं कीटनाशकों का प्रयोग सर्वाधिक प्रचलित है।

इसमें विषैले रसायनों का पाउडर या घोल के रूप में पौधों पर छिड़काव किया जाता है। यांत्रिक अथवा शारीरिक नियंत्रण में कीटों का उन्मूलन यांत्रिक तरीकों से किया जाता है। इसमें बीमार पौधों की तोड़ना या उनको जलाना, चिड़ियों, बंदरों और अन्य जन्तुओं को भगाना इत्यादि क्रियाएं की जाती हैं। सांस्कृतिक नियंत्रकों में गुड़ाई, पौधों के बीच अन्तर रखना इत्यादि शामिल हैं। जबकि जैविक तरीकों में नुकसान करने वाले जानवरों एवं कीड़ों का नियंत्रण खेत में प्राकृतिक शत्रुओं को पैदावर करके किया जाता है। उदाहरणार्थ-टेट्रासाइकस पाइरिला एक परजीवी है जो कि गन्ने की फसल में लगे पाइरिला नामक कीटों को नष्ट कर देता है।

कृषकों को रासायनिक एवं जैविक तरीकों का उपयोग तभी करने की सलाह दी जानी चाहिए जबकि यांत्रिक एवं सांस्कृतिक तरीके असफल हो जायें। क्योंकि इनका अत्यधिक प्रयोग फसलों के उत्पादन के लिए फायदे की तुलना में अधिक नुकसान दायक सिद्ध होगा। क्षेत्र में गांव के ग्राम प्रधानों को वितरण सुविधाओं हेतु को विस्तृत कार्यक्रम के द्वारा प्रदर्शन पद्धति से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। शोध क्षेत्र के समस्त केन्द्रीय ग्रामों को रसायनों एवं कीटनाशकों के वितरण केन्द्रों के रूप में कार्य करने का प्रस्ताव है।

विकसित कृषि यंत्र (Developed Agricultural Implements)-

कृषि तकनीक में नवीनतम् खोजें कृषि कार्यों को कम समय में और सही समय पर करने पर बल देती हैं जिन्हें कि केवल उपयुक्त कृषि यंत्रों और आवश्यक विशेषता युक्त कृषि यंत्रों एवं

मशीनों की सहायता से किया जा सकता है। क्षेत्रीय खोजों के दौरान यह पाया गया कि तहसील के बड़े एवं मध्यम कृषक धीमी गति से परन्तु लगातार आधुनिक कृषि यंत्रों जैसे- ट्रैक्टर, ट्राली, हैरो, लेबिलर्स एवं हारवेस्टिंग इम्प्लीमेंट्स के सही समय पर अधिकतम उत्पादन हेतु प्रयोगों को बढावा दे रहे हैं। परन्तु अधिसंख्य किसान जो कि गरीब एवं अशिक्षित हैं, अब भी परम्परागत कृषि ढंगों/ यंत्रों का उपयोग कर रहे हैं। यद्यपि शोध क्षेत्र हेतु अत्यधिक जटिल तकनीक उपयुक्त नहीं है तथापि कृषि में परिश्रम एवं कम खर्चीली बनाने तथा अधिक उत्पादन प्राप्त करने की दृष्टि से आधुनिक कृषि यंत्रों को लोकप्रिय बनाना होगा। तहसील उरई में कृषि विकास को अत्यधिक आवश्यस्त करने हेतु निम्नलिखित उपायों को अपनाने की अनुशंसा की जाती है।

(1) कृषकों को खेत की जुताई, बुआई, निराई, कटाई कड़ाई और खेत प्रबन्धन की नई तकनीकों से परिचित कराया जाना चाहिए।

(2) कृषि यंत्रों जैसे मोल्ड ब्रान्ड प्लाऊ, डिस्क हैरो, खूंटीदार हैरो, पडलर्स, कॉम्ब हैरो, सिंगल रो प्लांटर्स, सीडड्रिल, फर्टीसीडिड्रिल्स, रोटली एवं ब्लेड टाई वीडर्स इत्यादि का प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण केन्द्रीय गांवों में उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

(3) सभी सेवा बिन्दुओं पर कस्टम हायरिंग सेवा केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए। जहां से किसान आधुनिक कृषि यंत्रों जैसे ट्रैक्टर्स, स्पेयर्स, पावर टिलर्स, पावर थ्रेसर्स इत्यादि को उचित किराये पर प्राप्त कर सकें। यह छोटे एवं सीमान्त किसानों की सहायता हेतु जो कि इन यंत्रों को क्रय कर सकने की स्थिति में नहीं हैं, आवश्यक कदम है।

(4) समस्त सेवा केन्द्रों को कृषि सेवा स्टेशनों, समस्त सेवा बिन्दुओं को कृषि सेवा सब स्टेशनों और समस्त केन्द्रीय गांवों को कृषि सेवा केन्द्रों के रूप में विकसित करने का प्रस्ताव है। जहां कि समस्त प्रकार के कृषि यंत्रों की मरम्मत, सर्विसिंग, विक्रय एवं तकनीकी निर्देशन उपलब्ध होना चाहिए।

साख (Credit)-

कृषि के क्षेत्र में आधुनिक तकनीकी के पदार्पण और आधुनिक तकनीक के बढ़ते प्रयोगों ने कृषि विकास की पूर्ति हेतु कृषि विकास के पर्याप्त विस्तार को आवश्यक बना दिया है (श्रीनिवासन 1971) । इस कारण आधुनिक उपज संसाधनों जैसे- बीज, उर्वरकों की संतुलित खुराक, कीटनाशकों की पर्याप्त मात्रा में समयबद्ध उपलब्धता सुनिश्चित कराना है। कृषि विकास हेतु आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि, उचित दरों पर पर्याप्त ऋण की उपलब्धता से की जा सकती है।

समाकलित क्षेत्रीय विकास नियोजन इस बात की पुष्टि करती है कि कृषि ऋणों की पूंजी, कृषि विकास को एक महत्वपूर्ण घटक है। अतः कृषि विकास को त्वरित गति प्रदान करने हेतु ऋण प्रबन्धन की समुचित व्यवस्था आवश्यक है। ताकि छोटे और गरीब किसान भी खेत की क्षमता का भरपूर लाभ प्राप्त कर सकें।

ऋण की श्रेणियां (Categories of Loans)-

अध्ययन क्षेत्र में मुख्यतः ऋण की तीन श्रेणियां हैं। (1) अल्पावधि ऋण; (2) मध्यावधि ऋण; तथा (3) दीर्घावधि ऋण। अल्पावधि के ऋण अधिकतम एक वर्ष की अवधि हेतु गरीब ग्रामीणों को उनके चालू खर्च जैसे-पशुपालन, कृषि कार्यों एवं लघु आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दिये जाते हैं। मध्यकालिक ऋण 5 वर्ष के लिए गरीब किसानों को ऐसे यंत्रों की खरीद एवं रखरखाव हेतु दिये जाते हैं। दीर्घकालिक ऋण किसानों को अधिकतम 15 वर्षों की अवधि के लिए उपलब्ध कराये जाते हैं जिसके द्वारा किसान नलकूपों के निर्माण, ट्रैक्टरों की खरीद, पावर टिलर्स, एवं अन्य मंहगे कृषि यंत्रों की खरीद, भूमि के समतलीकरण, सीढीदार खेतों के निर्माण व मृदा संरक्षण कार्यों को पूरा

कर सकें।

साख अभिकरण (Creclit Agencies)-

क्षेत्र में किसानों को ऋण उपलब्ध कराने वाले मुख्य अभिकरणों में पेशेवर महाजन, सरकारी एवं सहकारी वित्तीय बैंक और अन्य साधन, जिसमें व्यापारी कमीशन एजेन्ट और बड़े कृपक हैं। यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि कृषि विकास कार्यक्रमों के मुख्य लक्ष्यों की प्राप्ति इन्हीं संगठनात्मक, वित्तीय और प्रयोगात्मक संस्थानों के द्वारा सामानों की उपलब्धता कराने पर निर्भर है (चिदम्बरम्, 1971) । अध्ययन क्षेत्र में कार्यशील वित्तीय एजेन्सियां इस प्रकार हैं:-

व्यक्तिगत ऋणदाता (Private Money Lenders)-

ग्रामीण गरीब किसानों को ऋण प्रदान करने में व्यक्तिगत ऋणदाताओं का महत्वपूर्ण योगदान है। गांवों के साहूकार एवं महाजन गरीब किसानों को अत्यधिक उच्च ब्याज दरों पर ऋण लेना पड़ता है अतः निम्न ब्याज दर पर अन्य स्रोतों से ऋण उपलब्ध कराने की आसान व्यवस्था होनी चाहिए।

सहकारी समितियां (Co-operative Societies)-

भारत वर्ष में कृषि ऋण सेवा हेतु सहकारी समितियां सर्वाधिक उपयुक्त अभिकरण हैं जो वस्तुतः छोटे और मध्यम किसानों को कृषि लागतों हेतु ऋण उपलब्ध कराने के साथ-साथ उचित बाजार व्यवस्था भी करती है। सर्वप्रथम 1897 ई. में सरफ्रेडरिक निकलसन ने ग्रामीणों को ऋण/आवश्यकता पूर्ति हेतु सहभागिता को एक साधक के रूप में प्रयुक्त किये जाने की आवधारणा को जन्म दिया।

मेहता (1930) एवं रान्डीनेली (1976) के अनुसार सहकारी ऋण उस आन्दोलन का एक पक्ष है जो समान आर्थिक आवश्यकताओं वाले व्यक्तियों के स्वैच्छिक संगठन को प्रोत्साहित करता है। ग्राम्य नियोजन में इन सहकारी संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यही कारण है कि देश में नियोजन युग के प्रारम्भ से ही हमारी कृषि विकास नीति में सहभागिता का उत्तरोत्तर महत्व बढ़ता जा रहा है। सहकारिता नियोजन समिति (1946) ने अपनी अनुशंसा में एक गांव के लिए एक समिति की आवश्यकता पर बल दिया है। वर्ष 1958 में राष्ट्रीय विकास परिषद ने अपनी अनुशंसा में कहा है कि सहकारी समितियों का गठन ग्रामीण समुदाय को प्राथमिक इकाई मानकर किया जाना चाहिए। जहां पर सहकारी समिति से सहायता प्राप्त करने वाले ग्रामों की संख्या कम है वहां इनके अस्तित्व को बनाये रखने के लिए स्वयंसेविता निकट सम्बन्ध, सामाजिक बंधन, परस्पर उपकार सिद्धान्तों को अपनाना चाहिए (बन्सल, 1977)। परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि सहकारी समितियों के विस्तृत संगठनात्मक ढांचे के बावजूद गुजरात राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण देश में यह अपने लक्ष्य को पूर्ण करने में असफल रही है क्योंकि इसमें परस्पर लाभ हेतु स्वयंसेविता के लक्षणों का अभाव है। भारत में सहकारी समितियों के सम्बन्ध में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है वह यह कि जहां पर ये संस्थाएं असफल हो गयी हैं। वहां वे गरीब किसान, जिनको इनकी सेवाओं की सर्वाधिक आवश्यकता है, बुरी तरह प्रभावित हुए हैं और जहां पर ये सफल हैं, वहां भी वे इनसे लाभ नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं। सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि क्षेत्र के गरीब किसानों और भूमिहीन मजदूरों की विश्वसनीयता इनके खराब व्यवहार के कारण उठ चुकी है। कुछ का तो यह कहना है कि ये सहकारी समितियां गांवों में साहूकारों और महाजनों की भांति ही कार्य कर रही हैं और ये पांच या छः साल के ऋण के लिये दुगने ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध करा रही हैं। जहां तक बकाया वसूली का प्रश्न है वहां बड़े किसानों पर गरीब किसानों की तुलना में पुनर्भुगतान का ज्यादा पिछला ऋण बकाया है। अतः यदि सहकारी समिति सभी के काम के लिए है तो इसे बिना भेदभाव के और खुली संस्था के रूप में कार्य करना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो वहां पर इनके द्वारा कुछ बड़े लोगों का

लाभ होना संदेहास्पद है (खान एवं त्रिपाठी, 1971)।

सहकारी समितियों के विकासार्थ प्रस्ताव (Proposal For Developmant of Co-operative Societies)-

उपर्युक्त वर्णित समस्याओं और तथ्यों के प्रकाश में यह प्रस्तावित किया जाता है कि

(1) राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा निर्धारित मापदण्डों के आधार पर प्रत्येक गांव में प्राथमिक सहकारी समितियों का गठन किया जाय।

(2) उन केन्द्रीय गांवों में सहकारी ऋण समितियों की स्थापना की जाय, जहां पर यह सुविधा नहीं है।

(3) क्षेत्र के किसानों की दशाओं एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सहकारी समितियों की उपलब्ध नीतियों एवं प्रक्रियाओं में संशोधन किया जाना चाहिए। ताकि कृषि सम्बन्धी विविध कार्यों जैसे बागवानी, खाद्य प्रसंस्करण, मधुमक्खी पालन, मछली पालन, मुर्गी पालन, पशुपालन और दुग्ध उत्पादन हेतु अधिकाधिक ऋण उपलब्ध करा सकें।

(4) क्षेत्रीय समस्याओं के आलोक में कृषि उत्पादों के विपणन एवं प्रसंस्करण को बढ़ावा मिलना चाहिए।

(5) सहकारी बैंकों एवं सहकारी समितियों के कार्य में तालमेल होना चाहिए।

बैंक (Banks)-

नियोजन एवं विकास की प्रक्रिया में बैंक एक मान्यता प्राप्त भागीदार संस्थाएं हैं जिनका क्षेत्र के वित्तीय विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। अग्रणी बैंक योजना के अन्तर्गत, जो कि सघन क्षेत्र उपागम विधितंत्र पर आधारित है, के द्वारा गाडगिल समिति एवं राष्ट्रीय ऋण परिषद ने वर्ष 1969 में जालौन जनपद में इलाहाबाद बैंक को अग्रणी बैंक का दर्जा प्रदान किया है। अध्ययन क्षेत्र में व्यवसायिक बैंक, ग्रामीण बैंक और भूमि विकास बैंक पूर्ण रोजगार का अवसर, आर्थिक विस्तार, तकनीकी विकास और उत्पादकता और आय में प्रगतिशील उपायों द्वारा वृद्धि करके गरीब वर्ग की गरीबी दूर करने के प्रयास में व्यस्त हैं। इन बैंकों के मुख्य उद्देश्य अधोलिखित हैं-

(1) बेरोजगारी एवं अल्प रोजगारों का उन्मूलन करना; (2) पिछड़े वर्ग के लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रावधान करना; तथा (3) निर्धनतम् वर्ग के रहन-सहन के स्तर में वृद्धि हेतु प्रयास करना।

शोध क्षेत्र में ऋण सुविधा उपलब्ध कराने वाले बैंक निम्न हैं:-

अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण बैंक की कुल 9 शाखाएं हैं। ये बैंक क्षेत्र के किसानों को समस्त प्रकार की सेवाएं उपलब्ध करा रही हैं। इसके अतिरिक्त व्यवसायिक बैंकों की 13 शाखाएं हैं जो किसानों को कृषि कार्यों के अतिरिक्त कार्यों/व्यवसायों हेतु भी ऋण उपलब्ध करा रही है। उरई में भूमि विकास बैंक की एक शाखा है जो कि किसानों की जमीन गिरवी रखकर ऋण उपलब्ध करा रही है। फिर भी क्षेत्र में बैकिंग सुविधाओं के पर्याप्त विकास हेतु निम्नांकित सुझाव दिये जा रहे हैं (चित्र सं/का. 4.6)।

(1) भारतीय स्टेट बैंक की कृषि विकास शाखाएं उरई एवं डकोर में खोली जानी चाहिए।

(2) भूमि विकास बैंक की एक शाखा डकोर में भी खोली जानी चाहिए।

(3) चूंकि भूमि विकास एवं व्यवसायिक बैंक पूणपेण से सफल नहीं हो पा रहे हैं साथ ही सहकारी समितियां भी कृषि एवं ग्रामीण वर्ग के सम्पूर्ण विकास को अग्रसारित करने में असफल सिद्ध हो
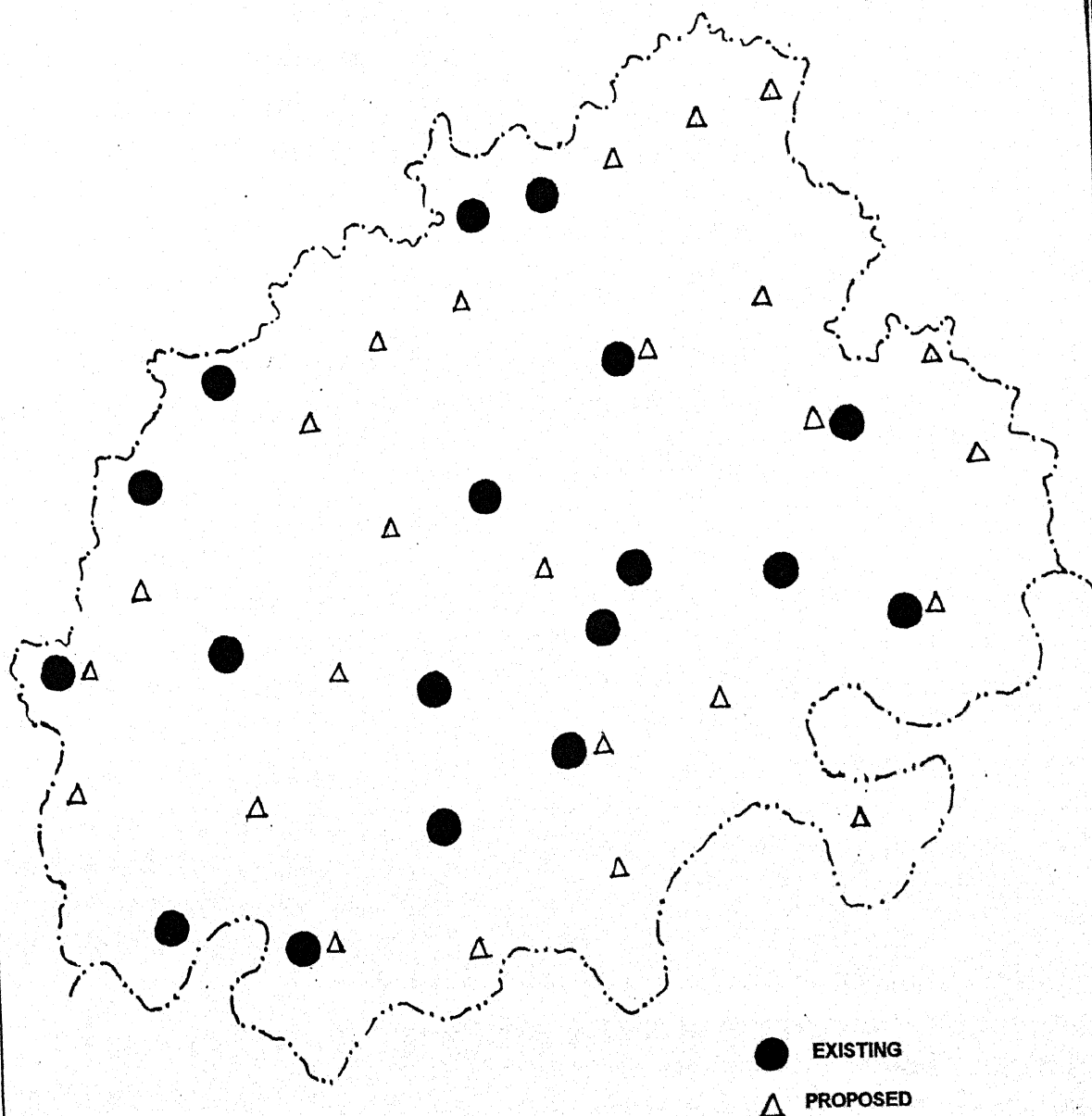
FIG. 4.6

रही हैं। अतः समय की मांग है कि वर्ष 2001 तक प्रस्तावित सभी केन्द्रीय गांवों में ग्रामीण बैंक की शाखाएं खोलकर पर्याप्त बैकिंग सुविधा का विकास किया जाय। ऋण वितरण में छोटे, गरीब और सीमान्त किसानों को प्राथमिकता के आधार पर ऋण प्रदान किये जाएं ताकि वे समय से उर्वरक, बीजों, कीटनाशकों एवं सिंचाई सुविधाओं को जुटा पाने में सक्षम हो सकें।

कटाई के बाद की क्रियाएं (Post Harvest Operations)-

क्षेत्र में कृषि विकास के प्रोत्साहन हेतु कृषि लागतों के समान ही भण्डारण, बिक्री ढुलाई, पैकेजिंग और प्रसंस्करण की सुविधा, जो कि कटाई के बाद की सुविधाएं हैं, पर भी सम्यक ध्यान दिया जाना चाहिए। अस्तु क्षेत्र के समुचित विकास हेतु इन सुविधाओं की उपलब्धता की अनुशंसा की जाती है।

अनुमानित उत्पादन, उपभोग, और विक्रय हेतु अतिशेष (Estimated Production. Consumption and Marketable Surplus)-

अवस्थापनात्मक पर्याप्त सुविधाओं और लागतों के पर्याप्त प्रावधानों की सहायता से स्थानीय परिस्थितियों के कारण 2001 तक कृषि उत्पादन में 40 से 50 प्रतिशत तक वृद्धि की सम्भावना है और 2005 तक पुनः 25 से 40 प्रतिशत की सम्भावना है। उपर्युक्त मापदण्डों के आधार पर सन् 2001 तक धान, गेहूं, मक्का, दाल, तिलहन एवं गन्ने का उत्पादन लगभग 103770, 85459, 24000, 26811, 4,630 एवं 16807 मी. टन होने की सम्भावना है। वर्ष 2005 तक 159670, 112574, 38572, 39992, 7842, तथा 24749 होने की सम्भावना है।

विकसित भारतीय आहार के नियमानुसार वर्ष 2001 तक सकल अनाजों का 1,50554 मी. टन, 29572 दालों का और 5,912 मी. टन शुद्ध खाद्य तेल का खर्च तहसील की 2001 तक बढ़ी जनसंख्या हेतु आवश्यक होगा। इस प्रकार अनाजों का 35,892 मी. टन उत्पादन विक्रय हेतु अतिशेष के रूप में उपलब्ध होगा।

भण्डारण (Storage)-

भारतवर्ष में सामान्य तौर पर कटाई के बाद कुल उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत अनाज नष्ट हो जाता है। एक प्रतिवेदन के अनुसार कटाई उपरान्त 1977 में देश में धान के उत्पादन का 6 प्रतिशत नष्ट हुआ था। इसी प्रतिवेदन के अनुसार मक्के की कुल फसल का 6 से 8 प्रतिशत और गेहूं, जौ, बाजरा इत्यादि के नष्ट होने का प्रतिशत 8 से 25 प्रतिशत है (शफी, 1983)।

अतः जहां एक ओर कृषि उत्पादन में वृद्धि की तत्काल जरूरत है वहीं दूसरी ओर खाद्यान्नों की कटाई के उपरान्त होने वाले नुकसानों से बचाने की भी तत्काल आवश्यकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि फसलों की कटाई उपरान्त विकसित तकनीक का उपयोग किया जाय। सर्वेक्षण के दौरान इस बात को महसूस किया गया कि असामान्य परिस्थितियों, जिसमें भण्डारण, सुविधा का न होना प्रमुख है, के कारण किसान अपने उत्पादों को कटाई के तुरन्त बाद कम दामों पर बेचने हेतु बाध्य हो जाते हैं। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में भण्डारगृहों के निर्माण की महती आवश्यकता है।

अध्ययन क्षेत्र में बड़े भण्डारगृहों का अभाव है वर्ष 2001 तक प्रत्येक केन्द्रीय गांव में ग्रामीण भण्डार गृह उपलब्ध कराया जाना चाहिए और वर्ष 2005 तक प्रत्येक गांव में यह सुविधा उपलब्ध कराई जानी चाहिए। सन् 2001 तक डकोर में एक बड़े आकार के भण्डारगृह का निर्माण किया जाना चाहिए और वर्ष 2005 तक एट, हरदोई गूजर, कोटरा और कुसमिलिया इत्यादि में बड़े भण्डारगृहों का निर्माण होना चाहिए वर्ष 2005 तक एक दूसरे वेयर हाउस का निर्माण होना चाहिए। सहकारी भण्डारण सुविधाएं भी इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। इसलिए सहकारी

समितियों को किसानों की सहायतार्थ भण्डारगृहों के निर्माण कार्य हेतु उचित कदम उठाने चाहिए।

बाजार (Marketing)-

किसानों को उनके उत्पादों का उचित मूल्य दिलाने हेतु एवं खेती में अधिक धन व्यय करने हेतु प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक ओर बाजार की सुविधा को विकसित किया जाना चाहिए तथा दूसरी ओर बाजारीय संरचना में कमी कृषि उत्पादों हेतु एक गम्भीर समस्या है। कृषि की पैदावार बढ़ने के साथ ही किसानों को उनके उत्पादों का विक्रय मूल्य शीघ्र प्राप्त होना चाहिए। अधिक आय के अभाव में वे न तो बचत कर सकते हैं और न ही नवीन तकनीकी पर अधिक खर्च (रान्डीनेली एवं रडली, 1976)।

क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान इस बात का अनुभव किया गया कि बिचौलिये- छोटे एवं मध्यम किसानों को कुरीतियों द्वारा शोषण करते हैं। अधिकांश किसान कटाई के तुरन्त बाद अपने उत्पादों को अपने पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं ऋण किश्तों की अदायगी बावत् कम दामों पर बेचने को बाध्य हो जाते हैं। इसलिए कृषि उत्पादों की बिक्री हेतु एक नियंत्रित बाजार व्यवस्था होनी चाहिए। सक्षम बाजारीय व्यवस्था हेतु उपयोगी संचालन व्यवस्था का विकास, गुणवत्ता के हिसाब से पैकिंग एवं प्रसंस्करण की व्यवस्था, विक्रय की आवश्यकता और जलवायु की दशाएं आवश्यक हैं क्योंकि सक्षम बाजारीय व्यवस्था आधुनिक तकनीकों एवं अनुसंधानों का कृषि में उपयोग सुनिश्चित करती है।

शोध क्षेत्र में बाजारों का स्थानिक वितरण अत्यधिक असमान है। केवल उरई में थोक नियंत्रित मूल्य की बाजार उपलब्ध है जबकि डकोर, एट, कोटरा, करमेर, हरदोई गूजर, कुसमिलिया, सैदनगर, सोमई, गुढ़ा, रूराअड्डू, नुनसाई में फुटकर नियंत्रित बाजार की व्यवस्था है। नियंत्रित बाजारों के विकास हेतु निम्नांकित कदम उठाये जा सकते हैं।

(1) डकोर में थोक विक्रय मूल्य नियंत्रित बाजार, जिसमें सबयार्ड की सुविधा हो, बनाई जानी चाहिए।

(2) उरई में थोक नियंत्रित बाजार हेतु मुख्य यार्ड की सुविधा होनी चाहिए।

(3) एट, हरदोई गूजर, कुसमिलिया और करमेर में थोक नियंत्रित मूल्य बाजार की सुविधा होनी चाहिए।

(4) सैदनगर, सोमई, गुढ़ा, रूरा अड्डू, नुनसाई, भुवा में फुटकर नियंत्रित बाजार की सुविधा का सबयार्ड बनाया जाना चाहिए।

(5) समस्त केन्द्रीय गांवों में फुटकर आवर्ती बाजारों की सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए।

विस्तार एवं प्रशिक्षण (Extension and Training)

विस्तार, वैज्ञानिक खोजों एवं प्रयासों को किसानों तक पहुंचाने की प्रणाली है। रान्डीनेली के मतानुसार कृषि विस्तार शिक्षा, ग्रामीण विकास परियोजना का एक भाग है, जिसका उद्देश्य कृषि की नवीन तकनीकों को सुव्यवस्थित ढंग से फैलाने और गृहणियों को व्यवसायिक प्रशिक्षण देने और ग्रामीणों के रहन-सहन के स्तर में सुधार करना है। परन्तु जॉनसन (1971) के अनुसार विस्तार को वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रसारी होने की अपेक्षा किसानों द्वारा मान्यता दिलाने वाला होना चाहिए। उनके अनुसार- ''विस्तार स्कूली शिक्षा के बाहर अनौपचारिक शिक्षा के समान है जो कि गतिशीलक, उत्तप्रेरक, संयोजक, प्रशिक्षक, नियोजक और समस्या उन्मूलक के लक्षणों से युक्त है। अनुसंधान केन्द्रों से किसानों तक वैज्ञानिक तकनीकों का प्रभावशाली ढंग से प्रसार करने, खेतों में क्षेत्रीय प्रदर्शन, बहुप्रचारक साधनों द्वारा प्राथमिक शिक्षा, साहित्य और दृश्य-श्रव्य साधनों और किसानों के अनौपचारिक प्रशिक्षण द्वारा हो सकता है।''

वर्तमान में विस्तार कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु निम्नांकित संस्थाएं कार्यरत हैं।

(1) विकास खण्ड अधिकारी, सहायक विकास अधिकारी एवं सामुदायिक विकास कार्यकर्ता; (2) प्रदेश के कृषि एवं पशु पालन विभाग इत्यादि;- तथा (3) कृषि सामग्रियों, जैसे-उर्बरकों, बीजों, कीटनाशकों, साख समितियों तथा कृषि यंत्रों की आपूर्ति सम्बन्धी व्यक्तिगत अभिकरण इत्यादि।

परन्तु विस्तार कार्यक्रम की में संस्थाएं पूर्ण प्रयास के बावजूद भी अपने कार्यकर्ताओं में तकनीकी अक्षमता, कार्यकर्ताओं की अकुशलता, सामाजिक दूरी को कम कर पाने की क्षमता का अभाव, प्रशासनिक सहयोग की कमी, कार्यक्रम की रूपरेखा का त्रुटिपूर्ण होना, विस्तार के प्रयासों को समय-समय पर लागत सामग्रियों की आपूर्ति की अक्षमता, उचित विस्तार तकनीक का अभाव, विस्तार एवं आविष्कारों में संयोजन की कमी, अच्छे विस्तार कार्यकर्ताओं के पारिश्रमिक में कमी, संचार माध्यमों के अपर्याप्त उपयोग और क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं में रुचि की कमी तथा क्षेत्र में पर्याप्त स्थान न दे पाने के कारण वांछित परिणाम को प्राप्त करने में असफल रही है।

एक अच्छे विस्तार-तन्त्र को बाजार एवं सुअवसरों किसानों की आवश्यकताओं के आंकड़ें, इच्छाएं और कृषि विकास की नीतियों के उद्देश्यों की जानकारी एवं अनुसंधान की अनुशंसाओं से युक्त होना चाहिए। एक विस्तार कार्यक्रम को तहसील, ब्लाक या ग्राम स्तर पर लक्ष्य या बजट मूलक न होकर समस्यामूलक होना चाहिए।

कृषि विकास कार्यक्रमों के समुचित संचालन हेतु उनको कृषि के विभिन्न पूरक कार्यक्रमों और लागत परियोजनाओं द्वारा समर्पित होना चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रभावशाली एवं सफल बनाने हेतु इसे लोगों की कृषि विकास की आवश्यकताओं से जोड़ना, स्थानीय वातावरण में ग्रहण करने की क्षमता का विकास करना, क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं में तकनीकी एवं प्रशासनिक योग्यताओं का विकास और योजनाओं को प्रभावशाली ढंग से लागू करने के लिए परस्पर समन्वय में सुधार लाना होगा।

कृषि विकास की सफलता के लिए निम्नांकित कार्यक्रमों को सूत्रबद्ध कर लागू करना चाहिए।

कृषकों हेतु प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन कार्यक्रम (Training and Demonstration Programme For Farmers)-

आधुनिक एवं वैज्ञानिक कृषि तरीकों को अपनाने हेतु किसानों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित किया जाना चाहिए। उन्हें उनके क्षेत्र में लागू की जाने वाली योजनाओं एवं परियोजनाओं की जानकारी दी जानी चाहिए। किसानों को कृषि से जुड़े अन्य कार्यों जैसे दुग्ध उत्पादन, मधुमक्खी पालन, मुर्गीपालन इत्यादि का भी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programme For Traineese)-

कृषि प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सफलता हेतु प्रशिक्षकों का तकनीकी रूप से सक्षम होना आवश्यक है साथ ही स्थानीय पारिस्थितिकी को समझ सकने में समर्थ हों और तकनीकी ज्ञान को स्थानीय भाषा में व्यक्त कर सकें। अस्तु, विस्तार कार्यक्रम से जुड़े व्यक्तियों हेतु एक चल प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए क्योंकि यह कार्यक्रम क्षेत्र के समस्त विस्तारक अभिकरणों की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित करता है (मिश्रा, 1983)।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षकों का एक ही समूह विस्तार कार्यकर्ताओं एवं अधिकारियों के प्रशिक्षण हेतु एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जायेगा। परन्तु संयोजकों को प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने की अनुमति तब तक नहीं दी जानी चाहिए जब तक कि चल प्रशिक्षक दल क्षेत्र की समस्त समस्याओं से अवगत न हो जाय। अतः उरई में एक कृषि अनुसंधान केन्द्र खोलने का प्रस्ताव है।

और कृषक प्रशिक्षण केन्द्र उरई, डकोर, एट, कोटरा, करमेर, हरदोई गूजर एवं सोमई में खोलने का प्रस्ताव है। वर्तमान ग्रामीण स्तर पर क्षमता वृद्धि हेतु निम्नांकित उपाय लाभकारी हो सकते हैं।

(1) ग्रामीण स्तर के योग्य कार्यकर्ताओं को कृषि महाविद्यालयों में स्नातक उपाधि प्राप्ति हेतु प्रवेश लेने के लिए प्रोत्साहित करना।

(2) विकास खण्ड मुख्यालय में ग्राम स्तर के कार्यकर्ताओं हेतु एक वर्षीय पा् यक्रम वाला एडवांस डिप्लोमा कोर्स लागू करना।

(3) केन्द्रीय गांवों के स्तर पर रिफ्रेशर प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना। जिससे ग्रामीण स्तर के कार्यकर्ता उसमें भाग ले सकें।

भूमि सुधार (Land Reform)-

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में भूमि सुधार कार्यक्रम नियोजन काल के प्रारम्भ से ही एक नीतिगत उद्देश्य रहा है लेकिन शोध क्षेत्र का भूमि सुधार आज ही संतोषजनक नहीं है अभी भी राष्ट्रीय नीति के अनुसार भूस्वामित्व का निर्धारण होना, निर्धारित समय सीमा की सुरक्षा एवं भूस्वामित्व का अधिकार इत्यादि नियमों का पालन नहीं हो पा रहा है। माल गुजारों एवं साझीदारों का हित निष्कासन पर्याप्त रूप से सुरक्षित नहीं है इसलिए यह आवश्यक है कि निम्नलिखित बातों की सुनिश्चितता की जाय।

(1) राज्य सरकारों द्वारा घोषित अतिशेष भूमि का अधिग्रहण करके उसे भौतिक रूप से योग्य व्यक्तियों में बांट दिया जाय। लाभ प्राप्तकर्ता को भूमि के अधिकार के दस्तावेजों सहित पर्याप्त सामग्री, अनुदान व तकनीकी सहायता प्रदान की जाय। ताकि वह आवंटित भूमि का समुचित उपयोग कर सके। माल गुजारी के नियमों में पुनर्सुधार करके प्रभावशाली ढंग से लागू किया जाय जिससे कि धनी एवं प्रभावशाली किसानों द्वारा जानबूझकर अपनायी जाने वाली गलत प्रणाली से किरायेदारों किसानों के हितों की रक्षा हो सके। साझीदारों को पूर्ण अवधि तक सुरक्षा प्रदान की जाय, जो कि मुख्य रूप से सीमावधि की लम्बाई पर आधारित हो। भूमि स्वामियों की असीमित सीमा तक भूमि रखने की छूट अपंग एवं सैन्य कर्मचारियों को छोड़कर समाप्त किया जाना चाहिए और किरायेदारों को छिपाने की प्रथा को समाप्त किया जाना चाहिए इसके लिए किरायेदारों एवं साझीदारों का नाम भूमि दस्तावेजों में लिखा जाना चाहिए जिससे उनके हितों की रक्षा हो सके।

(2) भूमि का पूर्ण उपयोग करते हुए दिये गये समय में कृषि कार्यों को पूर्ण रूप से करना चाहिए भूमि के पुनर्विभाजन को रोकने हेतु चकबन्दी की जानी चाहिए।

(3) अध्ययन क्षेत्र में कृषि उपज की वृद्धि हेतु भूमि विकास और मृदा संरक्षण की विधियों को अपनाना चाहिए। भूमि विकास के कार्य में भूमि के आकारीकरण और भूमि का समतलीकरण कार्यक्रम दक्षिणी क्षेत्रों की जमीनों को सुधारने में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। जबकि नदी के किनारे वाले क्षेत्र में भूमि के कुछ टुकड़े, जो उपयोगी हैं उनका विकास करके भूमि हीन किसानों में बांट देना चाहिए।

(4) मृदा संरक्षण भी भूमि सुधारका एक महत्वपूर्ण पक्ष है यह मृदा की उत्पादकता के ह्रास को रोकता है और कृषि उत्पादन की वृद्धि में सहायता करता है। मृदा संरक्षण के विभिन्न उपायों में से दो उपाय जैसे कि भूमि अपरदन का नियंत्रण और उपयोगी फसल चक्र अध्ययन क्षेत्र में मृदा की उर्वरता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं जो कि उत्पादन वृद्धि की मूलभूत आवश्यकता है।

मूल्य नीति (Price Policy)-

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान कृषि लागत मूलक और भी मंहगा कार्य हो गया है। किसानों को अच्छे उत्पादन हेतु ज्यादा धन, समय और परिश्रम लगाना पड़ता है परन्तु अक्सर फसलें किसानों को अच्छा लाभ दे पाने में असफल रहती हैं। अतः इस बात की आवश्यकता है कि विभिन्न फसलों का मूल्य इस प्रकार निर्धारित किया जाय कि वे कृषकों के व्यय का उचित लाभ सुनिश्चित कर सकें। कृषि उत्पादों के उचित मूल्य निर्धारण में समर्पण मूल्य और वफर स्टॉक कार्यक्रम दो नीतियां हैं। कभी-कभी बिचौलिये एवं व्यवसायियों द्वारा अपनायी गई कुरीतियां मूल्यों में कृत्रिम कमी पैदा करती हैं। इस प्रकार की प्रवृत्तियों को प्रशासनिक उपायों द्वारा रोका जाना चाहिए। यह न केवल किसानों को उनकी फसलों का उचित मूल्य दिलाने में सहायक होगा बल्कि यह ग्रामीण धन, श्रम और कुशलता को ग्रामीण क्षेत्रों से बाहर जाने पर भी रोक लगायेगा।

इस प्रकार कृषि के क्षितिजीय विकास के सीमित आलोक में इस बात का निष्कर्ष निकलता है कि भावी पीढ़ी के भविष्य की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए भूमि का अधिकाधिक उपयोग कृषि की प्रभावशाली लागतों और अवस्थापनाओं, आधुनिक खोजों एवं तकनीकी ज्ञान द्वारा करने पर अत्यधिक बल दिया जाना चाहिए।

REFERENCES

1. Arora, R.C.,1976 : Agriculture and Allied Sector, S.Chand and Company, New Delhi, p-57

2. Arora, R.C.,1979 : Integrated Rural Development , S.Chand and Co.,New Delhi, p.5.

3. Bansal, P.C.,1977 : Agricultural Problems of India,Vikash Publishing House Ltd., New Delhi, p-186.

4. Bishnoi, O.P. and Singh, R.,1981 : Crops and Cropping patterns, in M.Noor (ed.) Perspective in Agricultural Geography, Vol.3, p-365.

5. Bishnoi, P.C.,1981 : Rotation of Crops. in M.Noor(ed.) Op.cit. p-379.

6. Chidambaram, M.A., Rural Credit Institutions and Agricultural Development in Khan, W.,(ed.) Papers and Proceedings. of the Workshop-Cum-Seminar on Rural Institutions and Agricultural Development, N.I.C.D. Hyderabad.

7. Doi, K.,1957 :, The Industrial Structure of Japanese Prefectures, Proceedings I.G.U., Regional Conference In Japan, pp.310-316.

8. Frajer, H.J., 1970 : The Adjustment of Rural Population to Diminishing Land Resources p.97.

9. Hussain, M., 1979 : Agricultural Geography, Inter India Publications,New Delhi, p.118.

10. Johnson, A.A., 1971 : Extension Agencies in Khan W., (ed.) Papers and Proceedings of the Working - cum-seminar on Rural Institutions and Agricultural Development ,Op.Cit.

11. Khan. W., and Tripathi, R.N.,1971 : Co-operatives and Weaker Sections in Khan, W., (ed.) Op.Cit., pp.196-200

12. Mehta, V.L.,1930 : Co-operative Finance, p-2.

13. Mishra, O.P.,1983 : Integrated Rural Development- A Case Study of Gonda Tahsil, Unpublished Ph.d., Thesis, Avadh University, Faizabad.,

14. Planning Commission,1979 : Draft sixth Five Year Plan,1978-83,Revided,p.269.

15. Rondinelli, D.A., and Ruddle, K.,1976 : Urban Functions In Rural Development Policy, USAIS, Washington, p.114.

16. Rural Credit Survey Report,1954 :R.B.I.Agricultural Credit Department,Bombay.

17. Shafi,M.,1983 : Key Note Address to International Conference on Food System of the World with Special Reference to India, AMU, Aligarh..

18. Sharma, S.C.,968 : Land Utilization in Etawah District of Uttar-Pradesh, Unpublished Ph.D.Thesis, Agra University, Agra.

19. Singh, Jasbir,1976 : and Agricultural Geography of Haryana,Vishal Publications, University Campus,Kurukshetra Haryana.p.5

20. Sriniwashan, V.K.,1971 : Finaning Rural Development in Khan, W. (ed.) op.cit., pp.207-214.

21. Weaver, J.C.,1974 : Crop Combination Regions in the Middle East, Geographical Review, Vol.XLLV, No.2.p.176

(5)

औद्योगिक विकास नियोजन

PLANNING FOR INDUSTRIAL DEVELOPMENT

अध्याय- 5

CHAPTER- FIVE

औद्योगिक विकास नियोजन

(PLANNING FOR INDUSTRIAL DEVELOPMENT)

यद्यपि कृषि को ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी माना गया है तथापि यह अकेले ही गरीबी, बेरोजगारी एवं आर्थिक असमानता का मुकाबला नहीं कर सकती। कृषि पर पहले से ही अत्यधिक भार है इसलिए यदि कृषेतर व्यवसाय प्रारम्भ नहीं किए जाते हैं तो इसके कमजोर होने का खतरा बढ़ जाता है और कृषि के कमजोर होने से सर्वाधिक नुकसान भूमिहीन मजदूरों एवं नवीन कृषकों को उठाना पड़ता है (त्रिपाठी, 1982)। अस्तु कृषि के ऊपर से इस भार को कम करने के लिए वर्तमान समय में ग्रामीण औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करने की महती आवश्यकता है। ग्रामीण औद्योगीकरण से दिनानुदिन बढ़ती जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध हो सकता हैं। इसके अतिरिक्त हस्तनिर्मित माल की पूर्ति, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, जीवन स्तर को ऊंचा उठाने तथा समग्र ग्रामीण विकास हेतु ग्रामीण औद्योगीकरण एक आवश्यक प्रयास है। इसके परिणाम स्वरूप उपनिवेश काल में विनिष्ट हुई प्राचीन भारतीय कृषि उद्योग सहभागी परम्परा पुनः जीवित हो सकेगी।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों को दृष्टिगत रखते हुए यह क्षेत्र भारी उद्योगों के लिए उपयुक्त नहीं है। परन्तु ऐसे लघु एवं कुटीर उद्योगों का संचालन आसानी से हो सकता है जिनके लिए कच्चामाल कृषि उपजों एवं स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों से प्राप्त हो सकता है व जिनकी लागत कम है। इनसे स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति व लोगों की खुशहाली बढ़ाई जा सकती है। यह कटु सत्य है कि औद्योगिक गतिविधियां अधिकतर बड़े एवं कुछ ही शहरी क्षेत्रों में सम्पन्न होती हैं। यह स्थिति संतुलित आर्थिक विकास को प्रोत्साहित नहीं करती। संतुलित आर्थिक विकास हेतु बड़े उद्योगों के साथ- साथ छोटे एवं कुटीर उद्योगों को ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किए जाने की नितान्त आवश्यकता है। ये उद्योग स्थानीय संसाधनों पर आधारित होने चाहिए (रान्डीनेली, 1979)। औद्योगीकरण पर जोर देते हुए डॉ. त्रिपाठी (1980) ने अपना मत प्रस्तुत किया कि ग्रामीण औद्योगीकरण के अतिरिक्त, औद्योगिक विकेन्द्रीकरण द्वारा शहरों में बढ़ती जनसंख्या एवं प्रदूषण पर नियंत्रण किया जा सकता है जो कि बड़े औद्योगिक घरानों की देन है। अतः समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण औद्योगीकरण का विकास इसका एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती बेरोजगारी की सघनता को देखते हुए लोकसभा की आंकलन समिति (1977) ने यह निष्कर्ष निकाला था कि ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त बेरोजगारी को कृषि एवं उद्योग अलग- अलग या दोनों ही सम्मिलित रूप से दूर कर सकने में अक्षम हैं। जबकि सुविचारित एवं संतुलित कार्यक्रम के तहत औद्योगिक विकेन्द्रीकरण ग्रामीण बेरोजागारी को काफी हद तक सुलझा सकता है। कुटीर एवं गृह उद्योगों और लघु उद्योगों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह एक ओर तो कामगारों को प्राकृतिक वातावरण प्रदान करते हैं तथा दूसरी ओर रोजगार के साथ- साथ उन्हें भौतिक, नैतिक व अन्य लाभ भी प्राप्त हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त कामगारों की अन्दरूनी प्रतिभा का विकास एवं समान प्रकृति के व्यवसायों में योग्यता प्राप्त होती है (वन्सल, 1977)। सिंह (1979) का कहना है कि लघु उद्योग कम लागत में अधिक रोजगार उपलब्ध कराते हैं।

ग्रामीण औद्योगीकरण के पीछे यह विचार है कि इससे स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे, स्थानीय संसाधनों का उचित उपयोग हो सकेगा, स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति

होगी, श्रमिक बाहुल्य तकनीक का प्रयोग होगा एवं ग्रामीण स्तर पर आय के साधन बढ़ेंगे। इसके अतिरिक्त औद्योगिक विकास कृषि के विकास की भी अधिक सम्भावनाएं पैदा करेगा (दांडेकर, 1979)।

लघु, कुटीर एवं गृह निर्माण उद्योगों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए राय एवं पाटिल (1977) लिखते हैं कि 'भारतीय गांव कृषि प्रधान है अधिकतर कृषि ही उद्योगों की सहायक है या उद्योगों से सहायता प्राप्त करती है। गांवों में दस्तकार एवं कलाकार उपलब्ध हैं जो लघु एवं कुटीर तथा गृह उद्योगों में सन्निहित हैं। ये अपने संसाधन, कृषि, वनोपज, खनिज उत्खनन व मत्स्य पालन आदि से प्राप्त करते हैं, बदले में तैयार व अर्द्ध तैयार माल स्थानीय स्तर पर या अन्य वर्गों में वितरित करते हैं। शिवरामन (1979) का कथन है कि विकासशील देशों, जहां अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत कृषि है, में कृषि आधारित औद्योगीकरण सामाजिक- आर्थिक विकास का मुख्य साधन है चूंकि कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में रोजगार के साधन सीमित हैं एवं यह ग्रामीण क्षेत्रों की बढ़ती हुई बेरोजगारी को समाहित करने में समर्थ नहीं हो पाते। अतः वर्तमान समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए कृषि व उद्योग में मजबूती से सामंजस्यता स्थापित की जाए जिससे कृषेतर रोजगार के साधन उपलब्ध कराए जा सकें।

लघु तथा कुटीर उद्योगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कच्चे माल की कमी व अन्य सेवाएं जैसे- वित्त, बाजार की सुविधा, तकनीकी सहायता, औद्योगिक ढांचा आदि अधिसंख्य सुविधाएं ग्रामीण दस्तकारों तथा कलाकारों के पास उपलब्ध न होने के कारण ग्रामीण वातावरण औद्योगिक विकास हेतु उपयुक्त नहीं है। ग्रामीण क्षेत्र औद्योगिक अवस्थापन हेतु आधारभूत ढांचा भी अक्सर प्रदान नहीं कर पाते हैं।जैसे- परिवहन, दूरसंचार का अभाव, ऊर्जा, नवीन जानकारी/ तकनीकी ज्ञान का अभाव, बाजार एवं वित्त व्यवस्था आदि का अभाव। परन्तु इन समस्याओं पर शासन की मदद से सफलता प्राप्त की जा सकती है। इससे ग्रामीण संसाधनों का विकास, पूंजी का उपयोग, उत्पादन तथा व्यापार एवं रोजगार के साधनों का विकास होगा। इसमें कोई संशय नहीं है कि यदि सरकार द्वारा गम्भीरता पूर्वक कोई योजना ग्रामीण औद्योगीकरण के संदर्भ में लाई जाती है तो यह स्थिर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को एक गतिशील एवं लाभकारी स्वरूप प्रदान करने में मदद करेगी (रान्डीनेली, 1979)। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था के चतुर्मुखी विकास में सहायक सिद्ध होगी एवं इसे गतिशीलता प्रदान करेगी जो कि किसी भी प्रकार के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है (मिरडयाल, 1977)।

प्रधानतः स्वतंत्रता के उपरांत ही ग्रामीण एवं लघु उद्योगों के महत्व को समझा गया तथा पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इनके विकास हेतु अनेक कदम उठाए गए।

चूंकि प्रथम पंचवर्षीय योजना का मुख्य लक्ष्य कृषि विकास था। अस्तु द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ से ही देश की उन्नति हेतु आधारभूत एवं भारी उद्योगों के साथ लघु उद्योगों के विकास पर भी व्यापक जोर दिया गया। कर्वे समिति ने यह सुझाव दिया था कि ग्रामीण क्षेत्रों का विकास लघु एवं कुटीर उद्योगों द्वारा ही सम्भव है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में खादी एवं ग्रामोद्योग विकास पर विशेष बल दिया गया। साथ ही योजना आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक वातावरण उत्पन्न करने पर विशेष बल दिया जिससे कारीगरों को अपना शिल्प कार्य करने की उन्नत तकनीक कम से कम दामों में प्राप्त हो सके।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में पिछड़े क्षेत्रों के औद्योगिक विकास हेतु सरकारी निर्देश प्राप्त हुए। इस पंचवर्षीय योजना में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने व सामाजिक न्यायपूर्ण विकास का लक्ष्य रखा गया। देश के प्रत्येक जिले में जिला उद्योग केन्द्र स्थापित किए गए जिससे उद्यमियों को जिला स्तर पर ही समस्त सुविधाएं जैसे- लाइसेन्सिंग, वित्त, ऊर्जा आदि प्राप्त हो सके। इस योजना के अन्तर्गत

कृषि उपकरणों, उत्पादन सम्बन्धी उद्योगों के विकास को प्राथमिकता दी गई।

छठीं पंचवर्षीय योजना में जिला उद्योग केन्द्र का ढांचा मजबूत किया गया जिससे ग्रामीण विकास को त्वरित गति प्रदान की जा सके। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य- 'ग्रामीण क्षेत्रों में लघु एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास तथा रोजगार के नए सुअवसर जुटाने तथा ग्रामीणजनों की आय एवं रहन- सहन के स्तर को ऊंचा उठाना आदि प्रमुख थे (विपिन जैन एवं डा. विमल जैन)। सातवीं पंचवर्षीय योजना में अवस्थापनाओं को विभिन्न स्तरों पर मजबूती के साथ बढ़ाया गया। आधुनिक प्रबंधन तकनीक को बढ़ावा दिया गया तथा उत्तम तकनीकी के विकास एवं प्रयोग को प्रोत्साहन दिया गया जिससे कष्ट साध्य श्रम कम हो सके। उत्तम गुणवत्ता तथा आर्थिक अनुदानों पर निर्भरता कम करने पर विशेष बल दिया गया। इन सबसे कुटीर एवं ग्रामोद्योगों के विकास को गति प्राप्त हुई। आठवीं पंचवर्षीय योजना में देश के बहुमुखी औद्योगिक विकास हेतु उद्योगों से सरकारी नियंत्रण कम करने के लिए नीतियों में सुधार लाने तथा भारतीय उद्योग के क्षेत्र में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा बढ़ाने पर जोर दिया गया साथ ही यह भी घोषित किया गया कि औद्योगिक विकास का आशय केवल कृषि-परक क्षेत्र या औद्योगिक विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य से छोटे- छोटे परम्परागत कुटीर उद्योगों का विकास न करके ऐसे उद्योगों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जो ग्रामीण क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक विकास में पूर्णरूपेण सहायक हों। इस प्रकार क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप स्थापित औद्योगिक इकाइयां ग्रामीण अर्थव्यवस्था के साथ- साथ भारतीय अर्थव्यवस्था को गतिमान बनाने में सक्षम होंगी।

वस्तुतः औद्योगिक दृष्टि से शोध क्षेत्र एक अल्पविकसित तथा पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, तकनीकी ज्ञान का अभाव, पूंजी की कमी व औजारों की अल्पता आदि यहां के औद्योगिक विकास में बाधक हैं। सामान्यतः किसी क्षेत्र की औद्योगिक संरचना को मध्यम व लघु उद्योगों पर आश्रित होना चाहिए, जो ग्रामीण औद्योगिक विकास की रीढ़ है क्योंकि ये उद्योग कृषि उत्पादों व स्थानीय संसाधनों पर आधारित होते हैं। अतः यह आवश्यक है कि अध्ययन क्षेत्र में भविष्य के विकेन्द्रीकरण के आधार पर छोटे व कुटीर उद्योग स्थापित किए जाएं ताकि ग्रामीण लोगों के जीवन में सुधार हो सके।

औद्योगिक विकास हेतु उपयुक्त दशाओं को ध्यान में रखते हुए चयन किए गए गांवों में लघु एवं कुटीर उद्योग को बढ़ावा देने से निम्न लाभ हो सकते हैं।

(i) बेरोजगारों को रोजगार मिल सकता है;

(ii) स्थानीय संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग हो सकता है;

(iii) स्थानीय क्षेत्रों में ही रोजगार के सुअवसर सुलभ होने के कारण ग्रामीण श्रमिकों के स्थानान्तरण में कमी, स्थानीय स्तर पर बाजार की सुविधा उपलब्ध होने के कारण क्षेत्रीय जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी;

(v) अन्य सेक्टर्स के साथ अग्रगामी व पश्चगामी सम्बन्धों की स्थापना हो सकेगी;

(vi) किसानों को आय के अतिरिक्त साधन प्राप्त होंगे और वे कृषि की अनिश्चितता के कुप्रभावों से मुक्त रहेंगे;

(vii) लघु उद्योगों के उत्पाद स्थानीय कच्चे मालों एवं स्थानीय प्रतिभाओं के माध्यम से निर्मित होते हैं तथा यह हमारी कमजोर अर्थव्यवस्था के अनुकूल है।

वर्तमान औद्योगिक संरचना (Existing Industrial Structure)-

औद्योगिक दृष्टि से यह भूभाग एक पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। 1991 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या का मात्र 3.8 प्रतिशत भाग ही द्वितीयक व्यवसायों में संलग्न है। जो कि राज्य के 4.70 प्रतिशत से कम है (तालिका सं. 5.1)। क्षेत्र में कम औद्योगिक विकास होने के अनेक कारण हैं जैसे- पूंजी की कमी, तकनीकी अज्ञानता, परिवहन व संचार साधनों की कमी, वाजारीय सुविधा का अभाव इत्यादि।

तालिका सं. 5.1

द्वितीयक कार्यों में सम्बद्ध जनसंख्या

	कुल कार्यशील	कार्यशील जनसंख्या से प्रतिशत	जनसंख्या द्वितीयक कुल जनसंख्या	व्यवसायों में कार्यरत जनसंख्या
उरई तहसील	78,415	30.83	3040	3.87
जालौन जनपद	78237	30.76	4182	5.34
उ.प्र. राज्य	4,2599455	30.70	2002174	4.70

स्रोत- जनपदीय जनगणना के प्राप्त आंकड़ों से।

अध्ययन क्षेत्र में पंजीकृत औद्योगिक इकाइयों की संख्या वहुत ही कम है। कारखाना एवं लघु उद्योग अधिनियम 1948 के अनुसार तहसील में जून 1995 तक पंजीकृत इकाइयों की संख्या 605 है जिनमें से 10 मध्यम व वड़े उद्योग हैं जिनकी वर्तमान स्थिति इस प्रकार है।

वृहत एवं मध्यम स्तरीय उद्योग (Large and Medium Scale Industries) -

सातवीं पंचवर्षीय योजना के पूर्व अध्ययन क्षेत्र एक उद्योग शून्य क्षेत्र कहलाता था किन्तु शासन की उदार नीतियों एवं जनमानस में जागरुकता बढ़ने के परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र में कानपुर- उरई मार्ग पर एक औद्योगिक भूखण्ड के निर्धारण के उपरांत अब तक 10 वृहत एवं मध्यम स्तरीय उद्योगों की स्थापना हो चुकी है। इस औद्योगिक भूखण्ड में 1.25 करोड़ रुपए के पूंजी विनियोजन से एक मध्यम स्तरीय उद्योग (मेसर्स उर्वशी सेन्थेटिक प्रोसर्स प्रा.लि.) में सिन्थेटिक वस्त्रों की प्रोसेसिंग एवं रंगाई का कार्य मई 86 से प्रारम्भ हो चुका है। इस इकाई की कुल उत्पादन क्षमता 18 लाख मी. की है तथा इसमें 90 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है। इसी प्रकार मेसर्स महिन्द्रा केमिकल्स प्रा.लि. में इण्डस्ट्रीज हार्ड आयल एवं प्रगति स्टील प्रा.लि. में एम.एस. इन्गट्स, मेसर्स व्रजीप्रो फ्रूडस एण्ड फ्रीड्स लि. में इडिविल रिफाइन्ड सोया आयल का कार्य क्रमशः 152.55 लाख, 94.22 लाख तथा 2450 लाख पूंजी विनियोजन के साथ प्रारम्भ हो गया है तथा क्रमशः इनमें 150, 35 तथा 200 व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध हुआ है। मेसर्स महिन्द्रा केमिकल्स प्रा.लि. उद्योग ने अलसी के तेल का उपयोग हार्ड आयल का उत्पादन करने के साथ एसिटिलीन तेल के उत्पादन के लिए एक पूरक इकाई की स्थापना की है। इनके अतिरिक्त आज तक अनेक वृहत एवं मध्यम स्तरीय उद्योग जैसे हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, महाशक्ति इंडस्ट्रीज, वलवीर स्टील्स प्राइवेट लिमिटेड तथा उरई फ्लोर मिल उरई प्राइवेट लिमिटेड की स्थापना हो चुकी है। इन उद्योगों की अवस्थापना से एक ओर जहां रोजगार के अवसर सुलभ हुए हैं। वहीं दूसरी ओर इस क्षेत्र की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हुआ है। परिणामतः इस जिले का उत्तरप्रदेश राज्य के औद्योगिक मानचित्र में अपना स्थान बन चुका है।

क्षेत्र में कृषि उपकरण, रोलिंग शटर, दाल तथा तेल प्रोसेसिंग, मोमवत्ती, वेकरी, प्रिंटिंग प्रेस, पी.वी.सी. के जूते, चाक, कन्फेक्शनरी, हैण्डमेड पेपर, हथकरघा, टेरीकॉट वस्त्र, रेडीमेड, गारमेन्ट्स, पॉलिथीन वैग्स, काष्ठ एवं स्टील फर्नीचर, क्रीम लेदर के जूते, रेक्सीन वैग्स, स्टील फैब्रिकेशन, कालीन, रंग- रोगन आदि की 605 इकाइयां 632.12 लाख रुपए की पूंजी विनियोजन के साथ प्रारम्भ हुईं जिनमें से 568 इकाइयां कार्यरत हैं। इन कार्यरत इकाइयों में 2514 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त 37 इकाइयां निम्न कारणों से वंद पड़ी हैं। (तालिका सं. 5.2)

(1) कार्यशील पूंजी की बैंक द्वारा आपूर्ति न होना।

(2) विद्युत आपूर्ति की अनुपलब्धता।

(3) राजकीय औद्योगिक विकास निगम द्वारा पर्याप्त रूप से कच्चा माल उपलब्ध न होना।

(4) उत्पादित माल की खपत हेतु विपणन सेल का न होना।

(5) लघु औद्योगिक इकाइयों पर, लाइसेंसिंग प्रणाली का अत्यधिक दबाव होना।

तालिका सं. 5.2

उरई तहसील में स्थापित लघु एवं लघुत्तर औद्योगिक इकाइयां 30.6.95 तक

क्र. नाम इकाई	पंजीकृत संख्या	विनियोजन (लाख रु.)	रोजगार	कार्यरत सं.
1. फ्रूड प्रोडक्टस	120	225.00	514	113
2. मेटल प्रोडक्टस	79	168.00	400.	74
3. नान मेटेलिक मिनरल प्रोडक्टस	06	18.20	145	06
4. केमिकल्स एवं केमिकल्स प्रोडक्टस	23	32.05	120	20
5. बेसिक मेटल प्रोडक्टस	01	0.29	05	01
6. पेपर प्रोडक्टस एण्ड प्रिंटिंग	35	17.25	14030	
7. रबर एण्ड प्लास्टिक प्रोडक्स	12	24.00	60	11
8. इलेक्ट्रिक मशीनरी एण्ड आपरेट्स	15	7.50	3512	
9. वूड प्रोडक्टस	70	7.79	240	67
10. रिपेयर सर्विसेज	102	16.45	250	99
11. लेदर एण्ड लेदर प्रोडक्टस	22	30.00	100	20
12. होजरी एण्ड गारमेंट्स	80	18.22	212	79
13. ट्रांसपोर्ट एक्युपमेन्ट्स एण्ड पेपर	01	8.05	02	01
14. मिसलेनियस मैन्युफैक्चरिंग	15	5.20	95	14
15. फेब्रेसिस टोबैको एण्ड टोबैको प्रोड.	08	2.00	100	07
16. कॉटन टेक्सटाइल्स	04	20.00	26	09
17. जेट हैण्डपम्प	-	-	-	-
18. अदर सर्विसेज	-	-	-	-
	605	632.12	2514	568

स्रोत- जिला उद्योग केन्द्र कार्यालय से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर।

हथकरघा उद्योग (Handloom Industries) -

अध्ययन क्षेत्र में हथकरघा वस्त्र उद्योग के विकास हेतु 20 सहकारी समितियों का गठन किया गया है जिसमें 11 समितियां कार्यरत हैं तथा 09 समितियां वंद हो चुकी हैं। विशेषकर उ.प्र. वित्तीय निगम की हथकरघा कम्पोनेन्ट ऋण योजना एवं एकीकृत ग्राम्य विकास योजनान्तर्गत 140 इकाइयां स्थापित हैं। हथकरघा उद्योग में गाढ़ा, टेरीकॉट, दोसूती, गमछा, धोती आदि का उत्पादन होता है। उत्पादन के प्रमुख स्थान उरई, मुहम्मदावाद, सैदनगर, कोटरा, जैसारीकला, विनौरा आदि हैं। शक्ति चालित हथकरघा वस्त्रोद्योग के अन्तर्गत 200 परमिट निर्गत किए गए हैं जिसके माध्यम से पावरलूम की 62 औद्योगिक इकाइयां कार्यरत हैं।

खादी एवं ग्रामोद्योग (Khadi and Gramodyaog Industries) -

खादी एवं ग्रामोद्योग के विकासार्थ अध्ययन क्षेत्र में 20 सहकारी समितियों का गठन किया गया है इसके माध्यम से 800 व्यक्तिगत इकाइयां स्थापित हो चुकी हैं जिनमें से 301 इकाइयां खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा वित्त पोषित हैं तथा शेष एकीकृत ग्राम्य विकास योजना तथा ट्राइसेम योजनाओं के अन्तर्गत लाभान्वित हैं। इस उद्योग में लगभग 2000 व्यक्तियों को रोजगार के सुअवसर प्राप्त हुए हैं। इस योजनान्तर्गत खरका में चूना उद्योग, एट में वस्त्र बुनाई एवं रेडीमेड वस्त्र, धुरट में गिट्टी तोड़ने, उरई में काष्ठ एवं लौह कला, ग्रामीण चर्मशोधन, साबुन, मिट्टी के वर्तन, मोमवत्ती, बैग्स बनाने सम्बन्धी उद्योग प्रमुख हैं। खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा उरई में दियासलाई, मछली पालन, खादी वस्त्रों की बुनाई, साबुन एवं मोमवत्ती बनाने हेतु 200 व्यक्तियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इसमें एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

हस्तशिल्प उद्योग (Handicraft Industries) -

उरई तहसील में कालीन तथा गिल्ट के आभूषण जैसे हस्तशिल्प उद्योग कार्यरत हैं। हस्तशिल्प एवं सहकारी समितियों के अन्तर्गत 13 समितियों का गठन किया गया है। जिनमें से 50 प्रतिशत समितियां कार्यरत हैं। इसके अतिरिक्त मिट्टी के खिलौने, होजरी, जूते बनाने आदि की इकाइयां भी कार्यरत हैं। कालीन के प्रमुख उत्पादन केन्द्र कोटरा, मगरायां तथा मुहम्मदावाद एवं कुसुमिलिया है। गिफ्ट उत्पादक केन्द्र मिट्टी एवं प्लास्टिक आफ पेरिस के खिलौने बनाने का केन्द्र उरई शहर है। बड़ागांव में मिट्टी के वर्तन जैसे घड़े एवं खिलौने वनाए जाते हैं। अध्ययन क्षेत्र में हस्तशिल्प उद्योग से सम्बन्धित 50 इकाइयां कार्यरत हैं जिनमें 250 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध औद्योगिक अवस्थापना सुविधाएं/ संसाधन (Existing Industrial Infrastructure Facilities/ Resources in the Study Area) -

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध अवस्थापना सुविधाओं को तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं।

(1) आधारभूत अवस्थापना सुविधाएं

(2) औद्योगिक आस्थान की उपलब्धता

(3) अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध संसाधन

आधारभूत अवस्थापना सुविधाएं (Basic Infrastructure Facilities)

(अ) **यातायात**- यातायात की दृष्टि से यह क्षेत्र सम्पन्न है जहां रेल व बस मार्गों की सुविधाएं उपलब्ध है इनमें लखनऊ- कानपुर- बम्बई रेल मार्ग, एट-कोंच रेल मार्ग, झांसी- लखनऊ राजमार्ग, उरई-

बनारस मार्ग, उरई- महोबा मार्ग, उरई- जालौन- भिण्ड- ग्वालियर मार्ग आदि मुख्य हैं। यह क्षेत्र राष्ट्रीय महत्व के अनेक शहरों यथा लखनऊ, कानपुर, झांसी, ग्वालियर, दिल्ली, वम्बई, इंदौर, गोरखपुर, बनारस, जबलपुर आदि से जुड़ा है। मुख्य सेवा केन्द्र जैसे- कोटरा, सैदनगर, डकोर, हरदोई गूजर, कुसमिलिया, कुकरगांव आदि भीबस मार्गों से सम्बद्ध हैं। विकेन्द्रित औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए सम्पर्क मार्गों को विकसित करने की आवश्यकता है। ताकि ग्राम पंचायत स्तर पर हथकरघा व ग्रामीण उद्योगों को विकसित किया जा सके।

(ब) विद्युत- क्षेत्र में 132/ 33 के.वी.ए. की विद्युत लाइन की सुविधा उपलब्ध है। 33 के.वी.ए. के दो मुख्य विद्युत केन्द्र उरई एवं एट में हैं तथा 150 उपकेन्द्र 11 के.वी.ए. के क्षेत्र में उपलब्ध हैं।

78 प्रतिशत आबाद ग्रामों एवं क्षेत्र के दो नगरों में विद्युत की व्यवस्था उपलब्ध कराने के साथ-साथ क्षेत्र की 97 अनुसूचित प्रधान बस्तियों में सुलभ करा दी गयीहै।

(स) जल- औद्योगिक विकास में जल की अहम् भूमिका होती है। इस दृष्टि से क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में जल संसाधन उपलब्ध है। यहां भूतल से 80 फीट की गहराई पर भूमिगत जल मिलता है। वेतवा, जो इस क्षेत्र की मुख्य नदी है, में वर्ष भर जल सुलभ रहता है जवकि मलंगा आदि सहायक नदियां बरसाती हैं। 954 पक्के कुएं, 150 राजकीय नलकूपों, तालावों व लम्बी- लम्बी नहरों द्वारा विविध कार्यों में जलापूर्ति करने में सहायक हैं।

(द) **कुशल कारीगर-** औद्योगिक प्रतिष्ठानों की प्रगति उनमें कार्यरत कुशल श्रमिकों पर निर्भर करती है। चूंकि क्षेत्र में अकुशल श्रमिकों की अधिकता है इसलिए कुशल श्रमिकों की उपलव्धता हेतु उरई नगर में एक औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोला गया है जिसमें विद्युत कला, मशीनिष्ठ, वायरमैन, फिटर, ट्रैक्टर मैकेनिक का प्रशिक्षण एक से दो वर्षों में दिया जाता है। एक पॉलिटेकनीक कालेज भी उरई में अवस्थित है जिसमें प्रथम चरण के अन्तर्गत सिविल इन्जीनियरिंग कला में औद्योगिक प्रशिक्षण दिया जा रहा है। अस्तु यह कहा जा सकता है कि श्रमिकों की कमी क्षेत्र में खटकती है।

औद्योगिक आस्थान/ क्षेत्र (Industrial Land/ Area) -

औद्योगिक विकास हेतु उपयुक्त औद्योगिक आस्थान का होना आवश्यक है। इस दृष्टि से क्षेत्र में औद्योगिक विकास निगम द्वारा 680 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया जो झांसी- उरई, कानपुर- लखनऊ 25- राष्ट्रीय मार्ग पर उरई के उत्तर- पूर्व दिशा में अवस्थित है। अव तक मध्यम एवं वृहत स्तरीय औद्योगिक इकाइयों के अन्तर्गत 20 एकड़ भूमि सोयावीन पर आधारित खाद्य तेल उद्योग हेतु, ग्लैक्सो लैबोरेट्रीज को 52 एकड़ भूमि,ट्वायलेट सावुन एवं ग्लिसरीन उद्योग के लिए हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड को 4 एकड़ भूमि,इण्डस्ट्रीज हार्ड आयल के लिए भटिण्डा केमिकल्स प्रा.लि. को आवंटित कर उद्योगों की स्थापना में सहयोग किया गया। इसके अतिरिक्त 35 इकाइयों को 89686.25 वर्ग मीटर क्षेत्र के भूखण्डों को लघु स्तरीय उद्योगों की स्थापना हेतु आवंटित किया गया है। उपरोक्त के अतिरिक्त कई अन्य मध्यम स्तरीय उद्योग भी इस क्षेत्र में स्थापित हो चुके हैं।साथ ही अभी भी किसी भी उद्योग की स्थापना करने वाले महत्वाकांक्षी उद्यमियों को आवश्यक भूखण्ड उपलब्ध कराए जाने की व्यवस्था है।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध संसाधन (Available Resources in Study Area) -

(अ) कृषि संसाधन-

अध्ययन क्षेत्र की आर्थिक व्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है। कुल जनसंख्या का

59.78 प्रतिशत भाग कृषि उपज पर आश्रित है जिसमें धान, दालें, गेहूं, तिलहन, ज्वार एवं बाजरा मुख्य हैं। तहसील में उपलब्ध कुल क्षेत्रफल 946.40 वर्ग कि.मी. में से 80 प्रतिशत भूमि पर कृषि कार्य किया जाता है। इससे कृषि संसाधन पर आधारित उद्योगों में उपयोगार्थ कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाता है।

(ब) खनिज संसाधन -

मूलतः उरई तहसील खनिज संसाधन की प्राप्यता की दृष्टि से अत्यन्त दयनीय है। केवल बेतवा नदी के प्रवेश स्थल के निकट सैदनगर क्षेत्र में भवन निर्माण हेतु पत्थर पाया जाता है। सैदनगर में दो चट्टानी पहाड़ियां हैं। इनसे पत्थरों की रोड़ी- तोड़ी जाती है जो सड़क बनाने के काम आती है। इसी आधार पर धुरट में एक स्टोन क्रेशर का उद्योग स्थापित किया गया है। बेतवा नदी से मोरम या बालू प्राप्त की जाती है। घटिया किस्म का कंकड़ नदियों एवं नाली के किनारे बहुतायत मात्रा में पाया जाता है। यह सड़कों के निर्माण एवं भवन निर्माण में प्रयुक्त होता है। इसी कंकड़ को जलाकर चूना भी बनाया जाता है। चूना बनाने वाला पत्थर शोध क्षेत्र के खरका गांव में तथा उसके आसपास के क्षेत्रों में उपलब्ध है।

(स) वन सम्पदा -

उरई तहसील के केवल 6.03 प्रतिशत भाग पर ही वनों का विस्तार है। वनों में अधिकांशतः भवन निर्माण में प्रयोग की जाने वाली लकड़ी व ईंधन योग्य लकड़ी के वन हैं। जिनमें बबूल, महुआ, नीम, बेरी व शीशम के वृक्ष प्रमुख हैं। वनौषधियों एवं वन्य उपजों की उपलब्धता के अभाव में वनों पर आधारित उद्योग विकसित नहीं हो सके हैं। पर्यावरण संतुलन बनाए रखने व अन्य उपजों पर आधारित उद्योगों के विकास हेतु वनों के विस्तार की नितान्त आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र में लगभग 3000 खजूर के वृक्ष हैं।इनमें से अधिकांशतः उरई, बिनौरा, ऊसरगांव, मुहम्मदाबाद एवं चिल्ली में हैं। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में ताड़ के भी वृक्ष पाए जाते हैं।

(द) पशु संसाधन -

शोध क्षेत्र में गाय, भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ा, सुअर और मुर्गी आदि पशु पाए जाते हैं। चारागाह की समुचित व्यवस्था न होने से इन पशुओं से चर्म उद्योग हेतु अच्छी खालें व हड्डी नहीं मिलती हैं। इन पशुओं की खालों को देशी पद्धति से पकाकर चरसा, देशी जूता- चप्पल आदि में उपयोग किया जाता है। मशीनों से चमड़ा पकाने हेतु चमड़ा कानपुर भेजा जाता है।

(य) मत्स्य संसाधन -

अध्ययन क्षेत्र की मुख्य नदियों बेतवा, नोन एवं बरसाती नदी मलंगा में प्रमुख रूपसे रोहू, नैनी सिलन्द, कराची, गुछ, सौर, झीजा, चिलवा, अनवरी, बछवा सीरी, सीरी, बोंस आदि प्रजातीय मछलियां पर्याप्त मात्रा में पाई जाती हैं।

(र) अन्य उपलब्ध कच्चे माल -

तहसील उरई के लगभग 150 एकड़ क्षेत्र में खस पाई जाती है। यहां के कुसमिलिया, चिल्ली, बारसोर, गोरा, नुनसाई, पुर, डकोर तथा खरका में 'खस' निकालने का कार्य मूलतः कंजड़ जाति के लोग करते हैं तथा वे लोग खस विशेषतः कानपुर एवं झांसी ग्रीष्म ऋतु में ले जाते हैं और वहीं पर खस की टटियों का निर्माण ठेके पर करते हैं। इस क्षेत्र में केवड़ा के लगभग 400 पुष्प प्रतिवर्ष प्राप्त होते हैं जिसके लिए धुरट एवं रूरा अड्डू गांवों के क्षेत्र उल्लेखनीय है।

औद्योगिक विकास हेतु प्रस्तावित कार्यक्रम (Proposed Programme for Industrial Development) -

शोध क्षेत्र के औद्योगिक विकास हेतु शासन द्वारा क्रियान्वित कार्यक्रमों को दो रूपों में प्रस्तुत किया ज़ा सकता है।

सामान्य कार्यक्रम- इसमें लघु एवं लघुत्तर उद्योगों, दस्तकारी उद्योगों, सहकारिता के माध्यम से हस्तशिल्प एवं अवस्त्रीय उद्योगों के प्रस्ताव सम्मिलित हैं।

विशिष्ट कार्यक्रम-इसमें राष्ट्रीय महत्व के एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम, कार्यक्रम, अल्पसंख्यकों के लिए उद्योग सेवा एवं व्यवसाय के स्थापनार्थ ऋण एवं मार्जिन- मनी कर्ज और शिक्षित बेरोजगारों की स्वतः रोजगार योजनाएं सम्मिलित की गई हैं।

सामान्य कार्यक्रम (General Programme) -

तहसील उरई के ग्रामीण/ नगरीय अधिवासों में कुल मिलाकर वर्ष 2000 तक में 300 लघु एवं लघुत्तर इकाइयों की स्थापना का लक्ष्य है। इन उद्योगों में पावरलूम, कृषि उपकरण, सामान्य इंजीनियरिंग, चर्म एवं रेक्ज़ीन के बैग, अटैची, जूते, चप्पल, ग्रिल तथा रोलिंग शटर्स, दाल मिल/ आयल मिल तथा ट्रैक्टर बाहुल्य क्षेत्रों में ट्रैक्टर रिपेयरिंग वर्कशाप की स्थापना की जाना है जिसके द्वारा कम से कम 600 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होगा। लघु एवं लघुत्तर इकाइयों के अन्तर्गत कम से कम 10 लाख या उससे अधिक पूंजी विनियोजन की सुविधा देने का कार्यक्रम है। इसके अतिरिक्त नगर पालिका/ टाउन एरिया/ न्याय पंचायतों को उनकी आवश्यकता के अनुकूल उपलब्ध सेवाओं के आधार पर औद्योगिक इकाइयों की स्थापना का प्राविधान है। सम्पूर्ण क्षेत्र में 50 औद्योगिक इकाइयों की स्थापना हेतु अनुसूचित जाति/ जनजाति के व्यक्तियों को प्रोत्साहित किए जाने का कार्यक्रम है। उपरोक्त उद्योगों की संस्थापना एवं कुशल संचालन हेतु विकासखण्ड मुख्यालय डकोर में एक छः दिवसीय उद्यमिता विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा सम्पूर्ण वर्ष में एक पन्द्रह दिवसीय उद्यमिता विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर अधिक से अधिक महत्वाकांक्षी उद्यमियों को प्रशिक्षण उपलब्ध कराने की योजना है। अभ्यर्थियों के लिए भूमि एवं भवन की व्यवस्था हेतु उरई- कालपी राजमार्ग पर स्थित औद्योगिक क्षेत्र के अतिरिक्त और भी भूमि प्राप्त कर वितरित करने का कार्यक्रम है। इसके अतिरिक्त विकासखण्ड स्तरीय योजना के अन्तर्गत डकोर में एक मिनी औद्योगिक आस्थान को विकसित करने की योजना है। औद्योगिक प्रगति की संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक क्षेत्र हेतु परिसीमित औद्योगिक भूभाग के विस्तार की आवश्यकता है। साथ ही उद्योगों के विकेन्द्रीकरण को ध्यान में रखते हुए विकासखण्ड मुख्यालय डकोर के समकक्ष अन्य विकास केन्द्रों में मिनी औद्योगिक आस्थान विकसित किए जाने है।

उरई तहसील के अन्तर्गत वर्ष 2000 तक खादी एवं ग्रामोद्योग, हस्तशिल्प उद्योग, हथकरघा उद्योग एवं परम्परागत कारीगरों के आधार पर कम से कम 250 दस्तकारी उद्योग न्याय पंचायत सेवाबिन्दुओं के स्तर पर होना प्रस्तावित है। जिसमें कुशल कारीगरों को प्रोत्साहित करने का भी प्रावधान है। साथ ही 2000 तक सहकारी समितियों के माध्यम से केन्द्रीय गांवों में कृषि पर आधारित उद्योगों को विकसित किया जाना निर्धारित है और इन्हीं समितियों द्वारा दक्षता एवं ईमानदारी पूर्वक औद्योगिक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किया जाना है।

विशिष्ट कार्यक्रम -

(अ) एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Programme) -

इस कार्यक्रम के माध्यम से प्रत्येक योजना वर्ष में डकोर विकासखण्ड के अन्तर्गत कम से कम 100 व्यक्तियों को आई.आर.डी. योजना के अन्तर्गत लाभान्वित किए जाने का लक्ष्य रखा गया है तथा साथ ही जिला उद्योग विकास अभिकरण (DRDA) के माध्यम से भी अनुदान दिए जाने का प्रस्ताव है।

(ब) ट्राइसेम योजना (Trysem Programme) -

इस योजनान्तर्गत शोध क्षेत्र के कम से कम 100 व्यक्तियों का चयन आई.आर.डी. परिवार में ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत विभिन्न कक्षाओं में प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु किया जाने का लक्ष्य है। साथ ही पूर्व प्रशिक्षित व्यक्तियों को स्वतः उद्योग स्थापित करने हेतु ऋण सुलभ कराने तथा भूमि आवंटन की सुवधा भी प्रदान किए जाने का लक्ष्य रखा गया है।

(स) अल्पसंख्यकों के लिए ऋण एवं मार्जिन मनी (Margin Money and Loan for Minorties) -

उद्योग मद में 50 तथा सेवा एवं व्यवसाय मद में 50 अर्थात शोध क्षेत्र के कुल 100 व्यक्तियों को उरई नगर की राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा ऋण सुलभ कराकर उ.प्र. अल्पसंख्यक वित्तीय विकास निगम लिमिटेड द्वारा मार्जिन मनी कर्ज की सुविधा उपलब्ध कराने की योजना है।

(द) शिक्षित बेरोजगार युवकों का स्वतः रोजगार कार्यक्रम (Self Employment Programme for Educated Unemployed Youths) -

प्रत्येक वित्तीय वर्ष के उद्योग मद में 150 सेवा एवं व्यवसाय मद में 150 अर्थात शोध क्षेत्र के कुल 300 युवकों को लाभान्वित करने का प्रस्ताव है। जिसमें 65 लाख की धनराशि ऋण के माध्यम से और 20 लाख की धनराशि अनुदान द्वारा अर्थात कुल 85 लाख रुपए की धनराशि विनियोजित करके युवकों को रोजगार के सुअवसर सुलभ कराने का उद्देश्य रखा गया है। इस प्रकार विशिष्ट कार्यक्रम के अन्तर्गत उद्योग क्षेत्र एवं सेवा तथा व्यवसाय मद में अधिक से अधिक व्यक्तियों को लाभ प्रदान करने हेतु अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को प्राथमिकता प्रदान की जाएगी।

जिला उद्योग केन्द्र उरई का औद्योगिक विकास कार्यक्रम (Industrial Development Programme of District Industry Centre) -

जिला उद्योग केन्द्र उरई द्वारा क्रियान्वित की जा रही औद्योगिक विकास सम्बन्धी योजनाएं इस प्रकार हैं-

1. प्रत्येक विकासखण्ड में निजी औद्योगिक आस्थानों की स्थापना।
2. पात्र इकाइयों को राज्य पूंजीगत उपादान तथा विक्री कर छूट की सुविधाएं (नई नीति के अनुसार)
3. औद्योगिक विकास हेतु जिला उद्योग केन्द्र मार्जिन मनी ऋण योजना का क्रियान्वयन।
4. उद्यमियों को गुणवत्ता तथा लागत एवं नियंत्रण के प्रमुख आधुनिकता उद्योगों को क्रियान्वित करने हेतु प्रोत्साहन।
5. लघु स्तरीय पंजीकरण।

6. विपणन की सुविधा के लिए पंजीकरण।
7. शक्ति चालित करघों के लिए लाइसेंस/ पंजीकरण।
8. विद्युत कनेक्शन प्राप्ति के लिए उद्यमियों को मदद।
9. औद्योगिक विकास हेतु विभिन्न आंकड़ों का संकलन।
10. एकीकृत ग्राम्य विकास योजना और ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत गरीवी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले व्यक्तियों की सहायता।
11. उत्तरप्रदेश अल्पसंख्यक वित्त एवं विकास निगम लिमिटेड के माध्यम से मार्जिन- मनी कर्ज, विदेशों में रोजगार हेतु पंजीकरण तथा उच्च स्तरीय शिक्षा हेतु वजीफा की सुविधा।
12. उत्तरप्रदेश अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को उद्योग सेवा एवं व्यवसाय की स्थापना में सहायता।
13. बीस सूत्रीय कार्यक्रम का क्रियान्वयन।
14. राज्य स्तरीय विभिन्न संस्थाओं एवं निगमों के समन्वय आदि।

उद्योगों के लिए प्रोत्साहन/ उपादान

प्रदेश सरकार ने दिनांक 1.4.90 से 31.3.95 तक की अवधि के लिए नई उद्योग नीति घोषित की है जिसके अनुसार इस अवधि में स्थापित होने वाले उद्योगों के लिए प्रदेश सरकार ने कुछ विशिष्ठ सुविधाएं प्रदान करने की घोषणा की है।

प्रोत्साहनों एवं सुविधाओं का यह नया पैकेज दिनांक 1.4.90 से 31.3.95 तक की अवधि के लिए अब तक अन्यथा संशोधित हो, लागू होगा तथा यह नया पैकेज नियमानुसार उन सभी नई औद्योगिक इकाईयों,जिन्हें सम्बन्धित योजना में अन्यथा विनिर्दिष्ट न किया गया हो, को उपलब्ध होगा जिन्होंने स्थापना हेतु किसी प्राधिकृत संस्था से वांछित पंजीकरण प्राप्त किया हो। नई नीति के अनुसार जनपद जालौन को श्रेणी 'अ' में रखा गया है जिसमें उक्त अवधि में उद्योग स्थापनार्थ निम्न विशिष्ठ सुविधाओं की घोषणा की गई है।

राज्य पूंजी उपादान योजना-इस योजना के अन्तर्गत इस जनपद में दिनांक 1.4.90 से 31.3.95 तक स्थापित होने वाली नयीं औद्योगिक इकाईयों को उनकी अचल पूंजी विनियोजन पर २० प्रतिशत, कराया जाएगा। यह सुविधा निम्न शर्तों के साथ देय होगी।

(अ) उसी पूंजी निवेश पर देय होगी जो 1.4.90 या उसके वाद में किया जाए।

(ब) रु. पांच लाख तक प्लान्ट एवं मशीनरी में विनियोजन करने वाली इकाईयों को उपरोक्तानुसार पूंजी उपादान उपलब्ध होगा।

(स) रु. पांच लाख से अधिक प्लान्ट एवं मशीनरी में विनियोजन करने वाली इकाईयों को प्रदेश के सभी मैदानी जनपदों और पर्वतीय क्षेत्र के समुद्र तल से 1000 मीटर से कम ऊंचाई के क्षेत्रों में यह फुटहिल से 50 कि.मी. के अन्दर स्थापित उन्हीं इकाईयों को यह उपादान देय होगा जो जनपद में अधिसूचित औद्योगिक आस्थानों में स्थापित हो तथा इकाई निम्न में से किसी एक श्रेणी के उद्योग की है।

1. खाद्य प्रसंस्करण व कृषि पर आधारित उद्योग।
2. पेट्रोकैमिकल्स व कैमिकल्स उद्योग।
3. चर्म उद्योग।

4. इलेक्ट्रानिक्स।
5. ड्रग एवं फार्मेस्यूटिकल्स।
6. प्लास्टिक उद्योग।
7. टैक्सटाइल उद्योग।
8. स्पोर्टस गुड्स।
9. ग्लास एण्ड सेवामिक्स।
10. फाउंड्री।
11. इन्जीनियरिंग।

(द) रु. पांच करोड़ से अधिक स्थाई पूंजी विनियोजन वाली इकाई को कोई पूंजी उपादान देय न होगा। किन्तु प्रेस्टीज व पार्यानयर (यथा परिभाषित) इकाई को नियमानुसार देय होगा।

उद्यमियों को सस्ते मूल्य पर भूमि- औद्योगिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में स्थित ऐसे औद्योगिक क्षेत्रों/ औद्योगिक आस्थानों तथा मिनी औद्योगिक आस्थानों में, जिनको राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाए, भूमि के मूल्य हेतु अनुदान उपलब्ध कराया जाएगा।

(3) विद्युत आपूर्ति में विशेष सुविधाएं- सभी श्रेणी के नए उद्यागों को उत्पादन शुरू होने की तिथि से 5 वर्ष तक विद्युत कटौती से मुक्त रखा जाए, बशर्ते उनके पास स्वतंत्र पोषक (इन्डिपेन्डेन्ट फीडर) हो तथा सभी औद्योगिक आस्थान भी विद्युत कटौती से मुक्त रहेंगे।

बुन्देलखण्ड में विद्युत बिल में 50 प्रतिशत की विकास छूट,नए उद्योगों को उत्पादन शुरू होने से 5 वर्ष तक देय होगी।

बिक्री कर से छूट/ आस्थान की योजना- इस योजना में छूट को स्थायी पूंजी विनियोजन से सम्बद्ध किया गया है। इस योजना हेतु जनपद जालौन को 'अ' श्रेणी में रखा गया है। अतः जनपद में दिनांक 1.4.90 से 31.3.95 तक की अवधि में स्थापित नए उद्योग को स्थायी पूंजी विनियोजन का 150 प्रतिशत अथवा 10 वर्ष, जो भी पहले हो, बिक्री कर से छूट दी जाएगी। लघु उद्योग इकाई के लिए यह छूट 175 प्रतिशत होगी किन्तु अवधि 10 वर्ष की (जो भी पहले हो) ही रहेगी। उक्त अवधि में कर मुक्ति, देय बिक्री कर के 100 प्रतिशत से प्रारम्भ होकर आगामी वर्षों में नियमानुसार कम होती जाएगी।

रुग्ण औद्योगिक इकाईयों के पुनर्वासन हेतु- विभिन्न प्रभावी कदम उठाए जावेंगे। मध्यम एवं वृहत्त रुग्ण इकाईयों के पुनर्वास हेतु भारत सरकार ने औद्योगिक एवं वित्त पुनर्निर्माण वोर्ड (वी. आई. एफ. आर.) की स्थापना की है तथा लघु-स्तरीय रुग्ण इकाईयों के पुनर्वासन के लिए आई.डी.बी.आई. की पुनर्वासन योजना व राष्ट्रीय इक्विटी निधि का अधिकतम लाभ उपलब्ध कराने के प्रबंध किए जाएंगे।

भारत सरकार द्वारा शत प्रतिशत निर्यात कर मूलक इकाई के रूप में पंजीकृत औद्योगिक इकाई को अचल पूंजी निवेश के 10 प्रतिशत (अधिकतम 10 लाख रु.) की दर से विशेष राज्य पूंजी उपादान उपलब्ध होगा।

औद्योगिक विकास की संभावनाएं (Prospects of Industrial Development) -

उद्योगों की स्थापना मुख्यतः दो आधारों पर होती है। प्रथम- कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योग और दूसरे वन उत्पादों पर आधारित उद्योग। वन सम्पदा के अभाव में उरई तहसील में मुख्यतः कृषि सम्पदा पर आधारित औद्योगिक इकाईयां स्थापित हुई हैं। जिनमें आयल स्पेलिंग उद्योग प्रमुख है लेकिन वर्तमान में तिलहन की पैदावार में गिरावट आने के कारण इस उद्योग के भविष्योन्मुखी विकास की संभावनाएं क्षीण हुई हैं। जबकि दाल प्रोसेसिंग (चना एवं मसूर दाल) सम्बन्धी अत्याधुनिक नए उद्योग लगाए जाने की प्रबल संभावनाएं हैं। यहां आटा, सूजी, मैदा तथा बेकरी के मध्यम स्तरीय उद्योगों में आशाजनक वृद्धि हो सकती है। वर्तमान में उपलब्ध बेकरी इकाइयों की संख्या मात्र 07 है। इन औद्योगिक इकाईयों के अलावा कृषि पर आधारित अन्य उद्योगों यथा- टाफी, विस्कुट, चाकलेट, सफेद अलसी का तेल और साबुन, दाल प्रशोधन सयंत्र, गुड़, शक्कर, खांडसारी, अमीनोएसिड सयंत्र, प्रोटीन युक्त शक्ति बर्धक भोज्य पदार्थ की इकाइयां स्थापित होने की प्रबल संभावनाएं अध्ययन क्षेत्र में विद्यमान हैं।

कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के फलस्वरूप क्षेत्र में नवीनतम वैज्ञानिक कृषि यंत्रों के उपयोग में उत्तरोत्तर गति से वृद्धि हो रही है। अस्तु कृषि यंत्र कार्यशाला, टायर रिट्रेडिंग, वल्क नाइजिंग उद्योगों के विकास की प्रबल संभावनाएं विद्यमान हैं। शोध क्षेत्र के उरई केन्द्र पर पॉली वस्त्रों तथा धागों की रंगाई की कुटीर औद्योगिक इकाइयां स्थापित हैं जिनके संचालन हेतु शक्तिचालित करघे लगाकर अधिक कार्य सम्पन्न कराने एवं श्रम की बचत की जा सकती है। यहां पर विद्यमान शोरा-बारूद और एमीनोएसिड, इंजीनियरिंग, आटोमोवाइल्स, ईंट, ग्रेनाइट टाइल्स, एमरी, चमड़ा, उच्च स्तरीय आयुर्वेदिक दवाइयां, स्याही और प्रयोगशालाओं में उपयोग होने वाले रासायनिक पदार्थों के निर्माण का मार्ग भी इस क्षेत्र में प्रशस्त है। भवन निर्माण सामग्रियों के अन्तर्गत बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखते हुए सीमेंट जाली, सुर्खी, चूना आदि उद्योगों के विकसित किए जाने की प्रबल सम्भावनाएं प्राकलित हैं।

शोध क्षेत्र में वृहत स्तरीय उद्योगों के अन्तर्गत सोयाबीन पर आधारित विभिन्न औद्योगिक प्रक्रियाओं के तहत साबुन, फिनाइल तथा कई अन्य उद्योगों के विकास की संभावनाएं हैं। लौह उद्योग के अन्तर्गत इन्गाट्स बनाने हेतु मध्यम स्तरीय उद्योग लग सकता है। भवन निर्माण हेतु रोलिंग शटर्स, ग्रिल, स्टील फेब्रीकेशन तथा लीड आधारित उद्योग के विकास सम्भावित हैं।

इस प्रकार सन् 2001 तक शोध क्षेत्र के औद्योगिक विकास को नवीन एवं विकसित स्वरूप प्राप्त कर लेने की पूर्ण आशाएं हैं जिसके फलस्वरूप रोजगार की सुलभता होगी, आर्थिक विषमता में कमी आएगी और सामाजिक खुशहाली बढ़ेगी। सम्भावित उद्योगों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

संसाधनों पर आधारित उद्योग (Resource Based Industries) -

उरई तहसील में उपलब्ध संसाधनों के आधार पर दाल मिल, तेल मिल, चमड़ा, जिलेटिन एवं रस्सी तथा पशुओं की चर्बी उद्योग के विकास की प्रबल सम्भावनाएं हैं। क्षेत्र में उपलब्ध जड़ी बूटियों का संग्रह कर आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण पर आधारित औद्योगिक इकाइयों को विकसित किया जा सकता है। इसके अलावा प्राप्त वन सम्पदा के आधार पर काष्ठ कला पर आधारित पैकिंग केसेज तथा भवन निर्माण सामग्री के उद्योग लगाए जा सकते हैं। पशु सम्पदा पर आधारित उद्योगों में मिल्क चिलिंग प्लांट, बोनपील, आधुनिक टेनरी, चमड़े के जूते एवं चमड़े के आधुनिक घरेलू उत्पाद, ऊनी कम्बल, सींग की कंघी व अन्य कलात्मक वस्तुएं तथा सुअर के वालों के ब्रुश आदि

के उद्योग विकसित होने की सम्भावनायें दृष्टिगत होती हैं। मत्स्य सम्पदा के आधार पर फिश केनिंग एवं मछली का चूरा बनाने का उद्योग विकसित किया जा सकता है। 'खस' से सुगंधित तेल, खजूर के पंखे, झाडू और ताड़ से गुड़ बनाने सम्बन्धी उद्योग लगाया जा सकता है।

कुशल श्रम पर आधारित उद्योग (Skilled Labour Based Industries) -

शोध क्षेत्र में उपलब्ध परम्परागत कारीगरों के आधार पर कालीन हथकरघा, दरी, काष्ठकला एवं लुहारगीरी के आधार पर कृषि उपकरण, स्टील फर्नीचर, अलमारी, मेज- कुर्सी, लोहे के पलंग, लकड़ी के फर्नीचर आदि उद्योगों के विकास की संभावनाएं हैं। उपलब्ध दर्जी तथा मोची को सिले-सिलाए कपड़ों तथा चर्म उद्योग के विकास में उपयोग किया जा सकता है। आई.टी.आई. एवं पॉलीटेक्निक संस्थान में प्रशिक्षित युवकों के आधार पर इंजीनियरिंग, आटोमोवाइल और इलेक्ट्रानिक उपकरणों के उद्योगों की स्थापना की जा सकती है।

मांग पर आधारित उद्योग (Demand Based Industries) -

अध्ययन क्षेत्र के प्रमुख स्थलों, बाजार एवं स्थानीय मेलों का अध्ययन करने के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला गया है कि पावरलूम, फिनाइल, फाउन्टेन पेन, स्याही, बालपेन, पेपर पिन, अल्युमिनियम के वर्तन, टिन के डिब्बे, पी.वी.सी. फुटवियर, कागज के लिफाफे एवं प्लेटें, चार्ट, बोर्ड बाक्स, एमरी, ग्रेनाइट टाइल्स, सीमेन्ट पाइप, रेलवे स्लीपर, आटो पार्टस, अमीनोएसिड तथा उच्च प्रोटीनयुक्त भोज्य खाद्य पदार्थों सम्वन्धी मध्यम एवं लघु स्तरीय उद्योगों की स्थापना एवं उनके विकास और विस्तार की विपुलता सम्भावित है।

सम्भाव्य प्रमुख उद्योग (Main Industries) -

वृहत एवं मध्यम स्तरीय उद्योग (Large and Medium Scale Industries) -

केन्द्र सरकार से प्राप्त अनुज्ञा पत्र के आधार पर शोध क्षेत्र में जो मध्यम एवं वृहत उद्योग स्थापित हो चुके हैं एवं जिनकी स्थापना सम्भावित है, के लिए महत्वाकांक्षी उद्यमी जिला उद्योग केन्द्र उरई से सम्पर्क कर सुगमता पूर्वक निम्नांकित उद्योग स्थापित या विकसित कर सकते हैं।

तालिका सं. 5.3

क्र.	नाम उद्योग	वार्षिक उत्पादन क्षमता	लागत (लाख रु. में)
1.	हाईसेल	25 मिलियन	48.00 लाख
2.	वल्व एवं ट्यूव लाइट	3.40 मिलि. वल्व 2.75 मिलि. ट्यूव	538.00 लाख
3.	मैकेनाइज्ड ब्रिक्स	12 मिलियन	100.00 लाख
4.	फिनिस्ड लेदर	7,50,000 सं.	130.00 लाख
5.	पेपर इंडस्ट्रीज		180.00 लाख
6.	बेजीटेविल घी	15000 मी. टन	450.00 लाख
7.	टमाटर पेस्ट आयल रिफा.	200 मी. टन	110.00 लाख
8.	पी.वी.सी. पाइप एवं फिटिंग	1700 मी. टन	128.00 लाख
9.	स्टील रोलिंग	2500 मी. टन	125.00 लाख
10.	वी.पी. शीट	1400 मी. टन	170.00 लाख
11.	एल.पी.जी. गैस सिलिण्डर	400000 सं.	165.00 लाख

लघु एवं लघुतर उद्योगों की सूची (List of Small and Smaller Industries) -

कृषि आधारित उद्योग- दालमिल, आयल मिल, केटिल फीड्स, फल संरक्षण, पिसे मसाले आदि।

मैकेनिकल उद्योग- बेल्डिंग इलेक्ट्राड, एल्युमिनियम फर्नीचर, साइकिल कैरियर, पेपर पिन्स, रोलिंग शटर्स, ग्रिल्स थ्रेसर, सीडड्रिल, फिनाइल आदि।

केमिकल एवं पेपर उद्योग- निकिल, सोडियम, पी.वी.सी. फुटवियर, वाशिंग सोप, पेन्टस, डिस्टेम्पर, कार्ड बोर्ड के डिब्बे, कागज की प्लेटें, लिफाफे, कापियां, रजिस्टर आदि।

अन्य उद्योग- कॉटन एवं ऊलेन होजरी, स्कूल बैग्स, लेदर पर्स/ हैण्ड बैग, लेदर शूज एवं चप्पल, लकड़ी का फर्नीचर, शटल काक, चूना एवं चाक निर्माण आदि।

उपरोक्त उद्योगों की लागत 10 लाख से कम आती है और इन्हें आसानी से संचालित किया जा सकता है।

औद्योगिक विकास हेतु सुझाव (Suggestions for Industrial Development) -

शोध क्षेत्र के औद्योगिक विकास एवं संरक्षण हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जाने आवश्यक हैं:-

(1) गतिशील औद्योगिक विकास हेतु यह आवश्यक है कि जोखिम भरे उद्योग लगाने वाले साहसियों को वित्तीय एवं तकनीकी मदद कर इस ओर आकर्षित किया जाए तथा सरकार की नौकरशाही कार्यशैली, उद्योगपतियों के मार्ग को अवरुद्ध न करे।

(2) सहकारिता के आधार पर ग्रामीण औद्योगीकरण को बढ़ावा देना सर्वोत्तम उपाय है अतः सरकारी नेटवर्क को व्यापकता दी जाए जिससे ग्रामीण औद्योगीकरण व्यापकतापूर्वक हो सके।

(3) लघु एवं कुटीर उद्योगों हेतु आवश्यक कर्ज आदि की व्यवस्था की जाए जिससे उद्योगपतियों को वित्तीय कमी न होने पाए। पिछड़े क्षेत्रों में उद्योगपति, उद्योग स्थापित करने से कतराते हैं। उन्हें बढ़ावा देने के लिए अनुदान, कम ब्याज पर कर्ज आदि की व्यवस्था की जानी चाहिए। ग्रामीण एवं व्यवसायिक बैंक इस दिशा में आवश्यक भूमिका निभा सकती हैं इसलिए सभी सेवा केन्द्रों पर बैकिंग सुविधा उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

(4) सभी औद्योगिक इकाइयों में लघु एवं कुटीर उद्योग के श्रमिकों को डिजाइन, औजार व मशीनों का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

(5) समस्त ग्रामीण उद्योग गतिविधियां बाजार पर निर्भर करती हैं, अतः सरकार को घरेलू व विदेशी बाजार की व्यवस्था करवाना चाहिए। सरकार को प्रचार व विज्ञापनों के जरिए इन उद्योगों द्वारा उत्पादित सामग्री का प्रचार- प्रसार किया जाना चाहिए।

(6) अच्छे औद्योगिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि शिल्पकारों, कारीगरों व उद्योगपतियों में आत्म-विश्वास व प्रतियोगियता की भावना हो, अतः सरकार द्वारा इस स्पर्धा को बढ़ाने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रमों व प्रदर्शनियों इत्यादि का आयोजन किया जाना चाहिए।

(7) लघु औद्योगिक इकाइयों के सफल संचालन हेतु प्रत्येक इकाई में लघु-स्तरीय पावर स्टेशन की सम्पन्नता सुनिश्चित की जाए ताकि नियमित रूप से विद्युत आपूर्ति हो सके।

(8) शासन द्वारा सस्ती दरों पर कच्चे माल की आपूर्ति बाजार के स्थिर मूल्य को ध्यान में रखते हुए की जानी चाहिए।

(9) मध्यम, लघु एवं कुटीर उद्योगों से लाइसेंसिंग प्रणाली समाप्त करने से भी उद्योगों के विकास में सहयोग प्राप्त हो सकता है।

उपरोक्त अध्ययन से यह पता चलता है कि अध्ययन क्षेत्र का औद्योगिक विकास मुख्य रूप से कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास से सम्भव है, इसलिए कृषि आधारित उद्योगों के विकास पर अधिक जोर दिया गया है जिसमें निवेश एवं लाभ का विस्तृत क्षेत्र है प्रस्तुत अध्ययन में ऐसे औद्योगिक विकास पर जोर दिया गया है जो कृषि के विकास से सम्बन्धित हो परन्तु इसके साथ ही अन्य उद्योगों के विकास के संदर्भ में भी सुझाव दिए गए हैं जिससे संतुलित समन्वित एवं एकीकृत विकास हो सके।

REFERENCES

1. Bansal, P.C., 1977; Agricultural Problems of India, Vikas Publishing House, Limited, New Delhi P- 186
2. Dankedar, H., et. at., 1979, Role of Rural Industries in Rural Development, in Misra, R.P. (ed.) Rural Area Development Perspective and Appro aches, Sterting Publishing House, Pvt. Limited P- 123.
3. Myrdal, G., 1977; Asain Drama An Enquary into the Poverty of Noliens. Abridge in one Volume by Seth King, S. Penguin Books.
4. Pathak, C.R., 1982; Rural Industrilization for Rural Area Development (RIFRAD), Indian Journal of Regional Science, Vol. 14 (1) P- 88.
5. Rondinelli, D.A., 1979; Small Industries in Rural Development, Assesment and Perspective, Productvity, XIX (4), PP- 457- 59.
6. Roy, P. & Patil, B.R. 1977, Manual for Block Level Planning, Macmillan Co. New. Delhi, P- 69.
7. Sen, L.K., et. al., 1975; Growth Centres in Raichur An Integrated Area Development Plan for a District in Karnataka, N.I.C.D., PP 136- 137.
8. Singh, H.P., 1979; Resource Appraisal and Planning in India, Rajesh Publications New Delhi. P- 214.
9. Shivaraman, B., 1979; Role of Rural and Small Industries Productvity, XIX (4), PP- 441- 456.
10. Tripathi, R.N., et. al., 1980; Block Plan in District Frame, N.I.R.D. Hyderabad.

6

आधारभूत अवस्थापनाओं हेतु नियोजन

PLANNING FOR BASIC INFRASTRUCTURE

अध्याय - 6

CHAPTER - SIX

आधारभूत अवस्थापनाओं हेतु नियोजन
PLANNING FOR BASIC INFRASTRUCTURE

किसी क्षेत्र के त्वरित विकास हेतु वहां की आधारभूत अवस्थापनाओं/संरचना का ज्ञान पहली आवश्यकता है, क्योंकि यह विकास प्रक्रिया में तेजी लाने का एक प्रमुख साधन होने के साथ –साथ विकास केप्रभावों का विस्तार करने में सहायता करता है। वस्तुतः इन सेवाओं की अनुपस्थिति में हम किसी भी क्षेत्र के समग्र विकास की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। आधारभूत अवस्थापनाओं के अन्तर्गत ग्रामीण यातायात,संचार,विद्युतीकरण,बाजार,बैंकिग तथा सिंचाई की सुविधाएं सम्मलित हैं। बाजार बैंकिंग व सिंचाई का सम्बन्ध कृषिगत अवस्थापनाओं से है।अतः इनका वर्णन कृषि विकास से सम्बन्धित अध्याय में किया गया है। इस अध्याय में निवर्तमान ग्रामीण परिवहन की पर्याप्तता अथवा अपर्याप्तता को जानने का प्रयत्न किया गया है। इसके साथ ही संचार एवं विद्युतीकरण की व्यवस्था का भी अध्ययन किया गया है। इसी आधार पर इनके विकास हेतु व्यापक कार्यक्रम प्रस्तावित किया गया है।

परिवहन तन्त्रनियोजन (Planning for Transport system) -

यातायात भूगोल के तन्त्र उपागम में परिवहन जालक्रिया प्रवाह एवं यातायात में प्रयुक्त होने वाले साधनों का विशेष महत्व है। यातायात जाल एक प्रमुख स्त्रोत है जिसके द्वारा सामाजिक-आर्थिक विकास की धारा प्रवाहित होती है। एकीकृत क्षेत्रीय विकास हेतु यातायात सुविधाओं की व्यापकता अत्यावश्यक है। यह एक महत्वपूर्ण कारक है जिसके माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों में सम्बन्ध प्रगाढ़ होते हैं एवं अर्न्तस्वावलम्बन, विशेषज्ञता एवं संगठन की सुदृढ़ता सम्भव है (कूले,1974)। वास्तव में परिवहन तन्त्र को किसी भी अर्थव्यवस्था के रीढ़ की हड्डी कहा जाता है क्योंकि इसके द्वारा मानवीय एवं वित्तीय संसाध-:नों का उचित प्रवाह एवं उपभोग सम्भव होता है और क्षेत्र के विकास में आर्थिक समरूपता आती है। यातायात सम्पूर्ण आर्थिक विकास के तन्त्र के लिये विद्युत का कार्य करता है। इसके द्वारा क्षेत्र के किसी भी भाग में सामग्री एवं सेवाओं की मांग तथा पूर्ति का निर्धारण होता है। इस प्रकार यातायात व्यवस्था की जितनी अधिक पर्याप्तता होगी, मानवीय क्रियाकलापों का उतना ही अधिक विवेकीकरण सम्भव होगा (जोनेली,1978)। सेन (1975) का मत है कि एक सुनियोजित यातायात व्यवस्था क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने एवं सन्तुलित विकास करने में प्रमुख भूमिका निभाता है। परिवहन तन्त्र मुख्यतः दो उद्देश्यों की पूर्ति करता है। (अ) उपागम्यता; तथा (ब) आवागमन।

टोफे (1973)के अनुसार यातायात भूगोल निम्न तथ्यों से सम्बन्धरखता है।

(1)विशेष संधियों एवं प्रवाह, जो परिवहन तंत्र का निर्माण करते हैं; (2) इन संधियों से जुड़े केन्द्र बिन्दु; तथा (3)मुख्य क्षेत्र (Hinterland) एवं प्रशासनिक सम्बन्ध, जो परिवहन तन्त्र से जुड़े हों।

परिवहन तन्त्र की पर्याप्तता औद्योगिक एवं कृषि विकास सम्बन्धी गतिविधियों में सहायक

होती है। यह केवल औद्योगिक केन्द्रों को कच्चा माल ही उपलब्ध नहीं कराता है अपितु यह बाजार की प्रगति एवं उद्योगों के स्थानीयकरण में भी सहायक होता है। इसके अतिरिक्त यह बाजार में सस्ती सुविधाओं का प्रवाह अनवरत गति से बनाये रखता है। परिणामतः मूल्यवृद्धि नियंत्रित रहती है। यह कृषि यन्त्रों एवं उत्पादों के पर्याप्त आवागमन, औद्योगिक उत्पादों एवं यात्रीयों को परिवहन सुविधाएं प्रदान करते हैं। परिवहन तंत्र की पर्याप्तता केवल प्राथमिक उत्पादकों को उनके उत्पादों के लिये बेहतर मूल्य और उपभोक्ताओं को सस्ते मूल्य पर सुविधाएं ही उपलब्ध नहीं कराते बल्कि उनके उत्पादन एवं वितरण के लिये बेहतरीन व्यवस्था भी प्रदान करते हैं । (सिंह,1964)का मत है कि परिवहन व्यवसाय के बहुस्तरीय प्रभाव एवं यह सम्पूर्ण ग्रामीण समाज के विकास के लिये सुनिश्चित Feedback Mechanism प्रेषित करता है। यातायात का विकास परिवहन जाल बनाए रखता है परिणामतः परिवहन सेवा केन्द्रों का विकास एवं जनसंख्या में वृद्धि होती हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि परिवहन किसी क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सुनियोजित विकास कार्यक्रम क्षेत्रीय विकास नियोजन का प्रमुख अंग है इसलिये इस अध्याय में निवर्तमान परिवहन व्यवस्था का विश्लेषण कर अनुकूलतम् परिवहन तन्त्र का सुझाव दिया गया है।जो केवल मात्रा, समय एवं किराया ही कम नहीं करेंगे और न केवल बाजार एवं संचार की सुविधाओं का विस्तार ही करेंगे, अपितु कृषेतर रोजगारी एवं सेवाओं तथा सुविधाओं का विस्तार भी करेंगे।

वर्तमान परिवहन व्यवस्था (Existing Transport System)-

सड़कें (Roads)-

ग्रामीण क्षेत्रों के समाकलित विकास हेतु सड़क परिवहन एक प्रमुख आधारभूत अवस्थापना है। सड़कें एक प्रकार से अर्थव्यवस्था के लिये धमनियों का कार्य करती हैं। उनके द्वारा आर्थिक प्रवाह होता है।भले ही ये धन का उत्पादन नहीं करतीं परन्तु अर्थव्यवस्था को विफलता से सम्पन्नता तक पहुँचाने में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। सड़क परिवहन रूढ़िगत समाज की आर्थिक क्रियाओं में सहयोग प्रदान करता है। एक बार यदि एक गाँव को सड़क परिवहन द्वारा नजदीकी विकास केन्द्र अथवा सेवा केन्द्र से सड़क द्वारा जोड़ दिया जाता है तो उसकी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव आ जाते हैं। इसके द्वारा कृषि उत्पादकों को बाजार तक उत्पाद लाने-ले जाने में आसानी रहती है एवं किसानों को अपने उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो जाता है। सड़कें कृषि हेतु बढ़ते हुए आवश्यक समावेशों की पूर्ति करते हैं एवं किसानों के पास तकनीकी जानकारी आसानी से पहुँच सकती है (अरोरा,1979)। जॉनसन(1974) के मतानुसार:-सड़क परिवहन किसी क्षेत्र की उत्पादक क्षमता को समेकित करने में सहायक होता है। एक समाज में व्याप्त आंतरिक शक्ति को प्रसारित करता है। रान्डीनेली (1976) के अनुसार – ग्रामीण विकास के भौतिक एवं व्यवहारिक विनियोग में सड़क निर्माण एवं सुधार प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सड़कों के विकास द्वारा सामाजिक लाभ पर विचार करते हुए वे कहते हैं कि यद्यपि सड़क विकास द्वारा सामाजिक लाभ की व्याख्या करना बहुत कठिन है परन्तु कुछ प्रमुख बदलाव आसानी से दिखते हैं। सड़कों की उपयोगिता पर जोर देते हुए सिंह (1969) का विचार है कि सड़क संधि की व्यवस्था सभी प्रकार के विकास हेतु प्राथमिक आवश्यकता है। जबकि मुनाशी (1975) का कहना है कि नजदीकी परिवहन के लिये सड़कें एक सस्ता साधन हैं इसकी तुलना में जलमार्ग एवं रेलमार्ग

लम्बी दूरियों के लिये लाभप्रद हैं। महामार्गों एवं मार्गों के निर्माण से निम्न लाभ प्राप्त होते है।

(1) यह सामाजिक प्रवास एवं उत्प्रवास को बढाने में सहायक होते हैं क्योंकि इससे सूचनाओं का क्षेत्र बढ़ जाता है। जबकि सड़कों से दूर ग्रामीण अधिवासों में ऐसा नहीं हो पाता है।

(2) यह ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देने में सहायक है।

(3) यह किसानों में नई शैक्षणिक तकनीकों के ज्ञान को बढ़ाने में सहायक है जिसके द्वारा किसान कृषि उत्पादनों में वृद्धि कर सकते हैं। इसके द्वारा कृषि उत्पादों को आसानी से बाजार तक ले जाया जा सकता है।यह ग्रामीण लोगों के लिये शिक्षा स्वास्थ्य,सांस्कृतिक एवं डाक सुविधाएं उपलब्ध कराता है। सड़कों का निर्माण ग्राम समाज के लिये जीवन – रेखा का कार्य करता है क्योंकि इसके बिना ग्रामीण अधिवासों की जानकारी नहीं मिल सकती है।

(6) यह ग्रामीणों में आधुनिकता का संचार करने में सहायक है। इसके द्वारा सीमा उपरान्त के क्षेत्र भी सुयोग्य कर्मचारियों के लिये आर्कषण पैदा करते हैं।

(7) यह व्यवसायिक क्षेत्रों को बढ़ाने में सहायक होते हैं। अन्ततः सड़कों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के रहन सहन के स्तर में वृद्धि होती है। इन लाभों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कोई भी विकास कार्यक्रम ग्रामीण लोगों द्वारा इतनी सहायता नहीं प्राप्त कर सकता, जितना कि सड़क निर्माण योजनाएं प्रदान करती हैं। दुर्भाग्य का विषय है कि हमारे देश की पंचवर्षीय योजनाओं में सड़क निर्माण को अधिक महत्व नहीं दिया गया हैं। प्रारम्भिक 30 वर्षों तक की योजनाओं में, विशेषतः 1977 तक ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु पहुँच एवं संधि (LINK) मार्गों का निर्माण पूर्णतयः नगण्य रहा है। अपितु कुछ महामार्गों एवं सीमान्त सड़कों का निर्माण रक्षा आवश्यकताओं एवं औद्योगिक विस्तार को देखते हुए किया गया है। सामुदायिक विकास खण्ड योजनाओं में भी सड़क निर्माण को विशेष महत्व इस आधार पर नहीं दिया गया है कि यह विनियोग अनुत्पादक सिद्ध होगा।1977-79 के दौरान योजना आयोग द्वारा प्राप्त निर्देशों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का निर्माण न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम एवं त्वरित रोजगार योजना जैसे– 'काम के लिये अनाज'के तहत किया गया। अध्ययन क्षेत्र में इन योजनाओं के अन्तर्गत कुछ नई कच्ची सड़कों का निर्माण किया गया है और पहले निर्मित सड़कों का डामरी–करण भी हुआ तथा कुछ नई सड़कों के निर्माण कार्य भी विचाराधीन हैंपरन्तु 1971 के बाद सड़क निर्माण पर विशेष ध्यान न दिए जाने के कारण अन्य ग्रामीण क्षेत्रों की भांति अध्ययन क्षेत्र में भी सड़क व्यवस्था अपूर्ण एवं अप्रभावी है।यह स्थिति ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के जीवन के सभी क्षेत्रों के विकास में रूकावट पैदा करती है।

वर्तमान सड़क तंत्र (Existing Road System)-

अध्ययन क्षेत्र में सड़क व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान है। वर्तमान समय में क्षेत्र में कुल 260 किमी. लम्बी पक्की सड़कें एवं 35 किमी. लम्बी कच्ची सड़कें अन्तर्क्षेत्रीय आवागमन की मुख्य धमनियाँ हैं (चित्र सं.6 .1)। तहसील के उत्तरी भाग में पक्की सड़कों की लम्बाई दक्षिणी क्षेत्र की अपेक्षा 2 गुनी है जबकि दक्षिणी क्षेत्र में कच्ची सड़कों की

लम्बाई उत्तरी क्षेत्र की अपेक्षा सवा गुनी है। कच्ची एवं पक्की सड़कों की इन विभिन्नताओं में अनेक भौतिक एवं सांस्कृतिक कारणों का महत्वपूर्ण योगदान है। उरई शहर से निकटता एवं समतल भूभाग के कारण विकसित अर्थव्यवस्था के परिणामस्वरूप उत्तरी भाग में पक्की सड़कें अधिक मात्रा में हैं जबकि दक्षिणी भाग की ऊंची – नीची भूमि, नाले व नदियों की उपस्थिति, पिछड़ी अर्थव्यवस्था तथा सरकारी उपेक्षा इत्यादि पक्की सड़कों के विकास में मुख्य रूकावटें हैं। यहाँ पर कच्ची सड़कें ही पक्की सड़कों की कमी को पूरा करती हैं। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी भाग में स्थित अधिकांश केन्द्रीय स्थान पक्की एवं कच्ची सड़कों से लाभान्वित होते हैं परन्तु दक्षिणी क्षेत्र में कुछ कम केन्द्रों को ही यह सुविधा प्राप्त है। उरई इकाई में कच्ची सड़कों की लम्बाई सर्वाधिक है।अर्थात 22 कि०मी० है, क्योंकि यह जनपद मुख्यालय है तथा अपने आसपास के क्षेत्रों को प्रत्येक कार्य के लिये अत्यधिक मात्रा में आकर्षित करता है। इसके बाद कोटरा, एट एवं डकोर का स्थान आता है, जहाँ कि, यातायात व्यवस्था का समुचित प्रबन्ध है क्योंकि ये मुख्य सड़कों के आसपास स्थित हैं। उरई मुख्यालय एक राष्ट्रीय मार्ग पर स्थित है। यह राष्ट्रीय मार्ग (N.H.25) इस क्षेत्र को झाँसी एवं कानपुर से जोड़ता है। इसके अतिरिक्त दो अन्य महत्वपूर्ण मार्ग हैं (अ) उरई – चित्रकूट वाया हमीरपुर, बांदा ; तथा (ब) उरई – महोबा वाया राठ हैं। जिनके द्वारा यह क्षेत्र हमीरपुर, बांदा, चित्रकूट,राठ एवं महोबा से सीधे सम्पर्क में है। इसी प्रकार कुछ मुख्य सड़कें इसे इटावा,औरैया,भिण्ड तथा ग्वालियर आदि से भी इसे सम्बद्ध करती हैं, वे निम्न हैं:–

(1) उरई – नदीगाँव वाया कोंच
(2) उरई – माधोगढ़ वाया जालौन
(3) उरई – ग्वालियर वाया जालौन, भिण्ड
(4) उरई – औरैया वाया कोंच
(5) उरई – इटावा वाया कालपी
(6) उरई – सैदनगर वाया कोटरा (अन्तर्क्षेत्रीय सड़क तंत्र का विवरण चित्र सं. 6.1 में प्रदर्शित है।

सड़क सघनता (Density of Roads) –

वर्तमान सड़क तन्त्र के विश्लेषणात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि शोध क्षेत्र में कुल 295 किमी०लम्बी पक्की एवं कच्ची सड़कें हैं । पक्की सड़कों का घनत्व प्रति 1000 वर्ग किमी० पर 274.42 किमी० है तथा प्रति लाख जनसंख्या पर औसत घनत्व 102.22 किमी० है जबकि शोध क्षेत्र में कच्ची सड़कों (खडन्जायुक्त) का घनत्व प्रति 1000 वर्ग किमी० में 36.98 किमी० तथा प्रति लाख जनसंख्या पर 13.76 किमी० है । सम्पूर्ण सड़कों का घनत्व प्रति वर्ग किमी० पर 311.70 किमी० है एवं प्रति लाख जनसंख्या पर 115.98 किमी० है। जहां तक सड़कों के घनत्व की बात है उपक्षेत्रीय स्तर पर पर्याप्त विभिन्नताएं हैं ,जिसके कई कारण हैं।उरई इकाई के अन्तर्गत सड़क घनत्व प्रति 1000 वर्ग किमी० में 29.58 किमी०है,जो कि अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक है । इस कारण स्पष्ट है कि यह इकाई उरई शहर के आसपास के क्षेत्रों तक फैली इकाइयों को प्रभावित करती है परिणामतः सड़क निर्माण इसके आसपास सर्वाधिक हुआ है। इसके पश्चात कोटरा इकाई आती है, जहां पर प्रति 1000 वर्ग किमी० पर

6.2 किमी० सड़क घनत्व है। क्षेत्र में सड़कों का सबसे कम घनत्व बिनौरा एवं बड़ागाँव इकाई में मात्र क्रमशः 2.1 तथा 1.8 किमी. प्रति 1000 वर्ग किमी. है।

सड़कों की क्षमता (Capacity of Roads)–

सड़कों की क्षमता का निर्धारण वाहनों की क्षमता एवं तेजी,चौड़ाई तथा ज्यामितीय संरचना आदि के द्वारा प्रभावित होता है तथा इसका मापन अधिकतम संख्या में गुजरने वाले वाहनों की संख्या से ज्ञात किया जाता है ।यह मापन सड़क के किसी खास बिन्दु से एक घन्टे में बिना किसी देरी से गुजरने वाले वाहनों की संख्या से निर्धारित किया जाता है (सेन, 1975) ।अध्ययन क्षेत्र में सड़कों की क्षमता कानपुर–उरई–झाँसी मार्ग पर 7000,राठ–उरई औरैय्या पर 2700,उरई –जालौन–भिण्ड 1500,उरई–कालपी–इटावा 3000 तथा उरई–कोंच नदीगाँव 700 प्रतिदिन तथा अन्य सड़कों पर यह क्षमता प्रतिदिन 500 यात्री वाहनों से कम है।

रेलमार्ग (Railways)–

परिवहन के आधुनिक साधनों में रेलवे की प्रमुख भूमिका है। यह भारी मालवाहन के आवागमन में बहुत लाभकारी है क्योंकि इसके द्वारा लम्बी दूरियों तक उद्योगों के लिये कच्चामाल सस्ते भाड़े पर पहुंचाया जा सकता है।इस प्रकार रेल परिवहन राष्ट्रीय निर्माण एवं सुदृढ़ अर्थव्यवस्था के विकास में प्रमुख भूमिका निभाता है। अध्ययन क्षेत्र में मध्य रेलवे की 40 किमी० लम्बी एक बड़ी रेलवे लाइन है जिससे यह क्षेत्र कानपुर,लखनऊ,गोरखपुर,झाँसी,भोपाल, अहमदाबाद,तथा बम्बई से सीधे सम्पर्क में है।इससे झाँसी से ग्वालियर-आगरा होते हुये दिल्ली से भी सम्पर्क रखने में कोई कठिनाई नहीं होती है। इस रेलवे लाइन पर भुवा– एट व उरई रेलवे स्टेशन हैं। जहां से यहां के लोग रेल यातायात की सुविधा प्राप्त करते हैं।इसके अतिरिक्त एट –कोंच ब्रांच रेलवे लाइन की 8 किमी० लम्बाई इस भूभाग में आती है। घनत्व के विचार से रेलमार्ग की लम्बाई प्रति 1000 वर्ग किमी० पर 49.7 किमी० है तथा प्रति लाख जनसंख्या पर मात्र 18.5 किमी० है। इससे स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में रेलपरिवहन तन्त्र बहुत ही कमजोर स्थिति में है। रेल वितरण के हिसाब से मूल्यांकन करने पर पता चलता है कि इसमें प्रतिदिन (24घन्टेमें) 12 यात्री ट्रेनें एवं औसतन 6 मालवाहक रेलगाड़ियां गुजरती हैं और स्थानिक जनता को परिवहन व भाड़े सम्बन्धी सुविधा प्रदान करती हैं।

वर्तमान परिवहन तन्त्र का सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical Analysis of Existing Transport Network)-

परिवहन तन्त्र की गुणवत्ता की जाँच हेतु यातायात प्रणाली को विभिन्न सांख्यिकीय विधियों के आधार पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। वस्तुतः परिवहन तन्त्र को ग्राफ सदृश संरचना के रूप में प्रस्तुत किया है जो मार्गों एवं केन्द्रों के जाल से परिपूर्ण है। इस अध्याय में वर्तमान परिवहनतन्त्र की कच्ची-पक्की सड़कें कोणों के बीच रेखाओं का कार्य करती हैं। लगभग सभी सेवा केन्द्र कोणीय बिन्दुओं के रूप में दर्शाये गये हैं । मात्र वे गाँव,जो किसी केन्द्र से सम्बद्ध नहीं हैं, इन आंकड़ों से बाहर हैं।जैसे-सभी परिच्छेदन बिन्दुओं को कुछ चौडगरा बिन्दुओं के अतिरिक्त कोणों को बिन्दुओं के रूप में माना गया है। विभिन्न

प्रकार के तन्त्रों को योजक एवं परिच्छेदक ग्राफ के रूप में बांटा जा सकता है जो कि उनकी संरचना पर आधारित है। योजक ग्राफ में रेखाओं के मध्य कोई परिच्छेद नहीं होता है। ऐसा मात्र कोणीय बिन्दुओं पर ही होता है,जबकि बिच्छेदक ग्राफ में रेखाएं त्रिफलक रूप में दिखती हैं। एक रेखा–दूसरी रेखा को बिना किसी जुड़ाव के काटती है (टायनी,1971)। अध्ययन क्षेत्र का वर्तमान सड़क परिवहन तन्त्र एक योजक ग्राफ के रूप मे है। अधोलिखित पृष्टों में परिवहन जाल की व्याख्या हेतु अनेक सूत्रों का प्रयोग किया गया है।

विस्तार (Extension)–

ग्राफ के विस्तार का मापन (पाई) π सूचकांक से मापा जा सकता है।जोकि सम्पूर्ण दूरी (C)की तुलना तन्त्र के व्यास (δ) से करता है। इसका मापन निम्न सूत्र द्वारा किया जा सकता है :–

$$\pi = \frac{C}{\delta}$$

जहॉकि, C = परिवहन तन्त्र की सम्पूर्ण दूरी

δ = सम्पूर्ण रेखाओं की अधिकतम संख्या, जो कि कोणीय बिन्दुओं के मध्य सबसे कम दूरी तय करती हैं। (पाई) π का मूल्य जितना अधिक होगा परिवहन तन्त्र का विस्तार भी उतना ही अधिक होगा क्षेत्र का (पाई)π सूचकांक 7.54 किमी० है।जिससे पता चलता है कि क्षेत्र में सड़क परिवहन तन्त्र का विस्तार बहुत कम है।

प्रवेशगम्यता (Accessibility)–

प्रवेशगम्यता से तात्पर्य एक स्थान से दूसरे स्थान तक बिना किसी बाधा के सरलता से पहुंच या सम्बद्धता। प्रत्येक व्यक्ति बिना समय नष्ट किये अपनी आवश्यकताओं को पूरा करना चाहता है। एक केन्द्र, जो तीव्र एवं दक्ष परिवहन व्यवस्था या दो या दो से अधिक मार्गों का केन्द्र होता है,बड़े पैमाने पर सामाजिक –आर्थिक क्रियाओं को प्रोत्साहित करता है तथा अपने चहूं ओर के क्षेत्रों के लिये मार्ग संगम का कार्य करता है। यातायात जाल द्वारा उपयुक्त पारगम्यता के अभाव में सेवा केन्द्रों के महत्व में कमी आ जाती है।वस्तुतः किसी क्षेत्र के सामाजिक – आर्थिक विकास का सूचकांक पहुंच/प्रवेशगम्यता है, जो कि प्रवाही परिवहन व्यवस्था के आवरण के परीक्षण हेतु माप प्रस्तुत करता है। यह जनता एवं स्थानों के मध्य अन्तर्क्रियाओं को सम्मलित करता है, जिन्हें पहुंच की आवश्यकता होती है तथा जो केवल उसी स्थिति में सम्भव है जबकि वहां जोड़ने वाली कड़ी उपलब्ध हो। प्रवेशगम्यता मैट्रिक्स को शिम्बॉल की विधि द्वारा तैयार किया गया है। यह सूची एक केन्द्र से दूसरे सभी कैन्द्रों की प्रवेशगम्यता को नापती है। इसप्रकार प्रवेशगम्यता, निकटतम मार्ग द्वारा जाल पर एक केन्द्र का दूसरे सभी केन्द्रों के साथ सम्बन्ध बनाने के लिये इच्छित मार्गों की संख्या को व्यक्त करने के लिये प्रयोग में लाई जाती है। सभी शिम्बॉल संख्याओं का जोड़, जो केन्द्रों की पहुंच को प्रदर्शित करते हैं,मैट्रिक्स में दर्शाये गये हैं। समस्त सेवा केन्द्रों के लिये मध्य शिम्बॉल सूचकांक 103.00 है (चित्र सं 6.2) । स्तम्भों एवं पंक्तियों का योग प्रत्येक सेवा केन्द्र की प्रवेशगम्यता प्रदर्शित करता है। जिस केन्द्र का पहुंच सूचकांक सबसे कम होता है उसे अधिक पहुंच वाला केन्द्र (More Accessible Point) मानते हैं। इस संदर्भ में क्षेत्र की प्रवेशगम्यता सूचकांक 56 से 168 के बीच है। मैट्रिक्स के सूक्ष्मान्वेषण से स्पष्ट है कि उरई सबसे अधिक पहुंच वाला (गम्य) केन्द्र है जिसकी प्रवेशगम्यता का सूचकांक 56 है तथा

ORAI TAHSIL

ACCESSIBILITY MATRIX BASED ON ROAD NETWORK 1992-93

FROM → / TO ↓	CODE NUMBERS	ORAI	AIT	DAKORE	KOTRA	SAIDNAGAR	MOHAMDABAD	JAISARIKALA	KUSMILIYA	HASRDOI GUJAR	KHARUSA	AIR	KHARKA	ATARIYA	GARHAR	KARMER	TIMRON	KUKAR GOAN	MOHANA	DHAGUWANKALA	RURAADDU	AKORHI	MINORA ORAI	DHURAT	AUNTA	SOMAI	BADAGOAN	BAMHORI KALA	CHILLI	BINORA	NUNSAI	BHUA	RAHIYA	MAGRAYAN	TOTAL
CODE NUMBERS		01	02	03	04	05	06	07	08	09	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	
ORAI	01	0	2	3	2	2	1	2	2	2	1	1	3	1	2	1	1	1	4	1	2	3	1	4	2	3	1	1	2	4	3	3	1	1	56
AIT	02	2	0	5	2	4	4	3	4	2	4	4	6	5	4	4	4	6	6	1	4	3	3	1	5	1	2	4	5	1	2	2	4	5	110
DAKORE	03	3	5	0	7	6	2	1	1	5	5	4	6	4	5	4	4	4	1	5	4	5	4	7	4	5	4	4	4	3	3	5	4	4	129
KOTRA	04	4	2	7	0	2	3	1	4	4	4	3	5	3	4	3	1	3	6	4	3	4	4	3	3	3	3	4	2	1	3	3	3	3	102
SAIDNAGAR	05	2	4	6	2	0	3	3	4	2	3	3	5	3	3	3	1	3	6	3	3	3	4	3	4	1	3	4	2	2	2	2	3	4	99
MOHAMDABAD	06	1	4	2	3	3	0	3	1	3	3	2	3	2	3	2	2	2	3	2	2	4	2	5	2	3	2	3	1	3	2	2	2	2	79
JAISARIKALA	07	2	3	1	1	3	3	0	4	4	4	3	4	3	3	3	1	3	6	3	3	4	3	6	3	4	3	4	3	2	3	3	3	3	101
KUSMILIYA	08	2	4	1	4	4	1	4	0	4	4	3	5	3	4	3	3	3	2	3	3	5	3	6	3	4	3	4	1	3	2	3	3	3	103
HARDOI GUJAR	09	2	2	5	4	2	3	4	4	0	2	3	4	3	2	3	3	3	6	2	3	1	1	3	3	1	3	4	3	2	3	2	3	3	92
KHARUSA	10	1	4	5	4	3	3	4	4	2	0	3	4	3	2	3	3	3	6	2	3	2	1	5	3	3	3	4	3	4	5	3	3	3	104
AIR	11	1	4	4	3	3	2	3	3	3	3	0	1	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	89
KHARKA	12	3	6	6	5	5	3	4	5	4	4	1	0	4	4	3	3	3	6	3	3	5	3	7	3	5	3	4	3	4	5	4	3	3	127
ATARIYA	13	1	5	4	3	3	2	3	3	3	3	2	4	0	3	2	2	2	5	2	2	3	2	6	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	93
GARHAR	14	2	4	5	4	3	3	3	4	2	2	3	4	3	0	3	3	3	6	3	3	3	1	7	3	5	3	4	3	4	5	4	3	3	111
KARMER	15	1	4	4	3	3	2	3	3	3	3	2	3	2	3	0	2	2	5	2	2	5	2	7	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	93
TIMRON	16	1	4	4	1	1	2	1	3	3	3	2	3	2	3	2	0	2	5	2	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	85
KUKAR GOAN	17	1	6	4	3	3	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	0	5	2	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	93
MOHANA	18	4	6	1	6	6	3	6	2	6	6	5	6	5	6	5	5	5	0	5	5	7	5	8	5	5	5	6	5	6	7	6	5	5	168
DHAGUWANKALA	19	1	1	5	4	3	2	3	3	2	2	2	3	2	3	2	2	2	5	0	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	78
RURAADDU	20	2	4	4	3	3	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	0	4	2	6	2	3	2	3	2	3	4	3	2	2	91
AKORHI	21	3	3	5	4	3	4	4	5	1	2	4	5	3	3	5	4	4	7	4	4	0	2	4	4	2	4	5	4	5	6	5	4	4	126
MINORA ORAI	22	1	3	4	4	4	2	3	3	1	1	2	3	2	1	2	2	2	5	2	2	2	0	4	2	4	2	3	2	3	4	3	2	2	82
DHURAT	23	4	1	7	3	3	5	6	6	3	5	6	7	6	7	7	6	6	8	6	6	4	4	0	6	2	4	7	6	2	3	3	6	6	167
AUNTA	24	2	5	4	3	4	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	6	0	4	2	3	2	3	4	3	2	2	94
SOMAI	25	3	1	5	3	1	3	4	4	1	3	4	5	4	5	4	4	4	5	4	3	2	4	2	4	0	2	4	2	1	2	1	4	4	102
BADAGOAN	26	1	2	4	3	3	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	4	2	2	0	3	2	3	4	5	2	2	77
BAMHORI KALA	27	1	4	4	4	4	3	4	4	4	4	3	4	3	4	3	3	3	6	3	3	5	3	7	3	4	3	0	2	4	5	4	3	3	114
CHILLI	28	2	5	4	2	2	1	3	1	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	6	2	2	2	2	0	2	3	3	2	2	83
BINORA	29	4	1	1	1	2	3	2	3	2	4	3	4	3	4	3	8	3	6	3	3	5	3	2	3	1	3	4	3	0	1	2	3	3	90
NUNSAI	30	3	2	3	3	2	2	3	2	3	5	4	5	4	5	4	4	4	7	4	4	6	4	3	4	2	4	5	3	1	0	3	4	4	118
BHUA	31	3	2	3	5	2	2	3	3	2	3	3	4	3	4	3	3	3	6	3	3	5	3	3	3	1	5	4	3	2	3	0	4	4	103
RAHIYA	32	1	4	3	4	3	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	4	0	2	92
MAGRAYAN	33	1	5	3	4	4	2	3	3	3	3	2	3	2	3	2	2	2	5	2	2	4	2	6	2	4	2	3	2	3	4	4	2	0	94
TOTAL		56	110	129	102	99	79	101	103	92	104	89	127	92	111	93	85	93	168	78	91	126	82	67	94	102	77	114	83	90	118	103	92	94	3395

FIG. 6.2

सबसे कम पहुंच वाला केन्द्र मुहाना है जिसका प्रवेशगम्यता सूचकांक 168 है। प्रवेशगम्यता सूचकांक के आधार पर सेवा केन्द्रों को निम्न स्थानिक पदानुक्रम में विभाजित किया जा सकता है।

तालिका संख्या 6.1

प्रवेशगम्यता मैट्रिक्स के आधार पर सेवा केन्द्रों का स्थानिक पदानुक्रम

श्रेणी	वर्ग विभाजन	संख्या	कोड संख्या
प्रथम श्रेणी	90 से कम	08	1,6,11,16,19,22,26,28
द्वितीय श्रेणी	90 से 120	20	2,4,5,7,8,9,10,13,14,15,17,20, 24,25,27,29,30,31,32,33,
तृतीय श्रेणी	120 से 150	03	3,12,21,
चतुर्थ श्रेणी	150 से ऊपर	02	18,23,

तालिका संख्या 6.1 के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अधिकांश सेवा केन्द्र 91 से 120 प्रवेश–गम्यता सूचकांक के अन्तर्गत आते हैं। इससे सिद्ध होता है कि अधिकांश सेवा केन्द्र मध्यम पहुंच वर्ग में सम्मलित हैं।

संयुक्तता (Connectivity)-

संयुक्तता एक ऐसा परिमाण है जिसके अन्तर्गत तंत्र के कोणीय बिन्दुओं के एक–दूसरे से सीधे जुड़ाव का मापन किया जाता है (यीट्स,1968)। यह परिवहन तंत्र की आशावादिता के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण संकल्पना है। यह भौगोलिक अवस्थिति एवं सड़कों की संख्या का अन्तर्निहित संग्रह है(कैन्सकी, 1963)। तंत्र की संयुक्तता का मापन ग्राफ सिद्धांत के आधार पर किया जा सकता है(ओरि,1964)। जो कि भूपत्रक विज्ञान की एक शाखा है। इसका सम्बन्ध आधारभूत अवस्थापनाओं से है जिसके अन्तर्गत अवस्थिति की परिकल्पना ज्यामितीय तंत्र में उनकी स्थिति के अनुसार की जाती है, न कि उसकी वास्तविक अवस्थिति को ध्यान में रखकर (जैनेली,1969)। सामान्यतः संयुक्तता की मात्रा परिवहन जाल में आर्थिक विकास के स्तर के साथ–साथ बढ़ती है। यह तकनीक कैन्सकी द्वारा परिवहन जाल की संरचना नामक उनके लेख में वर्णित की गई है। ग्राफ की संयुक्तता का मापन विभिन्न प्रकार के संकेतों द्वारा किया जा सकता है। जैसे साइक्लोमैटिक संख्या (U), कोनिंग सूचकांक (Ki), अल्फा सूचकांक(α), बीटा सूचकांक (β) एवं गामा सूचकांक(γ) इत्यादि।

साइक्लोमैटिक संख्या (Cyclomatic Number)-

साइक्लोमैटिक संख्या तंत्र के अन्तर्गत ज्ञात परिमाणों का सबसे आसान मापन है। यह जुड़ाव की सम्पूर्णता से बढ़ता है एवं पेचीदा होने पर भी बढ़ जाता है इसका मापन निम्न सूत्र से किया जाता है :– **सूत्र** – $U + E - V = G$

जिसमें कि, U = साइक्लोमैटिक संख्या, E= रेखाओं की संख्या, V = कोणीय बिन्दुओं की संख्या, G = उपग्राफों की संख्या

अध्ययन क्षेत्र की साइक्लोमैटिक संख्या 5 है जो कि क्षेत्र के अव्यवस्थित एवं अपूर्ण परिवहन तंत्र की सूचक है।

केन्द्रीयता/ कोनिंग सूचकांक (Koning Index)-

केन्द्रीयता एवं कोनिंग सूचकांक दोनों ही संयुक्तता की स्थिति का मापन है जो कि कोणीय बिन्दुओं से सम्बन्धित स्थिति का मापन परिवहन तंत्र के अन्तर्गत करते हैं। सूत्र इस प्रकार है:– सूत्र –**Ki= Max dij**

जिसमें कि, Ki= कोनिंग सूचकांक तथा Max dij दर्शाता है कि इसके कोणीय बिन्दुओं की दूरी सबसे पिछड़े बिन्दु से कितनी है। इसके सन्दर्भ में दूरी का मापन दो कोणीय बिन्दुओं के मध्य छोटे रास्ते पर रेखाओं के परिच्छेदन के साथ किया जाता है। तहसील के परिवहन तंत्र की सम्बन्ध संख्या Ki तालिका 6.2 में दर्शायी गई है।

तालिका सं. 6.2

कोनिंग संकेत

Vertex	Ki	Vertex	Ki
01	4	18	8
02	6	19	6
03	7	20	6
04	7	21	7
05	6	22	5
06	5	23	8
07	6	24	6
08	6	25	5
09	6	26	5
10	6	27	7
11	6	28	6
12	7	29	6
13	5	30	7
14	7	31	6
15	7	32	6
16	6	33	5
17	6		

उपरोक्त तालिका संख्या 6.2 से स्पष्ट है कि दो कोणीय बिन्दु अर्थात मोहाना एवं धुरट में कोनिंग सूचकांक का मूल्य सर्वाधिक है जो कि 8 है तथा सबसे कम कोनिंग सूचकांक उरई का 4 है जो कि ग्राफ में सबसे केन्द्रीय स्थान पर दिखता है।

संयुक्तता ढाल (Connectivity Matrix)-

विभिन्न कोंणीय बिन्दुओं का संयुक्तता विश्लेषण ग्राफ को मैट्रिक्स रूप में बदलकर किया गया है। जिसमें (1) एक दर्शाता है कोंणीय बिन्दु के साथ सीधा सम्बन्ध एवं (0) शून्य दर्शाता है कि कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। मैट्रिक्स में अधिक संख्या में (1)का होना एव (0) का कम संख्या में होना तंत्र में अधिक अन्तर्सम्बन्ध को दर्शाता है (टॉयनी,1971)।मैट्रिक्स में उरई का 14 कोणीय बिन्दुओं से सीधा सम्बन्ध होने के कारण सर्वोच्च स्थान पर है इसके तुरन्त बाद जैसारीकला, मिनौराउरई एवं सोमई है। जिनमें चार कोंणीय बिन्दु है तथा 11 ऐसे, जिनका मात्र एक कोंणीय बिन्दु से सम्बन्ध है(तालिका संख्या ६.३)। संयुक्तता मैट्रिक्स के आधार पर सेवा केन्द्रों को अधोलिखित स्थानिक पदानुक्रम में वर्गीकृत किया जा सकता है।

तालिका सं. 6.3

सम्बद्धता मैट्रिक्स के आधार पर सेवा केन्द्रों का स्थानिक पदानुक्रम

श्रेणी	वर्ग	संख्या	कोड संख्या
प्रथम	6 से अधिक	1	1
द्वितीय	3 से 6	12	2,3,4,5,6,7,9,16,22, 25,29,31
तृतीय	3 से कम	20	8,10,11,12,13,14,15, 17,18,19,20,21,24, 26,27,28,30,32,33

प्रथम क्रम :-

इसमें उच्च स्तर की सम्बद्धता पायी जाती है। इसके अन्तर्गत मात्र उरई केन्द्र आता है। जिसका सम्बद्धता सूचकांक 14 है। यह इस क्षेत्र का प्रादेशिक केन्द्र है। जहाँ अन्य केन्द्रों की तुलना में यातायात की पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध है (चित्र संख्या 6.3)।

द्वितीय क्रमः-

इसके अन्तर्गत 12 सेवा केन्द्र आते हैं। जिनका सम्बद्धता सूचकांक 3 से 6 के बीच है। इसके अन्तर्गत एट, डकोर कोटरा, सैदनगर, मोहम्मदाबाद, जैसारीकला, हरदोईगूजर, टिमरों, मिनौराउरई, सोमई, बिनौरा एवं भुवा आते हैं।

तृतीय क्रम :-

इस क्रम में 20 सेवाकेन्द्र शामिल हैं। इनका सम्बद्धता सूचकांक 3 से कम है। कुसमिलिया, खरूसा, ऐर, खरका, अटरिया, गढ़र, करमेर, कुकरगांव, मोहाना, धगुवांकला, रूराअड्डू, अकोढ़ी, धुरट, औंता, बड़ागांव, बम्हौरी कला, चिल्ली, नुनसाई, राहिया एवं मंगराया सेवा केन्द्र उक्त स्तर की सम्बद्धता के उदाहरण हैं।

अल्फा, बीटा, गामा सूचकांक (Alfa, Bita, Gama Index)

परिवहन तंत्र की सम्बद्धता अल्फा, बीटा, गामा सूचकांकों की सहायता से अधिक अच्छी तरह से मापी जा सकती है। इन सूचकांकों में ऊपर एवं नीचे की सीमाएं निश्चित रहती हैं एवं इनका एक निश्चित मूल्य रहता है। अल्फा एवं गामा सूचकांकों का मापक पर मूल्य विविधतापूर्ण होता है। यह (0) शून्य एवं 1.0 के मध्य होता है। इसमें (0) असम्बद्धता का सूचक होता है एवं 1.0 (एक) अधिकतम संख्या सम्बन्धों को दर्शाता है। बीटा सूचकांक योजक ग्राफ में (0) शून्य से 3.0 तक सीमित रहता है एवं विच्छेदक ग्राफ में (0) शून्य से ज्ञात होती है। सूचकांक मूल्य जितना अधिक होगा, संधि मार्गों की गहनता उतनी ही अधिक होगी। अल्फा सूचकांक वास्तविक परिभ्रमणों की संख्या एवं अधिकतम सम्भावित

ORAI TAHSIL

CONNECTIVITY MATRIX BASED ON ROAD NETWORK 1992-93

FROM → / TO ↓	CODE NUMBERS	ORAI	AIT	DAKORE	KOTRA	SAIDNAGAR	MOHAMDABAD	JAI SHRIKALA	KUSMILIYA	HARDOI GUJAR	KHARUSA	AIR	KHARKA	ATARIYA	GARHAR	KARMER	TIMRON	KUKAR GOAN	MOHANA	DHAGUWANKALA	RURAADDU	AKORHI	MINORA ORAI	DHURAT	AUNTA	SOMAI	BADAGOAN	BAMHORI KALA	CHILLI	BINORA	NUNSAI	BHUA	RAHIYA	MAGRAYAN	TOTAL
CODE NUMBERS		01	02	03	04	05	06	07	08	09	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	
ORAI	01		0	0	0	0	1	0	0	0	0	1	0	1	0	1	1	1	0	1	1	0	1	0	1	0	1	0	1	0	0	0	1	1	14
AIT	02	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	1	0	0	0	1	0	0	0	0	03
DAKORE	03	0	0		0	0	0	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	03
KOTRA	04	0	0	0		1	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	03
SAIDNAGAR	05	0	0	0	1		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	03
MOHAMDABAD	06	1	0	0	0	0		0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	03
JAI SHRIKALA	07	0	0	1	1	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	04
KUSMILIYA	08	0	0	1	0	0	1	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	02
HARDOI GUJAR	09	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	03
KHARUSA	10	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	02
AIR	11	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0		1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	02
KHARKA	12	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1		0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	02
ATARIYA	13	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
GARHAR	14	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	1	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	03
KARMER	15	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	03
TIMRON	16	1	0	0	0	1	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	03
KUKAR GOAN	17	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	02
MOHANA	18	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
DHAGUWANKALA	19	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
RURAADDU	20	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
AKORHI	21	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
MINORA ORAI	22	1	0	0	0	0	0	0	0	1	1	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	04
DHURAT	23	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
AUNTA	24	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	0	0	0	01
SOMAI	25	0	1	0	0	1	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	1	0	0	04
BADAGOAN	26	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	1	0	0	02
BAMHORI KALA	27	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	0	01
CHILLI	28	1	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0	0	0	0	02
BINORA	29	0	1	0	1	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		1	0	0	0	04
NUNSAI	30	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1		0	0	0	01
BHUA	31	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	0	0	0	0		0	0	03
RAHIYA	32	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	01
MAGRAYAN	33	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		02
TOTAL		14	03	03	03	03	03	04	02	03	02	02	02	01	02	02	03	02	01	01	01	01	04	01	01	04	02	01	02	03	03	01	01	01	82

FIG. 6.3

संख्या के अनुपात को दर्शाता है। इसकी गणना निम्न सूत्र से करते है:–

$$\text{सूत्र-}\alpha = \frac{E - V + G}{2V - 5}$$

जहाँ कि,–

E = रेखाओं की संख्या, V=कोणीय बिन्दुओं की संख्या, G=उपग्राफों की संख्या।

अध्ययन क्षेत्र का **अल्फा सूचकांक** (α).08 है। यदि इसे प्रतिशत मूल्य में बदला जाय तो यह मात्र 8 होता है। जिससे पता चलता है कि यहाँ सम्बद्धता का परिमाण बहुत कम है। इससे यह भी पता चलता है कि अतिरिक्त मार्गों की संख्या विभिन्न केन्द्रों के बीच बहुत सीमित है।

गामा सूचकांक (y) ज्ञात रेखाओं की संख्या का सम्बन्ध अधिकतम सम्भावित रेखाओं से सम्बद्ध रखती है। इसकी गणना इस प्रकार कर सकते हैं:–

$$\text{सूत्र-} \quad y = \frac{E}{3(V-2)}$$

जहां कि, E = रेखाओं की संख्या, V = कोंणीय बिन्दुओं की दूरी। तहसीलमें सड़क तंत्र का **गामा सूचकांक** का मूल्य .65 है। जिससे पता चलता है। कि यहाँ सम्बद्धता का प्रतिशत 65 है एवं अतिरिक्त मार्गों की सम्भावनाएं अत्यधिक है।

बीटा सूचकांक सड़क की गहनता के बारे में बताती है अर्थात हर केन्द्र पर संधियों की कितनी संख्या है, इसकी गणना बीटा सूचकांक से कर सकते हैं:–

$$\text{सूत्र–} \quad = \frac{E}{V}$$

जहां कि, E = रेखाओं की संख्या, V = कोंणीय बिन्दुओं की संख्या। अध्ययन क्षेत्र का **बीटा सूचकांक** (β) 1.19 है। जो यह दर्शाता है कि क्षेत्र में संधि मार्गों का परिमाण बहुत कम है।सड़क तंत्र का उपरोक्त विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि तहसील में सम्बद्धता का परिमाण बहुत कम है। सड़क तंत्र की हीन सम्बद्धता का क्षेत्र के समाजिक– आर्थिक विकास पर खराब असर पड़ा है।

परियात प्रवाह (Traffic Flow)-

परियात प्रवाह से तात्पर्य है सामान, लोगों एवं सूचनाओं का एक तरफ जाने वाली मात्रा से है। यह सड़कों की गुणवत्ता, वाहनों की तीव्रता एवं ठहरने के लिये उचित स्थलों पर आधारित होती है। यातायात व्यवस्था में इसका मुख्य स्थान है एवं क्षेत्र की आर्थिक–सामाजिक गतिविधियों को भी प्रभावित करता है। चूँकि अध्ययन क्षेत्र एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। अतः यहाँ का यातायात मुख्यतः कृषि उत्पादों पर आधारित है जो कि गांव से बाजारों तक सम्बद्ध है तथा प्रतिदिन प्रयोग में आने वाली वस्तुओं, कृषि सम्बन्धी उपकरण व कृषि उत्पादों का आवागमन गांव से बाजार तक होता है। यातायात के मुख्य साधन के रूप में बैलगाड़ी एवं ट्रैक्टरट्राली प्रयोग में लाये जाते हैं। लोग नजदीकी बाजार तक मुख्यतः पैदल ही यात्रा करते हैं। यातायात की मात्रा, समय व स्थानीयता के आधार पर विविधतापूर्ण है। यातायात मात्रा का अनुमान लगाने हेतु आंकड़ों की कमी होने के कारण जनता के अन्तर्क्षेत्रीय व क्षेत्रीय आवागमन द्वारा इसका विश्लेषण रेल व बस सेवाओं के आधार पर होता है।

तालिका संख्या 6.4 में अध्ययन क्षेत्र के लिये बस यातायात (आना एवं जाना) की स्थिति दर्शायी गयी है।

तालिका संख्या 6.4

बस यातायात (आना–जाना प्रतिदिन) का संकेन्द्रण, 1992-93

क्र.सं. एवं सड़क मार्ग		बसों की संख्या
1.	उरई–कानपुर मार्ग	100
2.	उरई–झाँसी मार्ग	80
3.	उरई–जालौन मार्ग	62
4.	उरई–राठ मार्ग	50
5.	उरई–कोंच मार्ग	42
6.	उरई–कोटरा मार्ग	30
7.	कोंच–कोटरा मार्ग	12
8.	उरई–चुरखी मार्ग	20
9.	उरई–बोनी मार्ग	08

तालिका संख्या 6.4 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कानपुर–उरई मार्ग पर सर्वाधिक (100 बसें प्रतिदिन) आती–जाती हैं। दूसरे स्थान पर उरई–झाँसी मार्ग आता है, जिस पर प्रतिदिन 80 बसें चलती हैं। बस यातायात सबसे कम उरई–बोनी मार्ग पर है। यहाँ प्रतिदिन मात्र आठ बसें चलती हैं (चित्र सं.6.4 A)। रेल परियात् प्रवाह सेवा (चित्र सं. 6.4B) के अवलोकन से स्पष्ट है कि झाँसी–कानपुर मार्ग पर प्रतिदिन 12 यात्री गाड़ियाँ गुजरती हैं जो इस क्षेत्र को देश के महत्वपूर्ण नगरों व औद्योगिक केन्द्रों से जोड़ती हैं। इसके अतिरिक्त एट–कोंच रेलवे सेक्सन पर प्रतिदिन दो यात्री गाड़ियां क्षेत्रीय जनता को आवागमन की सुविधा प्रदान करती हैं।

समस्यायें एवं नियोजन प्रस्ताव (Problems and Proposal for Planning)-

अध्ययन क्षेत्र के उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि क्षेत्र में बेहतर यातायात हेतु सड़क व रेलमार्गी सुविधाओं का व्यापक मात्रा में विस्तार आवश्यक है, क्योंकि वर्तमान यातायात व्यवस्था क्षेत्र की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाने में सक्षम नहीं है। वर्तमान यातायात व्यवस्था की निम्नलिखित समस्याएँ हैं।

1. क्षेत्र के विस्तार की दृष्टि से सड़क मार्गों की लम्बाई बहुत कम है।साथ ही देखरेख व्यवस्था में भी निम्नता प्रदर्शित होती है।
2. रेलमार्गों की लम्बाई अत्यल्प एवं नगण्य है।
3. पहुँच मार्गों की संख्या बहुत कम है।
4. संधिमार्गों (Link Roads) का परिमाण बहुत कम है एवं दो केन्द्रों के मध्य अतिरिक्त मार्गों की संख्या काफी कम है।
5. अध्ययन क्षेत्र में पुलों की कमी यातायात व्यवस्था को और भी दुर्बल बनाती है।
6. सुगमता की स्थिति एक प्रमुख समस्या है। यदि इसके मार्गों की भौतिक दूरी या यात्रा

TAHSIL ORAI
TRAFFIC FLOW CARTOGRAM
N
A FREQUENCY OF BUSES
TO CHURKHI
KMS
TO JALAUN
TO KANPUR
TO KONCH
ORAI
TO BOONI
TO JHANSI
AIT-KOTRA
60
40
20
NO. OF BUSES (PER DAY)
TO RATH
B FREQUENCY OF TRAINS
ORAI
AIT
3
2
1
NO. OF TRAINS (PER DAY)
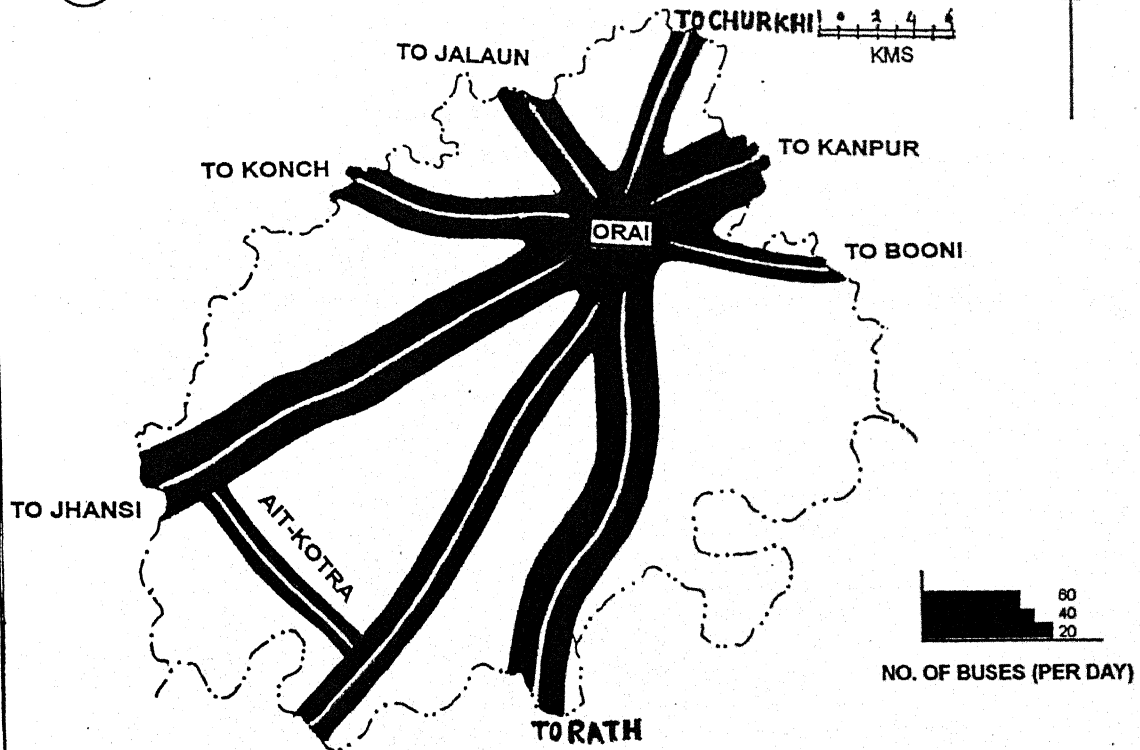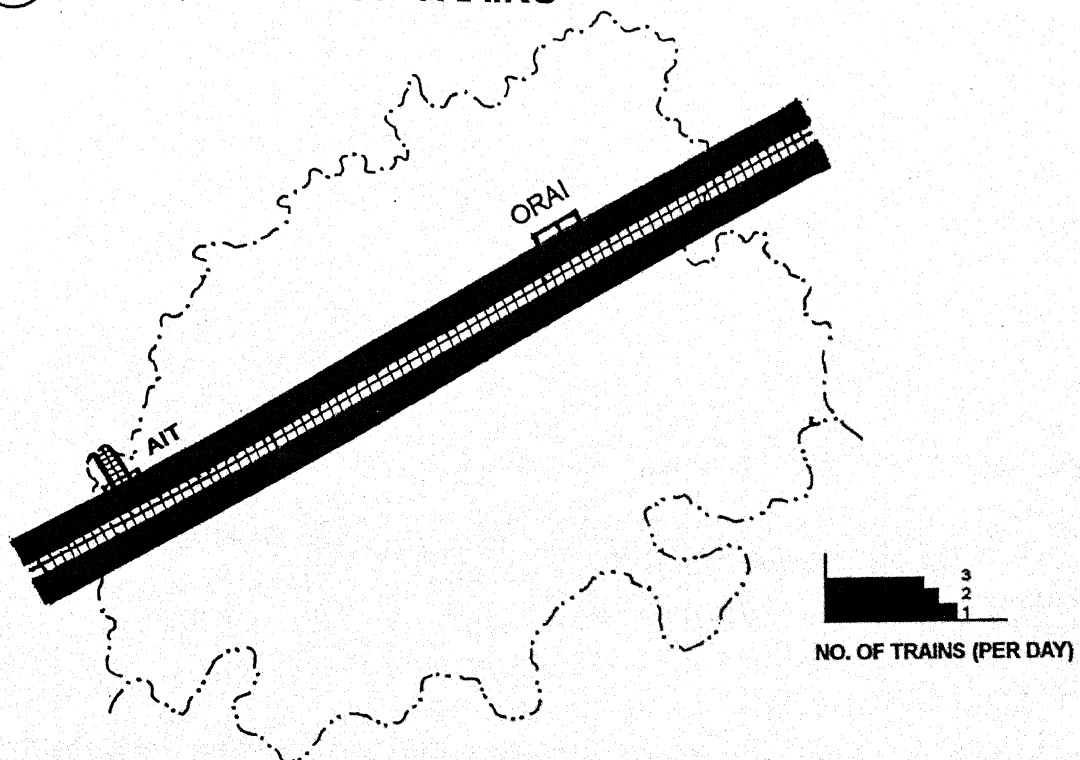
FIG. 6.4

का समय दूरी के संदर्भ में देखा जाय तो सड़कों की खराब स्थिति, स्थायी एवं पक्के पुलों की कमी एवं अव्यवस्थित धरातल के कारण क्षेत्र के कुछ स्थानों को बहुत ही दुर्गम क्षेत्र माना जा सकता है।

अध्ययन क्षेत्र की यातायात व्यवस्था की कमियों व समस्याओं को दूर करने एवं क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास के लिये एक गतिमान विकास योजना प्रस्तावित करने का प्रयत्न किया गया है।जो पाँच–पाँच वर्ष के अन्तराल में पूर्ण हो सकेंगी। यह योजना निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होगी।

1. वर्तमान यातायात व्यवस्था को सुदृढ़ करने।
2. अन्तर्क्षेत्रीय मार्गों का सुदृढ़ीकरण तथा क्षेत्रीय यातायात व्यवस्था का एकीकरण करने।
3. अध्ययन क्षेत्र के सभी अधिवासों को सुगम बनाने के लिये सड़क तंत्र को एक विशेष लाभप्रद वितरण व्यवस्था से परिपूर्ण किया जाना चाहिए। यह योजना बम्बई (मुम्बई) योजना (1975) के सदृश लागू की जाय, तो और अच्छा है। उदाहरण रूप में बम्बई योजना को तालिका सं. 6.5 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका सं. 6.5
बम्बई योजना, 1975

क्र. सं. एवं क्षेत्र का विवरण	गाँव की अधिकतम दूरी (किमी० में)	
	किसी भी सड़क मार्ग से	मुख्य मार्ग से
1. विकसित एवं कृषि क्षेत्र	2.41	6.44
2. अर्धविकसित क्षेत्र	4.83	12.80
3. अविकसित व कृषि योग्य क्षेत्र	8.05	19.31

स्त्रोत- बम्बई योजना सेन,1975 पेज-164।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निम्नलिखित संस्तुतियाँ प्रस्तावित हैं:–

1. बेहतर सुगमता स्थापित करने हेतु उपयुक्त परिवहन जाल विकसित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। केन्द्रीय ग्रामों , सेवा बिन्दुओं,सेवा केन्द्रों,विकास बिन्दुओं एवं विकास केन्द्रों को बारहमासी सड़कों द्वारा आपस में जोड़ा जाना चाहिए।
2. सभी अधिवासों को मार्गो द्वारा उनके केन्द्रीय ग्रामों से जोड़ा जाना चाहिए। वे सभी गाँव, जिनकी जनसंख्या 1000 या उससे अधिक है, को उनके नजदीकी केन्द्रीय स्थानों या मुख्य सड़क तक बारहमासी मार्गों द्वारा जोड़ा जाना चाहिए। ताकि ये केन्द्र राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ सकें।
3. वे सभी गांव, जिनकी जनसंख्या 1000 से कम है, को उनकी नजदीकी सड़कों से जोड़कर मार्ग सुगमता बढ़ायी जानी चाहिए।
4. सड़क व्यवस्था में गुणात्मक सुधार लाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए जिससे यातायात सस्ता व निर्बाध हो सके।

यातायात तंत्र का पुनर्गठन (Reorganization of Transport Network)-

उपरोक्त संस्तुतियों के आधार पर अध्ययन क्षेत्र के यातायात तंत्र के पुनर्गठन हेतु निम्नलिखित अनुमोदन किये जा रहे हैं:–

1. खंडजा एवं छिन्न–भिन्न सड़कों को शीघ्र डामरीकृत करने का प्रयास किया जाना

चाहिए।

2. सड़कों, जैसे-उरई–राठ एवं उरई–कोटरा मार्ग, संकरी एवं एकमार्गी हैं, का चौड़ाईमें विस्तार किया जाना चाहिए ताकि वाहन आसानी से आ जा सकें।
3. केन्द्रीय ग्रामों से सेवा केन्द्रों को जोड़ने वाली सभी कच्ची सड़कों को तुरंत पक्की सड़कों में परिवर्तित किया जाय।
4. रेवेन्यू गांवों तथा केन्द्रीय ग्रामों से सम्बद्ध सभी कच्ची सड़कों को वर्ष 2005 तक बारहमासी सड़कों में बदला जाये।
5. सड़क निर्माण से संबंधित सभी अपूर्ण सड़कों को पूर्ण कराकर तुरंत बारहमासी सड़कों के रूप में बदला जाये।
6. 1000 की जनसंख्या या उससे अधिक की जनसंख्या वाले ग्रामों को तुरन्त सड़क मार्गों द्वारा जोड़ा जाना चाहिए। यहाँ, यह भी उदधृत किया जाता है कि 1000 या अधिक जनसंख्या वाले गांवों की संख्या 69 है,जिनमें से 39 गांवों में सड़क सुविधा पहले से है। शेष अन्य गांवों को भी सड़क सुविधा से जोड़ने के लिये 33 नई सड़कों के निर्माण का प्रस्ताव किया जाता है ताकि एक हजार से अधिक आबादी वाले एवं उनके आस–पास स्थित गांव महत्वपूर्ण केन्द्रों से सीधे सम्पर्क में आ सकें। इन सड़कों को वर्ष 2005 तक पक्की सड़कों में परिवर्तित करने का भी प्रस्ताव है।
7. कुछ नई व महत्वपूर्ण सड़कों का निर्माण ग्राम स्तरीय पहुँच मार्गों के साथ–साथ किया जाना चाहिए जिससे शेष बचे गांवों को मुख्य मार्गों से जोड़ा जा सके। ये सड़कें भी 2005 तक बारहमासी सड़कों में बदले जाने का प्रस्ताव है।
8. सड़कों के रखरखाव हेतु नियमित मंडलों/उपमंडलों की स्थापना की जानी चाहिए।
9. प्रस्तावित सड़कों का निर्माण बैलगाड़ी मार्गों पर होना चाहिए ताकि कृषि योग्य भूमि बचायी जा सके,(तालिका संख्या 6.6 एवं चित्र संख्या 6.5)।

तालिका संख्या 6.6

शोध क्षेत्र हेतु प्रस्तावित सड़क तन्त्र का विवरण

पक्की सड़कें:-

1. उरई–बन्धौली मार्ग वाया हैदलपुर
2. धगुवांकला–धुरट मार्ग वाया एट
3. डकोर–गुढ़ा मार्ग वाया बन्धौली
4. कोटरा–डकोर मार्ग वाया जैसारीकला
5. डकोर– रमपुरा मार्ग वाया हैदलपुर
6. एट– हरदोई गूजर मार्ग वाया बर्ध
7. डकोर–एट मार्ग वाया गुनसाई
8. मुहम्मदाबाद–गुढ़ा मार्ग वाया रमपुरा
9. सोमई– हरदोई गूजर मार्ग वाया खरूसा
10. हरदोईगूजर– उरई मार्ग वाया इमिलिया
11. धुरट–कोटरा मार्ग वाया सैदनगर

TAHSIL ORAI
PROPOSED TRANSPORT NETWORK
N
KMS
TO JALAUN
ATARIA
MAGARAYAN
KUKARGOAN
CHAKJAGDEOPUR
GURHAKHURD
BANDHA
RAHIYA
TO KANPUR
MINORAORAI
HARDOIGUJAR
ORAI
BAMHAURIKALA
KARMER
RIRWA
AKORHI
IMILIYA
BARAGOAN
DHARGUAN
BARDH
CHILLI
DADRI
AIR
AIT
RAMPURA
KHARKA
SOMAI
TIMRON
HAIDALPUR
KURKURU
TO JHANSI
GOREN
DAKORE
BINORA
BANDHAULI
DHURAT
GURHA
JAISARIKALA
KAMTHA
MOHANA
SAIDNAGAR
KOTRA
SIKARI
MAKRECHHA
PATTIAIR
TO RATH
SINGAL LANE PROPOSED DOUBLE LANE
KHARANJA ROAD PROPOSED METALLED ROAD
UNMETALLED ROAD PROPOSED KHARANJA
NEW UNMETALLED ROAD PROPOSED

FIG. 6.5

खड़ंजायुक्त सड़कें:-

12. कोटरा–कमठा–मकरेक्षा मार्ग
13. रमपुरा–खरूसा–ददरी मार्ग
14. रमपुरा–एट–करमेर मार्ग
15. उरई–इमिलिया–बर्ध मार्ग
16. कुकरगांव–गढ़र–मिनौराउरई मार्ग
17. मगरायां–गुढ़ाखुर्द–बम्हौरीकला मार्ग
18. मुहम्मदाबाद–धरगुवॉ–करमेर मार्ग
19. टिमरों–गोरन–बरसार मार्ग
20. उरई–राहिया–बन्धा मार्ग
21. उरई–बरहाउरई–रूराअड्डू मार्ग

कच्ची सड़कें:-

22. बड़ागांव–चिल्ली मार्ग
23. करमेर–रिरूआ मार्ग
24. मुहाना–पट्टीऐर मार्ग
25. रिरूआ–ददरी मार्ग
26. कोटरा–सिकरी मार्ग
27. सोमई–कुरकुरू मार्ग
28. मुहम्मदाबाद–ऐर मार्ग
29. डकोर–जैसारीखुर्द मार्ग
30. उरई–ऊसरगांव मार्ग
31. भुवा–कपासी मार्ग
32. मुहम्मदाबाद–चिल्ली मार्ग
33. रूराअड्डू–हजरतपुरा मार्ग

संचार (Communication)-

एकीकृत क्षेत्रीय विकास हेतु संचार एक प्रभावशाली एवं शक्तिशाली माध्यम है। इसके अन्तर्गत डाक, तार व टेलीफोन सेवाएं आती हैं। डाक विभाग मात्र पत्रों का आदान–प्रदान ही नहीं करता बल्कि छोटी–मोटी बैंकिंग व्यवस्था व वस्तुओं के आदान–प्रदान का कार्य भी करता है। आजकल डाकघर बड़े बैंकिंग प्रतिष्ठानों के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिष्ठित हो चुके हैं। ये सामान्य जनमानस की लघु बचतों को बड़ी योजनाओं एवं परियोजनाओं में निवेश करते हैं। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या एवं ग्रामीण जनसंख्या में बढ़ते हुए साक्षरता प्रतिशत तथा ग्रामीण लोगों के बढ़ते जीवन स्तर के कारण देश में डाक व्यवस्था का विकास व नियोजन हुआ है। वास्तव में डाकघर ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों की अन्र्तसंरचनात्मक सुविधाओं में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुके हैं। चूंकि देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है। इसलिये सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में डाकतन्त्र के विस्तार हेतु एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक सुविधाएं बढ़ाने के उद्देश्य से उदारवादी नीति अपनायी है। डाक सुविधाएं केवल आर्थिक रूप से विकसित क्षेत्रों में ही न बढ़ाई जायें, जहां कि इनसे

अधिक आय प्राप्त होगी वरन् ग्रामीणों के हितों को ध्यान में रखकर इनका विस्तार किया जाय। सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में इन डाक सुविधाओं को बढ़ाने के लिये निम्नलिखित कदम उठाये हैं:–

1. उन सभी गाँवों में, जिनकी जनसंख्या 2000 या इससे अधिक है एवं वार्षिक नुकसान प्रति डाकघर रू० 750/ से अधिक नहीं है, में डाकघर खोला जाय।
2. डाक पहुँचाने की सुविधाओं का विस्तार उन सभी गाँवों में किया जाय, जहाँ डाक व्यवस्था शून्य बिन्दु पर है।
3. वे सभी नवविकसित क्षेत्र, जहां डाक व्यवस्था अपूर्ण है, में नये डाकघर खोले जायें।
4. बाकी बचे उन क्षेत्रों में जहां डाकघर सम्बंधी कार्य व व्यस्तता अधिक है, वहां वर्तमान क्षेत्रों से संलग्न क्षेत्रों में अतिरिक्त डाकघर खोले जायें।
5. ग्रामीण पत्र वितरण सेवा की आवृत्ति में वृद्धि की जाय।
6. डाकघरों की स्थापना इस प्रकार की जाय कि लोगों को उन तक पहुंचने के लिये 01 कि.मी. या उससे कम दूरी तय करनी पड़े।

वस्तुतः अध्ययन क्षेत्र में डाक व्यवस्था पूर्ण व प्रभावी नहीं है। यहां पर केवल 01 प्रधान डाकघर, 01 उपडाकघर तथा 32 शाखा डाकघर हैं। इसके अलावा क्षेत्र में एक तारघर तथा एक टेलीफोन एक्सचेन्ज भी है। इन सुविधाओं का वितरण भी अत्यधिक असमान एवं अनियमित है। ऐसा मुख्यतः अध्ययन क्षेत्र में कमजोर परिवहन सुविधाओं के कारण है। डाक एवं संचार सुविधायें क्षेत्र के विकास के लिये एक महत्वपूर्ण व्यवस्था हैं। अतः उनका प्रभावी एवं न्यायपूर्ण वितरण आवश्यक है। अध्ययन क्षेत्र में डाक व संचार सुविधाओं के लिये सुझाव, सरकारी नीतियों एवं संस्तुतियों को ध्यान में रखना होगा। इन सुविधाओं हेतु निम्नलिखित प्रस्तावों का अनुमोदन किया जा रहा है(चित्र सं.6.6 A)।

1. केन्द्रीय ग्रामों के साथ–साथ २००० या उससे अधिक जनसंख्या वाले सभी गांवों में वर्ष 2005 तक डाकघर सुविधाओं एवं सेवाओं का विस्तार किया जाय।
2. डकोर,एट एवं कोटरा में 2005 तक एक–एक उपदूरभाष केन्द्र स्थापित किये जायें।
3. डकोर में वर्ष 2005 तक निम्न चयन श्रेणी का एक प्रधान डाकघर खोला जाय।
4. एट में वर्ष 2005 तक एक उपडाकघर एवं एक तारघर खोला जाय।
5. सैदनगर,सोमई,रूराअड्डू,नुनसाई एवं गुढ़ा में वर्ष 2001 तक उपडाकघर खोले जायें तथा 2005 तक इन्हीं केन्द्रों पर तारघर भी खोले जायें।
6. वे सभी गांव, जिनकी जनसंख्या 500 या इससे अधिक है, में वर्ष 2001 तक डाकघर खोले जायें।
7. 500 से कम जनसंख्या वाले ग्रामों में तुरन्त डाक पहुंचाने की सुविधायें 2005 तक स्थापित की जायें।

ग्रामीण विद्युतीकरण (Rural Electrification)-

वस्तुतः ग्रामीण विद्युतीकरण का कार्य राष्ट्रीय महत्व का है एवं इस पर ग्रामीण भारत की समृद्धि व विकास निर्भर करता है। यह ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के आर्थिक विकास के अन्तर को कम करने के लिये एक आवश्यक कदम है। इसी कारण राष्ट्रीय,आर्थिक व कृषि शोध परिषद ने अधिक विकास के लिये ग्रामीण विद्युतीकरण पर अधिक बल दिया है।

TAHSIL ORAI
INFRASTRUCTURAL FACILITIES
N
A POST-OFFICES
EXISTING
PROPOSED
HEAD POST-OFFICE
SUB POST-OFFICE
BRANCH POST-OFFICE
B ELECTRIFICATION
EXISTING
PROPOSED
132 KV LINE
132 KV S/STATION
33 KV LINE
33 KV S/STATION
11 KV LINE
11 KV S/STATION
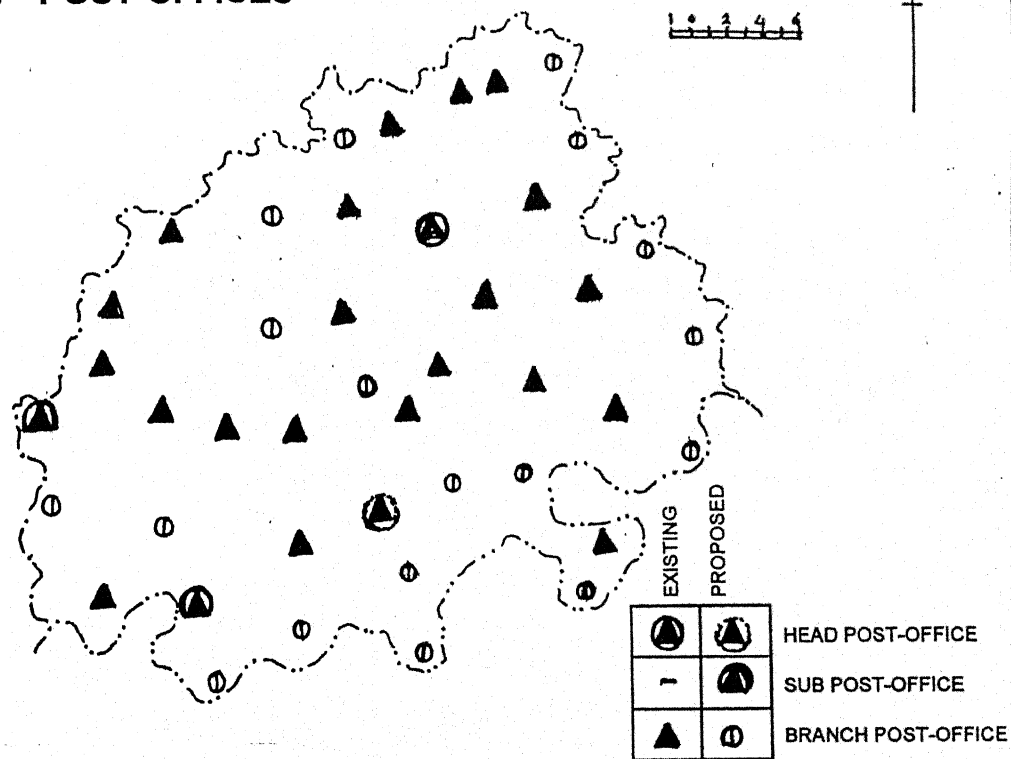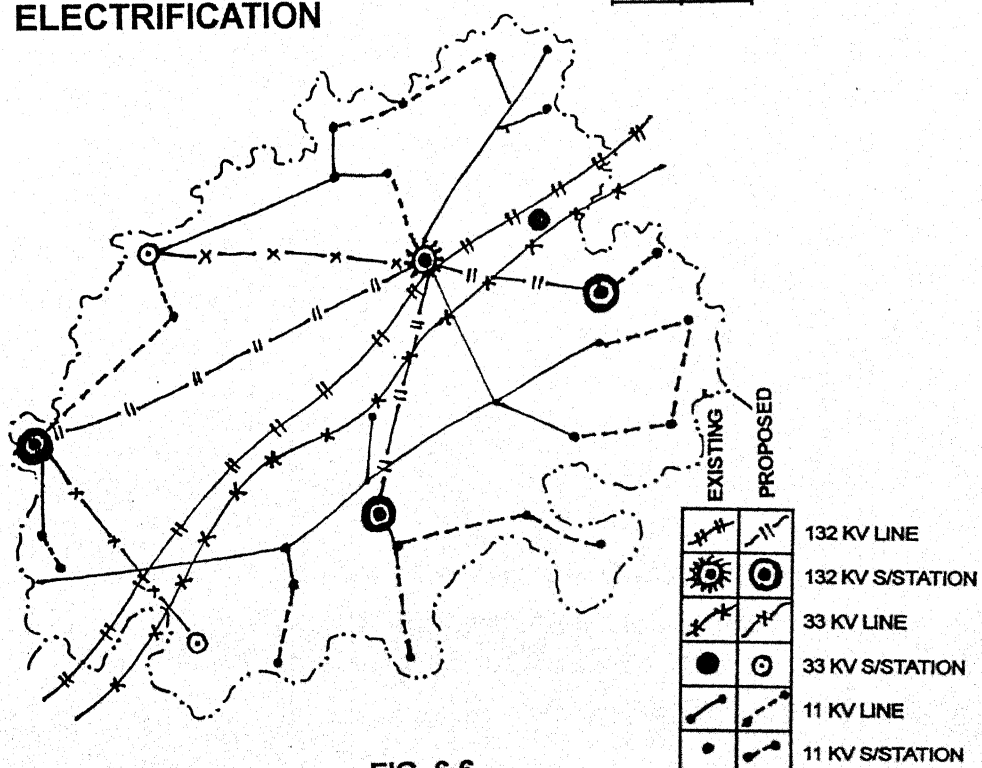
FIG. 6.6

आज के समय के समय में विद्युत एक विलासिता की सामग्री ही नहीं है बल्कि जीवन की एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है। बड़ी संख्या में आधुनिक सुविधायें, जो जीवन के लिये आवश्यक एवं सभी आर्थिक खण्डों में उत्पादकता को बढ़ाती हैं, विद्युतीकरण के साथ जुड़ी हुयी हैं। सभी प्रकार की कृषि आर्थिकी का अधिकांश भाग ग्रामीण विद्युतीकरण की गहनता पर निर्भर करता है। विद्युत पम्पसेटों एवं ट्यूबवेलों के माध्यम से सिंचाई द्वारा कृषि की तक़नीकों में मौलिक परिवर्तन लाया जा सकता है। इसका प्रभाव सिंचाई क्षेत्र में विस्तार, , कृषि के तरीकों में परिवर्तन तथा पर्याप्त जल प्रदान करके देखा जा सकता है। ग्रामीण औद्योगीकरण हेतु ग्रामीण विद्युतीकरण का अत्यधिक महत्व है। यह ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास में परिवर्तन लाने एवं रोजगार में वृद्धि करने हेतु लगाये जाने वाले लघु एवं कुटीर उद्योगों की वृद्धि एवं विकास के लिये उन्हें संचालित करने की शक्ति प्रदान करती है। ग्रामीण विद्युतीकरण नें तमिलनाडु,हरियाणा,पंजाब,महाराष्ट्र एवं देश के अन्य राज्यों के गृहिस्थिक प्रबन्ध में परिवर्तन लाया है। इसके महत्व को ध्यान में रखते हुये पांचवी पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत कम विकसित क्षेत्रों में ग्रामीण विद्युतीकरण का कार्य प्रारम्भ किया गया है लेकिन इस क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति एवं आवश्यक परिणाम प्राप्त नहीं किये जा सके हैं।

वर्तमान विद्युतीकरण सुविधाएं (Existing Electricity Facilities)-

चित्र संख्या 6.6 B से प्रदर्शित है कि उरई तहसील में 64.18 प्रतिशत विद्युतीकृत ग्राम हैं। इससे साफ जाहिर है कि शोध क्षेत्र ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में अत्यधिक पिछड़ा है। उरई तहसील के अन्तर्गत विद्युत केन्द्र की समीपता उरई में ही है। दूसरी तरफ सरकार के सक्रिय योगदान, अच्छी परिवहन सुविधाओं तथा लोगों की सावधानी के अभाव एवं अत्यधिक गरीबी इत्यादि के कारण अन्य क्षेत्रों में ग्रामीण विद्युतीकरण अत्यल्प है। सामान्यतः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय क्रम के केन्द्रीय स्थान विद्युतीकृत हैं जबकि चतुर्थ एवं पांचवे क्रम के 16 केन्द्रीय स्थानों में यह सुविधा मुख्यतः कृषि कार्यों हेतु उपलब्ध है। शोध क्षेत्र में विद्युत आपूर्ति बहुत ही अपर्याप्त एवं अनिश्चित है। कभी–कभी इसकी आपूर्ति कुछ घन्टों ही मिलती है। मुख्यतः बुआई–जुताई एवं फसल के बढ़ने के समय प्रायः विद्युत आपूर्ति अनियमित रहती है। इस कारण विद्युत आपूर्ति की अनिश्चितता को देखते हुए बहुत से किसान सिंचाई एवं अन्य उद्‌देश्यों की पूर्ति हेतु यांत्रिक शक्ति का उपयोग करते हैं।

ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु प्रस्ताव (Proposal for Rural Electrification)-

अध्ययन क्षेत्र के उरई केन्द्र में मात्र 132 KB क्षमता का विद्युत केन्द्र है। ग्रामीण विद्युतीकरण की अल्पता, कृषि एवं घरेलू आपूर्ति हेतु अपर्याप्त एवं अप्रभावकारी व्यवस्था को देखते हुये शोध क्षेत्र में विद्युति आपूर्ति नियमित करने हेतु निम्नांकित संस्तुतियां प्रस्तावित हैः–

1. वर्ष 2001 तक 3 M.W. क्षमता वाले उपकेन्द्र का निर्माण विकास खण्ड मुख्यालय डकोर में किया जाय।
2. कोटरा, एट तथा सैदनगर में वर्ष 2001 तक 1.5 M.W. क्षमता वाले उपकेन्द्रों का निर्माण

हो।

3. डकोर उपकेन्द्र की क्षमता को 2005 तक बढ़ाकर 6 M.W.किया जाय।
4. 500 तक जनसंख्या वाले गांव को 2001 तक विद्युत लाइनों से सम्बद्ध किया जाये।
5. 200 तक की आबादी वाले गांवों को वर्ष 2005 तक विद्युत सुविधा उपलब्ध कराई जाये।
6. अध्ययन क्षेत्र में पर्याप्त विद्युत आपूर्ति हेतु उरई में एक तापीय शक्ति केन्द्र स्थापित किया जाये।

REFERENCES

1. Mishra,O.P., 1983 : Gonda Tahsil - A Study in Integrated Rural Development, Unpublished Thesis, Avadh University, Faizabad, p-137
2. Coolay,C.H.,1974 : The Theory of Transportation, in Hursh,M.E.E(ed) Transportation Geography,Comments and Readings, Mc Graw Hills, Book Comany, pp- 28-29
3. Janelle,D.G.,1969 : Spatial Reorganization -A Model and Concept, Annale of Association of American Geographers, Vol.59(2) pp 348 - 364
4. Arora,R.C.,1979 : Integrated Rural Development, S. Chand and Company, New Delhi.pp300-301
5. Johnson, E.A.J.,1970 : The Orgzaniation of Space in Developing Countries, Harvard University Press, Cambridge, Massachusetts, p-240
6. Sen L.K., Et al., 1975: Growth Centres in Raichur, N.I.C.D., Hyderabad, p-162
7. Singh D.N.,1969:Road Planning in North Bihar,U.B.B.P.,Col. I,No.2,pp33-35
8. Rondinelli, D.A. & Kenneth, R.,1976 : Urban Functions in Rural Development An Analysis of Integrated Spatial Development Policy, USAID, Washington, pp-173-176
9. Munashi, S., 1975 : Railway Network Growth in Eastern India, 1854-1910, Centre for Studies in Social Science, Calcutta, Vol. 3,p-1
10. Kanskey K.J.,1963 : Structure of Transport Network, Chicago University of Chicago, Department of Geography, Research Paper No.84, p-1
11. Ore, O., 1964 Graphs and Their Uses, New - York, Randam House.
12. Smith, D.M.,1977 : Pattern in Human Geography, Penguin, Books, p-15
13. Toaffe, E.J., & Gauthier, H.L., 1973 : Geography of Transportation, Prentice Hall, Toronto, p-1
14. Toyne,P. & Newby, P.T., 1971 : Techniques in Human Geography, Macmillan Education Limited, London, p-175
15. Yeasts, W.M.,1968: An Introduction to Quantative Analysis in Economic Geography, New-York, Mc Graw Hill p-130
16. Hursh,M.E.E., 1974 : op. cit. p-35

सामाजिक-सुविधाओं हेतु नियोजन

PLANNING FOR SOCIAL FACILITIES

अध्याय- 7

CHAPTER- SEVEN

सामाजिक- सुविधाओं हेतु नियोजन

(PLANNING FOR SOCIAL FACILITIES)

परिचय (Introduction) -

वस्तुतः किसी भी क्षेत्र का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है जव वहां विभिन्न सामाजिक सुविधाओं का इतना अधिक विस्तार हो कि वे स्थानीय जनमानस की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम हों। सामाजिक सुविधाएं यथा- शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, पोषण, पर्यावरणीय सुधार एवं आर्थिक विकास के साथ अन्य सभी विकास नीतियों एवं विकास सम्बन्धी संस्थाओं का परम लक्ष्य जीवन स्तर में सुधार करना है। मानव जीवन में सामाजिक सुविधाओं की महत्ता का उल्लेख करते हुए रान्डीनेली (1979) महोदय का कथन है कि इन सामाजिक सेवाओं एवं सुविधाओं का वितरण केवल आर्थिक विकास हेतु ही आवश्यक नहीं है वल्कि सामाजिक एकता व जीवन की गुणात्मकता हेतु भी ये आवश्यक हैं। मानव जीवन में सामाजिक सुविधाओं की उपादेयता के सम्वन्ध में कायस्थ (1981) का विचार है कि सामाजिक नियोजन का लक्ष्य एक संतुलित सामाजिक संरचना एवं ऐसी अर्थव्यवस्था के विकास से है। जिसमें सबको समान अवसर मिले जो कि विभिन्न सामाजिक सुविधाओं की उपस्थिति से प्राप्त हो सकते हैं, साथ ही विभिन्न वर्गों के मध्य सामाजिक, आर्थिक असमानता भी दूर होती है। यह दृष्टव्य है कि सामाजिक सुविधाओं को ग्रामीण गरीवों तक पहुंचाने का लक्ष्य हमारे संविधान में रखा गया है। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में स्पष्टतः सामाजिक सुविधाओं के अर्थ एवं उनके क्रियान्वयन के तरीकों का उल्लेख किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र मुख्य रूप से एक पिछड़ा क्षेत्र है। यहां सामाजिक सुविधाएं अपर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। अस्तु यह आवश्यक है कि वर्तमान में उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर क्षेत्र में उनकी पर्याप्तता का अनुमान लगाया जाए तथा उसके आधार पर शोध- क्षेत्र के विकास हेतु एक विस्तृत कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जाए। क्षेत्र में सामाजिक सुविधाओं के नियोजन के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हैं।

1. सामाजिक-सुविधाओं की दूरी कम करना।
2. प्रत्येक सामाजिक सुविधा पर जनसंख्या दवाव कम करना।
3. राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को अंगीकृत करना।
4. जनता की सक्रिय भागेदारी को सुनिश्चित करना।

प्रस्तुत अध्याय में प्रमुख रूप से दो प्रकार की सामाजिक सुविधाओं यथा- शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं का विश्लेषण किया गया है।

शिक्षा सुविधाओं का नियोजन (Planning for Educational Facilities) -

शिक्षा को ज्ञान व कुशलता के माध्यम से सामाजिक नियोजन के विकास का लक्ष्य पाने का सर्वोत्तम तरीका स्वीकार किया जाता है। यह लोगों की आधारभूत एवं स्थाई आवश्यकता है और सामाजिक एवं आर्थिक प्रक्रियाओं से निकट से सम्बन्धित है। शिक्षा नागरिकता के विकास का आधार है क्योंकि यह लोगों की ऊर्जा का उपयोग एवं मानवीय तथा प्राकृतिक संसाधनों का विकास

करती है। राष्ट्रीय शिक्षा समिति ने आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन हेतु शिक्षा पर विशेष जोर दिया है (अरोरा, 1979)। परन्तु हमारी औपचारिक शिक्षा पद्धति ग्रामीण विकास को त्वरित गति देने में सफलता प्राप्त नहीं कर सकी है। यदि हमारी शिक्षा व्यवस्था केन्द्रीय नियंत्रण के स्थान पर स्थानिक तथा साहित्यिक एवं शैक्षणिक के स्थान पर व्यावहारिक तथा प्रायोगिक होती और इसे वर्गभेद के स्थान पर व्यावहारिक विशेषता की ओर केन्द्रित किया गया होता तो यह विकास के क्षेत्र में बहुत कुछ करने में समर्थ हो सकती थी (एक्जिन, 1977)।

उपलब्ध शिक्षा सुविधाएं (Existing Educational Facilities) -

क्षेत्रीय सर्वेक्षण से प्राप्त तथा व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि अध्ययन क्षेत्र शिक्षा सुविधाओं की उपलब्धता की दृष्टि से अत्यधिक पिछड़ा है। यहां पर कुल जनसंख्या की केवल 49.01 प्रतिशत आबादी ही साक्षर है जिसमें शिक्षित पुरुषों व स्त्रियों का प्रतिशत क्रमशः 67.01 तथा 32.98 है। क्षेत्र में विद्यमान साक्षरता का यह प्रतिशत राष्ट्रीय (52.21) औसत से कम है। तालिका सं. 7.1 से पता चलता है कि यहां 230 प्राइमरी पाठशालाएं (प्राइवेट मान्टसेरी स्कूल्स सम्मिलित), 43 जूनियर हाई स्कूल, 26 हाई स्कूल/ इंटरमीडिएट कालेज, 03 डिग्री कालेज तथा 02 तकनीकी एवं प्रशिक्षण संस्थाएं हैं।

तालिका संख्या 7.1

उरई तहसील में उपलब्ध शैक्षणिक सुविधाएं 1992- 93

क्र.	संस्थाएं	कक्षाएं	सुविधा सम्पन्न वस्तियों की संख्या	इकाइयों की संख्या	प्रति 100 वर्ग कि.मी.	घनत्व प्रति लाख व्यक्ति
1.	जूनियर बेसिक स्कूल	1 से 5 तक	102	230	24.30	90.42
2.	सीनियर बेसिक स्कूल	6 से 8 तक	33	43	4.54	16.90
3.	हाईस्कूल/ इंटरकालेज	9 से 12 तक	11	26	2.74	10.22
4.	महाविद्यालय	स्नातक एवं परास्नातक	01	03	0.31	1.18
5.	प्रौढ़ शिक्षा	-	70	70	7.39	27.52
6.	अनौपचारिक शिक्षा	-	120	395	41.73	155.30
7.	बालबाड़ी/ आंगनबाड़ी	-	100	217	22.92	85.32

स्रोत- कार्यालय जिला विद्यालय निरीक्षक एवं जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी, उरई (जालौन) एवं क्षेत्रीय सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़े।

इसके अतिरिक्त 70 प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र, 395 अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र तथा 217 बालवाड़ी एवं आंगनबाड़ी केन्द्र संचालित हो रहे हैं। प्रति 100 वर्ग कि.मी. क्षेत्र तथा प्रति एक लाख व्यक्तियों पर प्राइमरी स्तर के स्कूलों का घनत्व क्रमशः 24.30 एवं 90.42, जूनियर हाईस्कूल केन्द्रों का घनत्व 4.54 एवं 16.90, हायर सेकेन्डरी विद्यालयों का घनत्व 2.74 एवं 10.22, महाविद्यालयों का घनत्व 0.31 तथा 1.18, प्रशिक्षण केन्द्र .13 एवं .39, प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों का घनत्व 7.39 एवं 27.52, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों का घनत्व 41.73 एवं 155.30 तथा आंगनवाड़ी केन्द्रों का घनत्व 22.92 एवं 85.32 है। इन सभी शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं का स्थानिक वितरण अत्यधिक असमान है। अधिकांश संस्थाएं उरई केन्द्र में ही अवस्थित हैं। अकेले उरई केन्द्र में ही 75 प्राइमरी स्कूल, 33

जूनियर हाई स्कूल, 20 हायर सेकेन्डरी स्कूल (हाईस्कूल + इंटरमीडिएट), 03 डिग्री कालेजतथा 01 प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इसके अतिरिक्त इंटरमीडिएट कालेज स्तर की शैक्षणिक सुविधा एट, कुसमिलिया, हरदोई गूजर, अकोढ़ी तथा धुरट सेवा केन्द्रों में उपलब्ध है तथा हाई स्कूल स्तर के शिक्षा केन्द्र डकोर, कोटरा, सैदनगर, जैसारीकला, खरुसा, गढ़र, करमेर, टिमरों तथा सोमई में स्थित हैं। इससे स्पष्ट प्रदर्शित होता है कि तहसील का अधिकांश क्षेत्र आधारभूत शिक्षा सुविधाओं से वंचित है(चित्र सं. 7.1A)।

शोध क्षेत्र में स्त्री शिक्षा की स्थिति अत्यधिक दुःखद है क्योंकि अध्ययन क्षेत्र में वालिकाओं की शिक्षा हेतु संस्थाएं बहुत कम मात्रा में हैं। आंकड़ों के अनुसार यहां पर 32 प्राइमरी स्कूल, 03 हाई स्कूल तथा 02 इंटरमीडिएट कालेज तहसील क्षेत्र में स्थित हैं। जिसमें वालिकाओं के लिए हाई स्कूल एवं इंटरमीडिएट कालेज तथा कन्या महाविद्यालय की शिक्षा केवल उरई में ही उपलब्ध है। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों की अधिकांश बालिकाएं पांचवीं कक्षा तक की शिक्षा पूरी करने के उपरांत की शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रह जाती हैं या अधिक से अधिक आठवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्ति हेतु उनके संरक्षक उन्हें सहशिक्षा सुविधायुक्त संस्थानों में भेजते हैं फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों की गरीब बालिकाएं उच्च शिक्षा की कल्पना भी नहीं कर सकती हैं। केवल धनी परिवारों की बालिकाएं ही उच्च शिक्षा प्राप्ति हेतु महिला संरक्षकों के साथ उरई भेजी जाती हैं, जिनकी संख्या नगण्य है।

शिक्षा सुविधाओं के भावी नियोजन की दृष्टि से गांवों में दूरी के अनुसार उपलब्ध शैक्षणिक सुविधाओं के विश्लेषण हेतु एक तालिका तैयार की गई है, जो कि निम्नवत है।

तालिका सं. 7.2

उरई तहसील में उपलब्ध शैक्षणिक सुविधाएं दूरी के अनुरूप विवरण

क्र.सं.	दूरी	जूनियर वेसिक स्कूल	सीनियर वेसिक		हायर सेकेन्डरी		प्रौढ़ शिक्षा
			वालक	वालिका	वालक	वालिका	
1.	ग्राम में	102	29	04	09	-	-
2.	1 कि.मी. से कम	02	-	-	01	-	-
3.	1 से 3 कि.मी.	22	13	06	08	02	-
4.	3 से 5 कि.मी.	02	50	22	23	06	-
5.	5 कि.मी. से अधिक	-	36	96	87	120	-

सारणी सं. 7.2 के सूक्ष्म परीक्षण से यह रहस्योद्घाटित होता है कि जूनियर वेसिक विद्यालय जो प्रत्येक राजस्व गांव में होना चाहिए, नहीं है। 26 गांव ऐसे हैं जहां आज भी बालक/ बालिकाएं 1 से 5 कि.मी. की दूरी तय करके अध्ययन हेतु जाते हैं। सीनियर वेसिक व हायर सेकेन्डरी विद्यालयों की स्थिति तो अत्यधिक सोचनीय है। 93.75 व 98 प्रतिशत गांवों की वालिकाएं तो क्रमशः सीनियर बेसिक व हायर सेकेन्डरी विद्यालयों में 5 कि.मी. या उससे भी अधिक दूरी तय करके अध्ययन हेतु जाते हैं। अस्तु देश व मानव के समग्र विकास हेतु प्रस्तावित किए जा रहे प्रत्येक स्थान पर शिक्षा व्यवस्था प्रदान करके इस प्रक्रिया में गति लाना आवश्यक है।

शिक्षा सुविधाओं हेतु प्रस्ताव (Proposal For Educational Facilities) -

उपर्युक्त अनुसंधानपरक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में समुचित शिक्षा

सुविधाओं के विकास हेतु सुनियोजित कार्यक्रम निर्धारण की आवश्यकता है। सुझाव प्रस्तावित करने के पूर्व निम्नलिखित नियमों को ध्यान में रखना जरूरी है:–

1. राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत हर 1.3 किलोमीटर में प्राथमिक विद्यालय, 5 किलोमीटर में एक जूनियर हाई स्कूल तथा हर 8 किलोमीटर में एक हाई स्कूल होना चाहिए।

2. राज्य शिक्षा नीति के अनुसार हाई स्कूल तक सभी को निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए तथा बालिकाओं को इंटरमीडिएट स्तर तक निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था लागू की जानी चाहिए।

3. शिक्षा सुविधाओं हेतु प्रस्ताव देते समय ग्रामीण समुदायों के आकारों को भी ध्यान में रखना चाहिए।

उपरोक्त संयोजनाओं को ध्यान में रखते हुए शोध क्षेत्र में शिक्षा सुविधाओं के विस्तार हेतु निम्न सुझाव प्रस्तावित किए जा रहे हैं।

1. सभी गांवों में, जिनकी जनसंख्या 200 या उससे अधिक है, में सन् 2001 तक एक प्राथमिक स्कूल खोला जाए तथा इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के अंत तक हर गांव में एक प्राथमिक विद्यालय खोला जाना चाहिए।

2. सभी प्रस्तावित केन्द्रीय गांवों कुकरगांव, चिल्ली, इटवां जालौन, चकजगदेवपुर, राहिया, अजनारा, खदान, औंता, बर्ध, सीकरी, कहटा, बंधौली में सन् 2001 तक एक- एक जूनियर हाई स्कूल खोलने की व्यवस्था की जाए।इन केन्द्रीय गांवों के साथ- साथ कुछ बड़े गांवों जैसे- ददरी, पचोखरा, मगरायां, एर, कुसमी, अमगवां तथा मुहम्मदावाद में भी यह सुविधा इसी अवधि में उपलब्ध कराई जाए तथा जूनियर हाई स्कूलों को हाई स्कूल तक बढ़ाया जाए।

3. समस्त प्रस्तावित 'सेवा विन्दु' केन्द्रों पर सन् 2001 तक खरका, गुढ़ा, जैसारीकला, खरुसा, भुवा में बालक एवं बालिकाओं के लिए हाई स्कूल खोलने की व्यवस्था की जाए एवं इनको सन् 2005 के पूर्व इंटरमीडिएट स्तर तक बढ़ा दिया जाए।

4. सोमई, सैदनगर, रूरा अड्डू तथा नुनसाई सेवा केन्द्रों में सन् 2001 तक इंटरमीडिएट कालेज खोलने की व्यवस्था की जाए।

5. बालिका इंटरमीडिएट कालेज एट, डकोर, कोटरा, हरदोई गूजर, कुसमिलिया में बालिका इंटर कालेज खोलने की योजना बनाई जाए तथा एट व डकोर में एक महाविद्यालय खोला जाए, जहां कृषि, वाणिज्य एवं व्यवसाय परक डिप्लोमा से सम्बन्धित शिक्षा प्रदान की जाए।

6. कोटरा, कुसमिलिया, डकोर, करमेर, हरदोई गूजर एवं सोमई में सन् 2001 तक एक- एक महिला बुनियादी कार्यक्रम से सम्बन्धित शिल्प विद्यालय खोले जाएं ताकि महिलाएं विविध कलाओं एवं शिल्पकला में दक्षता प्राप्त कर सकें।

7. एक पॉलीटेक्निक संस्था कोटरा तथा एक- एक औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (ITI) डकोर एवं सोमई में 2001 तक खोलने की व्यवस्था की जाए। यद्यपि ये केन्द्र सेवा विन्दु की श्रेणी में प्रस्तावित हैं लेकिन स्थिति की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं।

8. देखा यह गया है कि संस्थाएं तो खुल जाती हैं लेकिन भवन व अन्य आवश्यक सुविधाओं के अभाव में योजना को सफलतापूर्वक कार्य रूप में परिणित करने में समस्या होती है अतः सभी संस्थाएं भवन इत्यादि की सुविधाओं से परिपूर्ण होनी चाहिए।

9. सभी संस्थाओं में आवश्यक उपकरण, साजो- सामान एवं शैक्षणिक व अशैक्षणिक कर्मचारी होने चाहिए।

10. छात्रों में विद्यालय व पढ़ाई छोड़ने की भावना को समाप्त करने का प्रयत्न किया जाए तथा विद्यालय आने वाले छात्रों को वस्त्र व पुस्तकें आदि देकर प्रोत्साहित किया जाए। यद्यपि वर्तमान समय में शासन द्वारा प्राथमिक विद्यालयों में छात्र संख्या बढ़ाने हेतु जनजागरण कार्यक्रम व पोषाहार योजना की व्यवस्था की गई है और इसके कारण उपस्थिति संख्या में वृद्धि हुई है लेकिन व्यवहारिक दृष्टि से उक्त कार्यक्रमों में कमी के कारण अपेक्षित सुधार नहीं हो पाया है। अतः इसे सशक्त रूप से लागू करने व ईमानदारी पूर्वक निरीक्षण करने की आवश्यकता है।

11. विद्यालय में सर्वाधिक उपस्थिति वाले छात्रों एवं मेधावी छात्रों को पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था की जाए।

स्वास्थ्य सुविधाओं हेतु नियोजन (Planning for Health Facilities) -

स्वास्थ्य नियोजन, राष्ट्रीय विकास नियोजन का एक प्रमुख अंग है। स्वास्थ्य को आधारभूत मानवाधिकार माना गया है। स्वास्थ्य मानव शक्ति तथा वित्त संसाधनों के आर्थिक उपयोग हेतु आवश्यक है। स्वास्थ्य नियोजन का प्रमुख उद्देश्य स्वास्थ्य सुविधाओं तथा सेवाओं के सर्वोन्मुखी विकास से सम्बन्धित है (स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार)।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाएं (Existing Health Facilities in Study Area) -

तालिका सं. 7.3 के विश्लेषण से पता चलता है कि अध्ययन क्षेत्र में पांच स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हैं। निम्न स्तर पर परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र/ उप केन्द्र तथा प्राथमिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता और स्वास्थ्य केन्द्र आते हैं। इनसे उच्च श्रेणी में अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, अस्पताल एवं औषधालय आते हैं जो कि नियमित रूप से चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करते हैं। क्षेत्र में उपलब्ध चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विवरण तालिका संख्या 7.3 में दर्शाया गया है।

तालिका सं. 7.3

उरई तहसील में उपलब्ध चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं 1992- 93

क्रमांक	नाम स्वास्थ्य सुविधाएं	इकाइयों की सं.	घनत्व (प्रति 100 कि.मी.)	घनत्व (प्रति लाख जनसंख्या)
1.	मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र/ उपकेन्द्र/ स्वास्थ्यकर्ता केन्द्र.	26	2.74	10.22
2.	औषधालय (आयुर्वेद + होम्यो)	07	0.73	2.75
3.	अति. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र/ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	04	0.42	1.57
4.	जिला चिकित्सालय	01	0.10	0.39
5.	जिला क्षय रोग चिकित्सालय	01	0.10	0.39

स्रोत- कार्यालय मुख्य चिकित्साधिकारी, उरई (जालौन) एवं क्षेत्रीय सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में 26 मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र/ उप केन्द्र व प्राथमिक स्वास्थ्य कर्ता केन्द्र, 07 औषधालय, 03 अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 01 प्राथमिक

स्वास्थ्य केन्द्र तथा 01 जिला अस्पताल एवं 01 जिला क्षय रोग चिकित्सालय हैं। इन विभिन्न श्रेणी के स्वास्थ्य केन्द्रों का प्रति 100 वर्ग कि.मी. पर घनत्व 2.74, 0.73, 0.42, 0.10, 0.10 एवं प्रति लाख जनसंख्या पर क्रमशः 10.22, 2.75, 1.57, 0.39 तथा 0.39 है।

इस प्रकार चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं अपर्याप्त एवं अधिकांश ग्रामीण लोगों की पहुंच से दूर है। इतना ही नहीं, इन सेवाओं का स्थानिक वितरण भी क्षेत्र में असमान है (चित्र सं. 7.IB)। अध्ययन क्षेत्र के लोग इन सुविधाओं के उपभोग की दृष्टि से लम्बी- लम्बी दूरियां तय करते हैं (तालिका सं. 7.4)। यह इन सुविधाओं के न्यायोचित नियोजन के लिए एक चुनौती है।

तालिका सं. 7.4

उरई तहसील में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाएं से दूरी के अनुरूप वितरण

दूरी (कि.मी.)	एलोपै. चिकि एवं औषधालय	आयु. चिकि./ औषधालय	यूनानी/ होम्यो औषधालय	परिवार कल्याण केन्द्र/ उप केन्द्र
1. ग्राम में	8	6	-	26
2. 1 कि.मी. से कम	-	-	-	01
3. 1 से 3 कि.मी. तक	2	7	-	16
4. 3 से 5 कि.मी.	8	22	-	44
5. 5 कि.मी. से अधिक	116	72	128	41

स्वास्थ्य सुविधाओं हेतु प्रस्ताव (Proposal for Health Facilities) -

यहां यह बताना आवश्यक है कि प्राथमिक स्वास्थ्य निम्नांकित चार सिद्धांतों पर आधारित होता है।

(i) समान वितरण (Equitable Distribution) -

इसका तात्पर्य यह है कि समाज के सभी वर्गों को समान रूप से स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए। विशेष रूप से गरीब व गम्भीर रोगियों को उचित देखभाल की व्यवस्था सुनिश्चित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में- स्वास्थ्य सुविधाओं का विसरण सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों तथा शहरी मलिन बस्तियों में भी होना चाहिए जिससे लोगों को अपने घर के पास ही स्वास्थ्य सुविधाएं यथा समय आसानी से मिल सकें।

(ii) जन सहयोग (Community Participation) -

स्वास्थ्य सेवाओं/ सुविधाओं के नियोजन, क्रियान्वयन तथा सुधारीकरण में स्थानीय जन समुदाय की सक्रिय सहभागिता होनी चाहिए।

(iii) बहुवर्गीय उपागम (Multi Sectoral Approach) -

स्वास्थ्य वर्ग तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्य वर्गों जैसे- शिक्षा, खाद्य एवं कृषि, समाज कल्याण, पशुपालन, गृह निर्माण एवं सार्वजनिक कार्य, ग्रामीण पुनर्निर्माण आदि के मध्य आपसी समन्वय स्थापित होना चाहिए।

(iv) उचित तकनीक (Appropriate Technology) -

इससे अभिप्राय यह है कि वैज्ञानिक रूप से अच्छे औजार एवं तरीके के जो सामाजिक रूप से मान्य है एवं जिनसे स्वास्थ्य सम्बन्धी कठिनाइयों या रोगों से अच्छी तरह से सुरक्षा प्राप्त की जा सकती हो, उपलब्ध होनी चाहिए।

सन् 2001 तक सभी को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने का लक्ष्य एवं उपर्युक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए सभी को स्वास्थ्य का ऐसा स्तर प्रदान करने के लिए प्रयास किए जाएं ताकि सर्वजन एक स्वस्थ सामाजिक एवं आर्थिक रूप से उत्पादक जीवन व्यतीत कर सकें। तालिका सं. 7.5 में दिए गए अनुमोदन के आधार पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की व्यूह रचना पर विचार करने की आवश्यकता है। जिससे क्षेत्र की चिकित्सीय एवं स्वास्थ्य सुविधाओं हेतु सामयिक योजना बनाई जा सके।

1. प्रति 1000 जनसंख्या वाले ग्रामों में एक प्रशिक्षित दाई/ जन स्वास्थ्य रक्षक की नियुक्ति की जाए।
2. प्रति 4,000 जनसंख्या या तीन किलोमीटर में एक उप स्वास्थ्य केन्द्र/ मातृ- शिशु कल्याण केन्द्र खोला जाए।
3. प्रति 30,000 जनसंख्या या 8 किलोमीटर की दूरी पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोला जाए।
4. प्रति एक लाख जनसंख्या पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना की जाए। उप संभागीय अस्पताल को उपसंभागीय स्वास्थ्य केन्द्र में परिवर्तित किया जाए एवं जिला अस्पताल को जिला स्वास्थ्य केन्द्र में परिवर्तित किया जाए।
5. प्रति 600 आबादी वाले गांवों में जनता द्वारा चयनित ग्राम स्वास्थ्य निर्देशकों को प्रशिक्षित किया जाए।
6. प्रत्येक गांव में 'दाई' को प्रशिक्षित किया जाए एवं बहुउद्देशीय कर्मचारियों को भी प्रशिक्षित करने की व्यवस्था की जाए।

उपर्युक्त नियमों को ध्यान में रखते हुए क्षेत्र की स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार हेतु निम्नलिखित अनुमोदन प्रस्तावित किए जा रहे हैं।

1. सभी केन्द्रीय ग्रामों में सन् 2001 तक एक- एक उप स्वास्थ्य केन्द्र/ मातृ- शिशु कल्याण केन्द्र खोले जाने चाहिए जहां पर ये सुविधाएं वर्तमान में नहीं हैं। बाद में इन सुविधाओं का विस्तार ऐसे गांव, जिनकी जनसंख्या 500 से अधिक है, में भी किया जाना चाहिए।
2. वर्ष 2001 तक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना उन सभी सेवाकेन्द्रों में की जानी चाहिए जहां यह अभी नहीं है। वर्ष 2005 तक इन सभी स्वास्थ्य केन्द्रों में रोगी शैय्याओं की सुविधा तथा महिला चिकित्सकों की नियुक्ति भी आवश्यक रूप से कर दी जानी चाहिए।
3. वर्तमान अतिरिक्त स्वास्थ्य केन्द्रों को सन् 2001 तक रोगी शैय्या सुविधा तक बढ़ा देना चाहिए। बाद में इन्हें जनस्वास्थ्य केन्द्रों के रूप में 20 रोगी शैय्या सुविधा तक बढ़ा देना चाहिए। वर्ष 2001 तक महिला एवं पुरुषों हेतु अलग- अलग वार्ड बना देना चाहिए एवं महिला चिकित्सकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
4. वर्तमान स्वास्थ्य केन्द्रों को जल्दी से जल्दी 30 रोगी शैय्या सुविधा युक्त सामुदायिक जन स्वास्थ्य केन्द्रों महिला एवं पुरुषों हेतु अलग- अलग वार्ड सहित प्रोन्नति कर देना चाहिए तथा उचित स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से औषधि एवं शल्य विशेषज्ञ तथा महिला चिकित्सकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
5. डकोर में स्थित चिकित्सालय को उपसंभागीय स्वास्थ्य केन्द्र के रूप में परिवर्तित कर देना चाहिए जो कि दो लाख की चतुर्दिक जनसंख्या हेतु स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने के लिए रहेगा।

6. उपसंभागीय चिकित्सालय में एक ब्लड बैंक की स्थापना की जानी चाहिए।

7. 500 से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक गांव में एक परिवार कल्याण केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए।

8. सभी गांवों में एक प्रशिक्षित एवं दक्ष कार्यकर्ता की नियुक्तिकी जानी चाहिए।

उपरोक्त के साथ- साथ निम्न बिन्दुओं पर भी विचार किया जाना चाहिए।

1. निम्न समस्याओं के समाधान की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(अ) संक्रमणकारी रोगों की समस्याओं जैसे- (i) मलेरिया (ii) क्षय रोग (iii) डायरिया (iv) कुष्ठ रोग (v) फाइलेरिया (vi) अन्य जैसे काला बुखार तथा वायरल बुखार इत्यादि।

(ब) पोषण सम्बन्धी समस्याओं जैसे- (i) कुपोषण (ii) एनीमिया या रक्ताल्पता (iii) विटामिनों की कमी (ग्न) घेंघा रोग इत्यादि।

(स) पर्यावरणीय स्वच्छता जैसे- (i) स्वच्छ व शुद्ध पीने के जल की कमी।

(द) जनसंख्या समस्या जैसे- तेजी से बढ़ती जनसंख्या पर रोक।

(2) स्वास्थ्य सेवाओं को- (अ) विस्तृत;(व) स्वीकार्य;(स) जन सहयोग हेतु उचित अवसर;तथा (द) अधिक महंगी नहीं होना चाहिए।

(3) एकीकृत ग्रामीण विकास योजना का एक प्रमुख अंग होने के कारण इसका विकास स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्य गुणकों के विकास के साथ समन्वित होना चाहिए।

(4) ग्रामीण स्वास्थ्य रक्षा एवं 'सबको स्वास्थ्य' के सम्बन्ध में जनजागरण आवश्यक है।

अन्त में, यह कहा जा सकता है कि चूंकि स्वस्थ तथा शिक्षित मनुष्य ही देश को उन्नति के शिखर पर पहुंचाने में समर्थ हो सकता है, अतः इन सुविधाओं को प्रत्येक जनमानस तक पहुंचाने के लिए शासन द्वारा ईमानदारी व दक्षतापूर्वक कार्य किया जाना चाहिए। स्वयं सेवी संस्थाएं भी इस दिशा में सार्थक कदम उठा सकती हैं। इस योजना को सफल बनाने हेतु जन सहयोग उचित मात्रा में प्राप्त करना एक सार्थक कदम होगा।

तालिका सं. 7.5

सार्वजनिक एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए प्रस्तावित सिद्धांत

(Suggested Norms for Health Facilities and Personnels)

क्र.सं. एवं स्रोत	सार्वजनिक एवं स्वास्थ्य सुविधाएं	प्रस्तावित सिद्धांत	
1.	मुदालियर	डाक्टर	प्रति 500 जनसंख्या पर एक डाक्टर।
	आयोग रिपोर्ट	नर्स	प्रति 500 जनसंख्या पर एक नर्स।
	स्वास्थ्य सेवक महिला		प्रति 500 जनसंख्या पर एक महिला स्वास्थ्य सेवक।
	फार्मासिस्ट		प्रति 1000 जनसंख्या पर एक फार्मासिस्ट।
	प्रयोगशाला सहायक		प्रति 1000 जनसंख्या पर एक प्रयोगशाला सहायक।
2. कायस्थ	सिविल हास्पिटल		30 शैय्याएं
			5 डाक्टर

TAHSIL ORAI
SOCIAL FACILITIES
N
1 0 1 2 3 4 5
KMS
(A) EDUCATION
EXISITING
2001
PROPOSED
2005
DEGREE COLLEGE
GOVT. TRAINING CENTRE
INTER COLLEGE
GIRL'S INTER COLLEGE
HIGH SCHOOL
J. HIGH SCHOOL
W. CRAFT SCHOOL
POLYTECHNIQEINST.
I.T.I.
(B) MEDICAL
EXISITING
2001
PROPOSED
2005
SUB HEALTH CENTRE
W.C., W.H., C.S.
ADDITIONAL P.H.C.
P.H.C.
HOSPITAL
C.M.C. WITH 30 BEDS
SUB DIVISONAL
HEALTH CENTRE
FIG. 7.1
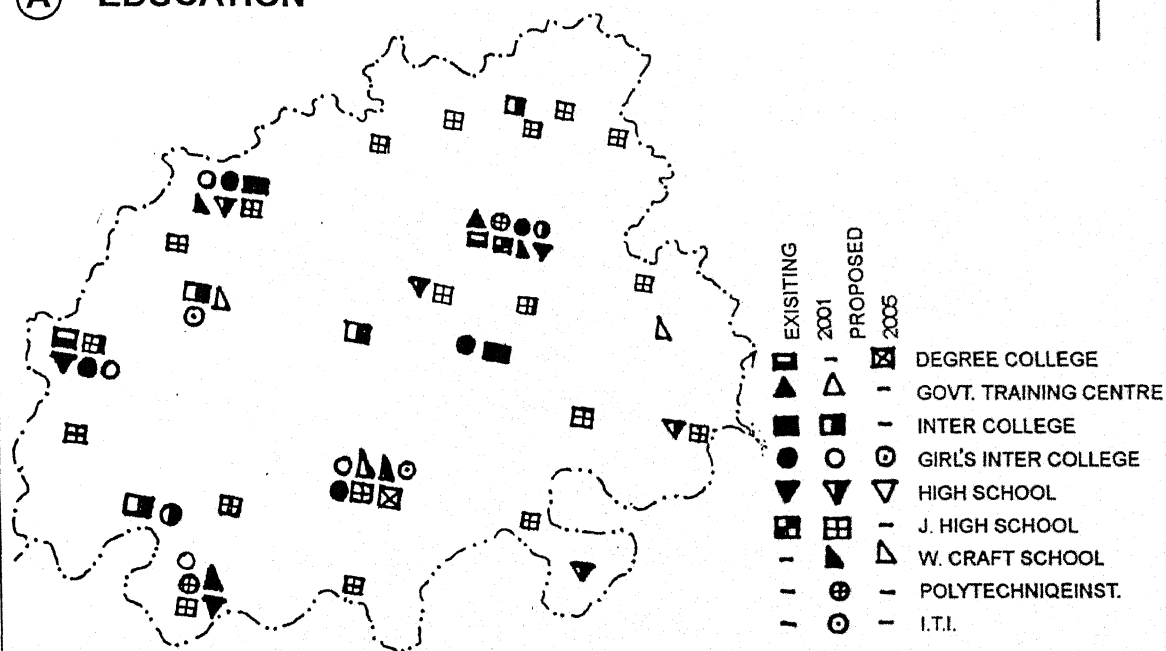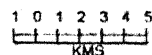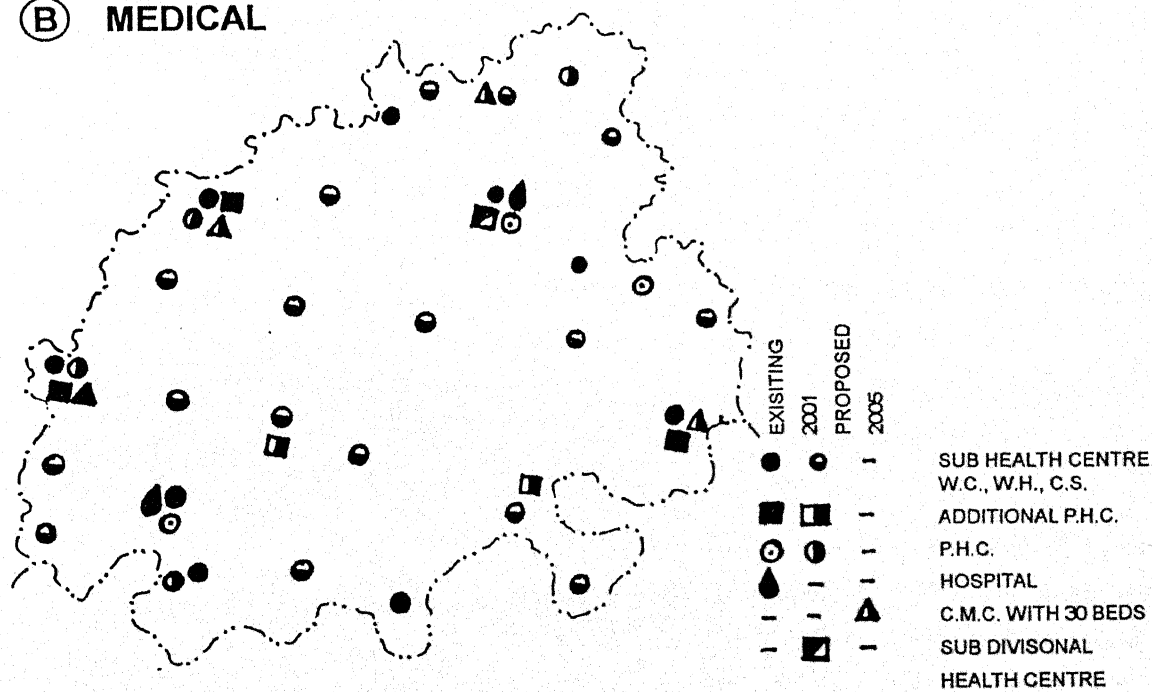
		अधिकतम दूरी 20 कि.मी.	
		प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 10 से 20 शैय्याएं	
		3 डाक्टर	
		2 नर्से	
		4 मिडवाइफ	
		अधिकतम दूरी 8 कि.मी.	
3.	स्वास्थ्य एवं सामाजिक कल्याण मंत्रालय भारत सरकार	जिला स्वास्थ्य केन्द्र	जिला जनसंख्या पर।
		उपसंभागीय स्वास्थ्य केन्द्र	5 लाख जनसंख्या पर।
		स्वास्थ्य केन्द्र	1 लाख जनसंख्या पर।
		सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	1 लाख जनसंख्या पर।
		प्राथिक स्वास्थ्य केन्द्र	30,000 जनसंख्या पर।
		उप स्वास्थ्य केन्द्र	5,000 जनसंख्या पर।
4.	सातवीं पंचवर्षीय योजना	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	1 लाख ग्रामीण जनसंख्या पर अथवा ब्लाक में चार प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
		प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	30,000 ग्रामीण जनसंख्या पर
		उप स्वास्थ्य केन्द्र	5,000 ग्रामीण जनसंख्या पर।
		एक प्रशिक्षित दायी	1,000 ग्रामीण जनसंख्या पर

आठवीं पंचवर्षीय योजना (Eighth Five Year Plan) -

आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ग्राम्यवासियों को सामान्य, विशिष्ट तथा प्रति-प्रेषण चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं/ सेवाएं सुगम, सुरुचिपूर्ण एवं त्वरित गति से उनके नजदीक ही सुलभ कराने के उद्देश्य से निम्न मानक अपनाए गए हैं।

1. प्रति 1000 ग्रामीण जनसंख्या या ग्राम स्तर पर एक प्रशिक्षित दाई/ जन स्वास्थ्य रक्षक की नियुक्ति।
2. प्रति 1,000 ग्रामीण जनसंख्या पर एक प्रशिक्षित दाई की नियुक्ति।
3. प्रति 5,000 ग्रामीण जनसंख्या मैदानी क्षेत्र तथा 3,000 ग्रामीण जनसंख्या दुर्गम, पर्वतीय, जनजातीय क्षेत्र में एक उपकेन्द्र जिस पर एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा एक पुरुष स्वास्थ्य कार्यकर्ता की नियुक्ति का मानक हो।
4. प्रति 30,000 ग्रामीण जनसंख्या मैदानी क्षेत्रतथा 30,000 ग्रामीण जनसंख्या पर्वतीय एवं जनजातीय क्षेत्रों में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना।
5. एक लाख जनसंख्या/ ब्लाक स्तरपर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना हो तथा रोगियों को त्वरित चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराने के लिए 6 उपकेन्द्र, 01 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 4 स्वास्थ्य केन्द्र एक सामुदायिक केन्द्र से सम्बद्ध होने चाहिए। सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों से जटिल रोगियों को जिला अस्पताल में उपचार हेतु सन्दर्भित करने की व्यवस्था हो।

REFERENCES

One- 1 Arora, R.C. 1979; Integrated Rural Development, S. Chand and Co., New Delhi, PP- 261- 262

Two- 2. Axinn, G.H., 1977; The Role of Education in Rural Development, Stimulator Oppressor in Singh, G. and Goede, J.H. De editors, Rural Development Technology, An Integrated Approach, Bankok, Asian Institute of Technology, P.P. 487- 503.

3. Kayastha, S.L. and Singh, R.B. 1981 : Ragional Development Through social Planning, A Micro- Level Case study from India in Indian Journal of Regional Science Vol. XIII, No. 1 P- 28.

4. Ibid, P- 35.

5. Mudoliar Committee, 1961 : Recommendations given in Park, J.E. & Park, K. Text- Book of Preventive and Social Medicine, Jabalpur, 1986, P- 598.

6. Ministry of Health and Family welfare, Government of India quoted in Park, J.E. & Park, K., op. cit. PP- 599- 601.

7. Ibid, P- 568.

8. Ibid, P- 594.

9. Ibid- PP- 596- 597

10. Rondinelli, D.A., 1979 : Small Industries in Rural Development, Assessment and Perspective, Productvity, XIX (4), PP- 457- 59.

11. Sen, L.K., et al., 1975 : Growth Centres in Raichur Integrated Rural Development plan for a District in Karnataka, N.I.C.D. Hyderabad, P- 150.

12. Seventh Five Year Plan, 1985- 90, Vol. II, P- 270.

13. Eighth Five Year Plan, 1990- 1995, Vol. II, P- 259.

समाकलित- क्षेत्र विकास नियोजन

PLANNING FOR

INTEGRATED AREA DEVELOPMENT

अध्याय-8

CHAPTER-EIGHT

समाकलित क्षेत्रीय विकास नियोजन

(PLANNING FOR INTEGRATED AREA DEVELOPMENT)

समाकलन (Integration)-

वर्तमान अध्ययन का एक प्रमुख उद्देश्य शोध क्षेत्र के लिए एक विकास योजना का प्रारूप तैयार करना है जिसमें एक साथ सभी अवखण्डीय योजनाओं एवं सामान्य सेवाकेन्द्र योजनाओं को एक क्रमबद्ध संगठन के रूप में प्रस्तुत कर आपसी मतभेदों, यदि कोई हों तो उन्हें दूर करते हुए सामाजिक समरूपता पैदा करना है। इसका उद्देश्य समग्रता की तस्वीर को ध्यान में रखने के साथ-साथ अध्ययन क्षेत्र पर इसके प्रभाव को भी देखना है। विभिन्न तत्वों में एकरूपता को कार्यात्मक, स्थानात्मक एवं प्रशासकीय रूप में देखना चाहिए।

एकीकृत क्षेत्र विकास नियोजन की उपयोगिता चार प्रकार की दक्षता यथा-स्थानिक, कार्यात्मक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय अवस्थाओं से निर्मित होती हैं। ये दक्षताएं अनेक प्रकार के तत्वों एवं विभिन्न स्तर के विभागों के मध्यआपसी सहयोग एवं समन्वय से प्राप्त हो सकती हैं। राय एवं पाटिल के विचार में- एकीकृत ग्रामीण विकास एक वहुस्तरीय, वहुखण्डीय व बहुवर्गीय संकल्पना है (चित्र सं. 8.1)। बहुस्तरीय से तात्पर्य अनेक स्तरों पर जैसे-ग्राम विकासखण्ड व जिला स्तर पर विस्तृत ग्रामीण विकास से है। बहुखण्डीय विचार से तात्पर्य है कि अनेक खण्डों व उपखण्डों जैसे-कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य व परिवहन में समायोजन तथा बहुवर्गीय विचार से तात्पर्य विभिन्न वर्गों के सामाजिक आर्थिक उत्थान से है।

अतः योजनाओं की जटिलता एवं उनकी विभिन्न समस्याओं को उनके एकीकरण के उपायों द्वारा हल किया जा सकता है जो कि व्यवहारिकता एवं विस्तृतता को ध्यान में रखकर किया जाये जिसका तात्पर्य है समस्त आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाओं का विस्तृत युग्मन/एकीकरण, जो कि जनजीवन को प्रभावित कर सके।

इस प्रकार एकीकृत क्षेत्र विकास चुने हुए एवं ठीक स्थानों के सामाजिक आर्थिक कार्य को भौतिक आधारों पर सम्पादित करता है। उदाहरणार्थ प्राथमिक खण्ड क्रियाएं जैसे- कृषि सम्बन्धी कार्य एवं सम्बन्धित खण्डों तथा न्यूनतम् आवश्यकता कार्यक्रम को निम्न स्तर योजना इकाइयों के अन्तर्गत ही सम्पन्न किया जा सकता है परन्तु बाजार उत्पादक सम्बन्धी कार्यों हेतु अतिरिक्त क्षेत्रीय सम्बन्धों की भी आवश्यकता होती है। अधिकतर द्वितीयक एवं तृतीयक औद्योगिक खण्डों को अतिरिक्त क्षेत्रीय सम्बन्धों की आवश्यकता होती है। चूंकि एकीकृत क्षेत्र विकास की व्यूह रचना का उद्देश्य अनेक खण्डों एवं अन्दरूनी निवेश को उचित स्थान पर एक साथ लाना है, जिससे उत्पादन एवं कुशलताओं को कम से कम मेहनत से बढ़ाया जा सके साथ ही अनेक खण्डों की आपसी निर्भरता का विश्लेषण भी बहुत आवश्यक है। क्योंकि एकीकृत विकास बहुखण्डों के अन्तर्सम्बन्धों पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए बाजार के सफल संगठन हेतु अच्छी संचार व्यवस्था की आवश्यकता होती है अथवा ट्यूबबेल द्वारा सिंचाई व्यवस्था के सफल संचालन हेतु अच्छी ऊर्जा लाइनों की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार की अन्तर्खण्डीय निर्भरता के स्थापन तथा प्रबंधन में सामंजस्य के अभाव के कारण बहुत हानि/घाटा होता है क्योंकि संसाधनों का अपभोग होना, हमारे देश के अनेक विकास कार्यक्रमों

A MULTI-SECTOR, MULTI-SECTION & MULTI-LEVEL
CONCEPT OF I.R.D.
A SCHEMATIC VIEW
LEVELS
DISTRICT
BLOCK
VIABLE CLUSTER OF VILLAGES
SECTIONS
RURAL ARTISANS
MARGINAL FARMERS
SMALL FARMERS
LANDLESS LABOURERS
SCHEDULED CASTE/ TRIBES
AGRICULTURE
INDUSTRY
HEALTH
EDUCATION
TRANSPORTATION
SECTORS
AFTER ROY & PATIL
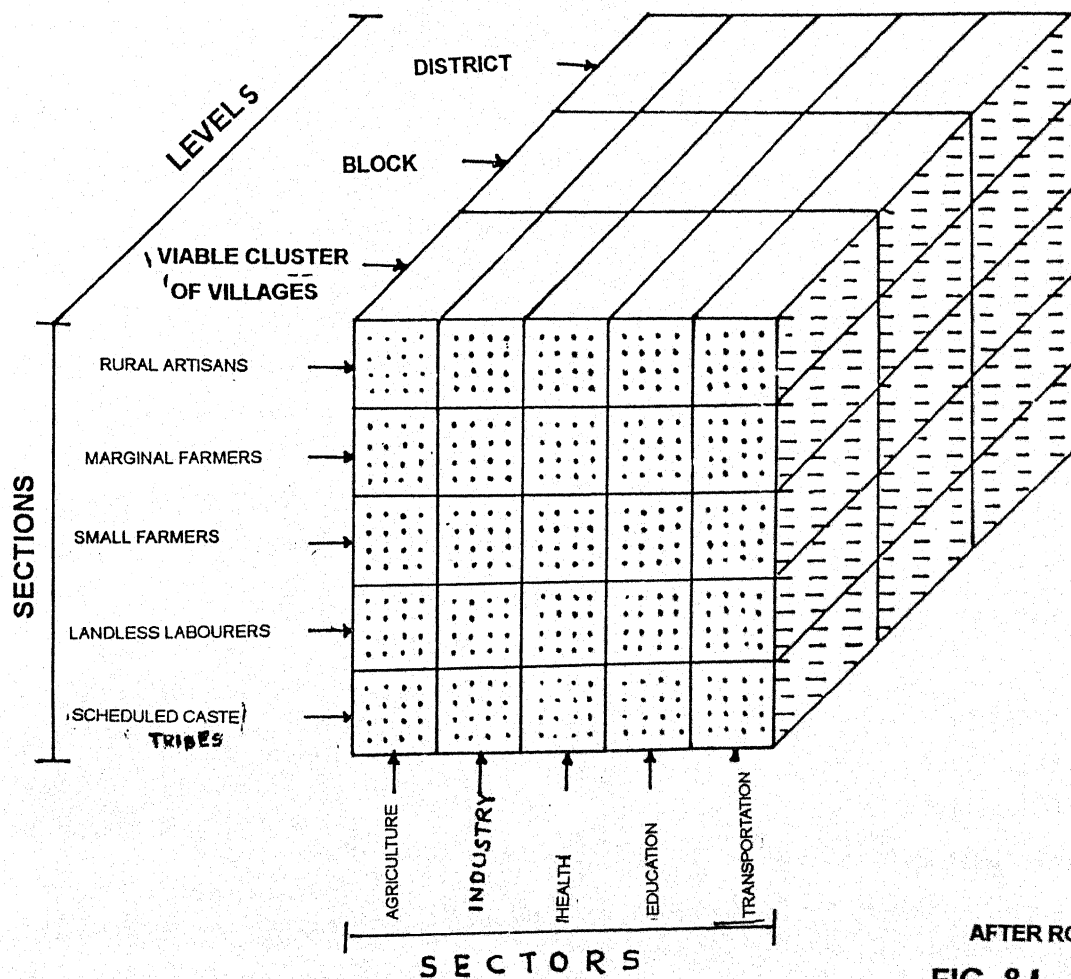
FIG. 8.1

में पाया जाता है।

इसलिए उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए तथा खण्डों के विभिन्न स्तरों से समझौता करते हुए अध्ययन क्षेत्र के केन्द्रीय स्थानों तथा उनके सहयोगी क्षेत्रों को स्थापन नियोजन हेतु चिन्हित किया गया है जो कि सामुदायिकता एवं सामुदायिकता के सिद्धान्त पर आधारित है क्योंकि सभी केन्द्रों पर समस्त प्रकार के कार्य संचालित नहीं किये जा सकते हैं।

अनिवार्य सेवाओं एवं सुविधाओं के समुचित प्रबंधन के पश्चात, निम्न स्तरीय इकाइयों पर न्यूनतम् आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति, जैसे ग्रामीण समुदाय। इन इकाइयों का एकीकरण उच्च स्तर केन्द्रों से किया जाता है ताकि जो भी समस्याएं निम्न स्तरीय केन्द्रों पर नहीं सुलझाई जा सकती हैं, समय-समय पर उच्च स्तरीय केन्द्रों पर सुलझायी जा सकें।

इस प्रकार से शोध क्षेत्र के केन्द्रीय ग्रामों का युग्मन सेवा बिन्दु से, सेवा बिन्दुओं का युग्मन सेवाकेन्द्रों से, सेवा केन्द्रों का युग्मन विकास बिन्दुओं एवं विकास बिन्दुओं का युग्मन विकास केन्द्रों से किया गया है। यह प्रक्रिया विस्तृत नियोजन की प्रधानता, साधनों एवं मानव के कुशल संचालन हेतु एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था लायेगी, खासतौर पर निम्न स्तरीय साधनों के उपयोग में विशेष बढ़ावा मिलेगा (राय एवं पाटिल, 1977)। इसलिए विकास केन्द्रों की समस्त पुनर्संगठन प्रक्रिया एक सहायक क्षेत्र व एक दूसरे के सहयोगी के रूप में होनी चाहिए।

उपरोक्त तथ्यों तथा विस्तृत स्थानिक वैचारिक सहयोग को सामने रखते हुए अध्ययन क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों के कार्यात्मक एवं स्थानिक एकीकरण हेतु निम्न प्रतिरूप को सुझाया जा रहा है जिसका विस्तृत विवरण चित्र संख्या 8.1 में दिया गया है।

अध्ययन क्षेत्र के 33 केन्द्रीय ग्रामों की पहचान करने के उपरान्त उन्हें विकास केन्द्रों के रूप में कार्य करने के लिए प्रस्तावित किया गया है। यह अपने आसपास की आबादी/बस्तियों हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन एवं संचार, वितरण, व्यापार एवं वाणिज्य, प्रशासन, संचय एवं विस्तार की व्यवस्था करेंगे। प्रस्तावित प्रक्रिया के अन्तर्गत लोगों की आवश्यकतानुसार औद्योगिक एवं कृषि कार्यों की गतिविधियां बढ़ाने हेतु सभी केन्द्रीय ग्रामों को आवश्यक सुविधाओं से परिपूर्ण होना चाहिए। इस प्रकार इन केन्द्रों पर कम से कम जूनियर हाई स्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, पशु चिकित्सालय, डाकघर शाखा, सहकारी समिति, उचित मूल्य की दुकान, ग्रामीण गोदाम, ग्रामीण बैंक, गृह उद्योग, पुलिस चौकी, खाद/बीज एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र, साप्ताहिक/अर्धसाप्ताहिक बाजार एवं बारहमासी सड़कों की व्यवस्था होनी चाहिए।

चूंकि केन्द्रीय गांव मात्र लघु स्तर के कार्य करेंगे अतः ग्राम बड़े प्रकार के कार्यों के लिए अनिवार्य रूप से सेवा बिन्दुओं पर आश्रित रहेंगे। सभी सेवा बिन्दुओं पर हाईस्कूल, इण्टर कालेज, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपडाकघर, पुलिस स्टेशन, ग्रामीण उद्योग, स्थायी बाजार, खुदरा दुकानें, वाणिज्य बैंक, उपभोक्ता समितियों, लघुस्तरीय गोदाम, बीज/खाद/ कीटनाशक गोदाम, पशु चिकित्सालय कृत्रिम गर्भाधान व्यवस्था सहित तथा बस स्थानक आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

प्रस्तावित वृद्धिजनक केन्द्रों की पदानुक्रमीय प्रणाली के विचार से सेवा बिन्दुओं के बाद सेवा केन्द्रों का स्थान आता है। इन केन्द्रों पर बालिका इण्टर कालेज, शैय्या सुविधा सहित प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, बस स्थानक, टेलीग्राफ कार्यालय, बड़े गोदाम, थोक एवं खुदरा दुकानों, राष्ट्रीयकृत बैंक, बीज/खाद/ कीटनाशकों का उप भण्डार, कृषि सेवा केन्द्र, पशु अस्पताल एवं ग्रामीण ऋण वितरण सहकारी समिति आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

वृद्धिजनक केन्द्रों की अवधारणा में इसके पश्चात विकास बिन्दु का स्थान आता है। इन केन्द्रों पर अनेक अलग-अलग प्रकार की सेवा संस्थाएं होंगी। जैसे-शहरी प्रभाव से युक्त विपणन व्यवस्था

होगी तथा यह एक उपक्षेत्रीय नवाचरों के प्रसार व आगे बढ़ाने वाले केन्द्र के रूप में कार्य करेगा। इन केन्द्रों पर डिग्री कालेज, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान, महिला कला विद्यालय, मुख्य स्वास्थ्य केन्द्र, मुख्य डाकघर व टेलीग्राफ कार्यालय, टेलीफोन एक्सचेंज, स्थायी थोक बाजार का (आढ़त) केन्द्र, बस स्थानक उपडिपो की सुविधा सहित, शीत भण्डारगृह, कोतवाली, बीज प्रशोधन/ सुधार केन्द्र तथा किसान प्रशिक्षण केन्द्र आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

वृद्धि जनक केन्द्रों की पदानुक्रमिक व्यवस्था के अन्तर्गत सर्वोच्च स्थान पर वृद्धि केन्द्रों को रखा जाता है। इन केन्द्रों द्वारा सभी प्रकार की विभिन्नताओं एवं विशिष्टताओं से युक्त सेवाएं एवं सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। इस प्रकार प्रस्तावित योजना के अन्तर्गत शोध क्षेत्र का एकमात्र विकास केन्द्र उरई हैं जो कि क्षेत्र को सामाजिक, कृषि सम्बन्धी, तथा औद्योगिक सभी प्रकार की अवस्थापनात्मक सुविधाएं प्रदान करेगा ये सभी सुविधाएं विभिन्नताओं एवं विशिष्टताओं से युक्त होंगी तथा क्षेत्र के विकास में सहयोगी होंगी।

उपरोक्त तथ्यों के साथ-साथ एक प्रशासनिक इकाई के रूप में कोई भी क्षेत्र विभिन्न खण्डों में कार्यक्रमों के क्रियान्वयन, संचालन, निरीक्षण एवं नियंत्रण हेतु जनपद मुख्यालय पर आश्रित होता है। चूंकि जालौन जनपद का मुख्यालय केन्द्र उरई में ही स्थापित है। इसलिए अध्ययन क्षेत्र को अन्य तहसीलों की अपेक्षा त्वरित विकासात्मक व अवस्थापनात्मक सुविधाएं उपलब्ध हैं। साथ ही किसी क्षेत्र के पूर्ण विकास हेतु यह भी आवश्यक है कि वह क्षेत्र अन्य विभिन्न सेवाओं व सुविधाओं हेतु अन्तर्क्षेत्रीय संस्था सम्वन्धी सहयोग पर भी आधारित हो।

इसी प्रकार इमारती लकड़ी, रेशम, औद्योगिक चमड़ा आदि के निर्यात हेतु एवं मशीनरी, विकसित शंकरनस्ल जानवरों के आयात तथा इनके अन्तर्जनपदीय व अन्तर्राज्यीय व्यवसाय हेतु दीर्घसूत्रीय सम्बद्धता से युक्त होना चाहिए।

संगठनात्मक संरचना (Organizational Structure)-

चूंकि एकीकृत क्षेत्रीय विकास योजना के निर्धारण व क्रियान्वयन की सफलता हेतु प्रशासनिक संगठन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः यह आवश्यक है कि कोई भी समुचित योजना बनाने से पहले क्षेत्र की वर्तमान स्थिति का सम्यक अध्ययन कर लिया जाय।

वर्तमान स्थिति (Existing Position)-

जिलाधीश (कलेक्टर) अथवा उपायुक्त जनपद में विकास सम्बन्धी विभिन्न कार्यों में संलग्न विभागों व अभिकरणों के विकास प्रशासन का प्रमुख संचालक होता है वह एक ओर विभिन्न अवखण्डों में कार्यरत विकास अधिकारियों को आदेश देता है और दूसरी ओर जिला विकास अधिकारी को भी नियंत्रित करता है। जिला ग्राम्य विकास अभिकरण (DRDA), जो कि विकास कार्यों को लागू करने व उनके संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, का प्रमुख परियोजना निर्देशक व परियोजना नियंत्रक भी जिलाधिकारी ही होता है। जिला विकास अधिकारी (D.D.O.) के नियंत्रण में विकासखण्ड अधिकारी (B.D.O.) जिनकी सहायता हेतु सहायक विकास अधिकारी (A.D.O.) तथा ग्राम विकास अधिकारी (V.D.O.) होते हैं। विकास कार्य मुख्य रूप से विकासखण्ड अधिकारी द्वारा शुरू किये जाते हैं।

प्रत्येक ग्राम विकास अधिकारी को कुछ निश्चित ग्राम सभाओं के विकास का कार्य सौंपा जाता है। अस्तु वह उन पर होने वाले कार्यों का पूर्ण प्रभारी होने के साथ-साथ कार्यकारी/अधिकारी होता है। प्रशासनिक ढांचे के अतिरिक्त, पंचायतीराज संस्थाएं जो कि पचास के दशक की शुरूआत से ही प्रारम्भ हो गई थीं, का मुख्य उद्देश्य- सामाजिक, आर्थिक विकास के कार्यों में जनता की

अधिकतम् भागीदारी सुनिश्चित करना तथा प्रशासनिक व्यवस्था को ग्राम्य स्तर तक विकेन्द्रित करना था। इसके साथ ही इन संस्थाओं के यह भी उद्देश्य थे:-

(1) ग्रामीण जनता को निर्णय में भागीदार बनाना; तथा

(2) ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्व-सरकार का गठन एवं लोकतांत्रिक प्रक्रिया में त्वरित गति लाना।

पंचायती राज व्यवस्था में-जिला स्तर पर जिला परिषद, विकास समिति एवं ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतें होती हैं। ये संस्थाएं जनता का प्रतिनिधित्व करती हैं। इन संस्थाओं के पास ग्रामीण भारत में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन हेतु योजनाओं को बनाने व प्रारम्भ करने हेतु अनेक प्रकार के अधिकार होते हैं। लेकिन दुर्भाग्यवश अनेक कारणों से यह लोकतांत्रिक ढांचा सफल नहीं हो सका। इसकी असफलता के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं।

(1) विकास कार्यों के गठन व कार्यान्वयन की प्रक्रिया में स्थानीय जनता की भागीदारी नगण्य थी क्योंकि यह लोकतांत्रिक व्यवस्था अप्रचलित थी। विकास कार्यों का सूत्रण स्थानिक संसाधनों को ध्यान में रखकर नहीं किया गया और न ही उनके अनुसार क्रियान्वित किया गया।

(2) जिलाधीश इन विकास योजनाओं के सूत्रण व क्रियान्वयन का मुख्य समन्वयक माना गया है परन्तु प्रशासनिक कार्यों में अत्यधिक व्यस्तता के कारण जिलाधिकारी इस तरफ अधिक ध्यान नहीं दे सके हैं।

(3) वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था की एक प्रमुख कमी, इसकी द्विस्तरीय नियंत्रण व्यवस्था का होना है।

उदाहरणार्थ- तकनीकी नियंत्रण सम्बन्धित जिला स्तरीय अधिकारियों के हाथ में रहता है परन्तु इसकी व्यवस्था व प्रशासनिक नियंत्रण जिलाधिकारी के पास रहता है। कुछ मामलों में, व्यवस्था या शासन एक से अधिक अधिकारियों के पास रहता है। जैसे- विकास खण्ड अधिकारी को जिला परियोजना अधिकारी व जिला विकास अधिकारी के अधीनस्थ रहकर विकास कार्यों के क्रियान्वयन का कार्य करना पड़ता है, जबकि वह जिला विकास अधिकारी व जिलाधिकारी के प्रशासनिक नियंत्रण में रहता है। इन कार्यों से विकास खण्ड स्तर या उसके अधीनस्थ उप-समन्वयक अपने विभागाध्यक्षों के आदेशों को अधिक महत्व देते हैं एवं अपने विभागों के अन्य कार्यों को विकास योजनाओं से अधिक महत्व देते हैं। इसका एकीकृत क्षेत्र विकास पर कुप्रभाव पड़ता है। कभी-कभी यह भी देखा गया है कि ये विकास खण्ड स्तर पर स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं, और विकास खण्ड अधिकारी का उन पर कोई नियंत्रण नहीं होता है।

(4) ग्राम स्तर पर ग्राम विकास अधिकारी (V.D.O.) से यह उम्मीद की जाती है कि वह ग्रामीण लोगों को नई तकनीकों एवं प्रक्रियाओं को अपनाने में सहयोग देगा और योजनाओं के क्रियान्वयन में सक्रिय रूप से सहयोगी बनेगा तथा विभिन्न तकनीकी औपचारिकताओं को भी सम्पादित करेगा लेकिन एक अकेले व्यक्ति से यह भारी जिम्मेदारी उठाने की आशा नहीं की जा सकती है।

उपरोक्त अध्ययन से यह रहस्योद्घाटित होता है कि वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था एकीकृत क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सक्षम नहीं है। अतः इच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु वर्तमान प्रशासनिक एवं तकनीकी ढांचे में कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

प्रस्तावित संगठनात्मक ढांचा (Proposed Organizational Structure)-

वर्तमान संगठनात्मक व्यवस्था की अव्यवस्थाओं एवं कमियों और एकीकृत क्षेत्र विकास नियोजन के प्राथमिक उद्देश्यों तथा उसकी व्यूहरचना को ध्यान में रखते हुए जिला स्तरीय संगठनात्मक व्यवस्था को एक मॉडल (चित्र सं. 8.2) द्वारा समझाया जा रहा है। इसके अतिरिक्त,

केन्द्र सरकार द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को अधिक प्रभावशाली एवं प्रशासनिक व्यवस्था के ग्राम्य स्तर तक विकेन्द्रीकरण हेतु किये जा रहे प्रयत्नों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत मॉडल में योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन में ग्रामीण जनता की भागीदारी पर विशेष बल दिया गया है। उक्त मॉडल के आधार पर संगठनात्मक ढांचे को बहुस्तरीय बनाया गया है जिसमें पंचायतीराज संस्थाओं और प्रशासनिक मशीनरी के कई स्तर बनाये गये हैं जो कि प्रशासनिक व्यवस्था को ग्राम स्तर तक विकेन्द्रीकृत करने में सहायक सिद्ध होंगे। ये विकास कार्यों के गठन एवं क्रियान्वयन में ग्रामीण जनता की भागीदारी सुनिश्चित करेंगे। अन्ततः यह व्यवस्था राष्ट्रीय पुनर्संरचना के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होगी। इस व्यवस्था के प्रमुख अंग निम्नलिखित हैं-

ग्राम सभा (Gram Sabha)-

ग्राम सभा पंचायती राज व्यवस्था की सबसे निम्नतम् स्तरीय संस्था है। यह योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन समिति की सहायता से ग्राम विकास कार्यक्रमों को सम्पादित करती है। यह सिफारिश की जाती है कि इस समिति के गठन में समाज के सभी वर्गों-विशेषकर ग्रामीण दलितों एवं ग्रामीण महिलाओं की विशेष भागीदारी हो। यह भी सिफारिश की जाती है कि कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, औद्योगिक विकास आदि के लिए उप समितियों का भी गठन किया जाय।

ग्राम स्तर पर ग्राम विकास अधिकारी को मुख्य अधिशासी अधिकारी बनाया जाना प्रस्तावित है। जो कि योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन समिति को विकास कार्यों के सूत्रीकरण व संचालन में सहायता देगा।उसकी सहायता के लिए पंचायत सचिव, एक सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता, एक लेखपाल और तकनीकी कर्मचारी (औद्योगिक सहायक) होंगे। पंचायत सचिव, पंचायत की बैठकों को आयोजित कर ग्राम के अभिलेखों को दुरस्त रखने का कार्य करेगा, स्वास्थ्य कार्यकर्ता स्वास्थ्य कार्यक्रमों, नाली एवं स्वच्छ पेयजल आदि की देखरेख करेगा, लेखपाल भूमि राजस्व मामलों तथा औद्योगिक सहायक लघु एवं कुटीर उद्योगों की देखभाल करेगा। सम्बन्धित विस्तार अधिकारियों का उक्त कर्मचारियों पर तकनीकी नियंत्रण रहेगा तथा ग्रामीण विकास अधिकारी का इन सभी पर अधिशासी एवं प्रशासनिक नियंत्रण रहेगा।

उप विकासखण्ड स्तर (Sub Block Level)-

प्रस्तावित व्यवस्था में नीचे से दूसरे स्तर पर उप विकास खण्ड स्तर आता है, जो कि पंचायती राज व्यवस्था में न्याय पंचायत या मंडल पंचायत का प्रतिनिधित्व करेगा तथा वृद्धिजनक केन्द्रों की पदानुक्रमीय व्यवस्था में केन्द्रीय ग्राम के दायित्वों का निर्वाह करेगा। इस स्तर पर उप विकासखण्ड समिति जो कि एक लोकतांत्रिक संस्था है, विकासखण्ड समिति/विकास खण्ड विकास बोर्ड के निर्णयों का अनुपालन व क्रियान्वयन करेगी। इसके साथ ही सम्बन्धित क्षेत्र हेतु नई विकास योजनाओं का निर्माण सभी ग्रामों की विकास योजनाओं के एकीकरण के साथ करेगी। यह ग्रामसभा के कार्यों का निरीक्षण आदि भी करेगी। ग्रामीण विकास अधिकारी इस उप समिति का मुख्य अधिशासी अधिकारी होगा जो स्वयं प्रशासनिक रूप से खण्ड विकास अधिकारी के नियंत्रण में रहेगा। ग्रामीण विकास अधिकारी के नियंत्रण में अनेक विस्तार अधिकारी रहेंगे। ये अधिकारी तकनीकी रूप से अपने से सम्बन्धित विभागों के नियंत्रण में रहेंगे परन्तु योजनाओं का क्रियान्वयन व प्रशासनिक नियंत्रण ग्रामीण विकास अधिकारी के पास रहेंगे जो अपने स्तर पर इनके कार्यों का एकीकरण करेगा और ये अधिकारी उप विकासखण्ड समिति के निर्देशों का अनुपालन करेंगे। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था को अधिक प्रभावी बनाने हेतु यह बेहतर होगा कि सभी कर्मचारी नियुक्ति व सेवा शर्तों के लिए उप विकासखण्ड समिति पर आश्रित हों।

A MODEL OF DECENTRALIZED ORGANIZATIONAL SET- UP FOR RURAL DEVELOPMENT
LEVEL
DISTRICT
CO-ORDINATING AUTHO-RITY WITH THEIR ELECTED HEADS
ZILA PARISHAD (D.R. D A) CHAIRMAN
CHIEF EXECUTIVE OFFICER
DISTRICT DEVELOPMENT OFFICER
FUNCTIONARIES
SECTORAL HEADS OR SECRETARIES OF THE DEVELOPMENT OF AGRCULTURE, IRRIGATION, ANIMAL HUSBANDRY, FORESTRY, FISHERIES, HORTICULTURE, INDUSTRIES, EDUCATION, MEDICAL & HEALTH SERVICES, PBULIC WORKS ETC.
BLOCK
BLOCK SAMITI (BLOCK DEVELPMENT BOARD) BLOCK PRAMUKH
BLOCK DEVELOPMENT OFFICER
DOCTOR, VET. DOCTOR, A.D.O.S. PANCHAYAT CO-OPERATIVE, AGRICULTURE, INDUSTRIES EDUCATION, M.I., PUBLIC WORKS ETC.
SUB-BLOCK
SUB- BLOCK SAMITI PRESIDENT
RURAL DEVELOPMENT OFFICER
EXTENSION OFFICERS : AGRICULTURE, ANIMAL HUSBANDRY, INDUSTRIES, PANCHAYAT, CO-OPERATIVE, EDUCATION
VILLAGE
GAON SABHA (PROJECT IMPLEMENTATION COMMITTEE CHAIRMAN
VILLAGE DEVELOPMENT OFFICER
PANCHAYAT SECRETARY, COMMUNITY HEALTH WORKER, LEKHPAL TECHNICAL PERSONNEL
ADMINISTRATIVE CONTROL
EXECUTION OF DEVELOPMENT WORKS
TECHNICAL CONTROL

FIG. 8.2

विकासखण्ड स्तर (Block Level)-

इस स्तर पर विकासखण्ड समिति/ब्लाक विकास बोर्ड होंगे, जो कि वृद्धिजनक केन्द्रों की पदानुक्रमीय प्रणाली के वृद्धि बिन्दु के समतुल्य कार्य करेंगे। यह समिति कमजोर वर्गों के प्रतिनिधित्व हेतु प्रस्तावित हैं। विकासखण्ड अधिकारी, जो मुख्य कार्यकारी अधिकारी हैं, समिति के निर्णयों का अनुपालन करेगा व स्वयं जिला विकास अधिकारी के नियंत्रण में रहेगा। विकासखण्ड समिति जिला बोर्ड की कार्यकारी समिति भी होगी एवं जिला बोर्ड के विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का कार्य अपने विकासखण्ड में करेगी। यह उप विकासखण्ड समितियों के विकास कार्यक्रमों को एकीकृत करके सम्पूर्ण विकास खण्ड हेतु विकास कार्यक्रम बनायेंगी व उन्हें जिला बोर्ड के समक्ष अनुमोदन हेतु प्रस्तुत करेगी। यह समिति उप विकासखण्ड समिति एवं अपने अधीनस्थों के क्रियाकलापों का अवलोकन करेगी।

अनेक सहायक विकास अधिकारी, विकास खण्ड अधिकारी के अधिशासी एवं प्रशासनिक कार्यात्मक नियंत्रण में रहेंगे और अपने सम्बन्धित विभागों के तकनीकी नियंत्रण में भी रहेंगे। खण्ड विकास अधिकारी इन अधिकारियों को योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु निर्देशित करेगा तथा इन अधिकारीगणों के क्रियाकलापों का समग्र रूप से एकीकरण करेगा।

जिला बोर्ड/जिला विकास बोर्ड (District Board/ District Development Board)-

यह संस्था, जो जन प्रतिनिधियों व विशेषज्ञों से निर्मित होगी, जिला स्तर पर एक सर्वोच्य संस्था होगी तथा जिला स्तर पर विकास कार्यों का नियोजन एवं विकास खण्ड द्वारा अग्रसारित विकास योजनाओं के एकीकरण का कार्य करेगी। साथ ही यह संस्था योजनाओं के क्रियान्वयन एवं आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करने में विशेष या प्रमुख भूमिका निभायेगी। यह और भी अच्छा होगा कि विभिन्न विभागीय प्रमुखों एवं सचिवों की देखरेख में विभिन्न विकास योजनाओं हेतु उप समितियों का गठन किया जाये।

जिला विकास अधिकारी, जिले की सम्पूर्ण विकास योजनाओं का कार्यकारी प्रमुख होगा। वह भारतीय प्रशासनिक सेवा का (I.A.S.) का एक सदस्य होगा एवं जिला बोर्ड के नियंत्रण में रहेगा। जिला अधिकारी के विभिन्न शासकीय कर्तव्यों में अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण यह प्रस्तावित किया जाता है कि जिला मजिस्ट्रेट को इस कार्य से मुक्त रखा जाय। इस प्रकार विकास कार्यों के लिए एक पूर्णकालिक अधिकारी की आवश्यकता है लेकिन वह जिला बोर्ड का अतिरिक्त या पूर्ण अधिकारिक सदस्य होगा एवं जिला विकास बोर्ड तथा राज्य शासन के मध्य समन्वयक का कार्य करेगा।

जिला विकास अधिकारी के प्रशासनिक एवं कार्यकारी नियंत्रण में विभिन्न विभागों के अधिकारी रहेंगे। जैसे- परियोजना अधिकारी, विकासखण्ड अधिकारी आदि। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावी बनाने के लिए यह बेहतर होगा कि जिला व विकासखण्ड स्तर के सभी अधिकारी अपनी नियुक्ति व सेवा शर्तों हेतु जिला बोर्ड पर आश्रित हों।

उपरोक्त प्रस्तावित संगठनात्मक व्यवस्था से स्पष्ट होता है कि सभी विकासात्मक क्रियाकलाप केवल पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से सम्पन्न किये जायेंगे एवं ग्रामीण जनता विकास कार्यक्रमों के निर्णयों एवं क्रियान्वयन प्रक्रियाओं में सीधे-सीधे सम्मिलित होगी और सम्पूर्ण जिला प्रशासन ग्रामीण विकास प्रशासन के साथ एकीकृत हो जायेगा। तभी एकीकृत क्षेत्र विकास का मकसद पूरा हो सकेगा या उसके लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकेगा।

अन्तर्क्षेत्रीय एकीकरण (Inter-Regional Integration)-

किसी एक क्षेत्र के विकास संयोजन का प्रभाव, चाहे वह तहसील हो या विकास खण्ड। सामान्यतः उसी एक से ही सम्बन्धित नहीं हो पाता है। क्योंकि मानव एवं वस्तु संसाधनों के आवागमन या वहन तथा वाणिज्य व व्यवसाय द्वारा विकास क्षेत्र की सीमा से बाहर भी फैल जाता है (त्रिपाठी, 1980)।

अतः अन्तर्क्षेत्रीय एकीकरण का ध्यान भी विकास योजनाएं बनाते समय रखा जाना आवश्यक है। विकास के विभिन्न उपागमों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान प्रशासन की विभिन्न समस्याओं के एकीकरण करने का कार्य सीखना होगा एवं इस हेतु विशेषज्ञों की सहायता लेनी पड़ेगी। प्रशासन को विकासोन्मुख होना होगा। मात्र कागजी कार्यवाही तक सीमित रहने या फाइल आगे-पीछे करने से कार्य नहीं चलेगा (हल्दीपुर, 1972)। इसके अतिरिक्त प्रशासन के भविष्य को बेहतर बनाने के लिए जनता को, विश्वसनीय कदमों से यह अवगत कराना होगा कि प्रगतिशील समाज के निर्माण में उनकी प्रमुख भूमिका है। स्थानीय विकास में जनता की समझदारी या विवेकपूर्ण भागीदारी एकीकृत क्षेत्र विकास हेतु नये रास्ते खोलेगी।

प्रशिक्षण (Training)-

वर्तमान समय में अध्ययन क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अभाव है एवं जो हैं भी, वह केवल उरई तक ही सीमित हैं। विभिन्न कृषि कार्यों व ग्रामीण कार्यों में आधुनिकता एवं साजो-सामान के बढ़ते प्रयोगों के कारण प्रशिक्षित कर्मचारियों की बहुत मांग है। क्षेत्र की स्थानिक आवश्यकता हेतु स्थानिक मजदूरों की प्रवीणता बढ़ाने के लिए तकनीकी प्रशिक्षण अत्यन्त आवश्यक है। स्वरोजगार बढ़ाने के लिए भी प्रशिक्षण व्यवसाय की बहुत आवश्यकता है। ग्रामीण मजदूर तभी कुशलता से कार्य कर सकेंगे जब उन्हें विविध कार्यों का प्रशिक्षण, कुशलता की प्राप्ति हेतु दिया जायेगा (त्रिपाठी, 1980)। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह सलाह दी जाती है कि कृषि के बेहतर ढंगों में उपयोग को ध्यान में रखते हुए किसानों को उच्च कोटि की प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध करायी जाय इससे उत्पादकता में तो वृद्धि होगी ही साथ ही शोध क्षेत्र के कृषक कृषि तकनीक का बेहतर ढंग से प्रयोग करेंगे। इसी के साथ रेशम कीटपालन और पशुपालन पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। कताई, सिलाई, बुनाई, कढ़ाई, खाद्य संसाधन, शिल्पकारी तथा विभिन्न उपयोगी यंत्रों के सुधार आदि का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

कृषक प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना विकास विन्दुओं पर करने हेतु प्रस्तावित है। जहां किसानों को नियमित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए इसके साथ ही साथ सेवा केन्द्रों पर प्रशिक्षण कैम्प भी समय-समय पर आयोजित किये जाने चाहिए जिनमें कृषकों को समुचित प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके। कृषकों को शहतूत की कृषि, रेशम कीटपालन व कच्चे रेशम की कताई व वुनाई हेतु सेवा बिन्दुओं पर प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करना भी प्रस्तावित है।

यह अनुमोदित किया जाता है कि जिला उद्योग विभाग को शिल्पियों व साहसी उद्यमियों को बढ़ईगीरी, लोहारगीरी, बुनाई, जूता बनाना, बांस के कार्य, चर्मशोधन व चमड़े आदि के कार्यों के लिए प्रशिक्षण व्यवस्था हेतु आगे आना चाहिए। सेवा केन्द्रों पर कृषि सेवा इकाइयों और वृद्धि बिन्दुओं पर प्रशिक्षण सुविधाओं को स्थापित करना चाहिए।

यह प्रस्तावित किया जाता है कि पशुपालन, मुर्गीपालन व सुअर पालन आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था पशु चिकित्सालयों पर की जानी चाहिए। औपचारिक शिक्षा हेतु विभिन्न प्रकार की संस्थाओं का अनुमोदन विभिन्न प्रकार के केन्द्रीय स्थानों पर किया गया है। अनौपचारिक शिक्षा

हेतु भी सुविधाजनक व्यवस्था की जानी चाहिए। जहां तक स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रशिक्षण का प्रश्न है उसके लिये यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य प्रशिक्षण व्यवस्था प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर उपलब्ध होनी चाहिए। उपरोक्त सभी प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का समन्वयन जनपद एवं विकास खण्ड स्तर पर किया जाना चाहिए।

नियोजन हेतु संसाधन (Resources For the Plan)-

क्षेत्रीय विकास नियोजन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू इस तथ्य का पता लगाना है कि विभिन्न विकास कार्यों को लागू करने हेतु वित्तीय संसाधनों की कितनी आवश्यकता है और वह वित्तीय सहायता कहां से प्राप्त होगी। क्योंकि बिना पर्याप्त धन के कोई भी विकास योजना सफलतापूर्वक क्रियान्वित नहीं की जा सकती है। लागत के मूल्यांकन हेतु तकनीकी विशेषज्ञों और अत्यधिक श्रम व समय की आवश्यकता होती है। यह कुछ सीमित साधनों वाले अनुसंधानकर्ता विद्यार्थी के बस की बात नहीं है। अतः यह प्रस्तावित किया जाता है कि जिला प्रशासन इस कार्य को पूरा करे एवं राज्य तथा केन्द्र सरकार की सहायता से आवश्यक अनुदान की व्यवस्था करें तथा स्थानीय वित्तीय संसाधनों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा एकीकृत क्षेत्र विकास कार्यक्रम हेतु धन की व्यवस्था करे। धन की व्यवस्था ग्राम स्तर, उप विकासखण्ड, विकासखण्ड स्तर पर ग्राम सभा, उप विकासखण्ड समिति तथा विकास खण्ड समिति के माध्यम से करके योजनाओं का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। यहां पर इस बात की जानकारी देना आवश्यक है कि सरकार ने हाल ही में घोषणा की है कि गांवों से प्राप्त सभी राजस्व एवं सम्पूर्ण आय, अब ग्राम पंचायत के ही अधिकार में होगी। अतएव धन के उचित उपयोग एवं देखरेख की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। यह न केवल एक आत्मनिर्भर समाज बनाने के लिए महत्वपूर्ण कदम होगा अपितु एकीकृत क्षेत्र विकास योजनाओं की सफलता एवं स्थायी परिणामों हेतु भी सहायक सिद्ध होगा।

इस प्रकार अन्त में, पूर्ण विश्वास के साथ यह कहा जा सकता है कि पिछले पृष्ठों में एकीकृत क्षेत्र विकास हेतु जो विस्तृत अनुमोदन प्रस्तुत किये गये हैं, उनके अनुपालन से अध्ययन क्षेत्र में संतुलित एकीकृत विकास हो सकता है परन्तु यह तभी सम्भव है जब ईमानदारी पूर्वक तथा सही ढंग से एवं प्रशिक्षित स्थानीय जनता द्वारा एक दृढ़ संकल्प के साथ क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जाय।

तालिका 8.1

प्रस्तावित समाकलित योजना

(Proposed Integrated Plan)

वृद्धि जनक केन्द्र	प्रस्तावित कार्य
(अ) वृद्धि केन्द्र-	
1. उरई-	महिला शिल्प विद्यालय, कृषि अनुसंधान केन्द्र, कृषक प्रशिक्षण केन्द्र, वेयर हाउस, तापीय विद्युत संयंत्र, फल प्रसंस्करण एवं रख-रखाव इकाई, कृषि यंत्र निर्माण इकाइयां, चावल मिल, साबुन फैक्टरियां, आटा मिल, दुग्ध इकाई, बीज प्रसंस्करण इकाई, हड्डी पीसने की मिल, चमड़ा शोधन प्रशिक्षण केन्द्र एवं चर्म उद्योग केन्द्र, कारपेट, दरी, ऊनी उत्पादन, मूल्य नियंत्रित बाजार का मुख्य यार्ड, महिला पालीटेकनीक संस्था।

(ब) वृद्धि बिन्दु-

1. डकोर- डिग्री कालेज, बालक एवं बालिका इण्टर कालेज, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान, महिला शिल्प विद्यालय, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्रधान डाकघर एवं तारघर, टेलीफोन एक्सचेंज, भूमि विकास बैंक, व्यवसायिक बैंक, थोक मूल्य नियंत्रित बाजार का उपयार्ड, कृषि सेवा केन्द्र, बीज/उर्वरक एवं कीटनाशकों का भण्डारगृह, चावल/आटा/दाल एवं तेल मिल, हड्डी पिसाई मिल, साबुन फैक्टरी, माचिस फैक्टरी, डेयरी इकाई, कृषि यंत्र निर्माण इकाई, फल प्रसंस्करण इकाई, कारपेट एवं दरी बुनाई इकाई, रेडीमेड गारमेंटस, कोतवाली, सिनेमागृह, शीतभण्डार, बीजशोधन इकाई, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, विद्युत केन्द्र, थोक बिक्री की दुकानें, वृहदस्तरीय गोदाम एवं वेयर हाउस।

2. एट- व्यवसायिक बैंक, थोक मूल्य नियंत्रित बाजार का उपयार्ड, बीज/ उर्वरक एवं कीटनाशकों का भण्डारगृह, कृषि सेवा केन्द्र, हड्डी पिसाई मिल, साबुन व माचिस फैक्टरी, डेयरी इकाई, फल प्रसंस्करण इकाई, कारपेट व दरी बुनाई इकाई, रेडीमेड गारमेंट्स, कोतवाली, शीत भण्डार, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, थोक बिक्री की दुकानें, वृहद-स्तरीय गोदाम एवं वेयर हाउस तथा दाल मिल।

(स) सेवा केन्द्र-

1. कोटरा- बालक एवं बालिका इण्टर कालेज, तारघर, टेलीफोन एक्सचेंज, महिला कला विद्यालय, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, थोक एवं फुटकर नियंत्रित मूल्य की दुकानें, ग्रामीण सहकारी समिति, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र शैय्या सुविधायुक्त, बड़े गोदाम, बीज/उर्वरक/ कीटनाशकों के उप भण्डारगृह, कृषि सेवा केन्द्र, दाल/तेल मिल, आटा मिल, ग्रामीण उद्योग धंधे, पुलिस थाना, बाजारीय समिति, व्यवसायिक बैंक, विद्युत उपकेन्द्र, थोकमूल्य नियंत्रित बाजार।

2. करमेर- टेलीफोन एक्सचेंज, बालिका इण्टर कालेज, तारघर, महिला शिल्प विद्यालय, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, ग्रामीण सहकारी समिति, बड़े गोदाम, बीज/उर्वरक/कीटनाशकों के उप भण्डारगृह, कृषि सेवा केन्द्र, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, कृषि उत्पाद्य प्रसंस्करण केन्द्र, शैय्याओं की सुविधायुक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, विपणन समिति, पुलिस स्टेशन।

3. हरदोई गूजर- बालिका इण्टर कालेज, पशु चिकित्सालय, तारघर एवं दूरसंचार

कार्यालय, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कृषि सेवा केन्द्र, लघु एवं मध्यम आकार के उद्योग, बाजार एवं विपणन समिति, व्यवसायिक बैंक, उपडाकघर, थोक एवं फुटकर दुकानें, बड़े गोदाम महिला कला विद्यालय।

4. कुसमिलिया- तारघर, टेलीफोन एक्सचेंज, बालिका इण्टरमीडिएट कालेज, दाल/तेल मिल, बड़े गोदाम, ग्रामीण सहकारी समिति, थोक एवं फुटकर नियंत्रित मूल्य की दुकानें, ग्रामीण सहकारी समिति, व्यवसायिक बैंक, पुलिस थाना, विपणन समिति, महिला शिल्प विद्यालय, किसान प्रशिक्षण केन्द्र, शैय्या सुविधायुक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, तारघर, उपडाकघर, किसान प्रशिक्षण केन्द्र।

(द) सेवा बिन्दु-

1. सैदनगर- हाई स्कूल, उपडाकघर, पुलिस थाना, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, लघुस्तरीय गोदाम, कृषि सेवा उपकेन्द्र, बीज/उर्वरक/कीटनाशकों के गोदाम, पशु चिकित्सालय कृत्रिम गर्भाधान सुविधा सहित, लघुस्तरीय आटा मिल, दुग्ध उत्पादक इकाई, फुटकर मूल्य नियंत्रित बाजार का उपयार्ड।

2. सोमई- इण्टरमीडिएट कालेज, पुलिस स्टेशन अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपडाकघर, पशु चिकित्सालय, लघुस्तरीय गोदाम, बीज/उर्वरक/कीटनाशकों के गोदाम, दुग्ध उत्पादक इकाई, फुटकर मूल्य नियंत्रित बाजार का उपयार्ड, कृषि सेवा उपकेन्द्र, नियमित बस स्टैण्ड, व्यापारिक बैंक, नियमित खुदरा बाजार।

3. खरका- हाई स्कूल, उपडाकघर, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कृत्रिम गर्भाधान से युक्त पशु चिकित्सालय, खाद/बीज एवं कीटनाशक दवाइयों के गोदाम, कृषि सेवा उपकेन्द्र, व्यापारिक बैंक, नियमित-खुदरा बाजार पुलिस स्टेशन।

4. गुढ़ा- फुटकर मूल्य नियंत्रित बाजार, दुग्ध उत्पादक इकाई, व्यापारिक बैंक, उपडाकघर, हाईस्कूल एवं इण्टरमीडिएट कालेज, नियमित खुदरा बाजार, लघुस्तरीय गोदाम, कृषि सेवा उपकेन्द्र, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, पुलिस स्टेशन, ग्रामीण उद्योग, नियमित बस स्टैण्ड।

5. जैसारीकला- हाईस्कूल, इण्टरमीडिएट कालेज, पुलिस थाना, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, लघुस्तरीय गोदाम, लघुस्तरीय आटा मिल/दाल मिल, कृषि सेवा उपकेन्द्र उपडाकघर, बीज/उर्वरक/कीटनाशकों के

गोदाम, दुग्ध उत्पादक इकाई, फुटकर मूल्य नियंत्रित बाजार का उपयार्ड।

6. भुवा- हाईस्कूल, पुलिस स्टेशन, अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपडाकघर, पशु चिकित्सालय कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा से परिपूर्ण, खाद/बीज एवं कीटनाशक दवाइयों के गोदाम, कृषि सेवा उपकेन्द्र, नियमित बस स्टैण्ड, व्यापारिक बैंक, नियमित खुदरा बाजार।

7. रूरा अड्डू- इण्टरमीडिएट कालेज, उपडाकघर, नियमित बस स्टैण्ड, कृषि सेवा उपकेन्द्र, खाद एवं बीज के गोदाम, व्यापारिक बैंक, पशु चिकित्सालय, नियमित खुदरा बाजार, पुलिस स्टेशन अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कोल्ड स्टोरे, ट्रैक्टर एवं स्पेयर ऑटो पाटर्स, साइकिल मरम्मत एवं बिक्री केन्द्र।

8. नुनसाई- इण्टरमीडिएट कालेज, नियमित बस स्टैण्ड, कृषि सेवा उपकेन्द्र, कोल्ड स्टोरेज, नियमित बाजार व्यापारिक बैंक, आधुनिक कृषि उपकरण केन्द्र, ट्रैक्टर पाटर्स की दुकानें।

9. बिनौरा- हाईस्कूल, नियमित बस स्टैण्ड, दुग्ध उत्पादक इकाई, साइकिल मरम्मत केन्द्र, आधुनिक यंत्रों की दुकानें, बहुउद्देश्यीय सहकारा समिति, पशु चिकित्सालय कृत्रिम गर्भाधान सुविधायुक्त, उप डाकघर, पुलिस स्टेशन, व्यापारिक बैंक।

(य) केन्द्रीय गांव-

1. कुकरगांव- जूनियरहाई स्कूल, शाखा डाकघर, सहकारी ऋण समिति, पुलिस चौकी, उप स्वास्थ्य केन्द्र, बीज/उर्वरक/कीटनाशक वितरण केन्द्र, कृषि सेवा केन्द्र, घरेलू उद्योग, पशु चिकित्सालय, ग्रामीण गोदाम, ग्रामीण बैंक, साप्ताहिक बाजार।

2. अकोढ़ी- जूनियर हाईस्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, ग्रामीण बैंक की शाखा,उप डाकघर, सहकारी समितियां, पशु चिकित्सालय, फुटकर आवर्ती बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, बीज/उर्वरक/कीटनाशक वितरण केन्द्र, उप स्वास्थ्य केन्द्र, कुटीर उद्योग, फुटकर आवर्ती बाजार।

3. चिल्ली– जूनियर हाईस्कूल, शाखा डाकघर, सहकारी ऋण समिति, पुलिस चौकी, उप स्वास्थ्य केन्द्र, कृषि सेवा केन्द्र, घरेलू उद्योग, ग्रामीण बैंक, साप्ताहिक बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, सहकारी समितियां, फुटकर आवर्ती बाजार, विदेशी कृषि यंत्रों को किराये पर उपलब्ध कराने वाली दुकानें, पशु चिकित्सालय, साइकिल मरम्मत

दुकानें।

4. धुरट- जूनियर हाईस्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, ग्रामीण बैंक, उपडाकघर, सहकारी समितियां, फुटकर आवर्ती बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, पशु चिकित्सालय, उर्वरक/बीज एवं कीटनाशक, वितरण केन्द्र, कृषि यंत्र मरम्मत केन्द्र।

5. इटवांजालौन- जूनियर हाईस्कूल, उप डाकघर, आवर्ती बाजार, पशु चिकित्सालय, उर्वरक/बीज एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र, कुटीर उद्योग, फुटकर उचित मूल्य की दुकानें, ग्रामीण बैंक शाखा।

6. चकजगदेवपुर- जूनियर हाईस्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, दैनिक उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध कराने की दुकानें, सिलाई व जूता मरम्मत की दुकानें, पशु चिकित्सालय, फुटकर आवर्ती बाजार, सहकारी समिति।

7. राहिया- उप स्वास्थ्य केन्द्र, जूनियर हाईस्कूल बालक एवं बालिका,उप डाक-घर, ग्रामीण बैंकशाखा, सहकारी समितियां, उचित मूल्य की दुकानें, कुटीर उद्योग एवं निर्मित वस्तुएं उर्वरक/बीज एवं कीटनाशकों के वितरण केन्द्र (प्राइवेट/सहकारी) विदेशी कृषि यंत्रों को किराये पर उपलब्ध कराने वाली दुकानें, फुटकर आवर्ती बाजार, पशु चिकि-त्सालय।

8. अजनारा- जूनियर हाईस्कूल (बालक एवं बालिका) उप स्वास्थ्य केन्द्र,उप डाक-घर, ग्रामीण बैंक, सहकारी समितियां, फुटकर आवर्ती बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, पशु चिकित्सालय, साइकिल मरम्मत केन्द्र, बीज/उर्वरक एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र, कृषि यंत्र मरम्मत केन्द्र, सहकारी उपभोक्ता भण्डार।

9. खदान- जूनियर हाईस्कूल, उपडाकघर, सामान्य कृषि यंत्र मरम्मत केन्द्र, कुटीर उद्योग, ग्रामीण बैंक शाखा, आवर्ती फुटकर बाजार, उर्वरक/बीज एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र, पशु चिकित्सालय।

10. औंता- उप डाकघर, जूनियर हाईस्कूल बालक एवं बालिका, उप स्वास्थ्य केन्द्र, सहकारी समितियां, पशु चिकित्सालय, कुटीर उद्योग, उचित मूल्य की दुकानें, उर्वरक/खाद एवं बीज तथा कीटनाशक वितरण केन्द्र, विदेशी कृषि यंत्रों को किराये पर उपलब्ध कराने वाली संस्थाएं, फुटकर आवर्ती बाजार।

11. बर्ध- जूनियर हाईस्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, ग्रामीण बैंक शाखा, सहकारी समितियां, फुटकर आवर्ती बाजार, उचित मूल्य की दुकानें, पशु चिकित्सालय, कुटीर उद्योग एवं निर्मित वस्तुएं, दुग्ध उत्पादक

इकाई।

12. सिकरी- जूनियर हाईस्कूल बालक एवं बालिका, उप स्वास्थ्य केन्द्र, दैनिक उपभोग की वस्तुओं के केन्द्र, पशु चिकित्सालय, सहकारी समितियां, सहकारी उपभोक्ता भण्डार, उचित कृषि यंत्र मरम्मत केन्द्र, उर्वरक, बीज एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र।

13. कहटा- जूनियर हाईस्कूल बालक/बालिका, डामरीकृत सम्पर्क मार्गों से सम्बद्धता, उप डाकघर फुटकर आवर्ती बाजार केन्द्र, ग्रामीण बैंक शाखा, पशु चिकित्सालय, कृषि यंत्र मरम्मत केन्द्र, उचित मूल्य की दुकानें।

14. बन्धौली- जूनियर हाईस्कूल, उप स्वास्थ्य केन्द्र, उप डाकघर, ग्रामीण बैंक शाखा, सहकारी समितियां, पक्के सम्पर्क मार्ग, कुटीर उद्योग, उचित मूल्य की दुकानें, बीज/उर्वरक एवं कीटनाशक वितरण केन्द्र (सरकारी/प्राइवेट) पशु चिकित्सालय।

REFERENCES

1. Haldipur. R.N., 1972 : Administrative Co-ordinatination and Decision Making in Sen, L.K. (ed). Readings on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres, N. I. C. D., Hyderabad.

2. Roy, P. and Patil, B. R., 1977 : Mannual For Block Level Planning, Mac-millan Co. New Delhi, pp. 86-87.

3. Tripathi, R. N. et al., 1980 : Block Plan in District Frame, N. I. R. D., Hyderabad.

4. Tripathi, D. N., 1987 : Integrated Rural Development-A Case Study of Amethi Tahsil, Dislrict Sultanpur, Unpublished Ph. D. Thesis, Avadh University, Faizabad.

5. Bahuguna, S. L., 1985 : Yojna and Vikas Ki Dishayan, Yojna 16-31 Oct., p-15.

6. Sen, L. K., 1971 : Planning of Rural Growth Centres for Integrated Area Development - A Case Study of Miryalguda Taluk, N. I. C. D., Hyderabad.

7. Bhatt, L. S. and et. al., Micro-Level Planning- A Case Study of Karnal Area, Haryana, (India), K. B. Publications, New-Delhi.

8. Misra, K. K., The Introduction of Appripriate Technology for Integrated Rural Development, Trans-sections, I. C. G., Vol. 15, June, 1985, p-56.

परिशिष्ट (अ)

सेवा केन्द्र एवं उनके कोड नम्बर

क्र.सं.	सेवा केन्द्र का नाम	कोड संख्या	क्र. सं.	सेवा केन्द्र का नाम	कोड संख्या
1.	उरई	01	18.	मुहाना	18
2.	एट	02	19.	धगुवांकला	19
3.	डकोर	03	20.	रूरा अड्डू	20
4.	कोटरा	04	21.	अकोढ़ी	21
5.	सैदनगर	05	22.	मिनौरा उरई	22
6.	मुहम्मदाबाद	06	23.	धुरट	23
7.	जैसारीकला	07	24	औंता	24
8.	कुसमिलिया	08	25.	सोमई	25
9.	हरदोई गूजर	09	26.	बड़ागांव	26
10.	खरूसा	10	27.	बम्हौरी कला	27
11.	ऐर	11			
12.	खरका	12.	28.	चिल्ली	28
13.	अटरिया	13	29.	बिनौरा	29
14.	गढ़र	14.	30.	नुनसाई	30
15.	करमेर	15.	31.	भुवा	31
16.	टिमरो	16	32.	राहिया	32
17.	कुकरगांव	17	33.	मगरायां	33

परिशिष्ट (ब)

सेवा केन्द्रों से सम्बन्धित प्रश्नावली

सेवा केन्द्र का नाम–　　　　　　　　　　विकासखण्ड-डकोर

न्याय पंचायत-　　　　　　　　　　　　　जनसंख्या -

प्रश्ंन- आपके गांव/नगर में सर्वप्रथम अधोलिखित सुविधाओं की स्थापना कब हुई? उनका संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण और प्रभाव?

क्रमसं.	सेवाएं	स्थापना वर्ष	स्थापना का कारण/संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण	सेवा केन्द्र पर प्रभाव
1.	प्राथमिक स्कूल			
2.	प्रथम जूनियर हाई स्कूल			
3.	प्रथम हाई स्कूल (बालक)			
4.	प्रथम हाई स्कूल (बालिका)			
5.	प्रथम इंटर कालेज			
6.	प्रथम पोस्ट आफिस			
7.	प्रथम टेलीफोन आफिस			
8.	प्रथम रेलवे स्टेशन			
9.	प्रथम बस स्टेशन			
10.	प्रथम सड़क			
11.	प्रथम ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्र			
12.	प्रथम औषधालय			
13.	प्रथम परिवार कल्याण केन्द्र			
14.	प्रथम पशु चिकित्सालय			
15.	प्रथम प्रेक्टिस करने वाले चिकित्सक			
16.	प्रथम अस्पताल			
17.	प्रथम पुलिस चौकी			
18.	प्रथम पुलिस स्टेशन			
19.	प्रथम किला			
20.	प्रथम विश्राम गृह			
21.	प्रथम सहकारी समिति/बैंक			
22.	प्रथम अन्य बैंक			
23.	प्रथम खाद/बीज भण्डार			
24.	प्रथम वकील			
25.	प्रथम परचून की दुकान			

26. प्रथम कपड़े की दुकान
27. प्रथम उद्योग
28. प्रथम मिल
29. प्रथम लकड़ी के कृषियंत्रों की दुकान
30. प्रथम साइकिल मरम्मत केन्द्र
31. प्रथम ट्रैक्टर मरम्मत की दुकान
32. प्रथम कृषि यंत्रों के मरम्मत की दुकान
33. प्रथम लकड़ी चीरने का कारखाना
34. प्रथम आटा चक्की
35. प्रथम अनाज बाजार
36. प्रथम जानवर बाजार
37. प्रथम मेला तथा उसका नाम
38. प्रथम गृहस्थी संबंधी जलपूर्ति
39. प्रथम विद्युत पूर्ति
40. प्रथम सीवेज प्रणाली
41. प्रथम मन्दिर (हिन्दू)
42. प्रथम दर्जी
43. प्रथम मस्जिद
44. न्याय पंचायत
45. प्रथम चाय की दुकान
46. प्रथम रजाई/गद्दे की दुकान
47. प्रथम डलिया/झोला बनाने की दुकान
48. प्रथम सुनार की दुकान
49. प्रथम दुग्ध एकत्रीकरण की दुकान
50. प्रथम घी बनाने की दुकान
51. प्रथम लाउडस्पीकर की दुकान

सेवा केन्द्र में कार्यात्मक इकाइयों का सर्वेक्षण-प्रपत्र

क्र.सं.	कार्य का नाम	कार्य है या नहीं	क्र.सं.	कार्य का नाम	कार्य है या नहीं
1.	2.	3.	1.	2.	3.
1.	ट्रैक्टर उपकरण/मरम्मत केन्द्र		27.	होम्योपैथिक	
2.	बैंक		28.	अस्पताल	
3.	नाई की दुकान		29.	खादी वस्त्र भण्डार/केन्द्र	
4.	बैटरी भरने की मशीन		30.	धोबी	
5.	साइकिल मरम्मत केन्द्र		31.	वकील	
6.	लोहार		32.	मदिरा की दुकान	
7.	कागज, कलम तथा पुस्तक विक्रेता		33.	ताले मरम्मत तथा बिक्री	
8.	ईट के भट्टे		34.	लाउडस्पीकर सेवा केन्द्र	
9.	बढई		35.	प्रेक्टिस करने वाले चिकित्सक	
10.	दवाखाना		36.	मिडवाइफ	
11.	सिनेमा		37.	रेडियो बेचने की दुकानें	
12.	कपड़ा बेचने की दुकानें		38.	पान-बीडी की दुकानें	
13.	प्राथमिक स्कूल		39.	पार्क तथा खेल के मैदान	
14.	जूनियर हाई स्कूल		40.	फोटो ग्राफर	
15.	हाई स्कूल		41.	वैद्य	
16.	इंटर कालेज		42.	पुलिस स्टेशन	
17.	सहकारी समितियां		43.	पुलिस चौकी	
18.	बिजली सामान तथा मरम्मत की दुकानें		44.	पोस्ट आफिस	
19.	नेत्र विशेषज्ञ		45.	टेलीग्राफ आफिस	
20.	फलों की दुकान		46.	होटल	
21.	सुनार		47.	विश्रामगृह	
22.	आटा चक्की		48.	ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्र	
23.	हलवाई की दुकानें		49.	सिलाई मशीन मरम्मत केन्द्र	
24.	धातु के पात्र की दुकानें		50.	जूते की फुटकर बिक्री की दुकानें	
25.	हिन्दू मन्दिर		51.	विशेष मेला	
26.	औषधालय		52.	दर्जी की दुकानें	

प्रश्न- आपके/गांव नगर में पंचायत या नगर पालिका की स्थापना कब हुई तथा विकास पर क्या प्रभाव पड़ा? निम्न में से यदि कोई हो-

(क) पक्की सड़क या गली का निर्माण

(ख) हाउस टैक्स या गृह निर्माण नियंत्रक

(ग) शिक्षा

(घ) चुंगी घर

(य) सीवेज

(र) म्यूनिसिपल जलपूर्ति

(ल) स्वास्थ्य सेवाएं

(व) सफाई

(स) थाना

प्रश्न– आपके गांव/नगर में स्थानीय सरकार के परिवर्तन के अनुभव जैसे (ग्रामसभा/न्याय पंचायत या न्याय पंचायत से नगर पालिका) उपरोक्त परिवर्तन हैं। आपके/गांव/नगर को किस प्रकार प्रभावित किया है?

आपके गांव/नगर की उत्पत्ति तथा विकास का ऐतिहासिक विवरण-

प्रश्न- अधोलिखित नवीन वस्तुओं ने आपके गांव या नगर को कब और कैसे प्रभावित किया?

	1918-47	1947-66	1966-75	1975-85	1985-90	1990-95
1. स्कूल						
2. अस्पताल						
3. दुकानें						
4. बस स्टाप						
5. रेलवे स्टेशन						
6. पशु अस्पताल						
7. थाना						
8. मदिरा केन्द्र						
9. होटल						
10. मंदिर						
11. मस्जिद						

प्रश्न- अधोलिखित घटनाओं का आपके सेवा केन्द्र के विकास तथा उन्नति पर क्या प्रभाव पड़ा?

1. ब्रिटिश आगमन
2. गदर तथा सैन्य विद्रोह का प्रभाव
3. सूखा
4. प्लेग (1901-11)
5. इन्फ्लून्जा

6. बिपन्नता (1930)
7. द्वितीय विश्व युद्ध
8. मलेरिया
9. देश का विभाजन
10. प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) कृषि विकास
11. चंकबन्दी का प्रभाव
12. चुनाव का प्रभाव
13. द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) उद्योगों पर प्रभाव
14. तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) ग्रामीण उत्थान तथा उद्योगों पर प्रभाव
15. समाज कल्याण विभाग
16. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना
17. पंचम पंचवर्षीय योजना
18. छठी पंचवर्षीय योजना
19. सप्तवी पंचम वर्षीय योजना
20. आठवीं पंचवर्षीय योजना
21. अन्य

प्रश्न- किसी सेवा केन्द्र पर व्यापार से घिरे हुए क्षेत्र के निर्धारण की प्रश्नावलियां

जाति के आधार पर परिवारों की संख्या

गांव का नाम

परिवारों की संख्या

वर्गों की संख्या

सेवाएं	स्थान का नाम	किसी विशेष सेवा केन्द्र में क्यों जाते हो?	प्रथम सूचना के लिए कहां जाते हो?	यातायात के प्रकार	सामान्यतः स्थान की सुरक्षा के लिए सबसे पहले कहां जाते हो?

प्रश्न- सामान्यतः अधोलिखित को तुम कहां बेचते हो या उस सेवा केन्द्र पर किन-किन गांवों के लोग इन्हें बेचने आते हैं?

(1) अधिक कृषि उत्पादन
(2) दूध व दूध से बनी वस्तुएं
(3) सब्जी तथा फल
(4) जानवर
(5) घरेलू औद्योगिक वस्तुएं

प्रश्न- सामान्यतः अधोलिखित को कहां खरीदने जाते हों या किन-किन गांवों से लोग इन्हें खरीदने उस केन्द्र पर आते हैं?

(i) चाय
(ii) साबुन
(iii) मिट्टी का तेल
(iv) कपड़ा
(v) दहेज सामग्री
(vi) ऊनी कपड़े
(vii) रेडियो
(viii) बक्से/ताले
(ix) साइकिल
(x) घरेलू बर्तन
(xi) जूते
(xii) कंघे/सीसे
(xiii) सिगरेट, पान, बीड़ी
(xiv) हल, खुरपा, हंसिया
(xv) कप प्लेट
(xvi) बीज तथा खाद
(xvii) बैलगाड़ी
(xviii) ईट
(xix) नमक
(xx) दियासलाई

प्रश्न– सामान्यतः अधोलिखित तुम कहां पाते हो? या किन-किन जगहों से लोग निम्न सुविधाओं के लिए आपके केन्द्र में आते हैं?

(1) प्राथमिक स्कूल
(2) हाई स्कूल
(3) तकनीकी संस्थान
(4) चिकित्सा सुविधा
(5) नेत्र चिकित्सक
(6) पशु चिकित्सक
(7) ट्रैक्टर मरम्मत
(8) साइकिल मरम्मत
(9) जूनियर हाई स्कूल
(10) कालेज शिक्षा
(11) विश्वविद्यालय
(12) वैद्य/हकीम
(13) दन्त चिकित्सक
(14) अस्पताल
(15) हल की मरम्मत
(16) जूतों की मरम्मत
(17) तालों की मरम्मत

प्रश्न- अधोलिखित के लिए तुम कहां जाते हो या निम्न सुविधाएं पाने के लिए कहां-कहां से लोग आते हैं?

(1) बस पकड़ने
(2) रेल पकड़ने
(3) पोस्ट आफिस
(4) टेलीफोन करने
(5) बैंक/व्यापार
(6) वकील के लिए
(7) सिनेमा
(8) त्योहार में शामिल होने
(9) धार्मिक स्थानों के लिए
(10) नियमित रूप से तार करने

प्रश्न- गांव में यातायात का प्रयोग करने वालों की संख्या कितनी है?

BIBILIOGRAPHY

BOOKS:-

1. Adams, J.S.and Crould,P.,1971 : Spatial Organization,The Geographer's veiw of the world,New Jersey.

2. Agrawal, P.C. and Khan, Z.T.,1983:Spatial Analysis of the Level of Regional Development in Madhya Pradesh,Modern Geographical Trends (ed.) Praduman Panday.

3. Aziz.A,1983 : Studies in Block Planning,Concept Publishing Company, New Delhi,

4. Bhatt, L.S., 1972 : Regional Planning in India,Statistical Publishing Society, Calcutta.

5. Bhatt, L.S.,1976 : Micro Level Planning-A Case Study of Karnal Area Haryana (India), New Delhi.

6. Bhatt, L.S., 1988: Strategg for Integrated Area Development -A case Study of North Kanar District(Karnataka),Concept Publication New Delhi.

7. Charistaller, W.,1966 : The Central places in Southern Germany, Translated by C.W.Baskin,New Jersey.

8. Clout, H.D., 1969 : Planning Studies in Rural Areas,Integrated Planning in the Countryside in Trends, in Geography (ed.) Ronald & Johnson./

9. Freeman,T.W.,1958 : Geography and Planning ,Landon.

10. Godwa, K.S., 19972 : Urban and Regional Planning,University of Mysore.

11. Gunwandena, K.A.,1964 : Service Centres in Southern Ceylon, University of Cambridge, Ph.D.Thesis.

12. Irsad,W., 1969 : Methods of Regional Analysis:An Introduction to Regional Science,Landon.

13. Join,L.C., 1985: Grass Without Roots: Rural Development Under Govt.Auspies, Sage Publications,New Delhi.

14. Jaiswal.S.N.P., 1973 : Hierarical Grading of Service Centres in Eastern Part of Ganga-Yamuna Doab and their Role in Regional Planning in Singh, R.L. (eds) Urban Geography in Developing Countries.

15. Khan,W., and Tripathi, R.N., 1976 : Plan for Integrated Rural Development in Pauri Garhwal, N.I.C.D. Hyderabad.

16. Khan,W., 1977 : Extension Lecture on Integrated Rural Development, Hyderabad, N.C.I.D.

17. Lal,Tarsen,1986 : District Development Planning -A case Study of Two Districts,Concept Publishig Company,New Delhi.

18. Losch,A., 1954 : Economies of Location,New Heaven,Yale University Press.

19. Mandal,R.B.,1982 : Land Utilization Theory and Practice, Concept Publishing Compnay,New Delhi.

20. Mabogunje, A.L.,1978 : Growth poles and Growth Centres in Regional development of Nigeria, Geneva, UNISR.

21. Mishra, K.K.and Khan,T.A., 1991:Evolution Model of Service Centres in Mandaha Tahsil Hamirpur District, Vol.1

22. Mishra, O.P.,1993 : Tahsil Gonda- A Case Study in Integrated Rural Development, UnpublishedPh.D. Thesis, Avadh University, Faizabad.

23. Mishra, R.P.,1974 : Regional Development planning in India,-New Strategy. New Delhi.

24. Mishra R.P. and Sunderam, K.V.,1977 : Multilevel planning and Integrated Rural Development in India,Heritage Publishers New Delhi.

25. Mishra, R.P. et.al. (eds), 1978 : Regional Planning and National Development ,Concept Publications New Delhi.

26. Mishra, R.P. and Sunderam, K.V.,1979 : Rural Area Development Perspectives and Approaches,New Delhi.

27. Mishra. R.P.and et.al., 1980 : Malti :- Level Planning and Rural Development in iIndia, New Delhi.

28. Mishra, R.P.1988: Research Methodology- A Hand book Concept Publications, New Delhi.

29. Mishra, R.P. (ed.) 1990 : District Planning -A hand book,Concept Publishing Company,New Delhi.

30. Mishra, R.P.,1990 : Micro-Level Rural Planning-Principles, Methods, Case Studies, Concept Publishing Company. New Delhi.

31. Mishra, S.N.,1981"Rural Development and Panchayati Raj, New Delhi.

32. Mistra., AShok,1978 : Micro-level Planning of Space in Regional Planning and National Development (ed.), R.P. Mishra and et.al., Vikas Publishig House, New Delhi.

33. Mohammad, A.(ed.), 1979 : Dynamics of Agricultural Devólopment in India, Concept Publishing Company, New Delhi.

34. Mukherjee,S.,1982 : Integrated Rural Transformation Programme :An Alternative Strategy of Rural Devlopment; In Mukherjee,S.(ed.) Essay on Rural Development,UTSARGO, Varanasi.

35. Panday, M.P. 1979 : Impact of Irrigeation on Rural Development-A Case Study, New Delhi.

37. Rai,Sadhna, 1985 : Changing Agrarian Relations, in U.P.-A Study of the North Eastern Areas, Inter-India Publications, New Delhi.,

40. Roy,P.and Patil, B.R.,1977: Mannual for Block Level Planning, Delhi, Mac-millan.

38. Roa, R.V.,1970 : Small Industries and Developing Economy in India, Concept Publishing Company, New Delhi.

39. Roa. V.K.R.V., 1975 : Planning for Change,New Delhi.

36. Ram Chandran, H.,1980 : Village Ctusters and Rural Development,Concept Publishing Company,New Delhi

41. Sahi, Sanjay.1984 : Service Centre Planning and Rural Development of Deoria Distt. Unpublished Ph.D.Thesis, Banaras Hindu University, Varansi.

42. Sen, L.K.,1972(ed.) Reading on Micro-Level Planning and Rural Growth Cenres, N.I.C.D.Hyderabad.

43. Sen, L.K.and Others,1975 : Grrowth Centres in Raichur- An Integrated Area Development Plan for a District in Karnataka, N.C.I.D. Hyderabad.

44. Shah,v., 1974 : Planning for Talala Block-A Case Study in Micro Level Planning, Ahmadabad.

45. Singh, C.D.,1979 : Service Centres in Regional Development and planning in Saryupar plain, U.P., Unpublished Ph.D.Thesis, Gorakhpur University, Gorakhpur.

46. Singh, G., 1973 : Service Centres,Thesis Functions, Hierarchy, Ambala Distt.Panjab.(India).

47. Singh, O.B., 1971 : Towards Determining Hierarchy of Service Centres -A Methodology for Central Place Studies, N.G.J.I.,17 (a)

48. Singh, R.B., 1988:Studies in Environment and Development, Common Wealth Publishers, New Delhi.

49. Singh,R.L., 1971 : India -A Regional Geography, N.C.S.I.Varansi.

50. Singh, R.L.and Singh,R.P.B.(ed.), 1978 : Transformation of Rural Habitat in Indian Perspective-A Geographical Dimentions, Varanasi,

51. Singh, R.R, 1992 : Studies in Regional Planning and Rural Development, Patna.

52. Singh, S.,1987 : Rural Development and Planning, Shree Publishing House, New Delhi.

53. Singh, Surendra ,1990 : Integrated Area Development and planning, Shree Publishing House ,New Delhi.

54. Sunderam, K.V., 1974 : Geography and planning, Essay in Honour of V.L.S.prakasha Rao, New Delhi.

55. Sunderam, K.V., 1977 : Urban and Regioanl Planning in India, Vikas Publishing House, New Delhi.

56. Sunderam, K.V., 1985 : Geography and planning for Rural Development, New Delhi.

57. Symono, L.,1968 : Technological Innovations in 20th Centuary, Agriculture in Mohammad, W(ed.) Prespective in Agriculture. Geography, vol.v, Concept Publishing Compnay. New Delhi.

58. Thakur, R.N., 1985 : Micro Regional Central Place System in India, Inter-India Publications. New Delhi.

59. Thomsan, T.B.,Same Problems of Regional Planning and Public Interest, The Free Press Glanco.

60. Tiwari, P.D.,1988 : Agricultural Development and Nutrition -A Case Study of Rewa Plateau, Nothern Book Centre,New Delhi,

61. Tiwari, P.D. and Jain,C.K.,1989 : Modernization of Agriculture and Food Availability in India,Nothern Book Centre,New Delhi.

62. Tyagi, R .K.et.al.,1990 : Planning and Strategg for Agricultural Development in Rural Development In Raidfed Area,with special Reference to Bundel khand Region,U.P.

63. UNAPPI,1980:Local.Level Planning and Rural Development, Alternative Strategies ,New Delhi.

64. United Nations,1980 : Assian and Paccafic Development Institute Bankok, Local Level Planning and Rural Development -A Alternative Strategies, Concept Publishing company,New Delhi,

65. Urs,D.V.,1979 : Rural Development Policies and Thesis Implecations for Technological Development in India, In R.P., Mishra (ed.) Rural Area Development Sterling, New Delhi.

66. Wanmali,S., 1970 : Regional Planning for Social Facilities.-A case Study of Eastern Maharashtra, N.C.I.D. Hyderabad.

67. Wanmali,S.,1970 : Regional Planning for social studies, An Examination for Central Place Concepts and their Application N.C.I.D., Hyderabad.

68. Wanmali, S., 1987 : Geography of Rural System in India, New Delhi.

69. Wilson, A.G., 1974 : Urban and Regional Model in Geography and Planning,NewYork.

70. Wilson, A.G., and Kirkby, M.J. : 1975 : Mathematics for Geographers and Planners Oxford.

71. ICSSR.,1982 ; Journal of Abstracts and Reviews; Geography, New Delhi, Vol.XVI, No.1

72. ICSSR,1982 : Journal of Abstracts and Reviews Geography, New Delhi, Vol.VIII,No.2.

ARTICLES:-

1. Asthana, S.P.and Dubey, K.K,1990 : Prospects of Agricultural land in Bharwaran Development Block,District Hardoi, U.P. The Bramhavart Geographical Journal of India, vol.2pp-45-61.

2. Bahuguna ,S.L., 1985 : Yojna Aur Vikas Kee Dishayen ,Yojana.Oct.16-31, P-15.

3. Banerjee, Chirashree, 1992 : A Socio-Economic Survey of Baidhnathpur, West Bengal,Geog.Revi.of India, Vol,54 No.4, pp-53-63.

4. Berry, B.J.L., and Garision, L.W. , 1958 ; The Functional Basis of the Central Place Hierarchy, Economic Geography, Vol.34, pp-154-156.

5. Bhatt., L.S.,1982 ; Spatial Perspective in Rural Development Planning in India, The Geographers vol.22, No.2.pp-21-25.

6. Bishwas, S.k.,1980 : Indentification of Service centres in Purulia District,-An Approach Towards Micro-Level planning, Geog. Revi of India, Calcutta Vol.42.pp.73-78.

7. Brahme,S.,1972 :Approach to Rural Area Development Indian Journal of Regional Seience,Vol.4,No.1 pp-6-11.

8. Bronger, D., 1977 : Problems of Regional Analysis and Regional planning in Developing Countries,Philipine Geog. Journal, vol.XXI, No.1 pp.14-30.

9. Brush, J.E., and Bracy, H.E,1955 : Rural Service Centres in south Western Wiscosin and South England,Geog Revi. of India,Vol.45, pp.559-569.

10. Chandra, R.S,1993 : Infrastructural Development of Varansi Region, U.P.-A Geographical Note, Geog Revi. of India, Vcl.55, No.4, pp-85-89.

11. Cheema, A.S.,1977 : Appropriate Infrastructure for Rural Development, International Conference on Rural Development Technology, Bankok Thailand, pp.577-592.

12. Das, B.N,and Sarkar, A.K., Rural Area Development -A Case Study of Karnal Area,journal of Regional Seience vol.4, No.2, pp.166-179.,

13. Davis,W.K.D.,1967 : Centrality and Central place Hierarchy, Urban Studies , 4(1), pp.61-79.

14. Diddle, J.M.,and Dixit, K.R.,1979 : A Note on Measuring Centrality of small and medium Size Central places,Translated, Indian Geographers-1, pp-70-77.

15. Dubey,Sanjeev,1995 : Audhogic Neetigat Sudharon Ke Disha mein Pahal,Yojana,Vol.9,pp.36.

16. Gour, Archana,1982 : Village Resources and Rural Development -A case Study of Nanera Jagdev Village (Aligrah) National Geographers Vol.XVII, No.2, pp-159-168.

17. Guha,B,1967 :The Rural Service Centres in Hoogly Distt. Geog. Revi.of India,vol.39,No.5,pp.47-52.

18. Hema Malini and Yamini Priya,A, Climate and land Use in Guntur District, Andhra-Pradesh,pp.103-107.

19. Jana, M.M.,1992 : Land Use and Cropping Pattern in Darjeeling District of West Bengal,Vol.16.pp.43-47.

20. Johnson,R.J.,1966 : Central Place and Settlement patterns Asso.of American Geographers, Vol.55,PP-541-550.

21. Johnson,L.J.,1971 : The spatial Uniformilty of a Central place Distribution in New England,Economic Geog.Vol.47,pp.156-170.

22. Kayastha, S.and Singh, R.B.,1981 : Regional Development through Social Planning, Micro-level Case Study from India in Indian Jouranl of Regional Science Vol.XIII,

No.1, pp.28.

23. Kabra, K.N., 1977 : Planning Progresses in a District, I.T.P. A., Delhi.

24. Khan, S.A., 1988 : Hierarchy of Service Centres in theTrans-

Ghaghra plain, The Deccan Geographers, Vol.28.

25. Khan,S.A.,: 1991 : An Analysis of Central Place Functions-A Case Study, Georaphical Review, Vol.53,pp..85-91.

26. Khan, S.A., 1993 : Functional Classification of Service Centres-A Case Study,The Deccan Geogtaphers, Vol.XXXI, NO.1, pp.-67-74.

27. Kulshrestha, Laxmi Rani, 1995 ;' Bhumi-Sudhar-Gramin Vikas Aur Samazic Nyay, Kurukshetra-Vol.12, pp.44-48.

28. Kumkum Roy,1976 : Spatial Charactaristics of Rural Service Centres In Fatehpur District, The Deccan Geographers, Pune, pp.21-25.

29. Mayer, I.A., 1992 : Creation of Service Centres in Jammu and Kashmir State-A Approach Towards Regional and Balanced Urban Development,vol.54,p-78.

30. Mehta,1978 : Public participation in Micro-Level planning, Paper presented to the Regional Seience Conferreance Allahabad, Indian, Journal of Regional Science,Vol.1, pp-19-29.

31. Mishra, G.K., 1976 : Planning for Rural Service Centres, The Economic Times, Sep.1-15.p-21-23.

32. Mishra,K.K.,1982 : Identification and Functional Hierarchy of Service Centres in Hamirpur District., Paper Presented to IV Nagi, Bombay University.

33. Mishra, K.K., 1985 : The Introduction of Appropriate Technology for Integrated Rural Development, Transaction I.G.C. Bhuwaneshwer, Vol.15, pp-55-57.

34. Mishra, K.K., 1986 : Service Centres Strategy in the Development of Hamirpur District, Paper Presented to XX Regional Science Conferrence, Organized by V.S.S.D, College, Kanpur,

35. Mishra, K.K., 1987 : Functional System of Service Centres in a Backward Economy-A Case Study of Hamirpur District, Indian National Conferrence, Vol.2.No.1 and 2, pp-57-68.

36. Mishra, K.K., 1990 : Spatial System of Towns of Hamirpur District, U.P., The Brahmavart Geographical Journal of India, Vol.2, pp-19-28.

37. Mishra, K.K.,1991 ; Socio-Economic and Environmental Problems In Banda-Hamirpur Region, Indian Geographers, Vol.8, No.1, pp-83-89.

38. Mishra, K.K.,1995 ; Badate Paryavaran Pradushan Se Goan Kee Ashmita Khatre Mey, Kurukshetra Vol.9, pp.35-36.

39. Mishra, O.P., Sadhnaburg and Tripathi, D.N., 1991 : Planning for Social Facilities-A Case Study Indian National Geographer,Vol.8II, pp.45-56.

40. Mishra, R.P. and Shivlingah, M.1970 : Growth Pole Strategy for Rural Development

in India, Journal of Institute of Economic Geography India, pp.33-39

41. Mishra, S.K.,1980 : Modification of Growth Centres Strategy for Rural Development in Undeveloped Countries, National Geographical Journal of India ,Vol.26,pp-191-195.

42. Moore,L.B., 1973 : The Concept of I.R.D.in Reporton Govt.of Pakistan, International Seminar on Integrated Rural Development,Lahore,pp-55.

43. Pathak, C.R.,1973 : International Area Development- A Case Study of Rural Agricultural Development Geog. Revi of India,Vol.35, No.3, pp.222-239.

44. Ram, B.P.and Singh,S.B. 1983 : Central Places and Functional Interaction in Ballia Distt, U.P.,Uttar Bharat Bhoogoal Patrika,Vol.19, pp.68-78.

45. Ramesh, A. and Antony Norbert,s., 1989 : Dimensions of Regional Development in Tamilnadu 1961-81,The Deccan Geographer,vol.XXVII, No.1, pp.435-450.

46. Rampal,1992 : Idenitification of Rural Development in Maddhoganj Development Block of Hardoi Distt.,U.P.-A Diagonestic approach,The Brahmavart Geographical Journal of India,Kanpur,vol.1, pp.19-21

47. Roa,V.L.S.P., 1972 : Problems of Micro-Level Planning Behavioural Sciences and Community Development N.C.I.D. Hyderabad,vol.6,No.1, pp.172-177.

48. Sahay, Dhananjay,1996 : Badte Vayu Pradushan Aur Ghatate Kshetra,KuruKshetra,vol.7,May, pp..24-26.

49. Scott,P.,The Hierarchy of Central Place in Tasmania,The Australian Geographers, Vol.9,pp.134-147.

50. Sharma, P.N., Faujdar, N.S. and Gupta, B.J., Methodology for Spatial Planning Institute, Lucknow, U.P.

51. Sharma, S.C, and Ranjana, Spatial Planning for Socio-Economic Development of Micro-Level,Geog.Revi,of India, Vol.55, pp.34-53

52. Sharma, S.K., 1981 : Problems of Rural Economic Development in Baghelkhand Plateau, M.P., The Geographers, Vol.XXVIII, No.2.

53. Shashtri, M.V.R.,1965 : Integration of National Ecoonomic Model in The United State,The Indian Economic Journal, Vol.16, Bombay p.44.

54. Shukla, B.D.and Prakash, K.,1992 : Idenitification of Service Centres iN Hardoi Distt.,U.P.,The Brahmavart Geographical Journal of India, Kanpur, Vol.1.

55. Singh, B.P.,1992 : Reclaimation and Development of Waste land in Hathras Tahsil, (Aligarh)U.P., Geog.of India, Vol.54, No.4, pp.48-52.

56.Singh,C.D.,1979 : Hierarchy of Service Centres In Saryupar Plain ,Uttar Bharat Bhoogal patrika,vol.1.pp.35-49.

57. Singh. I.D., 1992 : Service Centres Strategy and Spatial Organization Model-A Case Study of Jalalpur Development Block, Distt. Faijabad,The Brahmavart Geographical Journal of India,vol.1 pp.44-52.

58. Singh, K.N.,1966 : Spatial Pattern of Central Place in Middle Gangga Valley, The National. Geog. Journal of India, vol.12.

59. Singh, O.P.,1971 : Towards Determining Hierarchy of Service Centres-A Methodology for Central Place Studies, The National Geog. Journal of India, 17, pp.-166-169.

60. Singh. O.P.,1972 : Spatial Distribution of Sizable Central Place of Uttar Pradesh on the Nearer Neighbour Method, Indian National Geographers,Vol.VII, pp.79-84.

61. Singh, S.,1983 : The Hierarical system of Central Place in Distt. Gorakhpur, U.P., Uttar Bharat bhoogol Patrika , vol.19, No.2, pp.78-89

62. Singh, S.N., and Singh, K.N.,1994 : Administrative Set-up and Rural Development ,Uttar Bharat bhoogol Patrika, Vol.30, No.2, pp.65-72.

63. Sunderam, K.V.,1980 : A Stratgey -Regional Development and Planning for Bockward Area,Seminar on Regional Development,Alternatives, U.N.C.R.D Nogoya, Japan, pp.15-16.

64. Tiwari, P.,1968 : Functional Pattern of Towns in Madhy Pradesh,N.G.J.I..,14,PP-41-54.

65. Wanmali, S.,1972 : Zones of Inflience of Central Villages in Miryaguda Taluk,A Theoretical Approach, Behavioural and Sciences and Community Development, Vol.6, PP.1-10.

66. Wong, S.T.and Tiongson, A.,1980 : Economic Impacts of Growth Centre on Surrounding Rural Areas-A Case study of Marivales, Phillipines, Geographea, Annaler, pp.109-117.

67. Woroby, P.,1959 : functional Ranks and Locational Patterns of Service Centres in Saskatchewan,The Canadian Geographers, Vol.14.

68. Yadav, H.S.and Tiwari, R.C.,1989 : Spatial Patterns of Service Centres in AllahabadDistrict,IndianNational Geographers,Vol.XXIV,No.1,Allahabad.

69. Yeats,M.H.,1963 : Hinterland Delimitation -A Distance Minimizing Approach, Professional Geographers,Vol.15, pp.7-10,

70. Zaide,I.H.1968 : Measuring of Locational Complementory of Central Places in West, Pakistan-A Micrographic Frame-Work, Economic Geography, pp.218-236.

71. Zaman.M.A.,(Rome),F.A.O, 1978 : Some Aspects of Integrated Rural Development on the FAO/ SIDA/ DSE, Inter Regional Symposium on I.R.D. Part, p.18.

UNPUBLISHED Ph.D.THESIS:-

1. Gupta, A.K.,1993 : An Analystical Study of Service Centres in Lalitpur Distt.U.P., Ph.D.Thesis,Bundelkhand University, Jhansi.

2. Mishra, K.K.,1981 : System of Service Centres in Hamirpur Distt., Bundelkhand University, Jhansi.

GOVERNMENT PUBLICATIONS:-

1. Annual Plans of Distt. Jalaun,1992-93,19-94,94-95, General Population Table Census of India,1981-91.

2. Credit Plan of Distt. Jalaun (Lead Bank Report) 1992-93, Statistical Bulletin of Jalaun 1985-91.

3. Chandra shekhar ,C.S.,1972 : Balanced Regional Development and Planning Regions,Census of India,1994, Monograph No.7,New Delhi, pp.59-74.

4. Distt. Census Handbook of Jalaun, U.P.1981, and 1991, Town and Village Directory of Jalaun Distt.

5. Master. Plan of Jalaun ,1993-94, Deptt.of P.W.D., Jalaun Distt.

6. Regional Plan of Banda-Hamirpur Region.1974-79,Town and Country Planning Department of Jhansi U.P.

7. Working Plan Patrika of Jalaun 1993-94-95, Deptt.of D.R.D.A.Jalaun, U.P.